A-PDF Merger DEMO : Purchase from www.A-PDF.com to remove the watermark

विश्व हिंदी पत्रिका
2016

विश्व हिंदी सचिवालय
मॉरीशस

विश्व हिंदी पत्रिका

2016

प्रधान संपादक

प्रो. विनोद कुमार मिश्र

विश्व हिंदी सचिवालय
स्विफ़्ट लेन 74427, फ़ॉरेस्ट साइड
मॉरीशस

World Hindi Secretariat
Swift Lane 74427, Forest Side
Mauritus

info@vishwahindi.com
Website: www.vishwahindi.com
Phone: 00-230-6761196, Fax: 00-230-6761224

ISSN No.: 1694-2477

सहायक संपादक
श्रीमती श्रद्धांजलि हजगैबी-बिहारी

विश्व हिंदी पत्रिका संपादकीय टीम
श्रीमती उषा देवी आकाजिया-राम, सुश्री त्रिशिला सोमर, डॉ. देविना अक्षयवर,
सुश्री जयश्री सिबालक, सुश्री शिक्षा धनपत, श्रीमती विजया सरजु

संपादन सहयोग
डॉ. अलका धनपत, डॉ. कुमारदत्त गुदारी, डॉ. संध्या अंचराज़-नवसाह, सुश्री अंजलि चिंतामणी

मुख पृष्ठ और पार्श्व आवरण संकल्पना : **विश्व हिंदी सचिवालय**
मुख पृष्ठ और पार्श्व आवरण डिज़ाइन : **श्री शिवेश रामाशिर**

आवरण से आवरण तक की कहानी :

वैश्विक स्तर पर हिंदी भाषा के बढ़ते वर्चस्व को देखते हुए तथा हर क्षेत्र में चाहे वह साहित्य, शिक्षा या सूचना संचार प्रौद्योगिकी, विज्ञान, मीडिया आदि हो, लब्धप्रतिष्ठित हो रही भाषा को रेखांकित करने हेतु पत्रिका के मुख पृष्ठ पर विश्व भर में···हरेक देश में भाषा के निखरते रंगों को दर्शाया गया है। हिंदी की जड़, भारत तथा वहाँ से हरेक देश तक पहुँची हिंदी की यात्रा तथा उद्‌भव व विकास की कहानी को इन देशों के नाम व रंगों के माध्यम से चित्रित करने का प्रयास किया गया है। मुख पृष्ठ की संकल्पना व्यापक रूप में ली गई है जिसका एक महत्वपूर्ण अंश पार्श्व आवरण में चित्रित करने का प्रयास किया गया है।

सचिवालय ने विश्व हिंदी दिवस 2016 के उपलक्ष्य में एक अंतरराष्ट्रीय हिंदी निबंध प्रतियोगिता का आयोजन किया था जिसका विषय 'मेरे देश की हिंदी संस्था' अथवा 'मेरे देश का हिंदी प्रचारक' रखा गया था। प्रतियोगिता में प्रथम पुरस्कार प्राप्त रचनाओं तथा कुछ अन्य चयनित निबंधों को पत्रिका के प्रस्तुत अंक में प्रकाशित किया गया है। भाषा के प्रचार-प्रसार व संवर्धन में विश्व भर की संस्थाओं, पथ प्रदर्शकों व विद्वानों की सबसे बड़ी भूमिका होती है। इनके कार्यों, परिश्रम व योगदान को विश्व भर तक पहुँचाने के उद्देश्य से पार्श्व आवरण को इन संस्थाओं व विद्वानों को समर्पित किया गया है।

निवेदन

विश्व हिंदी पत्रिका में प्रकाशित लेखों के विचार लेखकों के अपने हैं। विश्व हिंदी सचिवालय और संपादक मंडल का उनके विचारों से सहमत होना आवश्यक नहीं है।

अनुक्रम

श्रद्धांजलि

1.	श्री अजामिल माताबदल को श्रद्धांजलि और उसके बहाने···	—श्री गंगाधरसिंह गुलशन सुखलाल	3
2.	विश्व हिंदी सचिवालय की ओर से वर्ष 2016 में हिंदी जगत से विदा हुए महानुभावों को भावपूर्ण श्रद्धांजलि	—संपादक मंडल	7

हिंदी विविध आयाम

3.	हिंदी की दुर्दशा—चौराहे पर खड़ी	—डॉ. पीटर फ्रीडलैंडर	13
4.	डेनमार्क में हिंदी व भारतीय संस्कृति का स्वरूप	—श्रीमती अर्चना पैन्यूली	16
5.	स्पेन में हिंदी अध्यापन का कार्य : समस्याएँ एवं समाधान	—डॉ. विजयकुमारन सी.पी.वी.	21
6.	विश्वभाषा, विश्वसाहित्य और पहचान : परिप्रेक्ष्य में हिंदी	—डॉ. हाइंस वेर्नर वेसलर	28
7.	यॉर्क विश्वविद्यालय में विरासती भाषा विद्यार्थियों के लिए हिंदी-उर्दू शिक्षण	—डॉ. शोभना निझावन	32
8.	मॉरीशसीय आर्य समाज का हिंदी आंदोलन	—डॉ. उदयनारायण गंगू	35
9.	विदेशी या दूसरी भाषा के रूप में हिंदी शिक्षण में अशुद्धियों का विश्लेषण और शिक्षण में उसका महत्व	—डॉ. शिव कुमार सिंह व श्रीमती डिम्पल राजपूत सिंह	41
10.	मॉरीशसीय हिंदी रंगमंच : [1834-2015] एक सिंहावलोकन	—श्री राज हीरामन	45
11.	सूरीनाम, फ़िजी, मॉरीशस में हिंदी पत्रकारिता	—श्रीमती भावना सक्सेना	50
12.	डॉ. उदय नारायण गंगू : हिंदी के उपासक	—श्रीमती शांति मोहाबीर	56
13.	हिंदी प्रचारिणी सभा की ऐतिहासिकता	—श्री राजेश कुमार उदय	60
14.	जम्मू-कश्मीर में हिंदी की प्रगति एवं समस्याएँ : एक ऐतिहासिक अध्ययन	—डॉ. एन. के. चतुर्वेदी	65
15.	हिंदी वर्तनी का मानकीकरण : अंतरराष्ट्रीय भाषा के परिप्रेक्ष्य में	—श्रीमती स्नेह ठाकुर	69
16.	हिंदी भाषा ने हिंदी रंगमंच को बहुआयामी बनाया है	—सुश्री प्रियंका सोनकर	74
17.	अंतरराष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में हिंदी भाषा और हिंदी सिनेमा	—श्री प्रवीण सिंह चौहान	79

हिंदी और सूचना-संचार प्रौद्योगिकी

18.	नए क्षेत्रों में हिंदी की तकनीकी दौड़	—श्री बालेंदु शर्मा दाधीच	85
19.	कैट टूल्स के रहस्य	— प्रो. राजेश कुमार	90
20.	इंटरनेट की दुनिया में हिंदी का भविष्य	डॉ. साईनाथ विट्ठल चपले	96
21.	मॉरीशसीय हिंदी शिक्षण में संगणक का प्रभाव	—श्री धनराज शंभु	104
22.	हिंदी भाषा प्रौद्योगिकी चुनौतियाँ एवं संभावनाएँ	—श्री रोहित कुमार 'हैप्पी'	108

मीडिया व अनुवाद

23.	सोशल मीडिया और हिंदी	डॉ. सहदेव वर्षाराणी निवृत्तीराव	115
24.	वेब मीडिया और हिंदी	— डॉ. मुकेश कुमार मिरोठा	119

25.	हिंदी भाषा व साहित्य के विकास में अनुवाद का योगदान	—श्री अजय पुर्ति	125
26.	लोकतंत्र और मीडिया की भाषा के रूप में हिंदी	—डॉ. रवींद्रनाथ मिश्र	130
27.	हिंदी संक्रमण के दौर में	—श्रीमती प्रीति सागर	135

विश्व हिंदी दिवस के उपलक्ष्य में अतिथि विद्वानों का वक्तव्य

28.	रूस में हिंदी	—प्रो. ल्युदमीला विक्तोरव्ना ख़ख़लोवा	139
29.	21वीं शताब्दी में हिंदी शिक्षण : ऑस्ट्रेलिया और एशियाई-पैसिफ़िक संदर्भ में	—डॉ. पीटर फ्रीडलैंडर	146

हिंदी के विविध आयाम : कुछ टिप्पणियाँ, अनुभव व विचार बिंदु

30.	गूगल अनुवाद और मानव अनुवाद की सहभागिता—एक अनुभव	—डॉ. काजल पांडे	151
31.	हिंदी पत्रकारिता में भाषा की शुद्धता	—श्री रोहित कुमार 'हैप्पी'	153
32.	हिंदी के सच की तलाश में	—प्रो. कृष्ण कुमार रत्तू	155
33.	मीडिया की हिंदी और हिंदी का मीडिया	—श्री संजय द्विवेदी	159

विश्व हिंदी दिवस 2016 के उपलक्ष्य में आयोजित अंतरराष्ट्रीय हिंदी निबंध प्रतियोगिता में प्रथम स्थान प्राप्त विजेताओं तथा अन्य प्रतिभागियों के चुने हुए निबंध

34.	मेरे देश की हिंदी संस्था—विश्व हिंदी सचिवालय	—श्री सोमदत्त काशीनाथ	163
35.	मेरे देश की हिंदी प्रचारक—डॉ. सुधा ओम ढींगरा	—श्री दीपक कुमार चौरसिया	167
36.	मेरे देश की हिंदी संस्था—हिंदी संस्थान, श्रीलंका	—सुश्री रिद्मा निशादिनी लंसकार	170
37.	मेरे देश का हिंदी प्रचारक - श्री तेजेंद्र शर्मा	श्रीमती नीना पॉल	174
38.	मेरे देश की हिंदी संस्था—दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा	—डॉ. सी. जय शंकर बाबू	178
39.	भारत के हिंदी-प्रचारक बाबू श्यामसुंदर दास : एक सर्वेक्षण	—डॉ. राकेश कुमार दुबे	184
40.	मेरे देश की हिंदी संस्था : हिंदी शिक्षा संघ, दक्षिण अफ्रीका	—श्रीमती मालती रामबली	191
41.	मेरे देश की हिंदी संस्था-इन्लान्सो	—सुश्री बेआत्रिस स्तेइंवल	193
42.	मेरे देश की हिंदी संस्था—महात्मा गांधी संस्थान (एम.जी.आई. की कहानी उसकी जुबानी)	—डॉ. अलका धनपत	195
43.	मेरे देश का हिंदी प्रचारक : श्री अरुण प्रकाश	—श्रीमती राजवंत कौर	200

2016 में हिंदी जगत की चयनित खबरें

44.	'विश्व हिंदी समाचार' में प्रकाशित वर्ष 2016 की चयनित खबरें	—संपादक मंडल	205

MINISTRY OF EDUCATION AND HUMAN RESOURCES, TERTIARY EDUCATION AND SCIENTIFIC RESEARCH

संदेश

विश्व हिंदी पत्रिका के इस अंक के माध्यम से आप सभी समर्पित पाठकों व हिंदी प्रेमियों को संबोधित करते हुए मुझे अत्यंत हर्ष हो रहा है।

पिछले कुछ वर्षों से सचिवालय की विविध गतिविधियों के आयोजन एवं संचालन के माध्यम से समस्त हिंदी जगत के साथ जुड़ाव मेरे तथा हमारे मंत्रालय के लिए अत्यंत गर्व की बात है। मॉरीशस में हिंदी भाषा शिक्षण एवं प्रचार-प्रसार के क्षेत्र में नित नई योजनाओं के लिए हमारा मंत्रालय हमेशा तत्पर रहा है और भाषा के प्रति रुचि बढ़ाने व उसके संवर्धन हेतु नित नई योजनाएँ बनाता रहा है। भारत में आयोजित पिछले विश्व हिंदी सम्मेलन में मॉरीशस को अगले विश्व हिंदी सम्मेलन के आयोजन की ज़िम्मेदारी सौंपे जाने के बाद हिंदी के लिए कुछ करने के जोश में गुणात्मक परिवर्तन आ गया है।

यह बात मैं स्पष्ट रूप से कहना चाहूँगी कि हम मॉरीशसवासी वैश्विक पटल पर हिंदी का ध्वज ऊँचा फहराने के लिए कृत संकल्प हैं और संयुक्त राष्ट्र संघ में हिंदी को उचित स्थान दिलाने के लिए निरंतर प्रयास करते रहेंगे। इस प्रयास में विश्व हिंदी सचिवालय हिंदी को विश्वभाषा के रूप में प्रतिष्ठित करने हेतु तथा हिंदी को संयुक्त राष्ट्र संघ की आधिकारिक भाषा बनाने के उद्देश्य से एक वैश्विक मंच तैयार करने व सँभालने का उत्तरदायित्व निभाएगा।

यह सचिवालय को सौंपे गए दायित्वों में से एक है। दूसरा दायित्व है विश्व भर में हिंदी के संवर्धन में अपना योगदान देनेवाली समस्त संस्थाओं के साथ सक्रिय सहकारिता निभाते हुए हिंदी के बौद्धिक स्वर को बुलंद करना। इसी क्रम में 'विश्व हिंदी पत्रिका' का प्रस्तुत अंक विभिन्न क्षेत्रों में हिंदी से संबद्ध अनगिनत गतिविधियों, नीतियों तथा नई प्रवृत्तियों को रेखांकित करता है। पत्रिका में ऐसी विविधता व प्राचुर्य के लिए यथावश्यक स्थान हमेशा दिया जाएगा क्योंकि अपने अन्य उद्देश्यों को पूरा करने के साथ ही 'विश्व हिंदी पत्रिका' विद्यार्थियों तथा शोधकर्ताओं के लिए अनुसंधान का महत्वपूर्ण अभिलेख सिद्ध हुई है।

हमारा मंत्रालय सचिवालय के आगामी कार्य योजनाओं के कुशल संयोजन एवं संचालन को सदैव प्रोत्साहित करता रहेगा जिससे निर्धारित लक्ष्य प्राप्त हो सकें।

इस संकलन के लिए मैं विश्व हिंदी सचिवालय तथा उसकी संपादन टीम को बधाई देती हूँ। पत्रिका के स्थानीय तथा विदेशी लेखकों को भी बधाई।

मेरे और हमारे मंत्रालय की ओर से विश्व हिंदी समुदाय को नव वर्ष, विश्व हिंदी दिवस और मकर संक्रांति की हार्दिक शुभकामनाएँ।

श्रीमती लीला देवी दुकन-लछुमन

14 दिसंबर, 2016

HIGH COMMISSIONER OF INDIA
PORT LOUIS, MAURITIUS

सत्यमेव जयते

भारतीय उच्चायुक्त
पोर्ट लुई, मॉरीशस

संदेश

मुझे यह जानकर अति प्रसन्नता हो रही है कि विश्व हिंदी सचिवालय विश्व हिंदी दिवस के उपलक्ष्य में अपनी पत्रिका का 8वाँ अंक प्रकाशित करने जा रहा है। विश्व के कोने-कोने में फैले हिंदी प्रेमी इस पत्रिका के माध्यम से विश्व हिंदी सचिवालय की वार्षिक गतिविधियों का संपूर्ण लेखा-जोखा प्राप्त करते हैं और स्वयं को हिंदी की तात्कालिक दशा-दिशा एवं नवीन प्रगति से जुड़ा हुआ महसूस करते हैं।

विश्व हिंदी सचिवालय की स्थापना जहाँ भारत और मॉरीशस के दीर्घकालिक ऐतिहासिक और भावनात्मक संबंधों की मज़बूती को प्रदर्शित करती है वहीं संयुक्त राष्ट्र में हिंदी को आधिकारिक मान्यता दिलाने के संकल्प हेतु दोनों देशों की प्रतिबद्धता को भी द्योतित करती है। हिंदी प्रेमियों के लिए यह अत्यंत खुशी एवं गौरव की बात है कि भारत और मॉरीशस, दोनों देशों की सरकारें हिंदी भाषा के प्रचार-प्रसार और संवर्धन के लिए सतत प्रयासरत हैं। अभी हाल में ही यहाँ सचिवालय के नवीन भवन का निर्माण कार्य शुरू हुआ है और सचिवालय जल्द ही नए भवन से अपनी समस्त गतिविधियों को चलाना प्रारंभ कर देगा। सन् 2018 में होनेवाला अगला विश्व हिंदी सम्मेलन भी मॉरीशस में ही होना निर्धारित हुआ है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि हिंदी का यह महाकुंभ सफलता के नए मापदंड स्थापित करेगा और सम्मेलन में की जानेवाली विभिन्न चर्चाएँ, विश्लेषण और तत्पश्चात उन पर लिए जानेवाले संकल्प एवं अनुशंसाएँ हिंदी को नवीन शिखर तक पहुँचाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएँगी।

प्रसिद्ध भाषावैज्ञानिक नोम चोम्स्की ने वैश्वीकरण की प्रक्रिया को अंतरराष्ट्रीय एकीकरण से जोड़ते हुए उसमें भाषा की भूमिका को सर्वोपरि स्थान दिया है। उदारीकरण, भूमंडलीकरण और उपभोक्तावाद के इस युग में उद्योग और व्यापार को बढ़ावा देने के लिए हर ओर प्रतिद्वंद्विता का वातावरण बना हुआ है। ऐसे वातावरण में जो भाषा विश्व स्तर पर अपनी उपयोगिता और व्यापकता को सिद्ध करने में समर्थ होगी, वही इस वातावरण में जीवंत रहकर अपना स्थान सुनिश्चित कर सकेगी। भाषावैज्ञानिकों की मानें तो आनेवाले समय में विश्व की लगभग 10 भाषाओं के जीवित रहने की संभावना है। भाषाओं की उत्पत्ति और विकास से जुड़े भाषावैज्ञानिकों की यह भविष्यवाणी हम सभी हिंदी प्रेमियों के लिए सुखकर एवं संतोषजनक है। भविष्य में अंतरराष्ट्रीय महत्व की कुछ गिनी-चुनी भाषाओं में हिंदी विश्वभाषा का स्थान ग्रहण करेगी। हिंदी की उपयोगिता के वैश्वीकरण और बाज़ारवाद के संदर्भ में हिंदी की उपयोगिता के बढ़ने की संभावना है क्योंकि आधुनिक समय में भारत विश्व की एक समुन्नत आर्थिक शक्ति के रूप में उभरकर सामने आ रहा है जिसके चलते शिक्षा, बैंकिंग, आई.टी., उड्डयन और अन्य घरेलू क्षेत्रों के साथ-साथ बहुराष्ट्रीय कंपनियों में भी इस भाषा के जानकारों की माँग में वृद्धि हो रही है।

किसी भी भाषा की जीवंतता उसकी व्यापकता से निर्धारित होती है। आज हिंदी भारत की राजभाषा, संपर्क भाषा और जन भाषा के सोपानों को पारकर विश्वभाषा बनने की दिशा में द्रुत गति से अग्रसर है। मातृ भाषा और द्वितीय भाषा के रूप में जहाँ हिंदी भारत में सर्वाधिक बोली जानेवाली भाषा है, वहीं विश्व के अनेक देशों के स्कूलों और विश्वविद्यालयों में हिंदी अध्ययन-अध्यापन एवं शोधकार्य को बढ़ावा दिया जा रहा है। सूचना प्रौद्योगिकी, वैज्ञानिक तकनीकी, कंप्यूटर प्रयोग और व्यावसायिक, सभी दृष्टियों से हिंदी का पूर्ण विकसित और समृद्ध भाषा के रूप में उभरकर सामने आना हम सबके लिए एक शुभ संकेत है।

मैं विश्व हिंदी सचिवालय के नवनियुक्त महासचिव, प्रो. विनोद कुमार मिश्र तथा पत्रिका के संपादन कार्य से जुड़े सदस्यों को पत्रिका प्रकाशन के स्तुत्य कार्य के लिए बधाई देता हूँ और सभी हिंदी प्रेमियों के लिए संपन्न एवं समृद्ध नववर्ष की कामनाएँ करता हूँ।

अभय ठाकुर

(अभय ठाकुर)

6th Floor, L.I.C. Building, President John Kennedy Street, P.O. Box 162, Port Louis, Mauritius
Tel.: (230)208 7372/208 8123 Fax: (230) 208 8891
Email: hicom.ss@intnet.mu Website: www.indiahighcom-mauritius.org

संपादकीय

'विश्व हिंदी पत्रिका' के 8वें अंक के साथ आप सुधी पाठकों के सामने उपस्थित हूँ। यह क्षण प्रसन्नता से आप्लावित है। हो भी क्यों न! विश्व हिंदी सचिवालय की गतिविधियों को आपके समक्ष प्रस्तुत करने का इससे बड़ा और कोई माध्यम हो भी नहीं सकता। अब तक पत्रिका के 7 अंकों का प्रकाशन और वैश्विक स्तर पर उसकी स्वीकृति यह दर्शाती है कि यह अपने महनीय उद्देश्य में सफल रही है। यह विश्व हिंदी परिवार से सिर्फ़ जुड़ती भर नहीं है वरन हिंदी के संकल्प को भी पूरा करती है। इसने हिंदी को विश्वभाषा बनाने का मार्ग प्रशस्त करते हुए रचनात्मक भूमिका निभाई है। हम 21वीं सदी को सूचना एवं प्रौद्योगिकी से संचालित ज्ञान की सदी कह सकते हैं। ऐसे में हिंदी को इस यात्रा में ज्ञान की संवाहिका बन उसका मार्ग प्रशस्त करना पड़ेगा, साथ ही साथ भाषा एवं साहित्य के बीच संतुलन बनाते हुए हिंदी की भारतीय एवं भारतेतर संपदा को उन्मुक्त गगन में विचरण करने का समान अवसर भी प्रदान करना होगा। इसे एक ओर वैश्विक प्रतिस्पर्धा में बने रहने के लिए सूचना-साधनों से संपन्न बनना होगा तथा दूसरी ओर हिंदी के वैश्विक जनमानस की वैचारिकी में भी बदलाव लाना अपरिहार्य होगा, तभी वह अपनी अधिग्राही लोकव्याप्ति के लिए समादृत होगी। हिंदी सही अर्थों में तभी लोकतांत्रिक तथा बहुआयामी विश्व व्यवस्था के सर्वथा अनुकूल बन पाएगी और प्रवासी भारतीय उसमें अपनी अस्मिता का अक्स देख पाएँगे।

इतिहास इस बात का साक्षी रहा है कि ज्ञान पर जिसका अधिकार रहा है उसी ने इसे हथियार बनाकर विश्व व्यवस्था पर कब्ज़ा जमाया है। ऐसी स्थिति में हिंदी को प्रतिरोध की भाषा बनाने का भी एक विकल्प मौजूद है जिसके सहारे विश्वभाषा समुदाय के बीच दावेदारी पेश करते हुए इसे वैकल्पिक ज्ञान की भाषा के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है।

आज हिंदी संसार की समृद्ध भाषाओं में गिनी जा रही है। चाहे बात विचार, संचार या विस्तार की हो, हिंदी की स्थिति और उपस्थिति काबिल-ए-तारीफ़ है। हर दृष्टि से सक्षम तथा लगातार आगे बढ़ते रहने के जज़्बे से लबरेज़ यह दुनिया की दो महत्वपूर्ण भाषाओं—मंदारिन तथा अंग्रेज़ी के साथ खड़ी दिख रही है। आज 'विश्वग्राम' की अवधारणा के सामने 'वसुधैव कुटुंबकम' का प्राचीनतम चिंतन भी उपस्थित है जिसमें संसार भर के लोगों के बीच निहित तात्विक एकता की बात की गई है तथा जिसकी आधारशिला आध्यात्मिकता पर अवलंबित है। दूसरी ओर 'विश्वग्राम' की अवधारणा बंधनमुक्त व्यापार और व्यावसायिक समस्या तथा प्रतिस्पर्धा की बात करती है। एक आध्यात्मिक है तो दूसरा भौतिक। किंतु भौतिकता के सहारे सिर्फ़ बाज़ार बनकर रहा जा सकता है। भौतिक चिंतन एवं अनुसंधान के लिए 'निजभाषा' ही एक मात्र विकल्प है। विज्ञान और प्रौद्योगिकी में दक्षता हासिल करने के लिए भाषा विशेष की कोई ज़रूरत नहीं होती है। निजभाषा के अतिरिक्त दूसरी बाहरी भाषा खंडित संस्कृति लेकर हमारे बीच आती है और हमारे चिंतन की धारा को प्रभावित करती है तथा ज्ञान और जीवन के बीच एक बड़ी विभाजक रेखा खींचने का उपक्रम भी करती है। 'वसुधैव कुटुंबकम' के शाश्वत मूल्यों के अनुप्रयोग के द्वारा ही दोनों अवधारणाओं के बीच चिर स्थायी संतुलन कायम किया जा सकता है ।

हम निर्विवाद रूप से कह सकते हैं कि हिंदी में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी से संबंधित संप्रेषणीयता अपनी पूरी जीवंतता के साथ मौजूद है। वर्तमान में हो रहे अधुनातन आविष्कार स्रोत भाषा से लक्ष्य भाषा तक आसानी से पहुँच रहे हैं किंतु उसे स्वीकार करने में कहीं न कहीं हमारा भाषाई 'हीनताबोध' आड़े आ जाता है। सत्ता के शीर्ष पर सदियों से आसीन 'तथाकथित' विश्वभाषा हमारी अस्मिता पर हावी हो जाती है। जब फ्रांस, जर्मनी, चीन, रूस,

जापान, नॉर्वे तथा इज़राइल जैसे अनगिनत देश, जिनके जनमानस पर उक्त 'विश्वभाषा' का कब्ज़ा नहीं है, अपनी भाषा के बलबूते ज्ञान-विज्ञान और प्रौद्योगिकी में सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन कर रहे हैं तब उदात्त सांस्कृतिक एवं भाषाई विरासतवाले हम क्यों नहीं कर पा रहे? फिर भी जब तक विज्ञान और तकनीकी विशेषज्ञ हिंदी को अपनी लेखन की भाषा नहीं बनाते तब तक हिंदी जगत भाव और शैली की दृष्टि से सर्वोत्कृष्ट साहित्य से वंचित रहेगा। किसी भी भाषा की चिंतन परंपरा को आगे बढ़ाने में मौलिक वैचारिकी तथा शोध की महती भूमिका होती है तथा इन कार्यों के लिए नए शब्द एवं नई अभिव्यक्तियों की निर्मिति भी होती है। इस प्रकार ज्ञान और भाषिक संपदा साथ-साथ विकसित होते हैं। ज्ञान-विज्ञान की अभिव्यंजना शक्ति को धारदार बनाने में हिंदी अपनी चेतना, प्रतिबद्धता एवं स्वाभिमान के साथ अपनी क्षमता सिद्ध कर सकती है क्योंकि अनुसंधान एवं सृजन हृदय की भाषा में ही संभव हैं। रटकर प्राप्त ज्ञान से परीक्षा में सर्वोत्तम अंक तो प्राप्त हो सकते हैं किंतु चिंतन में स्वावलंबी हुए बिना न तो वह आविष्कार किया जा सकता है और न ही वैचारिक सोच पैदा हो सकती है। तथाकथित 'विश्वभाषा' आज तक एक भी क्रांतिकारी ग्रंथ देने में सक्षम नहीं रही है। 'गीता', 'कुरान', 'बाइबिल', 'दासकैपिटल', 'रामायण', 'महाभारत' आदि महान एवं क्रांतिकारी ग्रंथ भी अन्य भाषाओं की देन हैं।

वर्तमान सदी पिछली कई सदियों की तुलना में प्रौद्योगिक उपलब्धियों के संदर्भ में ज़्यादा गतिशील रही है। विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की मदद से हर प्रकार की दूरियाँ खत्म हुई हैं। वैश्विक सीमाएँ संकुचित हुई हैं। पिछली कम से कम तीन शताब्दियाँ पश्चिम के वर्चस्व की साक्षी रही हैं लेकिन 21वीं सदी एशिया के नाम से जानी जाएगी। एशिया की दो बड़ी शक्तियाँ—चीन एवं भारत की अर्थव्यवस्था तीव्रगामी है। विश्व बाज़ार में आनेवाले दिनों में इन दोनों देशों की भूमिका महत्वपूर्ण रहनेवाली है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि दोनों देशों की भाषाएँ—मंदारिन एवं हिंदी वैश्विक भाषाई विकल्प के रूप में उभरेंगी। दुनिया में भारत की उभरती पेशेवर युवा-शक्ति ने भी हिंदी की हैसियत को ठोस ज़मीन और समूचा आकाश दिया है। हिंदी प्रौद्योगिकी के अश्वमेघ के घोड़े पर आरूढ़, विश्वविजयिनी बनने की राह पर चल चुकी है। विश्वमन की आशा-आकांक्षा के अनुरूप उदारमना हिंदी एक सक्षम विकल्प पेश करते हुए सार्वभौमिक विस्तार प्रदान करने की दिशा में सतत अग्रसर है और विश्वभाषा बनने के लिए तमाम निकषों एवं प्रतिमानों पर कसे जाने के लिए तत्पर भी।

सदियाँ गुज़र जाती हैं तब कहीं गढ़ों एवं मठों को तोड़ने के प्रबल संकल्प के साथ इतिहास की धारा को जन-सरोकारों के अनुरूप मोड़ने का अवसर आता है। मुझे मेरी सीमाओं का ज्ञान है जो मुझे उस श्रेष्ठताबोध से बचाता है जो अब तक हुए कार्य को दोयम दर्जे का बनाने में गुरेज़ नहीं करता। लंबे समय तक शिक्षण कार्य से जुड़े होने के बाद जब सचिवालय के क्रियाकलापों से जुड़ा तो लगा कि यहाँ डूबने का खतरा बड़ा है किंतु दूसरे क्षण ऐसा लगा कि समझ और क्षमता के हिसाब से खतरा मोल लिया जा सकता है। इस क्रम में यदि कुछ नया कर सका तो वह सचिवालय के पूर्ववर्ती मनीषियों द्वारा रखी गई स्वस्थ परंपरा की बुनियाद का सुपरिणाम होगा।

प्रस्तुत अंक में हिंदी के वैश्विक वितान को विस्तार दिया गया है, साथ ही साथ साहित्य, भाषा, तकनीक, अनुवाद तथा अधुनातन मीडिया से जुड़े अनेक आधुनिक विमर्श एवं मुद्दों को शामिल करने की ईमानदार कोशिश की गई है। पिछले वर्ष सचिवालय द्वारा आयोजित अंतरराष्ट्रीय हिंदी निबंध प्रतियोगिता में प्रथम एवं द्वितीय स्थान प्राप्त कुछ विजेताओं के निबंधों सहित कुछ अन्य महत्वपूर्ण निबंधों को भी इस अंक में स्थान दिया गया है। इसके अतिरिक्त शामिल कई समसामयिक एवं महत्वपूर्ण शोध आलेखों में हिंदी से जुड़ीं समस्याओं और उनके संभावित समाधान के गंभीर प्रयास, हिंदी के सुनहले सपनों की झलक और उनके फलीभूत होने की उम्मीद भी दिखेगी।

हिंदी की शुचिता और शुद्धता को लेकर उसके आग्रही लोगों की चिंता को कितना जायज़ ठहराया जा सकता है? यह भी एक विचारणीय बिंदु है। क्या मिलावट से भाषा के अस्तित्व पर संकट आ सकता है? क्या भाषा अपना रंग-रूप खो रही है या भाषा प्राचीनता का निर्मोक उतारकर नवीनता की ओर अग्रसर हो रही है? क्या वह त्याग और ग्रहण के फलसफ़े का अनुपालन करते हुए हो रहे परिवर्तनों पर स्वीकार्यता की मुहर लगा रही है? क्या मीडिया द्वारा परोसी जा रही भाषा को मानकीकृत करने की पहल तार्किक एवं जायज़ है?

वैचारिक दरिद्रता का अनर्गल आरोप तथा मानसिक गुलामी

का भूत हमारे सर पर सवार कर दिया गया है। हिंदी की सामर्थ्य को कमतर कर मूल्यांकित करना भी एक तरह की मनमानी है। भाषाई अराजकता के पसरने का भी खतरा बना हुआ है। भाषा के संस्कार से नई पीढ़ी वंचित न रह जाए। भाषा के साथ इस तरह का व्यवहार अनुचित है और उसकी ताकत को कमतर आँककर भ्रम पैदा करने की कोशिश भी। हिंदी की वैचारिकी एवं समृद्ध शब्दसंपदा ज्ञान-विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी सहित अन्य विधाओं को मुखरता प्रदान करने में सर्वथा सक्षम है। यदि भविष्य में किन्हीं 2-3 भाषाओं में विश्व को संबोधित करने की स्थिति आती है तो निश्चित रूप से उनमें से एक हिंदी अवश्य होगी। यही हिंदी की ताकत है और यह संभव हो सका है उसकी उपयोगिता एवं बाज़ारप्रियता के चलते। हिंदी अपनी वैचारिकी की महायात्रा के कई पड़ावों को संस्पर्श करते हुए कई धाराओं को अपने भीतर समेटे हुए सतत प्रवहमान है। आज के बदले हुए परिवेश में हिंदी ने अपने परंपरागत आवरणों से बाहर निकलकर एक वैश्विक पहचान बनाई है। उसकी झोली में जो भी गिरा, निखरकर बाहर आया। पिछले दो दशकों में इस भाषा ने विकास के कई नए आयाम एवं कीर्तिमान स्थापित किए हैं। वैश्विक संवाद की मशाल ले हिंदी अग्रिम पंक्ति में खड़ी भावनात्मकता से व्यावसायिकता की ओर एवं धार्मिकता से कार्मिकता की ओर अग्रसर है।

विनोद कुमार मिश्र

महासचिव

पुनश्च...

आभार

सचिवालय का महासचिव तथा 'विश्व हिंदी पत्रिका' का प्रधान संपादक होने के नाते सर्वप्रथम हिंदी के उन्नयन एवं संवर्धन में विश्व हिंदी सचिवालय को सतत सहयोग देती आईं दोनों सरकारों मॉरीशस एवं भारत के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करना हमारा परम कर्तव्य है। सन् 2016 सचिवालय के लिए एक और महत्वपूर्ण वर्ष रहा। नए परिसर का निर्माण कार्य आरंभ हुआ। वर्षों की मुराद तब पूरी हुई जब 8 अक्टूबर, 2016 को मॉरीशस के प्रधान मंत्री, माननीय सर अनिरुद्ध जगन्नाथ एवं नवनियुक्त भारतीय उच्चायुक्त, महामहिम श्री अभय ठाकुर के कर-कमलों से प्रस्तावित सचिवालय स्थल पर विधिवत भूमि-पूजन का पवित्र कार्य संपन्न हुआ। हम माननीय प्रधान मंत्री के प्रति हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करते हैं। हम धन्यवाद देना चाहेंगे भारतीय उच्चायुक्त, महामहिम श्री अभय ठाकुर को जिन्होंने मॉरीशस में कदम रखते ही सचिवालय के मुख्यालय निर्माण को अपनी प्राथमिकता सूची में सबसे ऊपर रखा। हम भारत सरकार के विदेश मंत्रालय के प्रति विशेष आभार प्रकट करते हैं जिसने वर्षों से धीमी गति से चल रही इस परियोजना को पूर्ण आर्थिक सहयोग प्रदान करते हुए नई ऊर्जा का संचार कर अपनी प्राथमिकता एवं प्रतिबद्धता प्रकट की। मॉरीशस सरकार के शिक्षा व मानव संसाधन, तृतीयक शिक्षा एवं वैज्ञानिक अनुसंधान तथा कला एवं संस्कृति मंत्रालय के प्रति विशेष आभार जिनसे हमें निरंतर मार्गदर्शन तथा सहयोग प्राप्त होता रहा है। उच्चायोग के अन्य अधिकारियों—उप उच्चायुक्त, श्री अशोक कुमार, प्रथम सचिव, श्री अमित शुक्ल एवं द्वितीय सचिव, डॉ. नूतन पाण्डेय को विशेष धन्यवाद जिनसे प्राप्त महत्वपूर्ण सुझाव एवं अमूल्य सहयोग ने हमारा निरंतर उत्साहवर्धन होता रहा है।

इस अवसर पर पूर्व उच्चायुक्त, श्री अनूप कुमार मुद्गल को धन्यवाद देना हमारा पुनीत कर्तव्य है जिन्होंने अपने कार्यकाल के दौरान न केवल मुख्यालय निर्माण की प्रक्रिया में आनेवाली सभी बाधाओं को दूर करने में अपनी सार्थक भूमिका निभाई वरन सचिवालय की अन्य गतिविधियों के संचालन में भी सहयोग प्रदान किया।

वर्ष 2016 में सचिवालय की विभिन्न गतिविधियों में सहयोग देनेवाली राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं के प्रति विशेष आभार जिन्होंने हमारे अनुरोध को स्वीकार कर समस्त गतिविधियों के कुशल आयोजन में अपनी अहम भूमिका का निर्वाह किया। ये संस्थाएँ सचिवालय की धमनी और शिराएँ हैं। इनके प्रति शत-शत आभार। हम पत्रिका के पूर्व संपादकों के प्रति भी कृतज्ञ हैं जिनके कुशल संपादन ने पत्रिका को एक मज़बूत आधार प्रदान किया। पत्रिका को त्रुटि रहित प्रकाशित करने के उद्देश्य से संशोधन-परिवर्धन करनेवाले महात्मा गांधी संस्थान के प्राध्यापकों—डॉ. अलका धनपत, डॉ. कुमारदत्त गुदारी, डॉ. (श्रीमती) संध्या अंचराज नवसाह एवं सुश्री अंजलि चिंतामणि के भरपूर सहयोग के लिए हार्दिक धन्यवाद। सचिवालय के संपादन मंडल के सहयोगी—श्रीमती अंजलि, श्रीमती उषा, सुश्री त्रिशिला, श्रीमती विजया, डॉ. (सुश्री) देविना, सुश्री जयश्री तथा सुश्री शिक्षा और सचिवालय के अन्य दायित्व-निर्वाह करनेवाली सुश्री एशमा, सुश्री रति एवं श्री केशव द्वारा किए गए अथक परिश्रम के लिए धन्यवाद देना मात्र औपचारिकता होगी, फिर भी ये धन्यवाद, साधुवाद और आशीर्वाद के अधिकारी हैं। पत्रिका के प्रकाशन का गुरुतर भार उठानेवाले विद्या विहार प्रकाशन, नई दिल्ली एवं उनकी टीम को हार्दिक धन्यवाद।

पत्रिका को अपने अनुभव एवं ज्ञान से समृद्ध करनेवाले लेखकों, मनीषियों, अध्येताओं एवं हिंदी सेवियों के प्रति हम विनयावनत हो कृतज्ञता ज्ञापित करते हैं। कुछ आलेखों को अगले अंक में प्रकाशित करने का वचन देते हुए उनके लेखकों को अग्रिम बधाई एवं धन्यवाद। आशा है आप अन्यथा नहीं लेंगे।

'आलोचना प्रियंवदा नहीं होती है।' अत: पत्रिका आप पाठकों के सम्मुख इस उम्मीद के साथ उपस्थित है कि आप अपने सुझाव, विचार एवं अपनी बेबाक आलोचना से हमारा मार्ग प्रशस्त करेंगे ताकि अगले अंक को और बेहतर किया जा सके। आपकी सकारात्मक प्रतिक्रिया का इंतज़ार रहेगा।

विश्व हिंदी परिवार को नव वर्ष, विश्व हिंदी दिवस एवं मकर संक्रांति की हार्दिक एवं अशेष मंगलकामनाएँ।

—प्रधान संपादक

श्रद्धांजलि

1

श्री अजामिल माताबदल को श्रद्धांजलि और उसके बहाने…

—श्री गंगाधरसिंह गुलशन सुखलाल

2016 मॉरीशसीय हिंदी जगत के लिए भारी क्षति का वर्ष रहा। जैसा कि आप पत्रिका में आगे पढ़ेंगे, देश के मूर्धन्य हिंदी-सेवी, हिंदी प्रचारिणी सभा व हिंदी संगठन के पूर्व प्रधान, पत्र-पत्रिकाओं के संपादक, लेखक और विश्व हिंदी सचिवालय की शासी परिषद के सदस्य, श्री अजामिल माताबदल का मार्च 2016 में देहांत हो गया। सचिवालय से जाने के बाद मेरे पास, विश्व हिंदी पत्रिका के संपादक मंडल की ओर से श्री माताबदल पर आधारित एक आलेख का अनुरोध आया। शायद इसलिए कि उनकी श्रद्धांजलि सभा का संयोजन किया था अन्यथा उनके बारे में किताबों और जीवनवृत्त से परे ऐसा कुछ नहीं जानता कि अजामिल माताबदल के व्यक्तित्व और कृतित्व पर किसी प्रकार के आलेख का दावा कर सकूँ ।

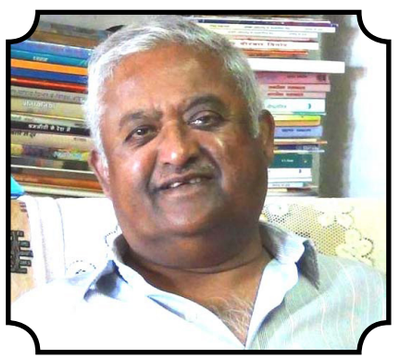

संगठन, सभा तथा सचिवालय की औपचारिकताओं से परे, आत्मीयता से अधिक उनसे आदर की डोर से बंधा हुआ था। वह आदर जो उनको हमारी पीढ़ी के लिए ''गुरुजी माताबदल'' बनाए हुए था। उनके बचपन की कहानी कभी सुनने का अवसर मिला नहीं था। शिक्षा-दीक्षा आदि के विषय में सचिवालय की शासी परिषद के सदस्यों की फ़ाइल में पड़े जीवनवृत्त ने बताया था। परिवार के सदस्यों से ऊपरी परिचय रहा, अधिकतर सदस्यों के नाम गुरुजी की मृत्यु के बाद ही मालूम हुए।

गुरुजी और मेरे पिताजी पंडित एयरगा के बैठका में सहपाठी थे, वरिष्ठ होने के नाते वे पंडित जी की अनुपस्थिति में पिताजी सहित पूरी कक्षा को पढ़ाते थे, अच्छा पढ़नेवाले को टॉफ़ी इनाम देते थे… ऐसे कई वाकये उनके अंतिम संस्कार में जाने से पूर्व ज्ञात हुए। ऐसे ही, अंतिम यात्रा आरंभ होने की प्रतीक्षा में पंडाल में बैठे मित्र-सहयोगी की टोलियों ने अनुभव सुनाए। श्रद्धांजलि सभा के आयोजन के लिए जब उनकी स्मृति में एक विडियो बनाने की ठानी तो उनकी पत्नी से ''अजामिल घर में'' और बच्चों से ''अजामिल माई फ़ादर'' की शैली में संस्मरणात्मक विवरण पाए। उनकी श्रद्धांजलि सभा में आए सहयात्रियों ने ऐसी बातें साझा कीं जो किसी किताब, किसी जीवनवृत्त में कभी पढ़ी ही नहीं जा सकती थीं। इसलिए अजामिल माताबदल जी के व्यक्तित्व और कृतित्व पर किसी प्रकार के अकादमिक आलेख का दंभ न भरते हुए उनको श्रद्धांजलि देने के बहाने उनकी मृत्यु से आई रिक्तता और उस रिक्तता को घेरे कुछ प्रश्न आपके सामने रखने की अनुमति माँगते हुए कुछ लिख रहा हूँ। इसमें भी कई विचार ऐसे हैं जो विश्व हिंदी समाचार के मार्च 2016 अंक के संपादकीय में लिख चुका हूँ।

माताबदल जी की मृत्यु और उन तमाम अनुभवों ने यह सिखाया कि उनके समान, उनकी पीढ़ी के अधिकतर हिंदी सेवियों (कुछ जाने-पहचाने और अधिकतर अंजान) के जीवन की कहानी के दो आयाम हैं। एक वह जो आम तौर पर औपचारिक बायोडेटा के रूप में आपके सामने रखा जाता है। एक दूसरा आयाम वह जो फ़िल्मी और रूमानी होने के डर से, अत्यधिक संवेदनशीलता और आत्मीयता के चलते शुद्ध अकादमिकता को होनेवाले खतरे के कारण किताबों, पत्रिकाओं में अंकित नहीं किया जाता। वह आयाम मृत्यु व श्रद्धांजलि सभा जैसी विशेष परिस्थितियों में लोक साहित्य के समान मौखिक रूप से अभिव्यक्त किया जाता है और परिस्थितियों की सरगर्मी समाप्त होने के बाद कुछ स्मृतियों में कैद रहकर उनके साथ ही चला जाता है। लिखित व प्रकाशित रह जाते हैं औपचारिक और बेस्वादी बायोडेटा।

लेकिन वही अनुभव अब यह भी बता रहे हैं कि संभवत: वह समय आ गया है जब माताबदल जी जैसे लोगों के जीवन के उस दूसरे आयाम को उस रूमानियत व आत्मीयता के साथ ही देखा और समझा जाए। दृष्टि भावुकतावाली हो लेकिन उद्देश्य विवेकपूर्ण।

विवेकपूर्ण इसलिए कि उद्देश्य उनके संघर्ष, उनके कार्य, त्याग आदि का लंबा चौड़ा बखान करके उनको देवतुल्य सिद्ध करना नहीं है। उसका कोई फ़ायदा भी नहीं होगा। देव तुल्य को देवालय में बिठाकर ऐसा आदर्श मान लेना जिसकी कथाएँ सुनाई जाएँ लेकिन जिसके पदचिह्नों पर परिवर्तित परिस्थितियों का हवाला देकर कभी भी चला न जाए—हमारी पीढ़ी की बहुत सोची समझी चाल है। उस

दिमागी दंगल में कौन पड़े! उद्देश्य भूत-वर्तमान-भविष्य में उनके सामने खड़े, उनसे विपरीत मानसिकतावालों को छोटा दिखाकर इन दिवंगतों के बड़प्पन को गगन-चुंबी बनाना भी नहीं है। अन्यथा आप जानते हैं कि आजकल हिंदी सम्मेलन के नाम पर ट्रैवल एजेंसियाँ चलानेवाले और हिंदी के नाम पर जेब भरने के लिए विदेश जाकर दाल-बेसन बेचनेवालों के ठेले हर दूसरे गली-चौराहे पर मिलने लगे हैं। ऐसे लोग माताबदल जी की पीढ़ी के सच्चे लोगों के साथ तुलना के प्रतिमान भी बने तो उस पीढ़ी का अपमान ही हो।

उसी प्रकार से यह बताना कि देखो माताबदल जी साइकल पर कितनी दूर हिंदी पढ़ने जाते थे, उन्होंने अपने भाई-बहन की देख-भाल की, कष्ट सहे, गरीबी झेली आदि बताकर यह रोना रोना कि आज की पीढ़ी तमाम सुविधाओं के बावजूद भाषा के साथ कितना कम जुड़ रही है? भी उद्देश्य नहीं है। कठिनाइयों और सुविधाओं की संकल्पना बहुत ही व्यक्तिनिष्ठ होती है। देश-काल-वातावरण के अनुरूप भी। उनकी तुलना से किसी भी अंतर को सिद्ध कर पाना भावुकता में संभव है···तार्किक रूप से नहीं। नई पीढ़ी इस बात को बहुत अच्छी तरह से समझ चुकी है और इसका प्रमाण हर परिवार में युवकों के चटपटे उत्तरों में मिल जाता है।

असल में यहाँ बात कुछ और है। अजामिल जी की है ही नहीं, उनके बहाने कुछ और···की है।

उद्देश्य हिंदी की उस पीढ़ी के जीवन, मानसिकता, संस्कार को बाद की पीढ़ियों संबंधी उन्हीं डेटा के समक्ष रखकर हिंदी की स्थिति की वैज्ञानिक समझ पाने का प्रयास है। एक धातु पर एक रसायन छिड़का जाए तो एक प्रतिक्रिया होती है। 20 साल बाद उसी धातु पर उसी रसायन को फिर से छिड़का जाए तो वही प्रतिक्रिया होनी चाहिए। यदि प्रतिक्रिया में अंतर है तो धातु बदली है या रसायन या फिर वातावरण। ऐसे में पीढ़ियों के अंतर का रोना रोने के स्थान पर अत्यंत ही विवेकपूर्ण तरीके से उस अंतर की बेहतर समझ विकसित करते हुए किसी प्रकार की समस्या का निदान खोजा जा सकता है। निदान न भी हो तो अपेक्षाओं को नई दिशा दी जा सकती है। या कम से कम मोहभंग से तो बचा जा सकता है। भगत सिंह के जीवन की चयनित घटनाओं के फ़िल्मांकन के माध्यम से नई पीढ़ी से फ़िल्म की समाप्ति पर देश की जय का नारा बुलवाने की कोशिशें होती रही हैं। उसके बावजूद देशभक्ति में परिवर्तन होने का शोक बरकरार है। आज के आम-ओ-खास 23 वर्षीय के जीवन की एक-एक घटना को एक चार्ट में भगत सिंह के जीवन की एक-एक घटना के सामने रखकर शुद्ध वैज्ञानिक रूप से तुलनात्मक अध्ययन किया जाए तो पता चले कि और कितनी फ़िल्मों को टैक्स-फ्री करने की ज़रूरत है।

जन्म : 5 अक्टूबर 1976, मॉरीशस

शिक्षा : • हंसराज कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय से हिंदी में स्नातक व स्नातकोत्तर, • अमेरिकी सरकार की फ़ुलब्राइट छात्रवृत्ति के तहत सीराक्यूज़ विश्वविद्यालय, न्यू यॉर्क में शोध • अफ़्रीकी संघ द्वारा प्रायोजित अफ़्रीकन लीडरशिप इन आई.सी.टी. कोर्स।

व्यावसायिक अनुभवः • 2010-2016 तक सचिवालय से संबद्ध रहते हुए विश्व हिंदी पत्रिका के संपादक रहे • मॉरीशस राष्ट्रीय टी.वी. व रेडियो प्रसारण केंद्र में समाचार व अन्य कार्यक्रम प्रस्तोता • 2003 से महात्मा गांधी संस्थान में हिंदी व्याख्याता तथा 2008 से वरिष्ठ व्याख्याता • हिंदी के अकादमिक व साहित्यिक क्षेत्र में योगदान के लिए 2015 में 'विश्व हिंदी सम्मान' प्राप्त।

सृजनात्मक लेखन क्षेत्र में सक्रियता : • 2000 से आज तक सतत हिंदी व मॉरीशसीय भोजपुरी कविता लेखन • मॉरीशस व भारत की रचनाएँ प्रकाशित • हिंदी, फ्रेंच, अंग्रेज़ी, क्रीओल आदि से तथा इनमें अनेक साहित्यिक रचनाओं का अनुवाद • राष्ट्रीय स्तर पर अनेक कार्यक्रमों में आपके लिखे गीतों व नृत्य नाटकों पर प्रस्तुति • मॉरीशस की हिंदी कविता व समग्र साहित्य पर अनेक राष्ट्रीय अंतरराष्ट्रीय मंचों पर आलेख व प्रपत्र प्रस्तुति • मॉरीशसीय हिंदी साहित्य की नई पीढ़ी के लेखकों के प्रोत्साहन तथा नेटवर्किंग के उद्देश्य से दूसरी शताब्दी का अभिव्यक्ति मंच की स्थापना व संचालन।

संप्रति : • वरिष्ठ व्याख्याता, हिंदी विभाग, महात्मा गांधी संस्थान, मॉरीशस।

जैसा कि उपरोक्त संपादकीय में लिखा था, प्रवासी कहे जानेवाले देशों की समाजभाषावैज्ञानिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक, ऐतिहासिक विशेषताएँ उनको कुछ विशिष्ट स्थितियों और समस्याओं से रू-ब-रू कराती हैं। इन देशों में हिंदी की स्थिति की विशेषताएँ, उसकी रक्षा व प्रसार के लिए अनिवार्य संघर्ष और उसकी दिशाएँ निर्धारित करने की जद्दोजहद से जो अवगत हैं उनके संचित अनुभव के आधार पर कह सकते हैं कि इन देशों में हिंदी के पहले कदम

से लेकर उसकी वर्तमान गतिमानता तक के लिए स्थानीय तौर पर ज़मीन से जुड़कर, वास्तविकताओं के धरातल पर खड़ा होकर सतत संघर्षरत रहते हुए पूरी निष्ठा के साथ निरंतर प्रयासरत रहने की आवश्यकता रही है।

इसका कारण भी स्पष्ट है। संस्कृति संरक्षण, संप्रेषण, सृजनात्मक अभिव्यक्ति और ज्ञान संवर्धन का माध्यम होना भाषा की भूमिकाओं में 4 प्रमुखतम भूमिकाएँ हैं। इन भूमिकाओं में इन प्रवासी देशों और समाजों में संस्कृति संरक्षण को सबसे महत्वपूर्ण माना जाता है। इसी भूमिका के सूत्र में बाकी भूमिकाएँ बाँधी जाती हैं। संस्कृति की पूर्वजीय स्रोत-भूमि से दूर-भूमि पर रहनेवालों के लिए भाषा दोनों वतनों के बीच संस्कृति के सेतु का काम करती है और नव प्रवास के देशों में अस्मिता की पहचान भी बनती है। मॉरीशस की प्रथम प्रकाशित हिंदी कविता होली संस्कृति संरक्षण का संदेश लेकर आई थी। देश की ऐतिहासिक हिंदी प्रचारिणी सभा का सिद्धांत वाक्य है भाषा गई तो संस्कृति गई। देश और समाज में भाषा की संस्कृति-संरक्षक भूमिका की आवश्यकता में अभी भी कोई अंतर नहीं आया। इस प्रकार के उद्देश्य की पूर्ति के लिए इतिहास और वर्तमान में भी, भाषा केवल संप्रेषण, सृजनात्मक लेखन आदि भूमिकाओं तक सीमित नहीं रखी जा सकती। भाषा सेवक की भूमिका भी उस सीमा से आगे जाने की माँग करती है।

इसलिए ऐसे देशों में 'अजामिल माताबदल और उनके जैसे लोग व्यक्ति नहीं, अंग्रेज़ों की पीढ़ी की उस विचारधारा के प्रतिनिधि हैं जो भाषा के लिए अपना समय, पैसा, ऊर्जा और कुछ को घर-जायदाद तक फूँक डालने के लिए प्रेरित करती है। कई अभी भी फूँक रहे हैं। इसलिए इनको हम हिंदी के सेवक नहीं हिंदी के मिशनरी कहना उचित मानते हैं।' इनकी इस मानसिकता को जब उनके द्वारा झेली गई कठिनाइयों की पृष्ठभूमि में देखें तो वे और भी बड़ी दिखती हैं लेकिन यह पहले ही तय था कि इस तुलनात्मक विवेचन में उन बातों को ध्यान में नहीं लिया जाएगा, छोड़िए।

आइए उस पीढ़ी का, बाद की 2 पीढ़ियों के साथ तुलनात्मक अध्ययन आरंभ करते हैं।

पहली पीढ़ी, मेरी पीढ़ी : मिशनरियों के संघर्ष से स्थापित तंत्रों, प्रणालियों, संस्थाओं और प्राप्त सुविधाओं की बदौलत आज इसी पीढ़ी के पास हिंदी की सबसे बड़ी शैक्षणिक उपाधियाँ हैं, अनेकानेक विषयों पर शोध ग्रंथ हैं और विशेषकर, वह मेरी ही पीढ़ी है जिसमें हिंदी की नौकरी से रोटी पानेवालों की संख्या सर्वाधिक है। सृजनात्मक लेखन के अतिरिक्त (इस क्षेत्र में अभी तक मेरी पीढ़ी अभिमन्यु अनत के समकक्ष कोई नाम उत्पन्न नहीं कर पाई) मॉरीशस की हिंदी को विश्व में गौरवान्वित करनेवाले कारणों का संचय है इस पीढ़ी में। पुरानी पीढ़ी के संघर्षों का सुंदर फल।

परंतु मिशनरियों की पीढ़ी का तत्काल उत्तराधिकारी होने और हिंदी के क्षेत्र में शैक्षणिक उत्कृष्टताओं के बावजूद इस पीढ़ी में भाषा के प्रति सक्रिय चेतना की मात्रा उतनी नहीं दिखती। काम तो बहुत हो रहा है लेकिन हिंदी के ज्ञान के अनुपात में, शिक्षा की उपलब्धता और अध्ययन की सुविधाओं के अनुपात में देखें तो 'हिंदी से पाने बनाम हिंदी को देने' का जो अनुपात पुरानी पीढ़ी में था वह हम तक आते-आते निश्चित ही परिवर्तित हो गया। ज्ञान संवर्धन का मात्रा में है। श्लाघ्य है। लेकिन संस्कृति संरक्षणवाली भूमिका में इस पीढ़ी में भाषा-प्रयोग या भाषा-सेवा का भाव निश्चय ही कम है। इसका प्रतिबिंब संप्रेषण और सृजनात्मक अभिव्यक्ति की कमी में साफ दिखता है। संप्रेषण के क्षेत्र में जहाँ धारा के साथ बहना स्वाभाविक माना जाने लगा है वहीं सृजनात्मक अभिव्यक्ति में किस भाषा में लिखने से कितने लोग समझेंगे वाला गणित किया जाता है।

तुलना का एक क्षेत्र रोज़गार का भी है। अंग्रेज़ों में कम शिक्षा पाने अथवा हिंदी क्षेत्र से रोज़गार न पानेवाले भी अनेकानेक समर्पित जन मिल जाते थे। कोई अंग्रेज़ी अध्यापक, कोई किसान, कोई स्वास्थ्य कर्मचारी। इनमें से एक तो बैरिस्टर भी थे जिन्होंने यहाँ तक कहा कि शायद मैंने कानून की पढ़ाई इसलिए की कि मैं हिंदी की वकालत कर सकूँ। वहीं मेरी पीढ़ी में, जिसको हिंदी से सर्वाधिक लाभ हो रहा है, उस मिशनरी प्रवृत्ति की जगह एक कर्मचारी प्रवृत्ति घर करती दिख रही है। काम में पूरी ईमानदारी है लेकिन वह काम नौकरी की शर्तों और समय की परिधियों से बाहर निकलने में कठिनाई का अनुभव कर रहा है। गाँव का बैठका अनाथ हो रहा है। कार्यक्रमों में कुर्सियाँ खाली रह रही हैं। पत्रिकाओं के पन्ने भरने और पाठक खोजने में कठिनाई हो रही है।

माताबदल जी और उनकी पीढ़ी के किसी भी मिशनरी को मैंने सन्यासी के रूप में नहीं देखा। गृहस्थी उनकी भी थी और आज के प्रतिमानों से भरी-पूरी ही थी। गुरुजी गर्व और कृतज्ञता से कहते थे हिंदी ने मुझे नौकरी दी, गाड़ी दी, बच्चों की शादी करवाई, विदेश यात्रा करवाई। यह सब हिंदी की उनकी उस नौकरी ने किया जो उनकी काबिलीयत के आधार पर उनको सरकार ने दी थी। इस नौकरी के अतिरिक्त दशकों तक वे बिना शुल्क हिंदी प्रचारिणी सभा को अपना हर शनिवार देते रहे। उसकी पत्रिकाओं के संपादन में रातें काटीं। हिंदी संबंधी हर कार्यक्रम में अपनी बीमार आँखों से अपना पैट्रोल जलाकर पहुँचते रहे। वह सब कुछ न करने पर भी हिंदी की नौकरी से मिलनेवाले पैसों में कोई कमी तो नहीं आती?

चलिए इतना न सही लेकिन इन दशकों में वे इनमें से कोई एक सेवा छोड़ यदि कुछ डिग्रियाँ और पा लेते तो शायद 'स्वर्गीय डॉ. माताबदल' कहलाते। पेंशन भी अधिक पाते।

वह क्या था या है इस पीढ़ी में कि वह जैसा करती रही··· वैसा ही करती रही? आप सहमत होंगे न कि इस देश की और इस जैसे भाषा समुदायों की विशेषताओं को देखते हुए यहाँ भाषा के लिए स्कीम ऑव ड्यूटी की सीमाओं में बँधे कर्तव्य-बोध से काम नहीं चलता। कुछ कम पड़ ही जाता है। पूर्ण कालिक कर्मचारी के मन में कम से कम अंशकालिक मिशनरी भाव हो तो हिंदी की ऊर्जा गतिमान रह सकेगी।

अब हमारे बाद की पीढ़ी : वर्षों पहले जब हिंदी के क्षेत्र की समझ बनाने के प्रयास में माताबदल जी व अन्य समादरणीय अंग्रेज़ों से निकट का संपर्क स्थापित हुआ तो आरंभ अनेक विषयों पर मतभेद के साथ ही हुआ। मतभेद के अनेक विषयों में एक यह था कि उनकी पीढ़ी और हमारे बाद की पीढ़ी के बीच की खाई बहुत गहरी हो रही है। उसको पाटने के लिए नए माध्यमों, नए तकनीकों की आवश्यकता है। उस समय भी हिंदी के ऑनलाइन प्रसार का जोश बहुत था (अभी उससे भी अधिक है : उसका महत्व अपनी जगह अक्षुण्ण है और इस विचाराभिव्यक्ति से उस पर संदेह पैदा करना ध्येय नहीं है)। इस दिशा में कदम उठाए भी। सफलता, खट्टे-मीठे अनुभव और सार्थकता सबके दर्शन हुए।

लेकिन हिंदी को नेट और क्लाउड पर सशक्त बनाने के लिए जिस पीढ़ी को चुना उसकी प्रवृत्ति पर धीरे-धीरे अचंभा होने लगा है। वह कविता, कहानी ऑनलाइन लिखने लगी, संपर्क संबंध ऑनलाइन बनाने लगी। ठीक है। भविष्य में उसका लेखन अधिक सरलता से दुनिया को उपलब्ध होगा, यह भी विश्वास है। लेकिन अब तो ऐसा लग रहा है जैसे वह सारे काम ऑनलाइन ही करती रहेगी। कवि सम्मेलन के निमंत्रण से लेकर उसकी खबर तक को ऑनलाइन ही पढ़ेगी। परिचर्चा, सम्मेलन में ऑनलाइन ही उपस्थित रहेगी। श्रद्धांजलि सभा से भी ऑनलाइन ही जुड़ेगी। इ-हिंदी अभियान की तमाम सकारात्मक उपलब्धियों के बीच यह कभी नहीं सोचा था कि यह पीढ़ी इतनी जल्दी अपना पूरा अस्तित्व ऑनलाइन ही जीने की सुविधाजनक स्थिति से इतना स्नेह कर बैठेगी कि पोस्टरों और खबरों को लाइक करके थोड़ा बहुत शेयर करने में ही अपने कर्तव्यों की इति मान लेगी। क्लाउड से संपर्क में आने पर ज़मीन से जुड़कर, वास्तविकताओं के धरातल पर खड़ा होकर सतत संघर्षरत रहते हुए पूरी निष्ठा के साथ निरंतर प्रयासरत रहने की उस आवश्यकता से रिश्ता ही नहीं जोड़ पाएगी यह नभचारी पीढ़ी।

अच्छा ज़्यादती नहीं करते हैं। खेलने-कूदने की उम्र (भले ही आजकल वह उम्र जीवन के उत्तरार्ध तक खिंचती दिखाई दे रही है) में किसी से भाषा का सेवक बनने की अपेक्षा रखना अन्याय है। पर समस्या को यदि दूसरी दृष्टि से देखें तो खेलने-कूदने की उम्र समाप्त होने के बाद यह पीढ़ी वर्तमान पीढ़ी से अधिक कर्मचारी प्रवृत्ति अपना लेगी। उसको मिशनरी होने का मार्ग दिखानेवाली पीढ़ी तो तब तक जा चुकी होगी और उत्तराधिकार में उसे नौकरी, डिग्री, इंक्रीमेंट का फ़ॉर्मुला ही मिलेगा।

बात को लंबा नहीं खींचते। इस तुलनात्मक अध्ययन के निष्कर्ष पर आते हैं। प्रवासी वंश वही। भगवान, ग्रंथ, कथा वही। सुविधाएँ अधिक। अवसर अधिक। पर हर 20 साल बाद उसी धातु पर उसी रसायन को छिड़कने से प्रतिक्रिया कैसे बदलने लगी?

इस अनुभव प्रयोगशाला अध्ययन में अभी तक परिणाम के रूप में प्रश्न ही मिले हैं। मिशनरी से कर्मचारी और कर्मचारी से नभचारी बनने की प्रक्रिया को लेकर बहुत सारे प्रश्न। ऐसे प्रश्न जो माताबदल जी जैसे भाषा सेवा के लिए प्रज्वलित दीपकों की कतार में हर बहुमूल्य दीपक के बुझने पर जल उठते हैं। क्या बदला है? क्यों बदला है? क्या कमी रही? किसका अतिरेक हो गया? क्या शिक्षा बदलनी होगी? शिक्षा के उद्देश्य? विरासत का स्वरूप? किताबें? पाठशालाएँ? आदर्श? नौकरी की संभावनाएँ? मंच? माध्यम? शैली? क्या हिंदी सेवा को नौकरी बना देने से काम चलेगा या फिर कार्यक्रम ऑनलाइन मंचों पर करने से? कितना उदार बनाएँ हिंदी को? क्या दारू, वोडका, पार्टी आदि पर बने सभी गीतों को हिंदी के नए प्रतिमान मान लेने से आनेवाली पीढ़ी हिंदी की सेवा में लग जाएगी? प्रश्न ही हैं, बहुत सारे।

अच्छी बात यह है कि ये प्रश्न केवल मुझे या मॉरीशस के लोगों को नहीं मिले। इस विषय पर चिंतन करनेवाले दक्षिण अफ्रीकी हिंदी प्रचारकों, सरनामी सेवियों, अमेरिकी नव प्रवासी परिवारों, यूरोपीय संस्था अध्यक्षों सभी का अनुभव उनको इन्हीं प्रश्नों के घेरे में लाया है। इतने लोग जुड़ेंगे तो संभवत: उत्तर शीघ्र मिल जाएँगे। शीघ्रता की आवश्यकता है भी। गुलज़ार कहते हैं ''मौत मुंसिफ है कमोबेश नहीं''। हर मृत्यु, हर श्रद्धांजलि अपने साथ और एक रिक्तता लानेवाली है। प्रवासी देशों में ऐसी रिक्तताएँ हिंदी की वैश्विकता के लिए खतरा है।

अभी के लिए उन सभी के प्रति पुन: श्रद्धा सुमन जिनकी मृत्यु भी इतने सारे प्रश्न उठाकर हिंदी की सेवा करती गई। प्रणाम गुरुजी!

पेची राफ़्रे, मॉरीशस
gulshansooklall@gmail.com

2

विश्व हिंदी सचिवालय की ओर से वर्ष 2016 में हिंदी जगत से विदा हुए महानुभावों को भावपूर्ण श्रद्धांजलि

श्री रवींद्र कालिया

9 जनवरी, 2016 को नई दिल्ली में हिंदी के प्रख्यात उपन्यासकार, कहानीकार तथा संस्मरण लेखक, श्री रवींद्र कालिया का 77 वर्ष की आयु में निधन हो गया। आपका जन्म 11 नवंबर, 1939 को पंजाब के जालंधर शहर में हुआ था। आप 60 के दशक में 'धर्मयुग' पत्रिका के संपादन कार्य में विश्वविख्यात लेखक धर्मवीर भारती के सहयोगी थे व कोलकाता से प्रकाशित 'वागर्थ' पत्रिका के संपादक भी रहे। बाद में आप भारतीय ज्ञानपीठ के निदेशक तथा 'नया ज्ञानोदय' पत्रिका के संपादक बने। आप साठोत्तरी कहानी के प्रमुख लेखकों में व ज्ञानरंजन तथा दूधनाथ सिंह की पीढ़ी के चर्चित लेखक रहे हैं। आपकी मुख्य कृतियाँ इस प्रकार हैं—'नौ साल छोटी पत्नी', 'चाल', 'गौरैया', 'काला रजिस्टर', 'गरीबी हटाओ', 'बाँके लाल', 'गली कूचे', 'चकैया नीम सत्ताइस साल की उमर तक', 'ज़रा सी रोशनी', 'तीस साल बाद', (कहानी-संग्रह), 'खुदा सही सलामत हैं', 'ए बी सी डी', '17 रानडे रोड' (उपन्यास), 'स्मृतियों की जन्मपत्री', 'कामरेड मोनालिज़ा', 'सृजन के सहयात्री', 'ग़ालिब छुटी शराब' (संस्मरण), 'राग मिलावट मालकौंस', 'नींद क्यों रात भर नहीं आती' (व्यंग्य)। आपने निम्न पत्रिकाओं व पुस्तकों का संपादन भी किया है- 'वागर्थ', 'नया ज्ञानोदय', 'गंगा जमुना', 'वर्ष' (प्रख्यात कथाकार अमरकांत पर एकाग्र), 'मोहन राकेश संचयन' तथा 'अमरकांत संचयन'। आपको उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान द्वारा 'प्रेमचंद स्मृति सम्मान', 'साहित्य भूषण सम्मान' एवं 'लोहिया सम्मान', मध्य प्रदेश साहित्य अकादमी द्वारा 'पदुमलाल बक्शी सम्मान' एवं पंजाब सरकार द्वारा 'शिरोमणि साहित्य सम्मान' से सम्मानित किया गया है।

श्री अमर सिंह रमण

9 जनवरी, 2016 को सूरीनाम के विख्यात कवि, नाटककार तथा हिंदी-हिंदुस्तानी के कर्मठ सेवक, श्री अमर सिंह रमण का 83 वर्ष की आयु में देहांत हो गया। आपका जन्म 23 जनवरी, 1932 को हुआ था। आपने आरंभिक शिक्षा डच प्राइमेरी स्कूल में प्राप्त की। सन् 1960 में भारत से श्री महातम सिंह से प्रेरणा पाकर तथा सन् 1980 में भारत जाकर आपने हिंदी का अध्ययन किया। आपने केंद्रीय हिंदी संस्थान से डिप्लोमा और कोविद की उपाधि प्राप्त की। आप एक किसान और दर्ज़ी थे जिन्होंने हिंदी स्वाध्याय और अध्यापन को विभिन्न आपदाओं के बावजूद अपना जीवन धर्म बना लिया। अहम तथा धन, दोनों से रहित समाज सेवी श्री अमर सिंह रमण शब्दों व दिल के अनंत धनी थे। बहुमुखी प्रतिभावाले श्री अमर सिंह रमण ने कवि, अभिनेता, रंग निर्देशक, गायक तथा समाज सेवी होते हुए हमेशा नेपथ्य में काम किया। सन् 1957 में आपके प्रयासों से 'रामचरितमानस' को पढ़ने-पढ़ाने के लिए बनी 'प्रकाश पाठशाला' आपके लिखे नाटक, एकांकी, गीत एवं रामलीला जैसी भारतीय सांस्कृतिक गतिविधियों का केंद्र बन गई। आपकी कविताओं में प्रवास का दर्द है। आपको वर्तमान पीढ़ी के साथ-साथ भावी पीढ़ी की चिंता है तथा आपके विचारों में देश प्रेम, हिंदी प्रेम व संस्कृति प्रेम की अग्नि सदा जलती रहती है। आपकी कृतियाँ इस प्रकार हैं- 'फूलों के पंछी', 'कृष्ण सुदामा', 'लक्ष्मी पूजा', 'फूलों का बहार', 'बसंत-होली' आदि। आपने विभिन्न त्योहारों पर अवसरानुकूल गीत एवं नाटक लिखे हैं जिनका मंचन भी किया जाता है।

श्री अनिरुद्ध नीरव

17 फरवरी, 2016 को हिंदी साहित्यकार, नवगीतकार तथा सरगुजिहा साहित्य को अपनी रचनाओं से समृद्ध करनेवाले सुप्रसिद्ध लेखक, श्री अनिरुद्ध नीरव का 70 वर्ष की आयु में मृत्यु हो गई। आपका जन्म 1 जुलाई, 1945 को अंबिकापुर के सरगुजा ज़िला, छत्तीसगढ़ में हुआ था। आप नवगीत आंदोलन के अग्रणी रचनाकार माने जाते हैं। आपने कई कवि सम्मेलनों एवं 'आकाशवाणी' तथा 'दूरदर्शन' के कार्यक्रमों में भाग लिया है। आपकी रचनाएँ 'धर्मयुग',

'नवनीत', 'कादंबिनी' जैसी साहित्यिक पत्रिकाओं में प्रकाशित हुईं। आपकी कृतियों में कहानियों तथा बाल-साहित्य के साथ-साथ 'उड़ने की मुद्रा में' व 'खेल बिन बच्चा' जैसे नवगीत-संग्रह एवं 'सिर्फ़', 'दिन भर का मैनपाट', 'बैल मत ख़ुद को समझ', 'बहस के बाद भी' आदि कविताएँ शामिल हैं। आपने सरगुजिहा भावभूमि पर छत्तीसगढ़ के संघर्षों को अपनी कविताओं में पहचान दी।

डॉ. ल्युदमिला सावेलयेवा

12 मई, 2016 को रूस में हिंदी व गुजराती भाषा की अध्यापिका, डॉ. ल्युदमिला सावेलयेवा का निधन हो गया। रूस में हिंदी तथा गुजराती के शिक्षण व प्रसार के क्षेत्र में आपका योगदान सराहनीय व ऐतिहासिक है। स्नातक के बाद आपने लेनिनग्राद (संप्रति सेंट पीटर्सबर्ग) के इंस्टिट्यूट ऑव ओरियंटल स्टडीज़ में काम करना आरंभ किया। बाद में आप रूस के छोटे शहर तरूसा में बस गईं जहाँ आपने इंडियन फ्रेंड्स क्लब की स्थापना की। यहाँ आपने भारतीय संस्कृति को उजागर करते हुए रूसी बच्चों को हिंदी सिखाई तथा उनको भारत से जुड़ी संस्कृति, लोक साहित्य तथा नृत्य से परिचित कराया। आपके छात्रों ने 'रामायण' पर आधारित पात्रों तथा कालिदास कृत 'अभिज्ञातशाकुंतलम्' पर आधारित प्रस्तुतियों के अंतर्गत अपनी अभिनय कला का प्रदर्शन किया। आपका संपूर्ण जीवन भारत तथा रूस के संबंधों को और घनिष्ठ बनाने में बीता। गुजराती भाषा में अपनी निपुणता के कारण आपको सन् 1974 में रादुगा प्रकाशन गृह में काम करने के लिए मास्को आमंत्रित किया गया। आपने 1965 में रूसवासियों के लिए गुजराती पाठ्य-पुस्तक प्रकाशित करवाई। आपके द्वारा रूसी कृतियों का गुजराती अनुवाद तथा कई गुजराती उपन्यासों व कविताओं का रूसी अनुवाद विशेष उल्लेखनीय हैं।

श्री अनुप केशवदेव पुजारी

26 मई, 2016 को महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा के पूर्व कुलसचिव, श्री अनुप केशवदेव पुजारी का 56 वर्ष की आयु में देहांत हो गया। आपने 8 दिसंबर, 2006 से 18 फरवरी, 2009 तक विश्वविद्यालय में कुलसचिव के रूप में कार्यभार संभाला। आप यशवंतराव चव्हाण महाराष्ट्र मुक्त विश्वविद्यालय, नासिक में प्लानिंग ऑफ़िसर, कर्नाटक केंद्रीय विश्वविद्यालय, गुलबर्ग तथा डॉ. हरिसिंह गौर केंद्रीय विश्वविद्यालय, सागर में भी कुलसचिव का पद संभाल चुके हैं। आपके निधन पर कुलपति प्रो. गिरीश्वर मिश्र की प्रमुख उपस्थिति में विश्वविद्यालय के प्रशासनिक भवन में शोक सभा रखी गई जिसमें प्रतिकुलपति, प्रो. आनंद वर्धन शर्मा, कुलसचिव, डॉ. राजेंद्र प्रसाद मिश्र, संयुक्त कुलसचिव, कादर नवाज़ ख़ान तथा अधिकारियों व अध्यापकों ने आपके प्रति भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित की।

श्री सुभाष चंद्र गुप्त 'मुद्राराक्षस'

13 जून, 2016 को हिंदी के विश्वविख्यात साहित्यकार, श्री सुभाष चंद्र गुप्त 'मुद्राराक्षस' का 82 वर्ष की आयु में निधन हो गया। आपका जन्म 21 जून, 1933 को लखनऊ के बेहटा गाँव में हुआ। 'युगसाक्षी' पत्रिका के संपादक, डॉ. देवराज ने आपको 'मुद्राराक्षस' नाम दिया। आपने कहानी, कविता, उपन्यास, आलोचना, नाटक आदि विधाओं में तथा इतिहास, संस्कृति एवं समाजशास्त्रीय क्षेत्र में अपने लेखन से विशेष प्रसिद्धि पाई। साहित्य के अलावा आप समाज और सियासत से भी जुड़े रहे। आप समय और समाज के अप्रतिम टिप्पणीकार रहे तथा संगीत और ललित कलाओं में भी सक्रिय रहे। साथ-साथ आप कई सामाजिक आंदोलनों से भी जुड़े रहे। साहित्य की दुनिया में आप बेबाकी से अपनी बात कहनेवाले व्यक्ति के रूप में परिचित हैं। सांप्रदायिकता, जातिवाद, महिला उत्पीड़न जैसे गंभीर मुद्दों पर आपने ज्वलंत विचार व्यक्त किए। आपकी 65 से अधिक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। 'आला अफ़सर', 'कालातीत', 'नारकीय', 'दंडविधान', 'हस्तक्षेप', 'सरला' तथा 'बिल्लु और जाला' आपकी प्रमुख कृतियाँ हैं। आपने 'नई सदी की पहचान' व 'श्रेष्ठ दलित कहानियाँ' आदि का संपादन भी किया। आपकी कई पुस्तकों का अंग्रेज़ी और अन्य भाषाओं में अनुवाद भी हुआ। आपको 'साहित्य नाटक अकादमी पुरस्कार' तथा विश्व शूद्र महासभा द्वारा 'शुद्राचार्य' और आंबेडकर महासभा द्वारा 'दलित रत्न' की उपाधियाँ प्राप्त हैं।

श्री नीलाभ अश्क

23 जुलाई, 2016 को प्रख्यात लेखक, कवि और पत्रकार, श्री नीलाभ अश्क का 70 वर्ष की आयु में देहांत हो गया। आपका जन्म 16 अगस्त, 1945 को मुंबई में हुआ था। इलाहाबाद में शिक्षा

प्राप्ति के बाद आपने साहित्य-सृजन का एक लंबा रास्ता तय किया। आप हिंदी के प्रसिद्ध कहानीकार, उपन्यासकार तथा कवि श्री उपेंद्रनाथ अश्क के सुपुत्र हैं। आपने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से अपना एम.ए. पूरा किया। 1980 में आप बी.बी.सी. की विदेश प्रसारण सेवा की हिंदी सर्विस में बेतौर प्रोड्यूसर लंदन जाकर 4 वर्षों तक काम करते रहे। 1984 में भारत लौटने के बाद आपने एक कवि, लेखक एवं अनुवादक के रूप में हिंदी की सेवा की। आपने राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय की त्रैमासिक पत्रिका 'नटरंग' का संपादन किया। आप 'नीलाभ प्रकाशन' नामक प्रकाशन गृह का संचालन करते थे जो आपके नाम पर आधारित था। आपकी प्रमुख कृतियाँ इस प्रकार हैं—'जंगल ख़ामोश है', 'उत्तराधिकार', 'शोक का सुख', 'शब्दों से नाता अटूट है', 'ईश्वर का मोक्ष', 'अपने आप से लंबी बातचीत', 'चीज़ें उपस्थित हैं' तथा 'ख़तरा अगले मोड़ से उस तरफ़ है'। आप अपने संस्मरणों पर आधारित ब्लॉग 'नीलाभ का मोर्चा' लिख रहे थे। इसके अतिरिक्त आपने 'हिंदी साहित्य का मौखिक इतिहास' नामक पुस्तक लिखी एवं शेक्सपीयर, ब्रेख्त व लोर्का के कई नाटकों के काव्यात्मक अनुवाद के साथ-साथ लेर्मोन्तोव के उपन्यास का भी अनुवाद 'हमारे युग का एक नाटक' शीर्षक से किया। आपने शेक्सपीयर के चर्चित नाटक 'किंग लियर' का अनुवाद 'पगला राजा' शीर्षक से किया। आपने 'द गॉड ऑव स्मॉल थिंग्स' नामक पुस्तक का अनुवाद 'मामूली चीज़ों का देवता' शीर्षक से किया था जिसके लिए आपको अरुंधति राय की 'बुकर पुरस्कार' से सम्मानित किया गया।

पंडित बृजदेव बेहरदर

27 जुलाई, 2016 को दक्षिण अफ्रीका के प्रसिद्ध हिंदी शिक्षक, पंडित बृजदेव बेहरदर का निधन हो गया। आपने भूगोल, संस्कृत तथा हिंदी में बी.ए. की उपाधि प्राप्त की। आपने अपना अध्यापन कार्य इसिपिंगो प्राथमिक स्कूल में किया। आप डरबन में कई प्राथमिक स्कूलों के प्रधान रह चुके हैं। आप चैट्सवथ के ग्लेंनोवर माध्यमिक स्कूल में अंग्रेज़ी शिक्षक के रूप में कार्यरत थे व वरिष्ठ छात्रों को हिंदी तथा संस्कृत पढ़ाते थे। हिंदी शिक्षण के अलावा आप आर्य प्रतिनिधि सभा, दक्षिण अफ्रीका में पुरोहित की कक्षाएँ भी चलाते थे। आप हिंदी के विकास के लिए जीवनपर्यंत कार्य करते रहे। दक्षिण अफ्रीका में हिंदी के विकास में आपके योगदान हेतु संघ द्वारा आपको 'विद्या रत्न पुरस्कार' से सम्मानित किया गया।

सुश्री महाश्वेता देवी

28 जुलाई, 2016 को कोलकाता में प्रसिद्ध पत्रकार, साहित्यकार, आंदोलनधर्मी तथा सामाजिक कार्यकर्ता, सुश्री महाश्वेता देवी का 90 वर्ष की आयु में देहांत हो गया। आपका जन्म 14 जनवरी, 1926 को ढाका (अविभाजित भारत) में हुआ था। आपने विश्वभारती विश्वविद्यालय, शांतिनिकेतन से अंग्रेज़ी विषय में बी.ए. तथा कोलकाता विश्वविद्यालय से एम.ए. की उपाधि प्राप्त की। आपने मेहनत व ईमानदारी के बलबूते अपने व्यक्तित्व को निखारा। आपकी प्रमुख रचनाओं में 'अग्निगर्भ', 'अरण्येर अधिकार' (जंगल के दावेदार), 'हज़ार चौरासी की माँ', 'मातृछवि' आदि शामिल हैं। आपके लगभग 20 कहानी-संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। इसके अतिरिक्त आपके 100 उपन्यास बांग्ला में प्रकाशित हो चुके हैं। आपने कई साहित्यिक पत्रिकाओं के लिए लघुकथाएँ भी लिखीं। आपने 1956 में अपनी प्रथम गद्य रचना, 'झांसीर रानी' (झांसी की रानी), 1957 में पहले उपन्यास 'नाती', उसके बाद 'मर्डरर की माँ', 'जली थी अग्निशिखा', 'जकड़न', 'चोट्टि मुंडा और उसका तीर', 'बनिया बहु' तथा 'हिरो-एक ब्लु प्रिंट' की रचना की। 'मिलू के लिए', 'मास्टर साब' जैसी लघुकथाएँ, 'स्वाहा', 'रिपोर्ट', 'वान्टेड' जैसी कहानियाँ, 'उम्रकैद', 'अल्कांत कौरव' जैसी आत्मकथाएँ, 'कृष्ण द्वादशी', 'अमृत संचय', 'गहराती घटाएँ', 'भारत में बंधुआ मज़दूर', 'उन्तीसवीं धारा का आरोपी', 'ग्राम बांग्ला', 'आदिवासी कथा' जैसे आलेख, 'श्री श्री गणेश महिमा', 'ईंट के ऊपर ईंट' जैसे यात्रा संस्मरण तथा 'टेरोडैक्टिल', 'दौलती' जैसे नाटक आदि आपकी कृतियों में शामिल हैं। इसके अतिरिक्त आपकी रचनाओं पर फ़िल्में भी बनीं यथा 1968 में 'संघर्ष', 1993 में 'रूदाली', 1998 में 'हज़ार चौरासी की माँ' और 2006 में 'मोटी माई'। आपको 1996 में 'ज्ञानपीठ पुरस्कार', 1977 में 'मेग्सेसे पुरस्कार', 1979 में 'साहित्य अकादमी पुरस्कार', 1986 में 'पद्मश्री' तथा 2006 में 'पद्म विभूषण' से सम्मानित किया गया।

श्री प्रेम स्वरूप श्रीवास्तव

31 जुलाई, 2016 को साहित्यकार, श्री प्रेम स्वरूप श्रीवास्तव का 86 की आयु में निधन हो गया। आपका जन्म 11 मार्च, 1929

को जौनपुर के खरौना गाँव में हुआ। आप उत्तर प्रदेश के शिक्षा विभाग में विभिन्न पदों पर कार्यरत रहकर साहित्य सेवा में सहयोग देते रहे हैं। पिछले 6 दशकों से आप प्रचुर मात्रा में साहित्य सृजन करते रहे हैं। आपकी 50 से अधिक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। आपने कहानियों, नाटकों, लेखों, रेडियो नाटकों, रूपकों तथा बाल साहित्य की रचना भी की है। 'हिंदोस्तां हमारा', 'अरुण यह मधुमय देश हमारा', 'यह धरती है बलिदान की', 'जिस देश में हमने जन्म लिया', 'मेरा देश जागो', 'अमर बलिदान', 'मदारी का खेल', 'मंदिर का कलश', 'हम सेवक आपके', 'आँखों का तारा' आदि आपकी प्रमुख कृतियाँ हैं। इसके अतिरिक्त आपने 300 से अधिक वृत्त चित्रों का लेखन कार्य किया है। आपकी रचनाएँ हिंदी की चर्चित पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही हैं। आपके साहित्यिक योगदान एवं सेवाओं के लिए भारत सरकार सहित अनेक संस्थाओं द्वारा आपको पुरस्कृत व सम्मानित किया गया।

डॉ. प्रभाकर श्रोत्रिय

16 सितंबर, 2016 को हिंदी के सुप्रसिद्ध आलोचक तथा नाटककार, डॉ. प्रभाकर श्रोत्रिय का 77 वर्ष की आयु में निधन हो गया। आपका जन्म 19 दिसंबर, 1938 को मध्य प्रदेश के जावरा शहर में हुआ था। आपकी प्रारंभिक शिक्षा संस्कृत-हिंदी पाठशाला में हुई। आपने विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन में उच्च शिक्षण प्राप्त करने के पश्चात एम.ए. की उपाधि प्राप्त की तथा वहीं पर प्राध्यापक नियुक्त हुए। तत्पश्चात आप भोपाल के हमीदिया कॉलेज में शिक्षक बने। बाद में आपने हिंदी में पीएचडी एवं डीलिट की। आपने हिंदी आलोचना जगत में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई हालाँकि आलोचना के इतर भी विशेषकर हिंदी नाटकों को आपने एक नई दिशा दी। आप मध्य प्रदेश साहित्य परिषद के सचिव तथा 'साक्षात्कार' एवं 'अक्षरा' पत्रिकाओं के संपादक रहे हैं। इसके अतिरिक्त आप भारतीय भाषा परिषद के निदेशक व 'वागर्थ', 'नया ज्ञानोदय' एवं साहित्य अकादमी की पत्रिका 'समकालीन भारतीय साहित्य' के संपादक के साथ-साथ भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली के निदेशक भी रह चुके हैं। 'सुमन: मनुष्य और स्रष्टा', 'प्रसाद का साहित्य: प्रेमतात्विक दृष्टि' तथा 'कविता की तीसरी आँख' जैसी आलोचनात्मक रचनाओं के साथ ही, 'रचना एक यातना है', 'अतीत के हंस: मैथिलीशरण गुप्त', 'जयशंकर प्रसाद की प्रासंगिकता', 'मेघदूत: एक अंतर्यात्रा', 'शमशेर बहादुर सिंह', 'मैं चलूँ कीर्ति-सी आगे-आगे' एवं 'हिंदी-कल आज और कल' जैसे कविता-संग्रह, 'हिंदी: दशा और दिशा', 'सौंदर्य का तात्पर्य', 'समय का विवेक', 'समय समाज साहित्य' जैसे निबंध तथा 'इला', 'साँच कहूँ तो', 'फिर से जहाँपनाह' जैसे नाटक आपकी प्रमुख कृतियों में शामिल हैं। आपने 'हिंदी कविता की प्रगतिशील भूमिका', 'सूरदास : भक्ति कविता का एक उत्सव', 'प्रेमचंद: आज', 'रामविलास शर्मा-व्यक्ति और कवि', 'धर्मवीर भारती : व्यक्ति और कवि', 'समय में कविता', 'भारतीय श्रेष्ठ एकांकी (दो खंड)', 'कबीरदास : विविध आयाम', 'इक्कीसवीं शती का भविष्य', 'इला' नाटक के मराठी एवं बांग्ला अनुवाद तथा 'कविता की तीसरी आँख' का अंग्रेज़ी अनुवाद आपके द्वारा संपादित पुस्तकें हैं। इसके अलावा आपने 'महाभारत' पर अत्यंत गंभीर कार्य किए हैं। आपको 10वें विश्व हिंदी सम्मेलन, भोपाल के दौरान भारत सरकार द्वारा 'विश्व हिंदी सम्मान 2015' से सम्मानित किया गया। आपको 'सारस्वत सम्मान 2002', 'मिश्र मंदिर कोलकाता सम्मान 1998', 'समय शिखर सम्मान' (कान्हा लोकोत्सव, 1991), 'श्रेष्ठ कला आचार्य' (मनुवन, भोपाल, 1989), उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान द्वारा 'अखिल भारतीय आचार्य रामचंद्र शुक्ल पुरस्कार', मध्य प्रदेश साहित्य परिषद द्वारा 'आचार्य नंददुलारे वाजपेयी पुरस्कार', मध्य प्रदेश के हिंदी साहित्य एवं संस्कृति न्यास, देवरिया द्वारा 'अखिल भारतीय श्री शारदा सम्मान', माधव राव सप्रे पत्र संग्रहालय द्वारा 'रामेश्वर गुरु साहित्यिक पत्रकारिता पुरस्कार' आदि से सम्मानित किया गया।

डॉ. विवेकी राय

22 नवंबर, 2016 को हिंदी और भोजपुरी के विख्यात साहित्यकार डॉ. विवेकी राय का निधन हो गया। डॉ. राय ने 70 से ज़्यादा किताबें लिखीं हैं जिनमें 'सोनामाटी', 'लोकऋण', 'जुलूस रुका है' 'और समर शेष है' से उन्हें विशेष पहचान मिली। वे हमेशा निर्विवाद रहे तथा मात्र विख्यात साहित्यकारों को ही नहीं बल्कि छोटे लेखकों को भी अपना पूरा समय देते थे। उन्हें साहित्य भूषण, शरद जोशी पुरस्कार तथा यश भारती पुरस्कार प्राप्त है।

□

हिंदी विविध आयाम

वैश्विक पटल पर हिंदी ने अब इतना विस्तार पा लिया है कि एक वैश्विक भाषा के रूप में उसके प्रति कई विचारकों की आश्वस्तियाँ, आशंकाएँ, आकांक्षाएँ एवं चिंताएँ विविध संदर्भों में व्यक्त होने लगी हैं। संपादक मंडल की ओर से हिंदी के बढ़ते इन्हीं आयामों पर आधारित 'विश्व हिंदी पत्रिका' का यह अंक आपके समक्ष प्रस्तुत है। हिंदी की अनेकरूपता सर्वज्ञात हो रही है। सचिवालय का ध्येय भी वस्तुत: यही है कि विश्व हिंदी समुदाय तक हिंदी से संबंधित नवीनतम सूचनाएँ पहुँचे। पत्रिका के इन विविध आलेखों में जहाँ एक ओर डेनमार्क, स्पेन तथा कनाडा जैसे देशों में हिंदी शिक्षण से जुड़ी समस्याओं और उनके समाधान पर विचार किया गया है, वहीं दूसरी ओर हिंदी शिक्षण में अशुद्धि संबंधी विश्लेषणात्मक प्रयोगों और उसकी वर्तनी के मानकीकरण से जुड़े गंभीर सवालों को भी उजागर किया गया है। मॉरीशस में हिंदी के विकास में एक कर्मठ संस्था तथा प्रचारक की क्या ऐतिहासिक भूमिका हो सकती है, इसका भी उल्लेख किया गया है। हिंदी का स्वरूप बदल रहा है लेकिन उसका किस तरह और किस हद तक बदलना समीचीन है ? इन आलेखों को पढ़ते हुए पाठक इस पर सोचने के लिए प्रवृत्त होंगे, यह आशा है। साथ ही कुछ ऐसे भी आलेख संकलित हैं जो मॉरीशस और विदेशों में हिंदी पत्रकारिता के ऐतिहासिक पहलू, हिंदी और सिनेमा से जुड़े तथ्यात्मक विचार तथा हिंदी रंगमंच और हिंदी भाषा के परस्पर संबंध पर भी प्रकाश डालते हैं।

3

हिंदी की दुर्दशा–चौराहे पर खड़ी

—डॉ. पीटर फ्रीडलैंडर

जन्म : 1956, कैंब्रिज, इंग्लैंड

शिक्षा : सन् 1991 में आपने एस.ओ.ए.एस, लंदन विश्वविद्यालय से, हिंदी के मध्यकालीन कवि, संत रविदास के जीवन एवं रचनाओं पर आधारित अपना पीएचडी पूर्ण किया है।

प्रकाशन : रविदास की जीवनी और कृतियाँ (1992), वेल्कुम संस्था में हिंदी हस्तलेखों का विवरणात्मक सूची (1996), दायाबाई की बानी (2004) और चरणदास का भक्ति पदार्थ (2013), हिंदी जासूसी कहानियाँ (2015), मौखिक और हस्तलिखित परंपराओं में कबीर की बानी (2015)

संप्रति : 1996 से 2008 तक इन्होंने ला ट्रोब विश्वविद्यालय, मेलबॉर्न, ऑस्ट्रेलिया में हिंदी प्राध्यापक के रूप में कार्यरत रहे। 2008 से 2010 तक सिंगापुर में हिंदी कार्यक्रम की स्थापना की। संप्रति ऑस्ट्रेलियाई राष्ट्रीय विश्वविद्यालय में आप हिंदी के वरिष्ठ प्राध्यापक हैं।

ऑस्ट्रेलिया में हमने देखा है कि पिछले साल हिंदी की यात्रा में कुछ नई बातें सामने आईं और हम सब नई दिशाओं की ओर बढ़ने लगे। वैसे तो मैं पूरी तरह से यह ठीक-ठीक नहीं बता पाऊँगा कि हर एक शहर में क्या-क्या हुआ लेकिन फिर भी जो मैंने देखा वह बहुत ही उत्साहजनक है। चारों ओर जहाँ-जहाँ हिंदी-भाषी समाज है, वहाँ हिंदी के प्रेमियों ने एक-दूसरे के साथ संपर्क करके समाज को और भी समृद्ध बना दिया है लेकिन इस साल के बारे में कुछ और कहने से पहले मैं आप लोगों को कुछ बताना चाहता हूँ कि बहुत सालों से मुझे लगा कि हिंदी की स्थिति काफ़ी नाज़ुक थी। उन दिनों मुझे ऐसा लगता था कि···

हिंदी उस जगह पर पहुँच गई है जैसे चौराहे के बीच खड़ी कोई औरत दुविधाग्रस्त हुई सोचती है कि अब मैं कहाँ जाऊँ। एक तरफ़ से लोग आ रहे हैं जिनके मुँह से यह नारे बाज़ी होती है कि, ''हिंदी के माध्यम से हमें अपनी पारंपरिक संस्कृति की रक्षा करनी चाहिए'' जबकि दूसरी ओर से एक भीड़ चली आ रही है जिसमें बहुत सारे लोग हैं जो हमको बताते हैं कि, ''हिंदी, उर्दू बाज़ार की भाषा है जिससे हम सैकड़ों ग्राहकों को आकर्षित कर सकें ताकि हमारे माल की बिक्री में बढ़ोतरी हो और हमें चुनावों में वोट मिलें।''

फ़िलहाल एक ओर रास्ते में वह देख पा रही है कि बहुत लोग आ रहे हैं जो गाना गाते हुए कहते हैं कि हिंदी-उर्दू प्रेम की बोली है और बॉलिवुड की दुनिया में हमें अपनी आज की समस्याओं को भूल जाना चाहिए।

अंत में एक रास्ता है जहाँ सन्नाटा छाया हुआ है जिसपर भारत के अनगिनत आम आदमी हैं जो अब भी हिंदी में सौदा करते हैं ताकि वे अपनी रोज़ी-रोटी कमा पाएँ और अपने हकों को लेकर लगातर जूझ रहे हैं।

बेचारी हिंदी इस दुर्दशा में क्या करेगी ? जाम हुए रास्ते के बीच खड़ी वह किसके साथ जाए ?

यह तो सच है कि हिंदी के द्वारा लोग अपनी संस्कृतियों के साथ जुड़े रहते हैं लेकिन भाषा अस्मिता और संप्रेषण दोनों से भी जुड़ी है। अगर हम इसको सिर्फ़ संस्कृति को बनाए रखने तक सीमित रखें तो जो जीवित शक्ति उसमें है वह मुरझा जाएगी।

हम चारों तरफ़ देखते हैं कि आजकल नौजवान अंग्रेज़ी के पीछे दौड़ते हैं, हिंदी के पीछे नहीं। लेकिन जब फ़िल्मों की बात होने लगती है तो बात कुछ और है। अगर हम भाषा को सिर्फ़ एक ही सांस्कृतिक परंपरा से बाँधते हैं तो स्पष्ट है कि यह भाषा के आकर्षण को हानि पहुँचाती है।

लेकिन सभी लोग चाहते हैं कि भाषा कली की तरह खिल जाए और इससे संस्कृति और अपनी-अपनी अस्मिता दोनों की सुंदरता निखर जाए। अगर स्त्री के रूप में हिंदी हमारे बीच खड़ी हो तो प्राचीन काल के सौंदर्य बोध को धारण करके वह समसामयिक तो नहीं लगेगी, होना चाहिए कि वह अपने निजी शील को रखते हुए आज की नारी के रूप में अपने विचार प्रकट करे तभी तो आज के नौजवान उसकी बातों को सुनेंगे।

यह भी सच है कि जब से आर्थिक नवीनीकरण शुरू हुआ, समाचार पत्रों और टी.वी. चैनलों में हिंदी विज्ञापनों के द्वारा अत्यधिक माल की बिक्री हुई। लेकिन दुनिया में पैसा और राजनीति सब कुछ नहीं है, किसी के जीवन में अगर सिर्फ़ तर्क और अर्थ हो तो वह यंत्रचालित निर्जीव पुतली की तरह बन जाता है।

मैं सोचता हूँ कि दुनिया में सब के जीवन में पैसे की ज़रूरत है लेकिन सिर्फ़ वहाँ तक जिससे वह परिवार को ठीक से सँभालें। आजकल बहुत सारे लोग एक अंधी दौड़ में फँस गए हैं जिसमें उनका लक्ष्य केवल धनवान होना बन गया है। अब मान की जगह लोग शान के बारे में ज़्यादा सोचते हैं। हिंदी की शोभा इसमें है कि वह जहाँ तक उचित हो, समय के साथ चले लेकिन वह उन लोगों की महफ़िल में न रहे जो उसको उपभोक्तावाद की दासी बनाना चाहते हैं।

मैं सोचता हूँ कि दुनिया में सब के जीवन में पैसे की ज़रूरत है लेकिन सिर्फ़ वहाँ तक कि परिवार को ठीक से सँभालें। आजकल बहुत सारे लोग एक अंधी दौड़ में फँस गए हैं जिसमें उनका एक ही लक्ष्य धनवान होना बन गया है। अब मान की जगह लोग शान के बारे में ज़्यादा सोचते हैं। हिंदी की शोभा इसमें हो कि हिंदी समय के साथ चले जहाँ तक उचित हो लेकिन इन लोगों की महफ़िल में न रहे जो उसको उपभोक्तावाद की दासी बनाना चाहते हैं।

अब बात आ गई फ़िल्मों की जहाँ अब तक हिंदी रानी की तरह राज करती है। कोई प्यार का गाना हो आजकल उसमें ज़रूर कुछेक अंग्रेज़ी शब्द आ गए हैं, 'जब वी मेट' की तरह। लेकिन जब गहराई से भाव या जज़बात प्रकट करने की आवश्यकता होती है तो भाषा हिंदी-उर्दू ही होगी। डायलॉगों में भी कभी-कभी कोई 2-4 शब्द जैसे 'ओ माय गॉड' तो शायद अंग्रेज़ी शब्दों में भी हो लेकिन खयालों की अभिव्यक्ति के लिए हिंदी-उर्दू ही होगी।

साहित्य में भी यह बातें स्पष्ट हैं। अगर लोग भारत के दलित वर्ग या स्त्रियों की स्थिति के बारे में बारीकी से कुछ दिखाना चाहते हैं तो हिंदी-भाषी क्षेत्रों में हिंदी के ही प्रयोग के द्वारा असलियत का चित्रण हो सकता है।

लेकिन हिंदी की स्थिति इसमें भी बहुत नाज़ुक है, किसी शरीफ़ औरत की तरह वह सब की बात सुनती है, सब की भावनाएँ समझने की कोशिश करती है लेकिन अंत में अपनी मान-मर्यादा का पालन करते हुए अपना फ़र्ज़ निभाती है जिससे कि लोगों को यह दिखे कि सब की भलाई किस राह पर है।

अंत में हिंदी भी उस ओर देखती है जहाँ वे लोग खड़े हैं जिनकी बात कोई नहीं सुनता जो अब भी गाँवों में, कस्बों में और बस्तियों में रहते हैं। हिंदी-भाषी क्षेत्रों में ऐसे लोगों की संख्या अब भी बहुत है जो आम तौर पर घर पर हिंदी में ही बातचीत करते हैं लेकिन बहुत लोग इन गरीबों की आवाज़ सुनने के लिए तैयार नहीं हैं।

मध्यवर्गीय लोग इनकी मेहनत चाहते हैं, वोट चाहते हैं, पैसा चाहते हैं लेकिन गरीबों की आवाज़ अमीर भला कब सुनना चाहते हैं? वे मध्यवर्गीय लोगों की तरह नहीं हैं कि अपने बच्चों को अंग्रेज़ी माध्यम स्कूल भेज सकें। उनके लिए घर की बोली अब भी हिंदी है।

उनके लिए भाषा का मुख्य लक्षण न संस्कृति बनाए रखना, न बिक्री बढ़ाना, न ही दूसरों को अपने अस्तित्व के बारे में बताना है बल्कि वह सिर्फ़ रोज़ी-रोटी कमाने का साधन है। अगर हिंदी उनका साथ नहीं देती तो उन लोगों की हालत क्या होगी?

खैर यह तो सब काल्पनिक बातें हैं जैसे उस पुराने नाटक में है जिसमें हिंदी और उर्दू उस ज़माने की राजनीति के प्रतीक बन गए थे।

लेकिन कभी-कभी जब मैं बड़ी सभाओं में रहता हूँ, मुझे ऐसा लगता है कि हिंदी भारत की बहू है जिसको लेकर घर में खलबली मच गई है।

इस नाटक में शायद रूढ़िवादी दृष्टकोण सास का होगा जो चाहती हैं कि बहू घर के परंपरागत काम सँभाले जबकि ससुर चाहते हैं कि आजकल के ज़माने में बहू भी घर के बाहर से आमदनी कमाकर घर को और समृद्ध बनाए।

इस नज़रिये से देखें तो पतिदेव निश्चित वही हैं जो सोचते हैं कि पत्नी प्यार की दुनिया की ओर राह दिखाए और कौन है जो आम जनता का पात्र निभाता है? वही जो घर के नौकर-नौकरानी जिनके बगैर घर में कुछ भी नहीं हो सकता।

लेकिन इस युग में हिंदी किसी की अधीन नहीं होनी चाहिए, समकालीन स्वतंत्र स्त्री की तरह हिंदी के लिए आवश्यक है कि वह अपने लिए निर्णय ले कि वह कब और कहाँ जाए।

पिछले साल की जितनी सभाओं में मैं गया जहाँ हिंदी को लेकर चर्चा की गई, मुझे लगा कि अब ऑस्ट्रेलिया में लोगों को लगने लगा

है कि हिंदी उन नाटकों से मुक्त होती जा रही है।

अब ज़माना आ गया है जब हिंदी के लिए सिर्फ़ एक राह नहीं चुनना है, अब वह स्वतंत्र है और अब वह हर एक दिल की वाणी बन सकती है।

जब हम हिंदी को बहू के रूप में नहीं देखते तो वह अपने आप में घर की मालकिन बन जाती है, वह स्वयं रिद्धी-सिद्धी बन जाती है जो सब कुछ सँभाल सकती है। अब मुझे ऐसा लगता है कि मैं ऐसे रूप में हिंदी का विकास देखना चाहता हूँ जो किसी वर्ग विशेष की आवाज़ न हो बल्कि सबकी आवाज़ हो। मुझे उम्मीद है कि अब सब के मुँह से हिंदी में बुलंद आवाज़ में मुझे सुनने को मिलेगा कि भारतीय परंपराएँ अब भी सशक्त हैं, भारतीय समाज अब भी विकास की राह पर है, भारतीय गंगा-जमुना संस्कृति अब भी दुनिया में विद्यमान है और चाहे अमीर या गरीब हो सब में एक-दूसरे के साथ हिंदी में जुड़े रहने की संभावना है।

अंत में मैं इस साल की गतिविधियों के बारे में दो शब्द कहना चाहता हूँ। फ़िलहाल यह कहना मुश्किल है कि हर एक राज्य में क्या हो रहा है। इसलिए मेलबॉर्न के डॉ. दिनेश श्रीवास्तव, सिडनी की माला मेहता जी और कैनबरा से मैंने पिछले 2 सालों से राष्ट्रीय कार्यशालाएँ आयोजित कीं जिनमें हमने सभी राज्यों से प्रतिनिधियों को आमंत्रित किया। वर्ष 2015 में पहली कार्यशाला कैनबरा में आयोजित की गई थी और इस साल वह मेलबॉर्न में संपन्न हुई। इस साल लगभग 40 लोगों ने इसमें भाग लिया और शिक्षा के अलावा लोगों ने पत्रकारिता, प्रसारण, मीडिया, रंगमंच, संगीत और साहित्य के क्षेत्रों में ऑस्ट्रेलिया में हिंदी के विकास के बारे में अपना विचार प्रस्तुत किया।

इससे यह ख़ास बात ज्ञात होती है कि प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में हिंदी के प्रति लोग जागरूक हैं। लगभग सभी बड़े-बड़े शहरों में हिंदी भाषा की स्कूली पढ़ाई को बढ़ावा देने के लिए लोग सक्रिय हैं। पिछले साल राष्ट्रीय पाठ्यक्रम स्वीकृत होने के बाद और भी स्कूलों में हिंदी चलाने की बात शुरू की गई थी। छोटे शहरों जैसे कैनबरा से लेकर महानगरों तक सब में इसके बारे में बात होने लगी। खैर, इस पर सोचना चाहिए कि इस देश में चाहे योजनाएँ बनाने का काम केंद्रीय सरकार का है लेकिन सरकार बनाने का कर्तव्य प्रदेशों और क्षेत्रों का है। इससे विकास की गति अलग-अलग जगहों में अपनी रफ़्तार पर है। सिडनी और मेलबॉर्न में विकास बराबर बढ़ता जा रहा है।

इस साल मैंने भी दक्षिण ऑस्ट्रेलिया की प्रतिनिधि, अमिता मल्होत्रा से भेंट की और उनसे सुना कि विक्टोरिया की तरह वहाँ राज्य सरकार के द्वारा कदम उठाया जा रहा है ताकि ज़्यादा से ज़्यादा स्कूलों में हिंदी की पढ़ाई हो सके जहाँ उसकी माँग है। उम्मीद है कि 2017 तक ज़्यादा स्पष्ट जानकारी सामने आएगी कि पश्चिमी ऑस्ट्रेलिया और क्वींसलैंड में हिंदी शिक्षा के संसाधनों के संवर्धन में किस तरह के कदम उठाए जा रहे हैं। इस साल मेलबॉर्न की कार्यशाला और सिडनी की एक संगोष्ठी में जोकि हिंदी दिवस के अवसर पर श्री रेखा राजवंशी द्वारा आयोजित की गई हिंदी के विभिन्न आयामों पर विचार-विमर्श हुआ। इन कार्यशालाओं में भी इसके बारे में बातें हुईं कि अब ऑस्ट्रेलिया में सृजनात्मक कार्यों में भी लोग बहुत ही सक्रिय हैं। इसके साथ-साथ अनेक जगहों पर लोगों के द्वारा कुछ सांस्कृतिक कार्यक्रमों का भी आयोजन किया गया है। मेलबॉर्न में लगातार संगीत के लिए स्वर संध्या और साहित्य के लिए साहित्य संध्या नामक कार्यक्रम की परंपराएँ चली आ रही हैं और कैनबरा जैसे शहरों में भी कुछ ख़ास कार्यक्रम आयोजित किए गए।

उनमें से एक नाटक, 'अंधी दौड़' उल्लेखनीय है जो ज्योत्सना ज्योति के द्वारा लिखित और निर्देशित था। उसमें बहुत ही सुंदर ढंग से यह दिखलाया गया कि आजकल के ज़माने में विदेश में बसे भारतीय मूल के परिवारों को किस तरह की समस्याओं का सामना करना पड़ता है। खास तौर पर मुझे लगा कि इसमें यह भी चित्रित किया गया कि भारतीय परिवारों में माता-पिता की पीढ़ी और युवा पीढ़ी के बीच के तनाव कैसे होते हैं। जब युवा पीढ़ी अपने परिवारों की आकांक्षाओं के खिलाफ़ और समकालीन परिस्थिति को देखकर अपने जीवन में नई राहें अपनाती हैं आवाज़ भी स्पष्ट सुनने में आई जिसके बारे में मैं सोच रहा था। लेखिका ने बहुत अच्छी तरह से दिखलाया है कि इस जमाने में देश-विदेश में किस तरह से लोग पारंपरिक, रुढ़िवादी, उद्धारवादी और क्रांतिकारी विचारों को हिंदी में व्यक्त करते हैं। अभिनेताओं और अभिनेत्रियों की आवाज़ों में मैं यह भी सुन सकता था कि आजकल की समस्याओं के समाधान के लिए लोगों को किस तरह की सोच अपनानी चाहिए और किस रूप में हिंदी अब दुनिया के मंच पर नायिका का रूप धारण कर सकती है।

कैनबरा, ऑस्ट्रेलिया
peter.friedlander@anu.edu.au

4

डेनमार्क में हिंदी व भारतीय संस्कृति का स्वरूप

—श्रीमती अर्चना पैन्यूली

डेनमार्क में हिंदी व भारतीय संस्कृति का सरंक्षण

किसी समाज, संस्कृति तथा परिवेश को समझने व स्रोत सामग्री के अध्ययन के लिए भाषायी दक्षता महत्वपूर्ण है। मीडिया, समाज व दुनिया में उच्च व्यापार के लिए क्षेत्रीय अंतर्दृष्टि का होना अनिवार्य है जिसमें स्थानीय भाषा की जानकारी एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। अत: विभिन्न क्षेत्रीय भाषाओं में विशेषज्ञता हासिल और विकसित करने की हमेशा से माँग रही है। यह अलग-अलग वर्गों व परिवेश को समझने में और भौगोलिक क्षेत्र की दृष्टि से भी प्रासंगिक है।

हिंदी क्यों सीखें?

हरेक देश की एक निजी भाषा होती है। ऐसे में कोई भी भाषा चाहे वह कितनी ही विशिष्ट क्यों न हो, विदेशी भूमि में बहुत अधिक महत्व प्राप्त नहीं कर सकती। फिर हम हिंदुस्तानी तो विभिन्न भाषाओं में बँटे हैं। पूरा हिंदुस्तान भाषा के आधार पर विभाजित है। एक बहुभाषी देश होने के कारण हिंदी को देश की राजभाषा बनने में भी संघर्ष का सामना करना पड़ा।

फिर विदेशों में जिनका स्थानांतरण हुआ उनमें पंजाबी, गुजराती बहुतायत में हैं। वे पंजाबी व गुजराती को अपनी भाषा मानते हैं। बंगाल व दक्षिण भारतीयों की अपनी अलग भाषाएँ हैं यहाँ तक कि हिंदी-भाषी भी हिंदी पर उतने निर्भर नहीं रहते जितने कि चीन, जापान, स्पेन, पुर्तगाल व अरब आदि देशों के नागरिक अपनी भाषाओं पर रहते हैं। यह देखने में आया कि डेनमार्क में अस्पताल जैसे केंद्रों में मरीज़ व डॉक्टर के मध्य संदेश-संवाद के लिए चीनी अनुवादक हैं। अरबी, यहाँ तक कि पंजाबी व उर्दू अनुवादक हैं मगर हिंदी अनुवादक की कोई आवश्यकता नहीं। इमिग्रेशन आदि राजसेवा विभागों में सूचनाएँ विश्व की कई भाषाओं में अनुवादित रहती हैं, हिंदी को छोड़कर। किसी अंतरराष्ट्रीय सूचना पट्ट पर जहाँ विश्व की प्रमुख भाषाओं का ज़िक्र होता है वहाँ हिंदी का नाम अक्सर नहीं होता।

क्यों लोग हिंदी सीखें? एक मल्टीनेशनल कंपनी के किसी कार्यकर्ता को अगर अपने कार्य के सिलसिले में हिंदुस्तान जाना है तो उसे हिंदी सीखने की क्या आवश्यकता? वहाँ सब नगरीय लोग अंग्रेज़ी जानते हैं। वहाँ सरकारी संस्थानों से संचार-संवाद करने के लिए स्थानीय भाषा की कोई आवश्यकता नहीं। अंग्रेज़ी से काम चल जाता है। इन सभी तथ्यों ने हिंदी के उपयोग को सीमित किया

जन्म : 17.05.63
शिक्षा : 2013 में आपने केम्ब्रिज प्रोफेशनल डवलपमेंट टीचिंग कोर्स एवं 2010 में डेनिश लेंगुएज एडवांस कोर्स पुरा किया। साथ ही गढ़वाल विश्वविद्यालय से 1984 में बी.एस.सी. एवं बी.एड. तथा 198 6 में एम.एस.सी. की उपाधि प्राप्त की।
प्रकाशन : आपके उपन्यास 'परिवर्तन' (2003), 'वेयर डू आई बिलांग' (2010), 'वेयर डू आई बिलांग' का अंग्रेज़ी रूपांतरण (2014) तथा 'पॉल की तीर्थयात्रा' (2016) प्रकाशित हैं। सुप्रसिद्ध डेनिश लेखिका कारेन ब्लिक्शन की रचनाओं का हिंदी अनुवाद तथा प्रतिष्ठित पत्र पत्रिकाओं जैसे हंस, वागार्थ, साहित्य अमृत, नया ज्ञानोदय, कथादेश, हिंदी चेतना, हिंदी डिस्कोर्स, वूमेन एरा, अलाइव आदि में हिंदी/अंग्रेज़ी में कथा साहित्य, लेख, कविताएँ आदि प्रकाशित हैं।
पुरस्कार : राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त मैमोरियल ट्रस्ट द्वारा राष्ट्रकवि प्रवासी साहित्यकार पुरस्कार (2012), इंडियन कल्चरल सोसाइटी, डेनमार्क द्वारा स्वतंत्रता दिवस समारोह पर प्राइड ऑव इंडिया सम्मान (2011), इंडियन कल्चरल एसोशिएशन, डेनमार्क द्वारा प्रेमचंद्र पुरुस्कार से सम्मानित (2006), साहित्यिक संस्था धाद महिला सभा, उत्तराखंड द्वारा उपन्यास परिवर्तन के लिए सम्मानित (2004)।
संप्रति : एन.जी.जी. इंटरनेशनल स्कूल, डेनमार्क में अध्यापिका।

है। विश्व में इतनी बड़ी तादाद में हिंदी बोलनेवालों के होने के बावजूद हिंदी भाषा सीखना उतना बड़ा व्यापार नहीं है जितना कि चीनी, रूसी व अरबी आदि भाषाएँ सीखना।

हिंदी–अनौपचारिक रूप

किसी देश की भाषा की माँग विश्व में उस देश की राष्ट्रीय शक्ति को चित्रित करती है। हिंदी हमारी मातृ भाषा ही नहीं अपितु यह हमारी संस्कृति और परंपराओं की संवाहिका भी है। अगर हम हिंदी के स्वरूप को वर्णमाला के स्तर से हटाकर एक विस्तृत रूप में परखें जैसे पौराणिक कथाएँ, धार्मिक ग्रंथ, अध्यात्म, दर्शन, नृत्य, नाट्य, संगीत, भजन इत्यादि तो हिंदी का एक परिवेश विदेश में अवश्य नज़र आता है। हिंदी के वैश्विक प्रचार-प्रसार में देश-विदेश में होनेवाले सामाजिक, सांस्कृतिक व धार्मिक क्रियाकलापों एवं गतिविधियों की अहम भूमिका है। इस संदर्भ में हिंदी सिनेमा व संगीत का योगदान भी उल्लेखनीय है। बॉलीवुड फ़िल्में हिंदी के अस्तित्व को बनाए हुए हैं। विदेशों में आए दिन आयोजित होते भारतीय धार्मिक, आध्यात्मिक व सांस्कृतिक कार्यक्रमों को देखकर महसूस होता है कि हिंदी विदेशों में निस्संदेह जीवित है।

आप्रवासियों द्वारा हिंदी व भारतीय संस्कृति का संरक्षण

विश्व भर में हिंदुस्तान एक ऐसा देश है जहाँ से काफ़ी बड़ी तादाद में हर वर्ग के लोग दूसरे देशों में प्रवास करते हैं। आज भूमंडल के हर देश में भारतवासी बसे हैं। हिंदुस्तानियों ने जिन भी देशों में प्रवास किया वहाँ भारतीय संस्कृति को सहेजने की भरसक कोशिश की। विश्व के अगर एक छोटे से क्षेत्र स्कैंडिनेवियाई देशों की बात करें तो आँकड़े बताते हैं कि सभी स्कैंडिनेवियाई देशों में हिंदी समितियाँ, हिंदी सांस्कृतिक व धार्मिक संस्थाएँ हैं जो समय-समय पर भारतीय तीज-त्योहारों, राष्ट्रीय दिवस व अन्य अवसरों पर सांस्कृतिक कार्यक्रम आयोजित करती रहती हैं जिनमें हिंदी भाषा का ही उपयोग होता है। डेनमार्क में नाना प्रकार की भारतीय संस्थाएँ हैं—'इंडियन डेनिश सोसाइटी', 'ऑल इंडियन कल्चरल सोसाइटी डेनमार्क', 'इंडियंस इन डेनमार्क', 'मिलापघर', 'डेनमार्क तेलुगू एसोसिएशन', 'बंगाली एसोसिएशन' जो भारतीय त्योहारों व राष्ट्रीय दिवसों पर कार्यक्रम आयोजित कर विदेशों में बसे भारतीयों को अपनी जड़ों से जोड़े रखती हैं और भारतीय संस्कृति को सहेजे हुए हैं।

कुछ उल्लेखनीय बिंदु निम्न प्रकार हैं—

- कोपनहेगन में कुछ संस्थाएँ व व्यक्ति हैं जो भारतीय शास्त्रीय नृत्य व हिंदी सिनेमा गीतों पर नृत्य पाठशाला चला रहे हैं। उदाहरण के तौर पर ब्रिटिश महिला लूसी बेनन ओडिसी व हिंदी सिनेमा पर नृत्य पाठशाला चलाती हैं। डेनिश महिला ऐनमेटे पी. कार्पन, प्रेसीडेंट ऑव 'इंडियन म्यूज़िक सोसाइटी' भारतीय संगीत की पाठशाला चला रही हैं। श्री मनबीर सिंह की अध्यक्षता में चलनेवाले एशियन म्यूज़िक सोसाइटी स्कूल में काफ़ी देशी-विदेशी, हिंदी-अहिंदी-भाषी भारतीय वाद्य व संगीत सीखने आते हैं। इस संस्था ने डेनमार्क में भारतीय शास्त्रीय संगीत को ज़िंदा रखा है। शास्त्रीय संगीत के रागों पर जब अफ़ग़ानी, पोलिश व ब्रिटिश गोरी नर्तकियाँ मंचों पर थिरकती हैं तो दर्शक रीझ जाते हैं। डेनिस थॉमसन की 'धमाका भाँगड़ा टीम' दिवाली, होली व अन्य भारतीय उत्सवों पर नृत्य प्रस्तुत कर दर्शकों को भाव-विभोर कर देती है।
- बॉलीवुड गीत व नृत्य बाहर विदेशों में मशहूर हैं। इधर-उधर आयोजित होनेवाले कार्यक्रमों में जब हिंदी गानों पर गोरे कलाकार भी अपनी कलाबाज़ी दिखाते हैं तो दर्शक ताली व सीटी बजाना नहीं छोड़ते। 'बॉम्बे रोकर्स' में गोरे डेनिश नवयुवकों को हिंदी गीत गाते देख लोग अपनी जगह से उठकर झूमने लगते हैं। राजस्थान के मुरारी लाल हरेक वर्ष डेनमार्क पधारकर भारतीय संगीत की क्लासेज़ देते हैं और गर्मियों के सुहावने मौसम में शहर के विशाल व मशहूर पार्क में भारतीय लोक गीतों व बॉलीवुड गीतों पर लोगों को नृत्य सिखाते हैं। कई विदेशी सामाजिक व सांस्कृतिक संस्थाएँ व कोपनहेगन यूनिवर्सिटी भारतीय लोक गीत, शास्त्रीय संगीत व फ़िल्मी गानों पर नृत्य प्रस्तुत करने के लिए अपने कार्यक्रमों में भारतीय स्थानीय कलाकारों को आमंत्रित करती हैं। हिंदी गाने व नृत्य दर्शकों द्वारा खूब सराहे भी जाते हैं। डेनिश महिला अनीता लर्चे पंजाबी व बॉलीवुड गीत गाने के लिए डेनमार्क में अति प्रचलित हैं।
- मंदिरों में धार्मिक क्रियाकलाप निरंतर चलते रहते हैं। मंदिरों से वितरित होनेवाले सभी पत्र विशुद्ध हिंदी भाषा में ही निकलते हैं। उदाहरण के तौर पर डेनमार्क के भारतीय मंदिर

में हरेक वर्ष 'रामायण', 'महाभारत', 'दुर्गा अष्टमी' पर हिंदी में प्रवचन आयोजित होते रहते हैं। भारतीय समाज की पुरानी व नई पीढ़ी भारी संख्या में सुनने आती है। यहाँ भजन-कीर्तन, पूजा-पाठ सब हिंदी में होता है।

- इनके अलावा विदेशों में भारतीयता से प्रभावित कई आध्यात्मिक संस्थाएँ हैं जोकि विदेशियों को प्रभावित करती हैं। 'आर्ट ऑव लिविंग', 'सहज मार्ग', 'माता अमृतानंदमयी', योग व मेडिटेशन आदि का महत्व दिन-ब-दिन बढ़ रहा है। आंतरिक शक्ति व शांति की कामना ने भारतीय अध्यात्म को पश्चिम में बड़ी लोकप्रियता दिलवाई है। हिंदी व भारतीय संस्कृति का प्रभाव इन केंद्रों में स्वत: ही देखने को मिलता है।
- विदेशों में हिंदी का प्रचार करने का श्रेय हिंदी फ़िल्मों को काफ़ी हद तक जाता है। बॉलीवुड फ़िल्मों जोकि हिंदी सिनेमा के नाम से भी जानी जाती हैं का विदेशों में बड़ा बाज़ार है। अफ़ग़ानिस्तान, पाकिस्तान, बांग्लादेश, खाड़ी देश, इज़राइल, रूस व लातिनी अमेरिका में हिंदी फ़िल्में पहले से ही लोकप्रिय रही हैं। अब डेनमार्क, स्वीडन व नॉर्वे आदि स्कैंडिनेवियाई देशों में भी इनकी लोकप्रियता बढ़ती जा रही है। लगभग सभी स्कैंडिनेवियाई पुस्तकालयों में बॉलीवुड फ़िल्मी कैसेट व डीवीडीज़ रहती हैं जिन्हें लोग किराए पर ले सकते हैं। कोपनहेगन में एक सार्वजनिक पुस्तकालय के लाइब्रेरियन का कहना है कि हिंदी पुस्तकें उनके पास लेने कोई नहीं आता मगर बॉलीवुड फ़िल्मों की डीवीडी लेने काफ़ी लोग आते हैं।

भूमंडलीकरण के दौर में हिंदी

उल्लेखनीय है कि वैश्वीकरण के इस युग में जब दूरियाँ घट रही हैं, विभिन्न समुदायों के बीच पारस्परिक विचार-विमर्श बढ़ रहा है, कई मुल्क एक साथ मिलकर व्यापार करने लगे हैं तो हिंदी को इधर थोड़ी अहमियत मिलनी शुरू हुई है। कम से कम विदेशी लोग हिंदी भाषा के अस्तित्व को जानने तो लगे हैं। सुनने में आया कि डेनमार्क स्थित 'स्टूडियो स्कोले' नामक एक प्रतिष्ठित लैंग्वेज स्कूल के हिंदी डिपार्टमेंट में अपेक्षाकृत अब काफ़ी विद्यार्थी हैं। वहाँ विदेशियों को हिंदी पढ़ानेवाली श्रीमती रजनी बहल कहती हैं कि पहले सीटें भरनी बड़ी मुश्किल होती थी। लोग सिर्फ़ चाइनीज़ व जापानीज़ सीखने आते थे मगर अंतरराष्ट्रीय स्तर पर व्यापार बढ़ जाने व इंडिया की इकोनॉमी सुदृढ़ हो जाने की वजह से लोग हिंदी सीखने लगे हैं। पहले विदेशी भारत को एक दरिद्र देश समझते थे। वे सोचते थे एक गरीब मुल्क की भाषा जानकर वे क्या करेंगे मगर भारत की आर्थिक स्थिति बेहतर बनते देख विदेशियों में भारतीय राष्ट्रभाषा के प्रति रुझान बढ़ रहा है।

3 प्रकार के विद्यार्थी श्रीमती बहल के पास हिंदी सीखने आते हैं—एक जो इंडियन कंपनियों के साथ मिलकर व्यापार कर रहे व दूसरे जो इंडियन कुकिंग सीख रहे हैं और इस सिलसिले में उनका भारत जाना भी होता है। इन 2 श्रेणियों के लोगों को बस बोलचाल के लिए हिंदी जानने में रुचि है। तीसरा, युवा समुदाय जिसे भारतीय संस्कृति व दर्शन में जिज्ञासा है, ढंग से हिंदी पढ़ना व लिखना जानना चाहता है।

श्रीमती बहल का कहना है कि विदेशियों को हिंदी सिखाने में उन्हें एक दिक्कत यह होती है कि उचित विषय सामग्री यानी मटिरियल्स उपलब्ध नहीं हैं। किस सरल तरीके से विदेशियों को हिंदी व्याकरण सिखाया जाए, यह समस्या बनी रहती है। हिंदी की अभ्यास पुस्तिका सरल व व्यावहारिक नहीं है, जटिल है। यूरोपियंस के लिए उसकी भाषा बहुत ही क्लिष्ट है।

इस संदर्भ में एक बिंदु यह भी उभरकर आया कि हिंदी में सरल भाषा में वयस्क लोगों के लिए उपन्यास उपलब्ध नहीं हैं जैसे कि डेनिश, स्पेनिश व अन्य भाषाओं में उपलब्ध हैं। जिस हिसाब से किशोरों के लिए अंग्रेज़ी व अन्य यूरोपीय भाषाओं में रोचक उपन्यास लिखे जाते हैं, उस मुकाबले हिंदी में संख्या न के बराबर है।

हिंदी शिक्षिका, श्रीमती कुमुद माथुर ने डेनमार्क में 20 वर्षों तक प्रवासी भारतीयों के बच्चों को हिंदी सिखाई। बच्चों को हिंदी सीखने की यह सुविधा डेनिश सरकार की तरफ़ से उपलब्ध थी। बच्चों का हिंदी स्कूल 15-16 वर्षों तक तो अच्छा चला, फिर किसी तरह घिसटते-घिसटते अंतत: बंद हो गया। श्रीमती माथुर का कहना है कि स्कूल बंद होने के तमाम कारणों में से एक कारण यह भी था कि अपने भारतीय बच्चों में अपनी मातृ भाषा सीखने की उतनी ललक नहीं रहती जितनी अन्य देशों, जापानी, अरबी व चीनी बच्चों में रहती है। उनके स्कूल वहाँ अब भी चल रहे हैं। श्रीमती कुमुद

माथुर के लिए सबसे बड़ी चुनौती बच्चों में हिंदी के प्रति रुचि बनाए रखने की थी क्योंकि हिंदी के प्रति हिंदुस्तानियों में उदासीनता है। पहली पीढ़ी के अभिभावकों में फिर भी चाहत थी कि उनके बच्चे हिंदी सीखें। समय के साथ हिंदुस्तानियों में हिंदी सीखने व पढ़ने की जिज्ञासा कम हो रही है। आजकल के तो माता-पिता ही कहते हैं कि, 'हमारे बच्चे हिंदी पढ़कर क्या करेंगे?'

हिंदी—औपचारिक स्तर पर

सामाजिक क्रियाकलापों व सांस्कृतिक गतिविधियाँ निस्संदेह हिंदी के विकास में सहायक हैं। अगर अनौपचारिक स्तर से हटकर औपचारिक स्तर पर विदेशों में हिंदी का विश्लेषण करें, विदेशी विश्वविद्यालयों में हिंदी की स्थिति आँकें तो डेनमार्क में कुछ आँकड़े इस प्रकार मिलते हैं—

विभिन्न स्कैंडिनेवियाई देशों के लगभग सभी विश्वविद्यालयों में 'एशियन स्टडीज़', 'साउथ एशियन रिलेटड रिसर्च एंड एजुकेशन' एवं 'डिपार्टमेंट ऑव क्रॉस कल्चरल एंड रीजनल स्टडीज़' शिक्षण विभाग मौजूद है। डेनमार्क की कोपनहेगन यूनिवर्सिटी में डिपार्टमेंट ऑव एशियन स्टडीज़ एवं डिपार्टमेंट ऑव क्रॉस कल्चरल एंड रीजनल स्टडीज़ के अंतर्गत इंडोलॉजी विषय गत 50 वर्षों से कार्यशील है।

वर्तमान में इंडोलॉजी 2 विभागों में विभक्त है—क्लासिक इंडोलॉजी एवं न्यू (नवीन) इंडोलॉजी। क्लासिक इंडोलॉजी के अंतर्गत भारतीय संस्कृति, भारतीय इतिहास, भारतीय दर्शन और भारतीय बुद्धिज़म पर पाठ्यक्रम चलाए जाते हैं। कोर्सज़ संस्कृत व पाली में पढ़ाए जाते हैं मगर संस्कृत इनमें प्रमुख है। क्लासिक इंडोलॉजी के अध्यक्ष, अमेरिकन नागरिक, प्रोफ़ेसर केनेथ ज्यूस्क जो संस्कृत भाषा के विद्वान हैं, संस्कृत पढ़ाते हैं।

'न्यू इंडोलॉजी' के अंतर्गत हिंदी व अन्य भारतीय भाषाओं के साथ भारतीय समाज, इतिहास आदि विषयों पर पाठ्यक्रम चलाए जाते हैं। वर्तमान शैक्षणिक सत्र में कोपनहेगन विश्वविद्यालय के 'न्यू इंडोलॉजी' अथवा 'मॉडर्न इंडिया स्टडीज़' डिपार्टमेंट में कुल 50 विद्यार्थी हैं, 15-20 विद्यार्थी बी.ए. फ़र्स्ट ईयर में व 15-15 विद्यार्थी बी.ए. सेकंड और थर्ड ईयर में। न्यू इंडोलॉजी की अध्यक्षा, प्रोफ़ेसर रविंद्र कौर हैं। जर्मन नागरिक एल्मार रेनर हिंदी पढ़ाते हैं। कोपनहेगन यूनिवर्सिटी में हिंदी शिक्षण का सर्वाधिक श्रेय डॉ. रविंद्र कौर को जाता है।

बहरहाल एसोसिएट प्रोफ़ेसर एल्मार रेनर की भी शिकायत वही है जो रजनी बहल की है—उचित शिक्षण संसाधन का अभाव। प्रोफ़ेसर रेनर का कहना है कि अहिंदी-भाषियों को हिंदी पढ़ाने में जो प्रमुख दिक्कत है, वह सही सामग्री की अनुपलब्धता है। जिस शिक्षण पद्धति का विकास पाश्चात्य भाषा-शिक्षण के संदर्भ में पिछले 50 वर्षों से होता आ रहा है, वह अभी तक भारतीय भाषाओं के अध्ययन में नहीं आया। अभी वे जर्मन आदि भाषाओं के लिए तैयार किए गए कम्यूनिकेटिव अप्रोच यानी संवादात्मक शिक्षण पद्धति को हिंदी में लाने का प्रयास करते हुए अपने विद्यार्थियों को पढ़ाते हैं। उनकी राय है कि मूल संवादात्मक शिक्षण सामग्री के अतिरिक्त ऐसी पाठ्य-पुस्तिकाएँ प्रकाशित की जाएँ जिनमें मशहूर लेखकों के उपन्यास और अन्य रचनाओं को लघु रूप एवं सरल भाषा में लिखकर प्रकाशित किया जाए ताकि छात्रों को साहित्य सागर में प्रवेश पाने में सुविधा हो। ऐसी पुस्तिकाएँ अंग्रेज़ी के लिए 'ईज़ी रीडर' के नाम से कई दशकों से उपलब्ध कराई जाती हैं।

कोपनहेगन यूनिवर्सिटी के इंडोलॉजी डिपार्टमेंट के अलावा अन्य शिक्षा अकादमियों में भी हिंदी व भारतीय संस्कृति व दर्शन का कुछ न कुछ स्वरूप देखने को मिलता है। कोपनहेगन यूनिवर्सिटी के इंग्लिश डिपार्टमेंट में कैथरीन हेनसन हिंदी साहित्य व हिंदी सिनेमा के कोर्सज़ के शिक्षण कार्य में सक्रिय हैं। डेनमार्क की आरहुस यूनिवर्सिटी में समकालीन हिंदी समाज, संस्कृति व इतिहास के पाठ्यक्रम चलाए जाते हैं।

एन.सी.आई. (The Nordic Centre in India (NCI) Consortium) नॉर्डिक देशों—डेनमार्क, फ़िनलैंड, नॉर्वे व स्वीडन के अग्रणी विश्वविद्यालयों का एक संयुक्त संकाय है। यह संकाय 2001 में स्थापित हुआ तथा इसका लक्ष्य नॉर्डिक देशों व भारत के बीच शोधकार्यों व उच्च शिक्षा के सहयोग को सुकर करना है। शैक्षिक विनिमय द्वारा एन.सी.आई. इंडो-नॉर्डिक संबंधों को दृढ़ करना चाहता है। एन.सी.आई. नेटवर्क का मुख्य काम नॉर्डिक विद्यार्थियों के लिए भारत व अन्य देशों में समकालीन भारत पर लेक्चर्स, सेमिनार व समर कोर्स इत्यादि आयोजित करना है। विद्यार्थियों को हिंदी विषय-वस्तुओं पर काम करने के लिए स्कॉलरशिप प्रदान की जाती है।

कई स्कैंडिनेवियाई विश्वविद्यालयों में भाषा-विषयक व दर्शन विभाग द्वारा आधुनिक हिंदी साहित्य विषय पर कोर्सज़ चलाए जाते हैं। इंडोलॉजी विभाग मौजूद है जिनके अंतर्गत हिंदी साहित्य, हिंदुत्व, वैदिक अध्ययन व आधुनिक भारत पर कोर्सज़ चलते हैं। संस्कृत साहित्य, भाषा-विषयक एवं सांख्यिकीविद व वैदिक पढ़ाई पर कोर्सज़ होते हैं। किस संख्या में इन हिंदी विभागों में विद्यार्थी कोर्स करने आते हैं। ये विभाग कितने सुप्त हैं, कितने सक्रिय, यह एक विवादास्पद प्रश्न है, मगर आँकड़े बताते हैं कि कुल मिलाकर पाश्चात्य देशों में लोगों का हिंदी के प्रति रुझान बढ़ा है।

NIAS - Nordic Institute of Asian Studies एक स्वतंत्र एशियन स्टडीज़ इंस्टीट्यूट है जिसका मुख्य दायित्व नॉर्डिक व एशियाई देशों को समीप लाना है। इसका मकसद नॉर्डिक क्षेत्र में आधुनिक एशिया की राजनीति, आर्थिक, सामाजिक व्यापार व संस्कृति रूपांतरण को विकसित करना है।

फिर 'प्रवासी हिंदी साहित्य' हिंदी साहित्य जगत में एक नया वाक्यांश व चेतना है। डेनमार्क में भारतीय मूल की कई हस्तियाँ हैं जिनका हिंदी एवं भारतीय संस्कृति के प्रचार-प्रसार में योगदान निहित है। डेनिश साहित्य का आप्रवासियों द्वारा हिंदी में अनुवाद हो रहा है। ये सभी किसी न किसी रूप में डेनमार्क में भारतीय भाषा व संस्कृति को सहेजे हुए हैं मगर अभी तक किसी हिंदी साहित्य का डेनिश में अनुवाद नहीं हो पाया है। इस दिशा में कदम उठाने की आवश्यकता है।

औपचारिक व अनौपचारिक स्तर पर हिंदी भाषा व संस्कृति को प्रचारित करने में काफ़ी कुछ हो रहा है लेकिन हिंदी में जो संभावनाएँ हैं, तदनुरूप हिंदी को भाषा जगत में वह स्थान नहीं मिल पाया है। विश्व में चीनी और अंगेज़ी भाषा के पश्चात तीसरे स्थान पर रहनेवाली हिंदी भाषा के अस्तित्व के लिए संघर्ष की स्थिति बनी रहती है, विशेषकर हमारी नई पीढ़ी का हिंदी के प्रति दृष्टिकोण चिंतनीय है।

एक गंभीर प्रश्न यह भी खड़ा हो रहा है कि जो कुछ हिंदी व भारतीय संस्कृति का विदेशी देशों में प्रभाव है, वह पुरानी पीढ़ी जो भारत से विदेशों में प्रवासित हुई, उनके प्रयत्नों के फलस्वरूप है। आप्रवासियों की नई पीढ़ी हिंदी से कतरा रही है तो हिंदी को इन मुल्कों में आगे लेकर कौन जाएगा, हिंदी का संरक्षण कौन करेगा? सर्वेक्षण दर्शाते हैं कि पुरानी पीढ़ी के अभिभावक, जिन्होंने 60-70 के दशक में विदेशों में प्रवास किया, उनकी फिर भी जिजीविषा थी कि उनके बच्चे अपनी मातृ भाषा सीखें। जो कुछ अवसर उन्हें उपलब्ध थे, उन्होंने अपने बच्चों को हिंदी बोलने-सीखने के लिए प्रेरित किया। लिहाज़ा उनकी संतानें, जो अब मध्यम आयु की हैं को हिंदी बोलनी आती है मगर आज की नई पीढ़ी के अभिभावकों में ही हिंदी के प्रति रुझान कम है सो उनके बच्चों को हिंदी बोलनी तक नहीं आती।

हिंदी एक विशाल जनसंख्या की मातृ भाषा व पूरे हिंदुस्तान की संपर्क भाषा है। यही नहीं, विश्व स्तर की प्रमुख भाषाओं में हिंदी भी एक है। एक बड़ा व विशाल देश होने के कारण विश्व को हिंदुस्तान की गूढ़ संस्कृति व साहित्य जानने की भी उत्सुकता रहती है। अत: हिंदी के अस्तित्व व महत्ता को नकारा नहीं जा सकता। हिंदी खत्म तो नहीं होगी मगर क्षीण हो जाएगी अगर ठोस कदम नहीं उठाए गए। इसके लिए प्रयत्न करने की आवश्यकता है कि हिंदी का और विकास हो। यह इतनी विकसित व बुलंद हो ताकि मात्र भारतीय मूल के लोग ही नहीं अपितु विदेशी भी हिंदी सीखें और इसे अपने व्यवसाय की भाषा बनाएँ। डेनमार्क जैसे छोटे से देश की कोपनहेगन यूनिवर्सिटी में 40 भारतीय मूल के विद्यार्थी हिंदी व भारतीय संस्कृति का अध्ययन कर रहे हैं और जर्मन व अमेरिकन उनके अध्यापक हैं। आशा है मोदी सरकार अपने देश में राजभाषा हिंदी को पर्याप्त महत्व देकर हिंदी को पूरे विश्व में बुलंद करेगी।

विशेष आभार

- डॉ. रविंद्र कौर (कोपनहेगन यूनिवर्सिटी)
- प्रोफ़ेसर एल्मार रेनर (कोपनहेगन यूनिवर्सिटी)
- श्रीमती रजनी बहल (हिंदी अध्यापिका, स्टूडियो स्कोले)
- श्रीमती डॉली शेनाय (एशियन म्यूज़िक सोसाइटी)
- श्री सुखदेव सिंह संधू (अध्यक्ष ऑल इंडियन कल्चरल सोसाइटी डेनमार्क)

कोपनहेगन, डेनमार्क

apainuly@gmail.com

□

5

स्पेन में हिंदी अध्यापन का कार्य : समस्याएँ एवं समाधान

—डॉ. विजयकुमारन सी.पी.वी.

स्पेन का एकमात्र हिंदी पीठ वल्लदोलिद विश्वविद्यालय में है। निजी भाषाई अध्ययन में चीनी, जापानी, कोरियाई भाषा के समान हिंदी भाषा सीखने की अभिरुचि से विश्वविद्यालय में और कुछेक गैर-सरकारी संस्थाओं जैसे कंपुलतानसिया, मद्रिद तथा कासा आसिया (एशियाई भवन), बार्सिलोना में हिंदी भाषा का पठन-पाठन होता है। स्पेन की राजधानी मद्रिद से उत्तरी दिशा में 195 कि.मी. दूरी पर स्थित, कास्तीलिया प्रांत के वल्लदोलिद विश्वविद्यालय में भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद की अभ्यागत आचार्य प्रतिनियुक्ति-योजना के अनुसार सन् 2004 से हिंदी पढ़ाने के लिए अतिथि आचार्य भेजे जाने लगे। विश्वविद्यालय के एशियाई अध्ययन केंद्र 'येल सेंत्रो दे एस्तुदियोस दे आसिया' (सी.ई.ए.), 13 मई, 2001 को स्थापित हुआ। इसका लक्ष्य स्पेन में एशिया की संस्कृति, अर्थव्यवस्था, विज्ञान प्रौद्योगिकी और एशियाई देशों की भाषा के क्षेत्र में सक्षम अध्ययन-अनुसंधान के एक समूह को समेकित करना रहा। विश्वविद्यालय के अध्यादेश के अनुसार एशियाई देशों के 4 राजदूतों को सी.ई.ए. का सदस्य घोषित किया था जिनमें एक भारत के राजदूत हैं जिनका राजदूतावास स्पेन के मध्य भाग में स्थित मद्रिद में है।

जन्म : 20.12.1955

शिक्षा : प्राणी विज्ञान, रसायनशास्त्र तथा भौतिक विज्ञान में बी.ए., हिंदी में एम.ए., एम.फिल. एवं पीएचडी तथा संस्कृत एवं स्पेनिश में डिप्लोमा।

प्रकाशन : आपके कुल 29 पुस्तकें प्रकाशित हैं जिसमें 8 निजी तथा 21 सहयोगी हैं जैसे 'हिंदी उपन्यासों में भारत विभाजन परवर्ती वास्तविकता' (2013), 'हिंदी फाजलि' (2010) आदि। अनेक पत्र-पत्रिकाओं में आपके शोध आलेख भी प्रकाशित हैं।

पुरस्कार : उत्तम अध्यापक पुरस्कार, राष्ट्रीय पुरस्कार, उत्तम शोध ग्रंथ पुरस्कार, राष्ट्रभाषा रत्न एवं सारस्वत सम्मान।

संप्रति : अतिथि आचार्य, केंद्रीय विश्वविद्यालय, केरल, कासरगोड।

स्पेनी-हिंदी का द्विआधारी ढाँचा

स्पेनी जनता के लिए भारत का मतलब ही हिंदी और हिंदू है। अत: वहाँ के लोगों की आम धारणा यही बनती है कि भारत से आनेवाले हर किसी को हिंदी राजभाषा अवश्य आती हो। स्पेनी सरकार ने कास्तिलिया को सन् 1978 में राजभाषा घोषित कर लिया और 3 अन्य प्रमुख भाषाओं—गलीसियायी, बास्की तथा कतलानी को भी देश भाषा के रूप में मान लिया। संसार में स्पेनी बोलनेवालों की संख्या (2010 की गणना) 6.15 प्रतिशत तथा हिंदी की 4.7 प्रतिशत है। डॉ. गोपाल नारायण श्रीवास्तव ने केंद्रीय हिंदी संस्थान के तत्कालीन निदेशक, प्रोफ़ेसर महावीर सरन जैन का हवाला देते हुए 'संयुक्त राष्ट्र संघ की आधिकारिक भाषाएँ और हिंदी' विषयक आलेख में चीनी भाषा के बाद हिंदी को दूसरा स्थान बताया है। 1999 में 'मशीन ट्रांसलेशन समिट' में 'यांत्रिक अनुवाद' नामक संगोष्ठी में टोक्यो विश्वविद्यालय के प्रो. होचुमि तनाका ने भाषाई आँकड़ों समेत सिद्ध किया कि विश्व में चीनी भाषा बोलनेवालों का स्थान प्रथम और हिंदी द्वितीय स्थान पर है तो अंग्रेज़ी तीसरे स्थान पर पहुँच गई है। लेकिन उन्होंने मार्के की बात यह कही कि चीनी भाषा का प्रयोग क्षेत्र हिंदी की अपेक्षा काफ़ी सीमित है। स्पेनी मातृ-भाषियों की संख्या (2014 की गणना के अनुसार) 44 करोड़ है जबकि हिंदी जाननेवालों की संख्या एक अरब दो करोड़ पच्चीस लाख दस हज़ार तीन सौ बावन (1,02,25,10,352) तक बढ़ने की शोधपरक जानकारी उन्होंने पेश की है। अगर उर्दू जैसी हिंदी के अन्य रूपों के 10 करोड़ बोलनेवालों को भी शामिल कराएँ तो संसार में स्पेनी भाषा से अधिक हिंदी-भाषियों का होना बरकरार है। वास्तविकता यह है कि भारतीय उपमहाद्वीप ही नहीं बल्कि दक्षिण

पूर्व एशिया, मॉरीशस, चीन, जापान, कोरिया, मध्य एशिया, खाड़ी देश, अफ्रीका, यूरोप, कनाडा तथा संयुक्त राज्य अमेरिका, लातिन अमेरिका, त्रिनिदाद आदि राष्ट्रों में हिंदी का बोलबाला है। फ़िजी अवधी रूपी हिंदी भाषा को राजभाषा की पदवी प्रदान कर चुकी है। मॉरीशस में आज अन्य निजी चैनलों के साथ-साथ मॉरीशस ब्रॉडकास्टिंग कॉर्पोरेशन के मुख्य दूरदर्शन चैनल 1 पर हिंदी का बोलबाला है। हिंदी के प्रौद्योगिकी जगत में प्रयुक्तियाँ दर-ब-दर बढ़ रही हैं। इ-मेल, इ-बुक, अंतरजाल, एसएमएस एवं वेब पत्रकारिता बड़ी सहजता से दुनिया के कोने-कोने में हिंदी भाषा की पकड़ सुदृढ़ कराते हैं। आगे यह विचार किया जाएगा कि स्पेनी-हिंदी के द्विआधारी ढाँचे कैसे बनते और पल्लवित होते जा रहे हैं और बिना स्पेनी भाषा के सहारे हिंदी का शिक्षण हिंदी माध्यम से कैसे हो?

विश्वविद्यालय में हिंदी पाठ्यक्रम बनाने की कठिनाई

यूरोप में हिंदी की पाठ्यचर्या एवं समय-सारणी ऐसी बनाई जाती थी कि वह शिक्षार्थियों और अभ्यर्थियों के अनुकूल हो। इसीलिए सबसे अधिक ध्यान शिक्षण-समय पर केंद्रित हुआ करता था। दिन में दो-ढाई घंटे से ज़्यादा कक्षाएँ नहीं हो सकती थीं। वे भी सायं-सत्र को ही सबसे ज़्यादा पसंद करनेवाले थे क्योंकि अभ्यर्थियों में नौकरीरत स्त्री-पुरुष ज़्यादा थे। अधिकांश शिक्षार्थियों की उम्र 40-50 के ऊपर थी। छोटे पैमाने में वे बच्चे भी शामिल होते थे जो अपने ऐच्छिक विषय के अध्ययन से थोड़ा हल्कापन महसूस करते हुए हिंदी पढ़ने के लिए भर्ती होते थे। कुछेक का स्पष्ट लक्ष्य होता है कि वे विश्व भाषा को करीब से जानना चाहते हैं और यूरोपीय भाषाओं से हिंदी का साम्य-वैषम्य जानना चाहते हैं।

पाठ्य-पद्धति का निर्माण

पाठ्य-पद्धति को उपभोक्ता केंद्रित बनाने के लिए भाषाध्यापन के साथ सांस्कृतिक अध्ययन पर भी बल दिया जाता था। यूँ तो इसमें भारतीय पर्यटन को मद्देनज़र रखा जाता था या जिज्ञासाएँ अधिकांश उस ओर केंद्रित थीं। स्पेनी-भाषियों की भाषा-निष्ठा कट्टर है इसलिए हिंदी अध्यापक को भी स्पेनी ज़बान से ही अधिकांश बातों को समझाना पड़ता था। यूँ तो पोलैंड, इटली आदि राष्ट्रों से उत्प्रवासित कुछेक विद्यार्थी भी हिंदी पढ़ने को उत्सुक होते थे। भारतीय संस्कृतियों के हस्तांतरण में अधिकांश ध्यान दिया जाता था लेकिन पढ़ाने में काफ़ी कठिनाई तब होती थी जबकि सूचक-सूच्य के बीच का ज़मीन-आसमान का फ़र्क दोनों भाषाओं में हुआ करता था। सांस्कृतिक चिह्नों के हस्तांतरण में इस कठिनाई को मिटाने के लिए भरसक कोशिश करनी पड़ती थी। कक्षा में आधुनिक प्रौद्योगिकी के साधन उपलब्ध थे इसलिए मानचित्रों, रेखाचित्रों तथा भौगोलिक मापचित्रों से यथासंभव शिक्षार्थियों से संप्रेषण होता था।

स्थायी हिंदी विभाग का अभाव

स्पेन में हिंदी पढ़ने-पढ़ाने का स्थायी विभाग नहीं है, भले ही कुछेक यूरोपीय विश्वविद्यालयों में हिंदी विभाग हैं। यूँ कह सकते हैं कि अकादमिक स्तर पर इस विषय को स्पेनी सरकारी या विश्वविद्यालयी अधिकारियों की तरफ़ से आंतरिक संस्तुति नहीं है भले ही वे हिंदी के अध्ययन-अध्यापन के लिए आवश्यक सारी सुविधाएँ उपलब्ध कराते रहे हैं जिससे भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद के द्वारा भेजे जानेवाले हिंदी आचार्य को अपना उत्तरदायित्व निभाने में कहीं भी कोई कमी नहीं रह गई है। हिंदी में स्नातक या परास्नातक जैसी पाठ्य-पद्धतियाँ विश्वविद्यालयी पाठ्य-पद्धति में सम्मिलित नहीं की गई हैं। प्रतिनियुक्त आचार्य के द्वारा हिंदी अध्यापन का क्रम जारी है और पाठ्य-विषय निर्धारण, समय-सारणी, परीक्षा आदि सभी का समायोजन उन्हें खुद करना पड़ता है। अव्वल छात्रों को विश्वविद्यालय प्रमाण पत्र दिलाता था जो अन्य भाषाध्ययन के अध्येताओं को मिलता था। कहने का मतलब यह है कि हिंदी के अध्येताओं को अन्य विषयों के समान मान्यता दिलाई जाती थी। अत: भारत सरकार का यह प्रयास होना चाहिए कि स्पेन में हिंदी का स्थायी पीठ हो और अतिथि आचार्य को भेजने का ऐसा क्रम (2004 से) रखा जाए कि 1 के सेवाकाल के समाप्त होते ही दूसरे प्रतिनियुक्त हों और कभी भी यह पीठ अनाथ न हो लेकिन खेद की बात है कि स्पेन का हिंदी पीठ 2013 से लगभग 3 साल से खाली पड़ा है, 3 आचार्यों—यथाक्रम डॉ. चुल्कीमढ, डॉ. विजयकुमारन और डॉ. जायसवाल के बाद वल्लदोलिद विश्वविद्यालय में अब दिल्लीवाली एक अध्यापिका श्रीमती दीप्ति प्रकाश 2 साल के लिए नियुक्त हैं।

पाठ्य-पद्धति का स्वरूप

वल्लदोलिद विश्वविद्यालय में पहले हिंदी आचार्य कर्नाटक

विश्वविद्यालय के डॉ. चुल्कीमढ, धारवाड़ के द्वारा 2004-05 और 2005-06 में यथाक्रम हिंदी उच्चारण केंद्रित 'हिंदी प्राथमिक' (इनीशियल) और 'हिंदी माध्यमिक' (इंतरमीदियो) पाठ्य-पद्धतियाँ चलाई गईं। चूँकि ये आचार्य हिंदी के संस्थापक थे इसीलिए उन्हें कक्षाओं की प्राथमिकताएँ निभाने के लिए बहुत समय लगा था। प्राप्त जानकारी के अनुसार ये दोनों कक्षाएँ—हिंदी भाषा की माध्यमिक कक्षा 20 फरवरी, 2007 से 7 जून, 2007 तक चलाई गई थीं। तदनंतर दूसरे आचार्य, कण्णूर विश्वविद्यालय के पय्यनूर महाविद्यालय के डॉ. सी.पी.वी. विजयकुमारन की बारी आई। स्पेनी-भाषियों और अध्येताओं की मातृ भाषा निष्ठा को नज़रंदाज़ नहीं किया जा सकता था, अत: प्रत्येक हिंदी अध्यापक को स्पेनी माध्यम से हिंदी-शिक्षण करना पड़ता था। इसलिए प्रस्तुत आचार्य को **कुरसो इंतनसीओ एस्पानियोला-एस्त्रांन्यरो** में स्पेनी भाषा का द्रुत-अध्ययन आवश्यक था। अगस्त, 2007 का पूरा महीना इस पाठ्यचर्या में लग गया तथा अगले महीने से हिंदी पाठ्यचर्या शुरू करने के लिए वे काबिल हो गए। उन्होंने पहले-पहल हिंदी में एकमासी गहन-पाठ्य-पद्धति **(कुरसो इंतनसीवो हिंदी)** बनाई और 3 से 7 सितंबर, 2007 को उसे कार्यान्वित किया। बोलचाल की हिंदी पर दक्षता प्राप्त कराने के उद्देश्य से बनाए प्रस्तुत पाठ्यक्रम में अध्येताओं की रुचि अधिक थी कि उन्हें भारत यात्रा के लिए हिंदी भाषा की ज़रूरत महसूस हुई थी। पाठ्य-पद्धति का स्वरूप खुद आचार्य के द्वारा बनाया गया और विश्वविद्यालय ने कक्षा-तैयारी की आवश्यक सारी सुविधाएँ प्रदान कीं। अगले महीने 1 अक्टूबर, 2007 से 23 जनवरी, 2008 तक प्रारंभिक हिंदी कक्षा **(हिंदी इनीशियल)** शुरू की गई जहाँ हिंदी वर्ण और अक्षराध्यापन, सुलेख से शुरूकर हिंदी व्याकरण की इकाइयों जैसे संज्ञा, सर्वनाम, लिंग, वचन, कारक, क्रिया, विशेषण, वाच्य, वाक्य को छोटे-छोटे हिस्सों में बाँटा गया। पढ़ाते हुए और छात्रोपयोगी नोट बनाते हुए उन्हें यथासमय दिया जाता था। कक्षांत में बच्चे हिंदी पठन-पाठन और बोलने के लिए सक्षम होते थे। माइक्रोसोफ़्ट पावर पोइंट का सहारा लेते हुए, स्पेनी चित्रों, बिंबों और दृश्यों के सहारे पढ़ाई काफ़ी दिलचस्प बनाई जाती थी। कक्षांत में अवश्य और कक्षाओं के बीचोबीच परीक्षा लेने में शिक्षार्थियों में अभ्यस्त पाठ्य-विषयों की स्थिरता बनी रहती थी।

यूरोप में हिंदी की पाठ्यचर्या एवं समय-सारणी ऐसी बनाई जाती थी कि वह शिक्षार्थियों और अभ्यर्थियों के अनुकूल हो। इसीलिए सबसे अधिक ध्यान शिक्षण-समय पर केंद्रित हुआ करता था। दिन में दो-ढाई घंटे से ज़्यादा कक्षाएँ नहीं हो सकती थीं। वे भी सायं-सत्र को ही सबसे ज़्यादा पसंद करनेवाले थे क्योंकि अभ्यर्थियों में नौकरीरत स्त्री-पुरुष ज़्यादा थे। अधिकांश शिक्षार्थियों की उम्र 40-50 के ऊपर थी। छोटे पैमाने में वे बच्चे भी शामिल होते थे जो अपने ऐच्छिक विषय के अध्ययन से थोड़ा हल्कापन महसूस करते हुए हिंदी पढ़ने के लिए भर्ती होते थे। कुछेक का स्पष्ट लक्ष्य होता है कि वे विश्व भाषा को करीब से जानना चाहते हैं और यूरोपीय भाषाओं से हिंदी का साम्य-वैषम्य जानना चाहते हैं।

हिंदी में उच्चस्तरीय पाठ्य-पद्धति : पाठ्य-विषय की चयन संबंधी कठिनाई

अध्येताओं को हिंदी प्राथमिक **(हिंदी इनीशियल)**, हिंदी माध्यमिक **(हिंदी इंतरमीदियो)** और हिंदी एडवांस स्टडीज़ **(हिंदी अवनसादो)** के विभिन्न स्तरों पर बाँटा गया और निचले स्तर के पाठ्यक्रम में अव्वल शिक्षार्थी उसके अगले चरण में प्रवेश पा सकता था। इस बार अध्येताओं की भीड़ लगी थी कि करीब 75 शिक्षार्थी कुल तीनों पाठ्यचर्याओं में भरती हो गए। उच्चस्तरीय कक्षा के लिए 20 अक्टूबर, 2008 से 15 जून, 2009 की अवधि चुनी जहाँ असली साहित्यिक अध्ययन शूरू किया गया। कबीरदास, सूरदास, तुलसीदास, आधुनिक कविताएँ तथा प्रेमचंद और अन्य आधुनिक कहानीकारों को इसमें अध्ययन का विषय बनाया गया। रामचरितमानस, कबीरदास के दोहे आदि के चुने हुए प्रकरण तथा भक्ति साहित्य के अध्यापन के निमित्त कई पद्यांशों तथा उनके स्पेनी अनुवादों का भी सहारा लिया गया। ध्यान यह रखा गया कि पाठ्य-सामग्री के चयन में यह अनिवार्यता बरती जाए कि स्पेनी भाषा में अनूदित होकर स्पेन में उपलब्ध किताबों से ही पाठ्य-सामग्री चुनी जाए ताकि अध्येताओं को अपनी ज़ुबान से उन्हें पढ़ने और अर्थ को ग्रहण करने में सुविधा हो। उपर्युक्त सभी हिंदी साहित्यकारों पर स्पेनी भाषा में कुछेक अनूद्य सामग्रियाँ उपलब्ध थीं जिनकी सूची (iii) टिप्पणी में दी जाती है। सूची में दिए गए 24 ग्रंथों से काफ़ी सामग्रियाँ पाठ्यानुरूप चुनना ही एक दुष्कर कार्य रहा। इन ग्रंथों के अतिरिक्त कुछेक कहानियाँ, जैसे प्रेमचंद की

'दो बैलों की कथा' महाकाव्यों के चुने हुए अंश जैसे 'येल रामायण : ओर्थेंटिका लितरतूरा हिंदू, तुलसीदास' आदि के चुने हुए अंश भी काम आते थे। स्पेन में 'रामायण' की कई मंचीय प्रस्तुतियाँ हुईं जो प्रकारांतर से हिंदी पठन-पाठन में अतिरिक्त सहायता पहुँचाती थीं। उसी प्रकार संयोगवश प्रस्तुत लेखक को अपने स्पेनी अध्यापन-काल में ही ऑस्कर विजेता अंग्रेज़ी फ़िल्म 'स्लमडॉग मिलियनेयर' का थिएटर में स्पेनी छात्रों के साथ देखने का अवसर मिला था जिससे उसके एक गीत 'जय हो...' (ए.आर. रहमान का ऑस्कर पुरस्कृत गीत, गुलज़ार की रचना में) का भी 2 कक्षाओं में व्याख्या-विश्लेषण अनिवार्य हुआ। अध्येताओं की दिलचस्पी यह जानने पर इतनी बढ़ी कि उक्त गीत में एक स्पेनी गीतकार की 2 पंक्तियाँ (**कारा अ कारा**...से शुरू होनेवाली) मूल स्पेनी भाषा में भी शामिल हैं। तनवी शाह वे गीतकार थे जिन्होंने स्पेनी में यह अंश जोड़ा। क्लास के बच्चे उक्त गीत से इतने प्रभावित हुए कि उनके मोबाइल में, क्लास के प्रारंभ में और अंत में यह गीत बजता रहता था।

तीसरे आचार्य श्रीश्चंद्र जायसवाल की प्रतिनियुक्ति अक्टूबर, 2010 के अंत तक हुई। उन्होंने वही पाठ्यक्रम चुना जो पहले आचार्यों ने चुन रखा था। उनके लिए सुविधा यह हुई कि हिंदी पाठ्यक्रम में तब तक एक पाठ्य-पुस्तक—'हिंदी फ़ासिल iv' (सरल हिंदी) स्पेनी-हिंदी में भारतीय हिंदी आचार्य द्वारा तैयार हो चुकी थी। वस्तुत: यही स्पेनी भाषा पर भारतीय हिंदी आचार्य द्वारा तैयार की गई पहली पाठ्य-पुस्तक मैन्यूअल थी जो स्वयंशिक्षा हेतु 'कॉम्पैक्ट डिस्क' (सीडी) समेत 645 पृष्ठों में तैयार की गई थी। प्रस्तुत ग्रंथ स्पेनी माध्यम से पठन-पाठन के साथ-साथ हिंदी की सारी भाषास्तरीय व अकादमिक माँगों की पूर्ति करने लायक है तथा हिंदी के प्रारंभिक स्तर प्रमाण पत्र पाठ्यक्रम से लेकर स्नातक स्तर तक के हिंदी-शिक्षण में काम आनेवाली एक शोधपरक उपलब्धि मानी जा सकती है।

स्पेनी भाषा की तुलना में हिंदी भाषा की प्रकृति और संरचनागत कठिनाइयाँ

भारत में हिंदी को संविधानकर्ताओं ने 14 सितंबर, 1949 को ही राजभाषा घोषित कर दिया है तथा भारत के संविधान में सरकारी राजभाषा के रूप में अन्य 21 भारतीय भाषाओं को स्थान दिया है। स्पेनी सरकार ने कास्तीलिया को सन् 1978 में राजभाषा घोषित कर लिया और अन्य 3 प्रमुख भाषाएँ यथाक्रम गलीसियायी, बास्की और कतलानी को भी देशभाषा के रूप में मान्यता दी गई थी।

आद्य भारोपीय भाषाओं (proto Indo-European languages) की उत्पत्ति के सिद्धांतकारों ने भारतीय एवं यूरोपीय भाषाओं में नियमित (regular) और अनियमित क्रियाओं के होने का प्रमाण दिया है। स्पेनी भाषा में काफ़ी क्रियाएँ अनियमित हैं मगर हिंदी में इनकी संख्या कम है। हिंदी में 'जाना', 'देना', 'करना', 'लेना', 'होना' और 'पीना' आदि क्रियाएँ अपने विषम संरचनात्मक विकार के कारण अनियमित मानी जाती हैं। हिंदी की अन्य सारी क्रियाएँ नियमित हैं। लिंग संबंधी विकार क्रिया की आंतरिक संरचना में नहीं होता, इसलिए पुलिंग और स्त्रीलिंग रूप अलग-अलग नहीं है। हिंदी की तुलना में यहाँ व्यतिरेक के कुछेक संदर्भ हैं। वचन संबंधी विकार हिंदी में मुखर हैं मगर बहुवचन की संरचना एक समान ही तीनों पुरुषों में प्रयुक्त है। पहले ही सूचित किया गया है कि स्पेनी में सहायक क्रिया के बिना भी वाक्य संरचना पूर्ण होती है मगर कृदंत के होते कहीं सहायक क्रिया का सहारा लेना पड़ता है। हिंदी की प्रकृति के अनुसार अधिकांश क्रियाएँ सहायक क्रिया 'होना' के साथ निष्क्रमित हैं। इनमें भी सहायक क्रिया के लिंग, वचन और पुरुषसूचक घटक भी लगे रहते हैं जो स्पेनी भाषाई क्रियाओं में देखे नहीं जाते। अत: हिंदी पढ़ाते वक्त स्पेनी समतुल्य व्याकरणिक कोटियों पर भी गौर किया जाता है ताकि अध्येताओं को आसानी से बात पकड़ में आए।

संज्ञा, सर्वनाम आदि की प्रयुक्तियों में भी समानता से बढ़कर असमानताएँ पाई जाती हैं। हर संज्ञापद के साथ उपपद लगाने की प्रकृति स्पेनी की है जो हिंदी में नहीं है। हिंदी भाषा में उसके लिए सार्वनामिक अभिव्यक्तियाँ ही काम आती हैं जो स्पेनी भाषा के समान लिंगसूचक नहीं बनती। जैसे भी हो, प्रत्येक संज्ञापद के प्रयोग स्तर पर ही उसकी लिंगसूचक जानकारी स्पेनी भाषा को होती है। हिंदी में उन्हें अलग-अलग संदर्भ में सूचित करना पड़ता है। भले ही वह स्पेनी समतुल्य संज्ञा पदबंध लिंग बोधक भी हो, हिंदी आचार्य जिन्हें इस स्पेनी मूल रचना की सटीक जानकारी नहीं हो तो उन्हें कठिनाई होती है।

मध्यम पुरुष सर्वनाम 'तू' स्पेनी में सर्वसुलभ प्रयुक्ति है जो व्याकरणिक दृष्टि से हिंदी सर्वनाम का समतुल्य है। चाहे व्यक्ति सूचक होते हुए, यह अंग्रेज़ी शब्द 'You' के अनुरूप स्पेनी भाषा

में प्रयुक्त है फिर भी हिंदी में आदरसूचक मध्यमपुरुष 'तुम' और 'आप' की बराबरी स्पेनी पद 'उस्तेद' (जो 'उस्ताद' का वाचक नहीं है) से करनी पड़ती है मगर बोलचाल की हिंदी में वह लागू नहीं होती। अध्यापक यहाँ सजग हों। प्रस्तुत लेखक को कक्षाओं में छात्रों द्वारा अपने अध्यापक को उक्त सर्वनाम से संबोधित करते हुए शर्म महसूस हुई इसलिए हिंदी के आदरसूचक बहुवचन सर्वनाम 'आप' का प्रयोग करने को उन्हें समझाया गया था। वचन संबंधी जिज्ञासा भी यूरोपीय भाषाओं के समान सांस्कृतिक भावबोध की स्पेनी भाषा होने के कारण छात्रों में बनी रहती है। अत: उन्हें सांस्कृतिक पदबंधों, संज्ञाओं, सर्वनामों जैसे 'महात्मा गांधी' को 'गांधी जी,' 'प्रेमचंद' (एक लेखक होते हुए भी) की बहुवचन में प्रयुक्ति, सार्वनामिक एकवचनीय पदों और शब्दों को बहुवचन बनाए जाने में उत्पन्न भारतीय सांस्कृतिक गौरव बार-बार समझाए जाने पर भी नहीं बनती।

रूप रचना की दृष्टि से हिंदी और स्पेनी भाषा में ही नहीं, सारी भाषाओं में 3 भाव-निश्चयार्थ, संभावनार्थ और आज्ञार्थ होते हैं, स्पेनी में उसे यथाक्रम indicativo, subjuntivo और imperativo कहते हैं। यथाक्रम तीनों वर्गों में—-amos, -emos और imos जैसे परप्रत्यय क्रियाओं की धातु के साथ लगाया जाता है। द्वितीय पुरुष बहुवचन में वे यथाक्रम तीनों वर्गों में—-ais, -eis और -is जुड़कर बनते हैं। हिंदी अध्यापन में यह भाषाई परिवर्तन के नियम को हृदयस्थ करना परम अनिवार्य है।

यहाँ दूसरा व्यतिरेक इस बात का है कि हिंदी के आदरसूचक बहुवचन 'आप' के लिए बहुवचन पदबंध 'आप लोग' के लिए एक ही रूप स्पेनी में निर्धारित है, साथ-साथ 'तू' का बहुवचन 'तुम' (अनौपचारिक बहुवचन) का अपना खास कोई रूप हिंदी के जैसे स्पेनी में नहीं है। उसे भी द्वितीय पुरुष बहुवचन में शामिल किया जाना है। तृतीय पुरुष बहुवचन का भी यथाक्रम—-an, -en और -en प्रत्यय लगाकर उन्हीं का वर्तमान काल निर्धारण किया जाता है। स्पेनी अनियमित क्रियाओं की बात बिल्कुल अलग है जो वर्तमान, भूत और भविष्यतकाल की अपनी ही संरचना रचती हैं।

समस्याओं का समाधान एवं निष्कर्ष

इस प्रकार स्पेन में हिंदी अध्यापन करते हुए भारतीय विद्वानों को काफ़ी बातों पर गौर करना पड़ता है। निर्धारित पाठ्यक्रम के अभाव में हर अध्यापक अपनी इच्छा से पाठ्य-सामग्री का चयन करता है। हिंदी पाठ्यक्रम बनाने की कठिनाई को दूर करने के लिए कुछेक किताबें मौलिक रूप से हों तभी इसका हल निकाला जाता है। 'हिंदी फ़ासिल' काफ़ी हद तक उन समस्याओं का समाधान है भले ही हिंदी सीखने के लिए स्पेनी-भाषियों द्वारा रचित 2-3 किताबें और हैं जैसे—'हिंदी परा प्रिंसिपियांतस' (अनूदित), 'ग्रमाटिका दे हिंदी', 'एस्त्रक्तूरा ग्रमाटिका दे हिंदी इ एस्पानियोल' आदि। स्थायी विभाग के अभाव से हिंदी को हाशियाकृत किए जाने का अनुभव हो जाता है। कहीं छात्रों को अध्यापकों से मिलने-जुलने और संशय निवारण के लिए कार्यालय तो अवश्य प्रदान किया जाता है मगर मुख्य विषय के रूप में न लेने से हिंदी को अन्य विषयों की बराबरी नहीं मिलती है। पाठ्य-पद्धति का स्वरूप निर्धारित करते हुए हरेक अध्यापक को तत्कालीन अध्येताओं के अनुरूप पाठ्य-सामग्री निर्माण करना पड़ता है जिसमें प्रत्येक अध्यापक की रुचि भी शामिल होती है। अत: सिखाने के लिए समेकित पाठ का होना आवश्यक है। वरना प्रतिनियुक्ति के उपरांत हरेक आचार्य का, पद्धति निर्माण में समय लग जाता है।

जहाँ तक लेखक की जानकारी है, भारत से बाहर बहुत कम विश्वविद्यालयों में एडवांस हिंदी का पाठ्यक्रम जारी है। इधर वल्लदोलिद विश्वविद्यालय में भी स्नातकोत्तर उपाधि हेतु हिंदी भाषा व साहित्य का अध्ययन-अध्यापन गौरीशंकर की चोटी लगता है। अतः वहाँ हिंदी भाषा एवं साहित्य पर उतना ही गौर किया जाता है जितना कि प्रारंभिक कक्षा में 'हिंदी इनीशियल' पढ़ानेवाले को करना पड़ता है।

हिंदी में उच्चस्तरीय पाठ्य-पद्धति में पाठ्य-विषय की चयन संबंधी कठिनाई इसलिए होती है कि अध्यापक को स्पेनी भाषा में उपलब्ध हिंदी रचनाओं की प्राप्ति की दिक्कत भी होती है। जैसे भी हो, चयनित पाठ्य-सामग्री में यथासंभव स्पेनी में अनूदित हिंदी कृतियों को जोड़े रखें तो प्रस्तुत समस्या का एक हद तक समाधान हो जाता है। उच्चस्तरीय पाठ्यक्रम का निर्माण करते हुए अध्यापक को भारतीय विश्वविद्यालयों की उच्चस्तरीय पाठ्य-पद्धति का आभास नहीं होता है क्योंकि भारत तो हिंदी की मातृभूमि है मगर स्पेन जैसे यूरोपीय देश हिंदी के लिए प्रवास हैं। जहाँ तक लेखक की जानकारी है, भारत से बाहर बहुत कम विश्वविद्यालयों में एडवांस हिंदी का पाठ्यक्रम जारी है। इधर वल्लदोलिद विश्वविद्यालय में भी

स्नातकोत्तर उपाधि हेतु हिंदी भाषा व साहित्य का अध्ययन-अध्यापन गौरीशंकर की चोटी लगता है। भारतीय अध्ययन पर परास्नातक कक्षा के होते हुए उसमें एक विषय के रूप में भारत की भाषा हिंदी को पढ़ाना पर्याप्त होता है। अत: वहाँ हिंदी भाषा एवं साहित्य पर उतना ही गौर किया जाता है जितना कि प्रारंभिक कक्षा में 'हिंदी इनीशियल' पढ़ानेवाले को करना पड़ता है। हिंदी भाषा की प्रकृति और संरचनागत कठिनाइयाँ स्पेनी भाषा की तुलना में सरल हैं। भले ही ये कठिनाइयाँ प्रवासी भारतीयों के लिए सरल ही लगें मगर यूरोपीय मूलवासी के लिए ऐसी भाषाई संरचना उनकी समझ से परे होती है। अत: स्वयं हिंदी अध्यापक को स्पेनी भाषा की संरचना की सटीक जानकारी हासिल करनी पड़ती है। प्रस्तुत लेखक ने अपनी स्पेनी-हिंदी किताब के सृजन पर आद्यांत अपने स्पेनी-हिंदी छात्रों का सहारा ही नहीं लिया बल्कि एक होनहार छात्र जिसने इस अध्यापक के साथ 3 साल हिंदी पाठ्य-पद्धति का सफलतापूर्वक अध्ययन किया, को सहलेखक के रूप में चुन लिया। इससे यह लाभ हुआ कि स्पेनी भाषा में हिंदी संरचना के स्थानांतरण व लिप्यांतरण व अनुवाद में तथा स्पेनी भाषा के निर्वचन में सहजता हासिल हुई। ऐसे अध्येताओं पर भारतीय हिंदी अध्यापक गर्व कर सकते हैं।

वल्लदोलिद विश्वविद्यालय में हिंदी पढ़ाने में कई संस्थागत व अकादमिक सुविधाएँ प्राप्त होती हैं। 'भारत और स्पेन के विश्वविद्यालयी कुलपतियों का संगम' (वल्लदोलिद) से प्रत्यक्षत: स्पेनी-हिंदी भाई-भाई का परिवेश निर्मित हुआ। कासा-द-ला-इंदिया (भारत भवन) की वल्लदोलिद में स्थापना (2003) होने पर भारत का हर सांस्कृतिक कार्यक्रम वहीं चलाया जाता था। भारत भवन ही यूरोप की तृतीय सांस्कृतिक धरोहर के रूप में ख्याति प्राप्त है। प्रस्तुत लेखक को एक सांस्कृतिक कार्यालय व दफ़्तर उक्त भवन में दिया गया था ताकि वहाँ पहुँचते हरेक स्पेनी नागरिक को भारतीयता के प्रत्यक्ष दर्शन हो जाए। प्रस्तुत लेखक द्वारा निर्देशित सांस्कृतिक आदान-प्रदान के लिए स्थापित किया 'हिंदी संघ', शिक्षण से परे गैर-शैक्षिक व सांस्कृतिक गतिविधियों का माहौल सजाता था। 'हिंदी संघ' के सदस्यों की संख्या हर साल बढ़ जाती थी और वहाँ होनेवाली मासिक संगोष्ठियों, योग-कार्यशालाओं, भारतीय नृत्योत्सव, नाटक व अन्यान्य भारतीय लोक कलाओं, सामरिक कलाओं आदि का परिचय भी 'हिंदी संघ' की प्रत्येक बैठक में सोदाहरण दिया जाता था। 'हिंदी संघ' के नाम को सार्थक बनाते हुए कासा-इंदिया में होनेवाली सांस्कृतिक शाम भारत की अलग पहचान है। जो भी हो, भारतीयता के दर्शन में स्पेन का माहौल अन्य यूरोपीय देशों से कहीं आगे है। कासा-इंदिया को लघु-भारत ही घोषित किया जाता है। हिंदी अध्ययन-अध्यापन की अनुकूल स्थितियाँ वल्लदोलिद विश्वविद्यालय व वल्लदोलिद शहर में मौजूद हैं। 25 से ज़्यादा हिंदी के स्पेनी में अनूदित ग्रंथ साहित्यिक ही नहीं, सांस्कृतिक गरिमा के भी वाहक हैं। इनके अलावा पत्र-पत्रिकाओं में भी स्पेनी-हिंदी और हिंदी-स्पेनी परस्पर अनुवाद से विश्व साहित्य की कोटि में हिंदी को प्रतिष्ठित करने का सफल प्रयास जारी है। भारतीय राजदूतावास, मद्रिद से भी 'होला नमस्ते' नामक पत्रिका निकाली जाती है जिसमें अन्य विषयों के अतिरिक्त हिंदी और भारतीय भाषा विषयक आलेख भी छपते रहते हैं। स्पेन में भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद की स्पेनी पत्रिका 'पापेलस द ला इंडिया' है। उसी का सांस्कृतिक आदान-प्रदान कार्यक्रम प्रकारांतर से हिंदी के प्रचार व विकास में सहायक साबित होता है। हिंदी आचार्यों की प्रतिनियुक्ति और हिंदी पीठ के स्थायित्व को नियमित रूप से कायम रखना भारतीयता की अमिट छाप छोड़नेवाली गतिविधियाँ हैं। 'रामायण' नाटकीय प्रस्तुति (स्पेन के 25 मंचों) का हिंदी में शीर्षकानुवाद करते हुए प्रस्तुत लेखक को गर्व का अनुभव हुआ तथा उसी हिंदी में नाटक का शिलाफलक निर्माण करने एवं साइनबोर्ड बनाने के लिए भारत से ही कलाकार बुलाए गए। अत: उक्त नाटक का हिंदी में शीर्षक रखा गया—'रामायण, एक सवारी सौ रुपए' जो स्पेनी शीर्षक 'रामायण, उन वियहे सियन रूपियास' का भावानुवाद है। 'रामचरितमानस' के प्रारंभिक मंगलाचरण श्लोक 'वर्णानामर्थसंघानां...' को मंच पर दिखाते हुए, नाट्यानुवाद करते हुए, रंगमंच के बगल में समानांतर मंच सजाया गया था। हिंदी अध्यापक को इससे अच्छा साधन क्या उपलब्ध होता कि जिन्हें 'रामचरितमानस' का 'बालकाण्ड' उच्चस्तरीय पाठ्यपद्धति के दौरान पढ़ाने की नौबत आई। कक्षा में सिखलाने के साथ-साथ अध्येताओं को मानस पर आधारित उपर्युक्त नाटक भारतीय सड़क' (Calle India), 13-पुयंते कोलहांत, (13 Hanging Bridge), वल्लदोलिद शहर, स्पेन में कासा इंडिया के बगल में मंचित पाया, भले ही वल्ल्दोलिद विश्वविद्यालय वहाँ से एक किलोमीटर की दूरी पर स्थित हो। हिंदी अध्यापन में भले ही छोटी-छोटी समस्याएँ बीच-बीच में पैदा होती हों, उन्हें नज़रअंदाज़ भी किया जा सकता है तब जाकर स्पेनवालों की हिंदी पढ़ने की निष्ठा को प्रथम गणना प्राप्त हो।

संदर्भ–

i. (http://shabdvyanjana.blogspot.in/2015/04/blog-post_12.html

ii. http://eldiae.es/wp-content/uploads/2014/07/El-espa%C3%B1ol-lengua-viva-2014.pdf

iii. 1). A. Daniélou, 1987, **Shiva y Dionisos La religion de la Naturaleza y el Eros**, KairLs,Barcelona.; 2). Camafeo, **Cantos de Shiva**, González Ramos, E (tradu.)Barcelona; 3). **Cien Poemas De Kabir**, 1975, Diana, México.; 4). D.A. De Lauro, 1956, **Psaumes Du Pélerin, Toukaram**, Galliamard, Paris.; 5). EdiciLn a cargo de Shyama Prasad Ganguly, 2000, **Papeles de la India**, Vol. 29, 1-2, Consejo Indio deRelaciones Culturales, Nueva Delhi; 6). Enrique Galludo, 1998, **La India En La Literatura Española**, Madrid.; 7). Elena del Rio, Trad. 1998, **El Ramayana, Autentica De La Literatura Hindú, Tulsidas**, EdicomunicaciLn, Barcelona; 8). E. Zola, 1997, **Tres Caminas Hacia La LiberaciLn: Lógica, Devoción Y Ultraje**, Paidós Ibérica, Barcelona.; 9). F.J. Antón Burgos Y L.O. Ramos Alonso (editores) 2002, **Traspasando Fronteras: el reto de Asia y el Pacífico, II**, Universidad de Valladolid, Asociación Española deEstudios del Pacifico, centro de estudios de Asia.; 10). G. Zaid, 1983, **Canciones De Vidyapati**, Rev: Fin DeSiglo,Nº5, Jele de la Frontera, Cádiz.; 11). Guerra Tobarían, J.I. (trad.) 1980, **El evangelio de Gurú Nanak (Vida y obra de Gurú Nanak y de los diez gurús sikhs)** Visión libros, Barcelona.; 12). Guerra Tobalina, J.I (trad.) 1979, **Poesia Mistica De La India, Kabir, Mirabai y Guru Nanak**, Visión Libros,Barcelona.; 13). Herbert, J: 1988, **El Yoga De Amor: La Gesta De Krishna**, Edicomunicación, Barcelona. ; 14). Hill, Rowena:Nombres De Lo Innombrable, 1991, **101 Poemas Del Antiguo Kannada**, Monte Avia, Caracas.; 15). **Jayadeva: Gitagovinda**, Trad. (1971) Tola, R., EditorialSudamericana, Buenos Aires.; 16). José J. de Olañeta, 2001, **Poemas Breves De Kabir**, enla colección- **Los Pequeños Libros De La Sabiduría**, Palma de Mallorca.; 17). Lupsa, M: 1967, **Chants A Kali De Ramprasad**, InstitutFrançis D'Indologie, Pondicherry.; 18). L. De Sabio. (traducción), 1942, **Chandidasa-LosAmores De Rada Y De Krisna**, Cierzo, Barcelona.; 19). Obelisco, 2000, **Cien Poemas De Kabir**, Visión Libros,Barcelona.; 20). **'Oriente Y Occidente En La India De Los Siglos XX YXXI**, Daniélou, Santiniketan, Tagore', Casa Asia, Madrid.; 21). 2004. **Papeles De La India**, Volumen 25, No. 3-4, 1996; ConsejoIndio de Relaciones Culturales, Nueva Delhi.; 22). Pavan K Varma, 2006, **'La India en el siglo XXI**, traducción español, Irene Muzas Calpe y Daniel Aldea; Rossell, Ariel, Barcelona, original Ingles, 2004, **BeingIndia: The Truth About Why Twenty First Century BeIndia's**, Viking, New Delhi.; 23). **Ravindra Nath Tagore: Poemas de Tagore**, trad. 1979,Camprubi de Jiménez, Z., Plaza y Janes, Barcelona.; 24). Turner, V: 1988, **El Proceso Ritual**, Taurus, Madrid.

iv. Elena del Rio, Tradu. 1998, **El Ramayana, Autentica De La Literatura Hindú, Tulsidas**, EdicomunicaciLn, Barcelona

v. विजयकुमारन. सी.पी.वी., 'स्पेन में रामायण की नौटंकी,' 'विश्वा' अक्टूबर-दिसंबर 2009, वर्ष 25, अंक 4, वेस्ट चेस्टर, ओ ह्वेच, अमेरिका, पृ.-51-54.

vi. Vijayakumaran.C.P.V & Jesus Arribas Lazaro, 2010, **Hindi Fácil (Saral Hindi)**, Secretario de las publicaciones, Valladolid, Universidad de Valladolid.

vii. 1). Rupert Snell, 2007, **Hindi Para Principiantes.** Translation Alba Benitez, Merce Blasco, Marti Casas, & Jose Reche, Herder Editorial, S.L., 2003, Beginner's Hindi, 1st edition Hodder Arnodl.; 2). Vasant Ganesh Gadre, 1996, **Estructuras Gramaticales de Hindi y Español**, Madrid, Consejo Superior de Investigaciones Cientificas Agencia Española de Cooperación Internacional. ; 3). Ana Thapar: 1987, **Gramática de Hindi. Curso completo: escritura, lectura y breve diccionario español-hindi.** Madrid, Editorial Alhambra.

viii. Vijayakumaran, 'Translation And Intercultural Diversity: A Cultural Semiotic Translation of Ramayana in Spain', in the book **"Indian Literature in the 21st Century: Writers, Themes & Trends"**, Ed. Smt. Sreekumari, S & Dr. Nagendra Shreeniwas, 2014, Dept. of Russian, Calicut University., Pp. 31-62.

कासरगोड, केरल

vijay@gmail.com;vijayancpv@rediffmail.com

6

विश्वभाषा, विश्वसाहित्य और पहचान : परिप्रेक्ष्य में हिंदी

—डॉ. हाइंस वेर्नर वेसलर

किसी न किसी तरह से पूरी दुनिया में हिंदी की पढ़ाई होती है। एक तो यह है कि भारत प्रवासियों और उनकी दूसरी तथा तीसरी पीढ़ी में कुछ हद तक हिंदी न सिर्फ़ अपनी ज़ुबान पर अपनी पहचान का प्रतीक बनती है बल्कि इस मामले में जोश के साथ यह विधवा विलाप भी बहुत होता है क्योंकि ज़्यादातर दूसरी-तीसरी पीढ़ी में हिंदी मातृ भाषा के रूप में खत्म हो जाती है या नाना-नानी, दादा-दादी से बात करने का माध्यम रह जाती है पर उस से बढ़कर कुछ नहीं। खैर, कुछ समुदायों में खासकर 19वीं सदी के प्रवासी समुदायों में हिंदी की एक बोली जीवित है और जीवित रहेगी।

इसके अलावा पूरी दुनिया में ऐसे बहुत मुल्क हैं जिनके कुछ चुने हुए कॉलेजों या विश्वविद्यालयों में भारतीय भाषाएँ, साहित्य, धर्म का इतिहास और संस्कृति पढ़ाए जाते हैं। इस तरह के स्थानों में ज़्यादातर ऐसे छात्र आते हैं जिनको पहले कुछ भी नहीं आता था न भाषा, न लिपि, न उनके लिए हिंदी किसी तरह से अपनी पहचान का प्रतीक है।

इनकी दिलचस्पी हिंदी की तरफ़ इस तरह से बनती है जिस तरह से हिंदुस्तान में लोग जापानी, चीनी, रूसी, अफ्रीकी भाषाएँ या स्पेनिश पढ़ते हैं। कुछ लोगों को लगता है कि भाषा की जानकारी के साथ खास किस्म की नौकरी ज़रूर मिलेगी। कुछ लोगों को फ़िल्मों में दिलचस्पी है, कुछ लोगों को साहित्य में। कुछ लोग पढ़ाई करने से पहले पर्यटक के रूप में इस दुनिया के किसी दूसरे कोने से मुहब्बत करते हैं और ज़ुबान भी सीखना चाहते हैं। इस तरह से हिंदी और हिंदी साहित्य प्रेमी लगातार बनते ज़रूर हैं।

मेरे जैसे विदेशी हिंदी विशेषज्ञ अजीब किस्म के लोग हैं। यूरोप में बैठकर हम भारतीय भाषाएँ पढ़ते और पढ़ाते हैं। हमारे पीछे एक बहुत कदीम और आदरणीय परंपरा है जो कम से कम 200 साल पुरानी है। इंडोलॉजी हमारे विषय का पवित्र नाम है। इस विषय की जड़ें यूरोप और जर्मनी में 19वीं सदी के रोमांटिसिज़्म में हैं और साथ में भाषाविज्ञान में भी। 18वीं शताब्दी के पिछले 2 दशकों में संस्कृत साहित्य के अनुवादों का यूरोप में ज़बरदस्त प्रभाव शुरू हुआ था। विलियम जोंस का नाम तो बहुत मशहूर है पर ठीक से देखें तो पता चलेगा कि इनसे पहले भी कुछ लोग विदेश से आकर संस्कृत सीखने लगे थे। कई ईसाई धर्म प्रचारक इसके बहुत बड़े विद्वान बने।

फ्रेडेरिक वॉन श्लेगल की किताब 'श्प्राखे उन्द वैसहैत डेर इन्दिएर' (भारतीयों की भाषा और ज्ञान) 1808 में हीडलबर्ग जर्मनी में मुद्रित होने के बाद जोश से संस्कृत साहित्य की ओर रुचि बढ़ने

जन्म : 20.7.1972

शिक्षा : ज़्यूरिख़ विश्वविद्यालय से दर्शनशास्त्र में पीएचडी।

प्रकाशन :

1. (2016). Jacinta Kerketta, Glut - Angor : Gedichte Hindi und Deutsch: Aus dem Hindi uebertragen und nachgedichtet von Brigitte Komarek-Chhabra und Johannes Laping, Draupadi Verlag 2016.Suedasien, Bonn. 36(2): 98-98
2. (2016). Drei Gedichte von Kunvar Narain.Suedasien, Bonn. 36(1): 8-9
3. (2015). Fictionalising Social Change: Violence and Non-violence in the Imaginary of Collective Transformation in Some Hindi Dalit Novels.I Parmod Kumar Mehra (red.) Literature and Social Change: Emerging Perspectives in Dalit Literature, New Delhi: Kalpaz Publications. 17-44
4. (2015). विश्वभाषा बनने की राह, गर्भनाल, भोपाल 5(8): 4-7
5. (2015). पश्चिमी दुनिया में इंडोलोजी और हिंदी, हंस, दिल्ली 347(2): 54-56

पुरस्कार : विश्व हिंदी सम्मान, 10वाँ विश्व हिंदी सम्मेलन, 2010, भोपाल

संप्रति : प्रोफ़ेसर, भाषा विज्ञान व भाषा शास्त्र विभाग, उप्साला विश्वविद्यालय।

लगी। पेरिस, फ्रांस में इंडोलॉजी की सर्वप्रथम प्राध्यापक पीठ 18 14 और दूसरी 1818 में बॉन, जर्मनी में स्थापित की गई। तब से संस्कृत की पढ़ाई और कथित इंडो-यूरोपीय भाषाशास्त्र का अध्ययन-अध्यापन कई देशों में व्यापक स्तर पर चला आ रहा है।

उस युग में ही यानी 200 वर्ष पहले कालिदास का 'अभिज्ञानशाकुन्तलम्' के नाम से विख्यात नाटक का यूरोप की कई भाषाओं में अनुवाद किया गया। जब भारत का नाम और 'इंडोलॉजी' शब्द कहा जाता था तो आम तौर पर उन दिनों के भारत की कल्पना होती थी। आधुनिक भारत दूर की बात थी। इंग्लैंड में अलग सी बात। उधर ईस्ट इंडिया कंपनी के कर्मचारियों को हैलीबरी कॉलेज में सिखाया जाता था कि इंडिया को कैसे कब्ज़े में रखना है। इस लिहाज़ से फ़ारसी और बोलचाल की ज़ुबान भी थोड़ी-थोड़ी सीखनी पड़ी, जहाँ तक ज़रूरत पड़ी। उस ज़माने में हिंदुस्तान में अंग्रेज़ी तो लगभग नहीं चलती थी। अंग्रेज़ी का प्रचार बस शुरूआती दौर में था, कोलकाता के प्रेसीडैंसी कॉलेज जैसे विख्यात अंग्रेज़ी अध्ययन-अध्यापन संस्थान में और लॉर्ड मैकाले बाद में आए।

खैर, संस्कृत और भारतीय साहित्य का ज्ञान इकट्ठा करना, वह भी एक तरह से उपनिवेशवाद का एक उद्देश्य था। इस वजह से बाद में मैक्स मुलर ऑक्सफ़ोर्ड बुलाए गए थे। संस्कृत से आगे जाकर इंडोलॉजी जल्द ही प्राकृत और इसके साहित्य तक पहुँची। अतीत के पुनर्निर्माण का सपना उसके साथ जारी होता रहा या सही अर्थों में दक्षिण एशिया के कल्पित 'सोना, स्वर्ण युग' (गोल्डन एज) के पुनर्निर्माण की ओर। आधुनिक भाषाओं, साहित्य और फिर समकालीन भारत ने 19वीं सदी की इंडोलॉजी में एक बहुत सीमित भूमिका निभाई।

संस्कृत भाषाशास्त्र 19वीं सदी में और काफ़ी हद तक 20वीं सदी में इंडोलॉजी की रीढ़ की हड्डी रही। कई स्थानों में आधुनिक भाषाएँ और उनका साहित्य उत्तर औपनिवेशिक काल में या इससे पहले भी पाठ्यक्रम में जोड़ा गया था पर महत्व संस्कृत और उसके साहित्य का रहा। भारत की आज़ादी और पाकिस्तान के निर्माण के बाद इस क्रम में प्रारंभ में कोई विशेष परिवर्तन नहीं आया। दूसरे और तीसरे की जगह पर प्राकृत और आधुनिक एक भाषा तो शायद आई तो है पर केंद्रबिंदु वही रहा। पाठ्यक्रम का यह डिफ़ॉल्ट सेटप (default setup) अभी भी कई यूरोपीय देशों में मज़बूत है और इसी इंडोलॉजी का भारत में अत्यधिक सम्मान होता रहा है।

1960 के बाद से 'क्षेत्रीय अध्ययन' (यानी दक्षिण एशियाई अध्ययन) संयुक्त राज्य अमेरिका में विशेष रूप से पेश किया गया। इसमें इतिहास और समाज, अर्थशास्त्र और भूगोल पढ़ाए जाते हैं और इसके साथ बोली जानेवाली भाषा की पढ़ाई भी होती है।

एडवार्ड सईद की मशहूर किताब 'ऑरियेंटलिस्म' (1979) का प्रकाशन न सिर्फ़ इस्लामिक स्टडीज़ में बल्कि एशियन स्टडीज़ के लिए बड़ी चुनौती बनी है। तथाकथित 'ओरिएंटल स्टडीज़' यानी प्राच्य भाषा और संस्कृति का अध्ययन-अध्यापन एवं इंडोलॉजी भी अचानक साम्राज्यवाद और उपनिवेशवाद के इतिहास के अंतर्गत देखी-दिखाई जाने लगी और यह विवादास्पद अध्ययन का विषय रही है।

यूरोप के सम्मिलित संस्कृति मंत्रियों के मंडल के तथाकथित 'बोलोन्या घोषणा पत्र' (1999) के बाद, पूरे यूरोप में शिक्षा में भारी परिवर्तन आ गया है। इंडोलॉजी ने बदलते हुए पाठ्यक्रमों की चुनौती दूर रखने के लिए बहुत कोशिश तो की पर पहले से स्पष्ट था कि वह प्रयत्न सफल नहीं हो सकता। विषय की स्थापना और इसके भाषा प्रशिक्षण में गहरा परिवर्तन होने लगा। यह बदलाव भी छात्रों के कम होने के कारण ज़रूरी था। शास्त्रीय इंडोलॉजी में छात्रों की संख्या में कमी महसूस की गई और की जा रही है। इसके लिए एक कारण लातिन के मामूली स्कूलों में गिरावट है। लातिन जो कुछ दशक पहले तक पूरे पश्चिम और मध्य यूरोप के हाई स्कूलों में ज़ोरों से पढ़ाई जाती थी, आजकल कम पढ़ाई जाती है। इंडोलॉजी के मामले में समग्र प्रयास भाषा अधिग्रहण की धारणा के महत्व का बचाव होना ही है लेकिन अब अधिक स्थानों में आधुनिक पढ़ाई मज़बूत हो रही है।

इसके अलावा, भाषाओं के अध्ययन की उपयोगिता के सवाल विश्वविद्यालयों के भीतर से भी उठ रहे हैं। संस्कृत के छात्रों की संख्या में गिरावट, अन्य कारणों के साथ निश्चित रूप से यूरोपीय विद्यालय शिक्षा पाठ्यक्रम में लातिन की गिरावट से संबंधित है। इसके अलावा यह भी देखना है कि दक्षिण एशिया ने अंग्रेज़ी भाषा और अंग्रेज़ी भाषीय यानी तथाकथित 'आधुनिक', 'प्रगतिग्रस्त' और 'भौगोलिक' संस्कृति इस तरह से अपनाया है कि तथाकथित क्षेत्रीय

भाषा अधिग्रहण यानी आधुनिक भारतीय भाषाओं का अधिग्रहण कार्यात्मक ढंग से बेमतलब और विनियोजित समझाया गया है। आखिर में उत्तर उपनिवेशवादी सिद्धांत का असर भी महसूस किया जाता है।

स्वीडन के हमारे उप्साला विश्वविद्यालय की प्राच्य विद्या की पुरानी परंपरा 17वीं सदी से चली आ रही है। 1838 में पहली बार संस्कृत पढ़ाई गई थी। ओट्टो फ्रेडेरिक तुल्ल्बेर्ग उस वक्त तथाकथित प्राच्य भाषाओं के प्राध्यापक थे और इस सिलसिले में इनकी दिलचस्पी हिब्रू और सुरिअक को छोड़कर संस्कृत की ओर जाने लगी जिसे इन्होंने क्रिस्चियन लस्सेन के यहाँ जर्मनी में सीखा। तुल्ल्बेर्ग की रचना 'Strödda Anmärkningar rörande Indien och Sanskrit Literaturen' (1839) स्वीडन की भारतविद्या (Indology) की प्रवेशात्मक क्रिया समझी जा सकती है। 1874 तक प्राध्यापक पीठ उसी नाम से आगे चलता रहा और बीच-बीच में संस्कृत की पढ़ाई हुई होगी। 1892 के बाद से भारतीय विद्या की प्राध्यापक पीठ सही ढंग से शुरू हुई। 2003 तक यह पीठ न सिर्फ़ संस्कृत भाषा और साहित्य पर केंद्रित थी बल्कि इनके साथ ही इंडो-यूरोपीय भाषाविज्ञान पर भी। 2003 में इसका केंद्रबिंदु दक्षिण एशिया के क्षेत्रीय अध्ययन-अध्यापन में विलय होने लगा। विभाग स्वयं अपना केंद्रबिंदु नहीं बदलना चाहता था, क्षेत्रीय अध्ययन-अध्यापन, आधुनिकता और अंतर्विषयक नया केंद्रबिंदु फ़ैकल्टी की ओर से इंडोलॉजी के सामने आने लगा।

तब से पाठ्यक्रम के अंदर हिंदी की जगह आगे बढ़ी। इस संदर्भ में यह भी पूछा जा सकता है कि क्या उप्साला में हिंदी की उन्नति एक तरह का प्रमाण है कि हिंदी सचमुच विश्वभाषा और हिंदी साहित्य विश्व साहित्य के रूप में विकसित हो रहा है या विकसित हो चुका है?

21वीं सदी में स्वीडन जैसे छोटे देश में और आगे बढ़ते हुए भारत के सामने हिंदी एवं इंडोलॉजी की पढ़ाई का मतलब क्या है और कौन-सी चुनौतियाँ हैं? इन दिनों खबर आई कि वरिष्ठ हिंदी कहानीकार मन्नू भंडारी के उपन्यास 'आप का बंटी' और 'महाभोज' चीनी अनुवाद में आ रहे हैं। इन उपन्यासों के अभी 6-7 भाषाओं में अनुवाद उपलब्ध हैं यानी चीन के आम पाठक जिनको न हिंदी आती है, न भारत के बारे में विशेषज्ञता हैं, मन्नू जी के उपन्यास अपनी ही ज़ुबान में पढ़ सकते हैं।

मैं मानता हूँ कि यह छोटी बात नहीं है। साहित्य का बहुत महत्वपूर्ण योगदान है कि इंसान एक-दूसरे को समझता है। विभिन्न संस्कृतियों में साहित्य एक पुल सा है और अगर हिंदी-चीनी के अनुवादक नहीं होते तो यह सब नहीं हो सकता था।

इस संदर्भ में एक महत्वपूर्ण मामला अक्सर भूला दिया है। अच्छा अनुवाद कैसे बनता है? अनुवाद अपने आप में एक कला है जिसके लिए एक विशेष पृष्ठभूमि चाहिए। सब से पहले भाषा के अध्ययन-अध्यापन की एक संस्कृति। कभी-कभी हिंदी के साथ यह रामकथा चलती है कि हिंदी साहित्य के अनुवाद को वैसी जगह क्यों नहीं मिलती है, जैसी भारतीय लेखकों के अंग्रेज़ी उपन्यास को मिली है। वैसे प्रेमचंद से लेकर अज्ञेय, निर्मल वर्मा, गीतांजलि श्री तथा उदय प्रकाश की रचनाओं के अनुवाद कई भाषाओं में ज़रूर मिलते हैं पर ज़्यादातर छोटे प्रकाशकों द्वारा छपते हैं और कम हैं। सलमान रुश्दी, अडिगा, अरुंधति रॉय, विक्रम सेठ जैसे नाम तो किसी भी पश्चिमी पाठक के कानों में तो ज़रूर गूँजते हैं। इसी तरह से हिंदी लेखकों के नाम क्यों नहीं गूँजते?

कुछ लोगों का कहना है कि इस तरह के मूल अंग्रेज़ी उपन्यास अपने देश के पाठकों के लिए नहीं, विदेशी पाठकों के लिए ही लिखे जाते हैं हालाँकि हिंदी और दूसरी भारतीय भाषाओं का साहित्य अपने यहाँ के पाठकों के लिए हैं। इस लिहाज़ से संदर्भ अलग है, कथानक अलग है और सौंदर्यशास्त्र विभिन्न ही होता है। मुझे इस पर शक है। मैं अभी भी मानता हूँ कि अगर किताब अच्छी है तो अनुवाद भी अच्छी होनी चाहिए और जागरूक पाठकों, देशी हो या विदेशी, इनको किसी तरह से अंदाज़ा होता है कि रचना अच्छी है कि नहीं पर अनुवाद सही होना चाहिए और स्वीडिश पाठक ज़्यादातर स्वीडिश में ही पढ़ेगा, इसलिए यह बहुत ज़रूरी है कि अनुवाद सही हो।

हिंदी का हाल इस सिलसिले में क्या है, चीन में, यूरोप में और अमेरिका में अनुवादक कहाँ से आते हैं? एक तो यह है कि यूरोप के कई देशों में पूर्वी एशिया और अमेरिका की तरह बड़े-बड़े विश्वविद्यालयों में इंडोलॉजी के छोटे-छोटे विभाग या प्राच्य विद्या के संस्थान होते हैं जहाँ दक्षिण एशिया की भाषाएँ पूरी तरह से पढ़ाई जाती हैं। छात्र खासकर हिंदी सीखने के लिए ज़रूर आते

हैं और भाषा के साथ साहित्य और संस्कृति भी पढ़ते हैं। उनमें से कुछ लोग घोर परिश्रम करके 3-4 सालों में अच्छी हिंदी सीख लेते हैं और शब्दकोश के साथ साहित्य भी पढ़ते हैं और साहित्यिक अनुवाद तैयार करने की कोशिश करते हैं।

प्राच्य भाषाओं का शिक्षण तो ज़्यादातर विदेशी ज़ुबान की दिक्कतें समझने पर आधारित होता है। अनुवाद करना अपने आप में एक कला है जो क्लासरूम के अंदर कम सिखाई जाती है। खेद की बात है कि भारतीय साहित्य से बड़े-बड़े प्रकाशन गृहों में सिर्फ़ अंग्रेज़ी में लिखे गए उपन्यास निकलते हैं। प्रकाशकों का अक्सर यही मंत्र होता है कि इस तरह की तथाकथित देशी भाषाओं की किताबों के लिए हमारे यहाँ कोई बाज़ार नहीं है। बिक्री नहीं होगी। या तो आलोचना करते हैं कि अनुवाद तो ठीक हो सकता है, पर भाषा पर पकड़ नहीं है।

इसमें कुछ सत्य हो सकता है क्योंकि सही अनुवाद के लिए न सिर्फ़ हिंदी की समझ ठीक होनी चाहिए बल्कि अनुवाद की भाषा में भी विधि लानी पड़ती है जिसके लिए कोई सही शिक्षा नहीं मिल पा रही है।

अच्छे अनुवादक कहाँ से आते हैं? जिस तरह से पूरे यूरोप, अमेरिका और पूर्वी एशिया में (यानी दक्षिण या उत्तर कोरिया से बाहर) छात्र आकर्षित होकर कोरियाई ज़ुबान पढ़ने के लिए आते हैं, उसी तरह से हिंदी के लिए भी आते हैं। पूरी दुनिया में बड़े-बड़े विश्वविद्यालयों में इंडोलॉजी के विभाग या तो प्राच्य विद्या के संस्थान होते हैं जहाँ हिंदी ज़रूर मुख्य विषय या कम से कम गौण विषय के रूप में पढ़ाई जाती है। इस वजह से हिंदी एक विश्वभाषा बन चुकी है। जो छात्र बी.ए.-एम.ए. का पाठ्यक्रम पूरा कर लेते हैं, हिंदी के साथ संस्कृत एवं दूसरी भारतीय भाषाएँ भी कम से कम प्रवेशात्मक रूप से पढ़ भी लेते होंगे, वे बाद में सचमुच भारत के स्वाभाविक और एकदम मौलिक राजदूत बन जाते हैं। उनमें कई लोग अनुवाद के क्षेत्र में आ जाते हैं। इन लोगों का उद्देश्य होता है हिंदी साहित्य के अच्छे-अच्छे नमूने विश्वसाहित्य की श्रेणी तक पहुँचाना।

हिंदी पढ़ाई के उद्देश्य विभिन्न छात्रों के लिए विभिन्न हो सकते हैं। हर छात्र के अपने जीवन की कहानी होती है और पढ़ाई की समाप्ति पर हर एक की अपनी आगे जाने की कहानी होती है। कुछ लोग किसी नौकरी में जाते हैं, कुछ लोग पत्रकारिता में जाते हैं, कुछ लोग पर्यटन में काम करना शुरू करते हैं और विदेशी पर्यटकों को भारत दिखाते हैं पर जो भी नौकरी हो, ज़्यादातर भारत के लिए जोशीले ही रहेंगे और हिंदी के लिए भी और कुछ लोग साहित्यिक अनुवादों की रचना करते हैं। खेद की बात है कि इससे ज़िंदगी तो नहीं कटती है। हिंदी के साथ नौकरी आसानी से तो नहीं मिलेगी। सिर्फ़ विश्वविद्यालयों या कॉलेजों में कभी-कभी पढ़ाने या अनुसंधान करने का मौका मिल सकता है।

अच्छे अनुवादक अपने आप से तो नहीं बनते। इनको अलग से शिक्षण मिलना चाहिए। खेद की बात है कि माहौल इस तरह से इस वक्त तो नहीं है। कई बार उल्लेख कर चुका हूँ कि भाषा की पकड़ बहुत अहम होती है।

आखिर में सवाल अनुवाद की गुणवत्ता का है। इस संदर्भ में मेरा एक सपना है। अगर ऐसा संस्थान होता जहाँ पूरी दुनिया से भारतीय साहित्य के अनुवादक आ सकते, आपस में मिल सकते एवं लेखकों और आलोचकों के साथ अनुवाद की समस्याओं पर बहस और आगे जाकर साहित्य-विमर्श कर सकते तो हर किसी को फ़ायदा होता। मान लें कि एक ही उपन्यास का अनुवाद जापानी, रूस में और स्वीडिश में हो रहा है और अनुवादक एक बार कुछ दिनों तक शांति से बैठकर मिल सकते, अपना काम कर सकते और अनुवाद की समस्याओं पर संपर्क में आ सकते।

आखिर में हिंदी का आकर्षण क्या है? मेरे खयाल से यह बहुत ज़रूरी है कि हिंदी न सिर्फ़ बोलचाल की भाषा बल्कि अपनी पहचान को आगे बढ़ाने की भी भाषा बननी चाहिए। बहुत ज़रूरी है कि हिंदी के छात्र, भारतवंश के हों या बाहर की नस्ल के हों, हिंदी को आधुनिकता के साथ जोड़ें जिस तरह से चीनी, जापानी और कोरियाई आधुनिक हैं। यह ज़रूरी है कि हिंदी के छात्र अपने अनुभव इस भाषा में प्रकट करें और पूरी तरह से इसमें रंग लें और इसके साथ आधुनिक साहित्य के सही अनुवाद भी उपलब्ध कराने चाहिए ताकि जो लोग हिंदी साहित्य का रस नहीं जानते, वे इसका रस पी सकें।

उप्साला, स्वीडन
heinzwerner.wessler@lingfil.uu.se

7

यॉर्क विश्वविद्यालय में विरासती भाषा विद्यार्थियों के लिए हिंदी-उर्दू शिक्षण

—डॉ. शोभना निझावन

यॉर्क विश्वविद्यालय, कनाडा के ओंटारियो प्रांत की राजधानी, टोरंटो शहर में स्थित सबसे बड़े सार्वजनिक शिक्षा संस्थानों में से एक है। भाषा, साहित्य और भाषाविज्ञान यॉर्क विश्वविद्यालय के लिबरल आर्ट्स और व्यावसायिक अध्ययन के विशाल विभाग की शाखाएँ हैं। यह निबंध हिंदी-उर्दू शिक्षण के बारे में है जो कि मुख्य रूप से विरासती भाषा विद्यार्थियों (हेरिटेज लैंग्वेज लर्नर्ज़) को प्रदान किया जाता है। विरासती भाषा विद्यार्थी (वि.भा.वि.) वे हैं जो अनौपचारिक रूप से हिंदी अथवा उर्दू बोल सकते हैं। वे अलग-अलग स्तरों पर भाषा बोल तो सकते हैं परंतु उन्हें लिखना एवं पढ़ना नहीं आता। ये विद्यार्थी 3 स्तरों पर पाए जाते हैं और विदेशी भाषा सीखनेवालों से अलग होते हैं क्योंकि इनमें पहले से ही भाषा एवं सांस्कृतिक ज्ञान विद्यमान रहता है।

पिछले दशक में यॉर्क विश्वविद्यालय में मैंने जो हिंदी-उर्दू का कार्यक्रम स्थापित किया था उसे मैंने अपने एक पिछले प्रकाशन 'भाषाई एवं सांस्कृतिक अवगत शिक्षण शास्त्र' पर आधारित किया था। ऐसे कोर्सों की बढ़ती माँग को देखते हुए इस तरह के शिक्षण शास्त्र एवं कक्षा कार्यप्रणाली का विकास किया जा रहा है। लोग भाषा को औपचारिक रूप से सीखने में कतराते हैं खास तौर पर उन व्याकरण के नियमों से जो कि उन पाठ्य-पुस्तकों द्वारा पढ़ाए जाते हैं जो एक उत्तर अमेरिकी विदेशी भाषा विद्यार्थी के लिए रूपांकित किए गए हैं। वि.भा.वि. को पारंपरिक व्याकरण की किताबें पढ़ने में काफ़ी कठिनाई होती है और अब मैं इस बात को छात्रों की लापरवाही या रुचि का अभाव नहीं समझती परंतु यह मानती हूँ कि वि.भा.वि. की शिक्षण संबंधित ज़रूरतें पूरी नहीं हो रही हैं।

इस मामले में उपयुक्त टिप्पणी दी गई, ''जब शिक्षक छात्रों की भाषा दक्षता को अनदेखा कर देते हैं तो वे उन सामाजिक संबंधों का अवमूल्यन कर रहे होते हैं जो कि छात्रों की भाषा और सांस्कृतिक राशि हैं।'' इसके बजाय वि.भा.वि. को विरासती भाषा यानी ''जीवंत एवं प्रासंगिक'' [गुनारी Gunari 2014, पृ. 266] भाषा के रूप में देखना होगा। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए ऐसे विशिष्ट शिक्षण शास्त्र को बढ़ावा देना होगा जो कि सक्रिय रूप से छात्रों की भाषाएँ एवं संस्कृतियाँ अपनी कक्षा में शामिल कर सकें।

विरासती धारा को औपचारिक रूप से लागू करने से पहले 90 प्रतिशत छात्र, जिन्होंने हिंदी-उर्दू कोर्स में दाखिला लिया था, वे पहले से ही अपनी एशियाई एवं प्रवासी निष्ठा के कारण विरासती भाषा के ज्ञानी थे। 2015-16 में यॉर्क विश्वविद्यालय की विरासती भाषा विद्यार्थियों की जनसंख्या का इस प्रकार से वर्णन किया जा

जन्म : कोनिगस्ताईन, जर्मनी
शिक्षा : पीएचडी, कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय तथा एम.ए. हेदेल्बेर्ग विश्वविद्यालय

प्रकाशन :
Some Monographs and Edited Books

1. Women and Girls in the Hindi Public Sphere: Periodical Literature in Colonial North India. New Delhi: Oxford University Press, 2012.
2. (Editor). Nationalism in the Vernacular. Hindi, Urdu and the Literature of Indian Freedom. New Delhi: Permanent Black, 2010. Articles in Journals and Book Chapters (selection)
3. "At the Margins of Empire: Feminist Configurations of Burmese Society in the Hindi Public (1917-1920)." Journal of Asian Studies 71.4 (November), pp. 1013-1033, 2012.
4. "I got the point across and that is what counts." Transcultural versus (?) linguistic competence in language teaching." Journal of the National Council of Less Commonly Taught Languages 9.1., pp. 59-81, 2011.
5. "Hindi Children's Journals and Nationalist Discourse (1910-1930)." Economic and Political Weekly 39.33, pp. 3723-3729, 200

संप्रति : सहायक प्रोफ़ेसर, यॉर्क विश्वविद्यालय (Department of Languages, Literatures and Linguistics, York University)

सकता है: एक तिहाई हिंदी या उर्दू समझ और बोल सकते थे, दो तिहाई व्यापक रूप से वि.भा.वि. थे पर सब से महत्वपूर्ण बात यह थी कि वे कई क्षेत्रीय भाषाएँ बोलते थे जो कि हिंदी-उर्दू से संबंधित नहीं हैं। इस पेचीदा मिश्रण के कारण छात्रों की भाषाई निपुणता अलग-अलग स्तरों पर पाई जाती है। यह एक मूल निवासी की बोलने अथवा समझने की निपुणता से लेकर हिंदी-उर्दू के अलावा किसी एक क्षेत्रीय भाषा की जानकारी तक हो सकती है। वे छात्र जो व्यापक रूप से वि.भा.वि. कहलाए जा सकते हैं और जो खुद को वि.भा.वि. समझते हैं, अपनी योग्यता के स्तर का निर्णय कोर्स निर्देशक के साथ मिलकर करते हैं।

हिंदी-उर्दू धारा की स्थापना करने का सब से ज़रूरी तर्क था इस बात को स्वीकारना कि वि.भा.वि. सेकण्ड लैंग्वेज लर्नर्ज़ से काफ़ी अलग श्रेणी में हैं और उनको पढ़ाने के लिए विरासती भाषा शिक्षण शास्त्र को अपनाना होगा। जब यह बात स्वीकार की गई कि वि.भा.वि. काफ़ी अलग श्रेणी के छात्र हैं तब इस धारा की संरचना एवं विषय सूची तैयार की गई। विरासती भाषा शिक्षण के क्षेत्र में यह बात अच्छी तरह से प्रमाणित की गई है कि वि.भा.वि. और सेकण्ड लैंग्वेज लर्नर्ज़ को अलग-अलग पढ़ाना चाहिए। इस ज़रूरत को पूरा करने के लिए इस क्षेत्र में विशेष तौर पर वि.भा. वि. शिक्षा शास्त्र के नमूने विकसित किए गए हैं। Carreira (2014) parra (2014) दोनों ने ही वि.भा.वि. शिक्षण के प्रस्ताव प्रस्तुत किए हैं जिनके अंतर्गत वि.भा.वि. के लिए 'customised options', 'pedagogy' एवं 'pedagogical spaces' के निर्माण की इच्छा व्यक्त की गई है जिससे कि सेकण्ड लैंग्वेज लर्नर्ज़ अपनी भाषा एवं सांस्कृतिक कौशल विकसित कर सकें।

कक्षा कार्य एवं शिक्षण प्रणाली

वि.भा.वि. की कक्षा में छात्रों के विषय माँग समुदाय को देखते हुए carera (2014) एवं parra (2014) के मुताबिक signature pedagogy (चिह्नक शिक्षण शास्त्र) एवं differentiated teaching (पृथक शिक्षण) की चुनौती है छात्रों की भाषा एवं सांस्कृतिक बहुरूपता को पहचानना और इसके द्वारा एक ऐसे शिक्षण शास्त्र को ढालना जो हर एक विद्यार्थी की न तो मानहानि (carreira 2004, 12) करे और न ही उन्हें एक समान समझे। कोर्स ऐसा होना चाहिए जो कि छात्र को पूर्ण रूप से कक्षा में समायोजित कर ले न कि इसके विपरीत क्योंकि one size fits all के तरीके में काफ़ी त्रुटियाँ हैं। सेकंड लैंग्वेज की कक्षा में वि.भा.वि. को हमेशा से अड़चन के रूप में देखा गया है जैसा कि 'false beginner' (नकली नौसिखिया) की परिभाषा में सुझाया गया है। (Hornberger and wang 2008, 22)। ऐसा वर्गीकरण एक वि.भा.वि. की कक्षा में भी प्रविष्ट कर सकता है अगर शिक्षक अपनी कक्षा की विविध सांस्कृतिक और भाषा की निपुणता एवं निष्ठा की सतहों पर ध्यान न दें जैसा कि Polins ki and Kagan (2007, 390) एवं (Hornberger and wang 2008, 23 ने प्रस्तावित किया है। एक वि.भा.वि. की कक्षा में सारा ज़ोर व्याकरण, शब्द ज्ञान एवं सांस्कृतिक विकास की ओर दिया जाता है न कि 'भूल मिटाने' में [Kagan and Dillon 2009, 165] छात्रों को यह शिक्षण इस उद्देश्य से दिया जाता है कि वे तुरंत ज्ञान प्राप्त करके उसका कक्षा के बाहर प्रयोग कर सकें [Kagan and Dillon 2009, 168]। शिक्षक विदेशी विरासती भाषा छात्रों की रचनात्मकता को प्रोत्साहित करते हुए उनके सांस्कृतिक एवं भाषा के अनुभवों का प्रयोग कक्षा के कार्यों को करने में प्रयोग करते हैं। इस तरह से छात्र कोर्स की ओर आकर्षित होते हैं और कक्षा के सफल कार्यकर्ता बन जाते हैं।

चित्र एवं दृश्य

विरासती भाषा के छात्रों को पढ़ाने में और उनके सांस्कृतिक एवं भाषाई कौशल को विकसित करने के लिए चित्र एवं दृश्य हर कक्षा में बहुत लाभदायक साबित हुए हैं। पावर पोंइट एवं संजोए हुए दृश्य, व्याकरण, प्रश्न एवं क्रिया काल सिखाने में काफ़ी काम आते हैं तथा रंग, संज्ञा, और विशेषण का शब्द ज्ञान बढ़ाने में भी सहायक होते हैं। छात्रों का शब्द ज्ञान आँकने के लिए ये दृश्य पाठ आरंभ करने से पहले भी दिखाए जा सकते हैं। एक तस्वीर जैसे कि ग्राहकों से घिरी हुई एक चाय की दुकान या फिर रेल में सफ़र करते हुए यात्री, यह एक चर्चा आरंभ करने का माध्यम बन जाता है। छात्र अपने आपको इन तस्वीरों के पात्रों में ढालकर एक-दूसरे से प्रश्न पूछते हैं और बातचीत शुरू हो जाती है। कई प्रकार की दक्षिण एशियाई गतिविधियाँ एवं तरह-तरह के खाद्य पदार्थ—सब्ज़ी, फल, मिठाई, त्योहारों में बनाए जानेवाले पकवान, रोज़ का खाना, नाश्ता एवं कपड़े, कई दक्षिण एशियाई त्योहारों में पहने जानेवाले वस्त्र एवं दूसरे देशों के वस्त्र, कक्षा में की जानेवाली चर्चा के लिए

काम में लाए जा सकते हैं।

इससे विरासती भाषा छात्रों की निजी विविधता सामने आती है और वे इन तस्वीरों द्वारा अपने जीवन के कई अनुभवों की तुलना भी कर सकते हैं। प्राय: चित्र छात्रों को आकर्षित करते हैं और उनकी संवादात्मक एवं भाषाई रचनात्मकता को जागृत करते हैं।

चित्र एवं दृश्य केवल शिक्षक ही नहीं संजोते बल्कि छात्र भी उसमें बराबर के हिस्सेदार होते हैं। वे भी slides में अपने चित्र, दृश्य एवं तस्वीरें डालते हैं। ये चित्र या तो internet द्वारा प्राप्त किए जाते हैं अथवा छात्र अपनी खींची हुई तस्वीरें भी लाते हैं जो कि वे अपने दक्षिण एशियाई भ्रमण के दौरान, अपने दूसरे देशों के मित्रों के साथ या फिर परिवार के सदस्यों से मिलाप के समय, घरों में, त्योहारों पर, विश्वविद्यालय के कैंपस में, क्रिकेट के मैदान पर या स्केटिंग रिंक पर लेते हैं। ऐसी क्रियाएँ छात्रों के सांस्कृतिक अनुभवों एवं उनकी रुचि को पाठ्यक्रम में संलग्न करती हैं।

गीत एवं कहावतें

बॉलीवुड के गीत शायद हिंदी-उर्दू के छात्रों के ध्यान को आकर्षित करने का सबसे कारगर माध्यम है। नए कोर्स की शुरूआत में ही वि.भा.वि. को वह गीत लाने को कहा जाता है जिन्हें वे पहचानते एवं पसंद करते हैं। एक macro approach को ध्यान में रखते हुए एक शिक्षक के लिए पहला कदम है गीत को एक प्रामाणिक सांस्कृतिक वस्तु के रूप में पहचानना, एक गीत जिसका आनंद उठाया जा सकता है। जो परिचर्चा गाना सुनने के पश्चात होती है उसमें गाने के विषय को परखा जा सकता है जिसमें कि विषय वस्तुओं की सांस्कृतिक विशिष्टताओं को और बारीकी से देखा जा सकता है।

छात्रों के सुझाए हुए गीत, कहावतें एवं किस्से भी देवनागरी एवं उर्दू अरबी-फ़ारसी लिपि को सिखाने के लिए अपनाए जा सकते हैं। छात्रों को सबसे ज़्यादा मज़ा आता है छोटे-छोटे नाटक गढ़ने में जिनमें उन्हें सीखी हुई कहावत का तकियाकलाम बनाना पड़ता है क्योंकि कहावतें सांस्कृतिक रूप से विशेष होती हैं, केवल दक्षिण एशियाई संदर्भ में ही नहीं बल्कि पाश्चात्य संदर्भ में भी। वे सब छात्रों की विभिन्न सांस्कृतिक एवं भाषा के अनुभवों को पाठ्यक्रम में सम्मिलित होने का मौका देती हैं।

हर कक्षा गोष्ठी की शुरूआत कोई एक छात्र आरंभ करता है। इस बातचीत में छात्र अपनी पसंद का एक विषय चुनते हैं और एक प्रश्न से इसका समापन करते हैं। हर एक छात्र को फिर एक उत्तर देने के लिए कहा जाता है। पाठ्यक्रम का यह हिस्सा पूरी तरह से भाषा समझने एवं बोलने के लिए बनाया गया है। इस बातचीत में भी छात्र एक सांस्कृतिक कार्यकर्ता के रूप में देखे जाते हैं।

References

Carreira, M. (2014). Teaching heritage language learners: A study of program profiles, practices and needs. In P. Trifonas, & T. Aravossitas (Eds.), pp. 20-44.

Cummins, J. (2014). Mainstreaming plurilingualism: Restructuring heritage language provision in schools. In P. Trifonas, & T. Aravossitas (Eds.), pp. 1-19.

Gounari, P. (2014). Rethinking heritage language in a critical pedagogy framework. In P. Trifonas, & T. Aravossitas (Eds.), (pp. 254-268).

Hornberger, N. H., & Wang, S. C. (2008). Who are our heritage language learners? Identity and biliteracy in heritage language education in the United States. In D. Brinton, O. Kagan, & S. Bauckus (Eds.),Heritage language education: A new field emerging (pp. 3-35). New York, NY: Routledge.

Kagan, O., & Dillon, K. (2003). A new perspective on teaching Russian: Focus on the heritage learner.Heritage Language Journal, 1(1), 76-90. Available from www.heritagelanguages.org

Nijhawan, S. (2011). 'I got the point across and that is what counts'. Transcultural versus (?) linguistic competence in language teaching. Journal of the National Council of Less Commonly Taught Languages,9(1), 59-81.

Parra, M. (2014). Strengthening our teacher community: Consolidating a 'signature pedagogy' for the teaching of Spanish as heritage language. In P. Trifonas, & T. Aravossitas (Eds.), pp. 213-236.

Trifonas, P. & T. Aravossitas (Eds.). Rethinking heritage language education. Cambridge, UK: Cambridge University Press.

टोरंटो, उत्तर अमेरिका
shobhna@yorku.ca

□

8

मॉरीशसीय आर्य समाज का हिंदी आंदोलन

—डॉ. उदयनारायण गंगू

मॉरीशस में हिंदी के प्रचार-प्रसार का आंदोलन करनेवाली स्वैच्छिक संस्थाओं में आर्य समाज का नाम गर्व से लिया जाता है। यह समाज अपने स्थापना-काल से अब तक हिंदी-शिक्षण के क्षेत्र में कमर कसकर खड़ा है। यहाँ यह बताना समीचीन होगा कि सन् 1834 से 1915 तक भारतीय रोज़ी-रोटी की खोज में शर्तबंद श्रमिक के रूप में मॉरीशस आते रहे। चूँकि अधिकांश जनों की भाषा भोजपुरी थी, अत: यही भाषा भारतीय मूल के लोगों की बोलचाल की भाषा बन गई। कुछेक पढ़े-लिखे श्रमिक रात्रि-काल में फूस के बने 'बैठका' में 'रामचरितमानस' का गान करते थे और सत्संग में भाग लेनेवालों को भोजपुरी में ही दोहे-चौपाइयों को समझाया करते थे। 20वीं सदी के प्रथम दशक में महर्षि दयानंद कृत 'सत्यार्थ प्रकाश' ने इस देश में खड़ी बोली हिंदी का सूत्रपात किया। महर्षि ने हिंदी को 'आर्य भाषा' के नाम से अभिहित किया था। आर्य समाजियों ने इस भाषा को अपना कंठहार बनाया।

जन्म : 20 अगस्त, 1943
शिक्षा : बी.ए., एम.ए., पीएचडी तथा विद्या वाचस्पति, भारत।
प्रकाशन : हिंदी-अंग्रेज़ी में आपकी 15 रचनाएँ प्रकाशित हैं। साथ ही कई पुस्तकों का संपादन किया है। देश-विदेश की पत्र-पत्रिकाओं में आपके सैकड़ों लेख प्रकाशित हुए हैं।
आपने अनके राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय सम्मेलनों में भाग लिया है और आलेख प्रस्तुत किए हैं। हिंदी एवं समाज-सेवा के कारण आपको अनेक बार सम्मानित किया गया है।
40 वर्षों तक सभी स्तरों के विद्यार्थियों—प्राथमिक, माध्यमिक और विश्वविद्यालीय स्तर तक शिक्षण कार्य किया है। आप 'महात्मा गांधी संस्थान' में वरिष्ठ व्याख्याता के पद से 2003 में सेवानिवृत हुए।
वर्तमान में आप आर्य सभा के प्रधान और 'आर्योदय' पत्र के मुख्य संपादक हैं। साथ ही विश्व हिंदी सचिचालय की शासी परिषद के सदस्य हैं।

मॉरीशस में आर्य समाज की स्थापना

मॉरीशसीय आर्य समाज के हिंदी आंदोलन की चर्चा करने से पूर्व यह जान लेना आवश्यक है कि इस द्वीप में आर्य समाज की स्थापना कैसे हुई। बात सन् 1902 की है। मॉरीशस में बंगाल से आई हुई एक टुकड़ी भारत लौट रही थी। उस सेना में भोलानाथ तिवारी नाम का एक हवलदार था जिसके पास 'सत्यार्थ प्रकाश' की एक प्रति थी। उसने वह पुस्तक अपने ग्वाले, भिखारीसिंह को दे दी। चूँकि भिखारीसिंह हिंदी पढ़ने में असमर्थ थे, इसलिए उन्होंने खेमलाल लाला नामक व्यक्ति को वह पुस्तक दे दी।

लाला जी 'सत्यार्थ प्रकाश' पढ़ने के प्रयास में लग गए। वे इस ग्रंथ से बड़े ही प्रभावित हुए। उन्होंने इस पुस्तक के बारे में अपने मित्र, गुरुप्रसाद दलजीतलाल को बताया। दलजीतलाल जी ने 'सत्यार्थ प्रकाश' की वह प्रति पढ़ी। इस ग्रंथ-रत्न ने उनके दिल-दिमाग को प्रकाशित कर दिया। फिर यह पुस्तक जगमोहन गोपाल जी ने पढ़ी। उनका भी मन-मस्तिष्क ज्योतित हो उठा। इन त्रिमूर्तियों ने सन् 1903 में मॉरीशस में प्रथम आर्य समाज की स्थापना की। फलत: 'सत्यार्थ प्रकाश' पर सत्संग होने लगा। इसी ग्रंथ के पठन-पाठन से यहाँ खड़ी बोली हिंदी का प्रचार हुआ। खड़ी बोली हिंदी आर्य समाजियों की भाषा बन गई।

सन् 1901 के अक्टूबर मास में युवा बैरिस्टर मोहनदास करमचंद गांधी दक्षिण अफ्रीका से भारत लौटते समय कुछ दिनों के लिए मॉरीशस में रुक गए थे। उन्होंने यहाँ के गोरे पूँजीपतियों को अनपढ़ भारतीय श्रमिकों के प्रति घोर अन्याय करते पाया। मॉरीशस में बसे भारतीयों का कोई रक्षक न था। सन् 1907 में गांधी जी ने बैरिस्टर मणिलाल मगनलाल डॉक्टर को हिंदुओं की रक्षा के लिए मॉरीशस भेजा। बैरिस्टर मणिलाल डॉक्टर ने खेमलाल लाला, गुरुप्रसाद दलजीतलाल, गयासिंह आदि व्यक्तियों के सहयोग से मॉरीशस की

राजधानी, पोर्ट लुई में 8 मई, 1911 में आर्य समाज की स्थापना की जिसका नाम 'आर्य प्रतिनिधि सभा' रखा गया। इस नवस्थापित सभा ने हिंदी के माध्यम से सुप्त हिंदुओं में नवजागरण लाने का आंदोलन प्रारंभ कर दिया।

आर्य समाज की स्थापना से पूर्व हिंदी की स्थिति

सन् 1911 में भारत लौटने पर बैरिस्टर मणिलाल डॉक्टर ने एक प्रकांड विद्वान, डॉ. चिरंजीव भारद्वाज को सपरिवार मॉरीशस भेजा। डॉ. चिरंजीव भारद्वाज के आगमन के लगभग 2 मास पश्चात 28 फरवरी, 1912 को स्वामी मंगलानंद पुरी जी ने भारत से मॉरीशस की धरती पर पदार्पण किया। भारतीय मूल के लोगों ने इस द्वीप में प्रथम बार एक संन्यासी के दर्शन किए। स्वामी जी ने अपने लघु प्रवास-काल के दौरान मॉरीशस का दौरा करके अपना अनुभव निम्नलिखित शब्दों में व्यक्त किया, ''यहाँ पूर्वकाल में फ्रेंच का राज्य होने के कारण इस देश की भाषा एक बिगड़ी हुई फ्रेंच ज़ुबान है जिसे 'किरोल' कहा जाता है, सो प्राय: 90 प्रतिशत सैकड़ा यहाँ के जन्मे हुए भारतवासी केवल इसी किरोल भाषा को जानते हैं। यही अब इनकी मातृ भाषा है। इनके लिए हिंदी वैसी ही कठिन और अपरिचित है जैसे हम लोगों के लिए अंग्रेज़ी इत्यादि।

स्वामी जी ने अपने लघु प्रवास-काल के दौरान मॉरीशस का दौरा करके अपना अनुभव निम्नलिखित शब्दों में व्यक्त किया, ''यहाँ पूर्वकाल में फ्रेंच का राज्य होने के कारण इस देश की भाषा एक बिगड़ी हुई फ्रेंच ज़ुबान है जिसे 'किरोल' कहा जाता है, सो प्रायः 90 प्रतिशत सैकड़ा यहाँ के जन्मे हुए भारतवासी केवल इसी किरोल भाषा को जानते हैं। यही अब इनकी मातृ भाषा है। इनके लिए हिंदी वैसी ही कठिन और अपरिचित है जैसे हम लोगों के लिए अंग्रेज़ी इत्यादि।

हाँ! क्या इससे बढ़कर शोक का विषय हो सकता है कि आज यह मारीच (मॉरीशस) देश में आनेवाले हिंदू अपनी मातृ भाषा को ही भूल गए। किसी जाति की जातीयता उसकी एक मातृ भाषा होने के द्वारा संसार में विद्यमान रह सकती है। जब वही न रह गई तो मुझे कैसे संतोष हो? जिस हिंदी को भारत की राष्ट्रभाषा बनाने का हम प्रयत्न कर रहे हैं उसे उसके केंद्र स्थान काशी, प्रयाग आदि के निवासी यहाँ आकर भूल गए। क्या यह महाशोक की बात नहीं है?'' (भारतीय वाङ्मय में मॉरीशस की संस्कृति, मारीच (मॉरीशस) यात्रा पृ. 9-10)

स्वामी मंगलानंद पुरी जी के लेख से उद्धृत उपर्युक्त वाक्यों में तत्कालीन हिंदी की स्थिति की स्पष्ट झाँकी मिलती है। वे हिंदी भाषा की दयनीय दशा देखकर दु:ख के सागर में डूब गए।

डॉ. चिरंजीव भारद्वाज एवं सुमंगली देवी की हिंदी-सेवा

स्वामी मंगलानंद पुरी जी के प्रस्थान के पश्चात आर्य समाज ने डॉ. चिरंजीव भारद्वाज और सुमंगली देवी जी के सहयोग से हिंदी आंदोलन की अग्नि प्रज्वलित की। यह अग्नि देशव्यापी हो गई। डॉ. चिरंजीव भारद्वाज दिवस काल में मरीज़ों की सेवा करते थे और रात्रि तथा सप्ताहांत में घूम-घूमकर हिंदी में भाषण देते थे। उन दिनों लड़कियों को पढ़ाने का रिवाज़ नहीं था। डॉ. भारद्वाज जी की पत्नी सुमंगली देवी लड़कियों की पढ़ाई के लिए कन्या पाठशालाओं की स्थापना करती थीं। उनको रूढ़िवादियों से लोहा लेना पड़ता था। स्त्री-शिक्षा के विरोधी लोग कन्या पाठशालाओं को जला डालते थे। इस तरह पति-पत्नी दोनों ने आर्य समाज के आरंभिक वर्षों में कठिन परिश्रम करके हिंदी का प्रचार-प्रसार किया। उन्होंने मॉरीशस के गाँव-गाँव और शहर-शहर में बीसियों हिंदी पाठशालाएँ खोल दीं। हिंदी का टिमटिमाता हुआ जीवन-दीप उनके तप-त्याग से नवजीवन प्राप्त करके जगमगा उठा।

20वीं शती के पूर्वार्ध में आर्य समाजी विद्वानों का आगमन

आर्य समाज के आरंभिक दशकों में भारत से अनेक आर्य समाजी विद्वान मॉरीशस आए और लंबे समय तक यहाँ रहकर वैदिक धर्म के साथ ही हिंदी का प्रचार-प्रसार करते रहे। श्री देववंशलाल रामनाथ जी आर्य समाजी विद्वानों के संबंध में लिखते हैं, ''भारद्वाज के बाद पंडित आत्माराम का आना विशेष रूप से उल्लेखनीय है। उनकी मातृ भाषा मराठी थी लेकिन उन्होंने हिंदी का प्रचार किया और साथ-साथ हिंदुओं में नई जान फूँक दी। मृत्युपर्यंत वे इसी टापू में रहे और मॉरीशस माता की सेवा करते रहे।''

समय-समय पर भारतीय विद्वान मॉरीशस में आने लगे जैसे कि स्वामी स्वतंत्रानंद, स्वामी विज्ञानानंद, पंडित मेहता जैमिनी, स्वामी नारायणानंद, पंडित ऋषिराम, स्वामी आनंद भिक्षु, स्वामी ध्रुवानंद,

आनंद स्वामी आदि। सभी लोगों ने मॉरीशस के हिंदुओं को आगे बढ़ाने का प्रयत्न किया।

यह मार्के की बात है जब सन् 1925 में पंडित जैमिनी आए तो उन्होंने साफ़ बताया था कि हिंदी ही हिंदुओं की आत्मा है। यदि मॉरीशस में तुलसी कृत 'रामचरितमानस' न आती तो हिंदू लोग अपनी मातृभाषा से वंचित रह जाते। (स्मारिका द्वितीय विश्व हिंदी सम्मेलन 1976, पृष्ठ 13)

भारतीय विद्वानों से प्रभावित होकर कई मॉरीशसीय युवक उच्च शिक्षा के लिए भारत गए और डी.ए.वी. कॉलेजों में अध्ययन करके हिंदी के योग्य विद्वान बनकर स्वदेश लौटे। उन विद्वानों में पंडित काशीनाथ किष्टो, पंडित वेणीमाधव सतीराम, पं. लक्ष्मणदत्त शास्त्री, पंडित वासुदेव विष्णुदयाल, पंडित कृष्ण विशारद, पंडित सुखदेव रामप्यार आदि के नाम गर्व से स्मरण किए जाते हैं। इन्होंने हिंदी के प्रचार-प्रसार में अथक प्रयास किया।

सन् 1916 में पंडित काशीनाथ किष्टो डी.ए.वी. कॉलेज, लाहौर से पढ़कर स्वदेश लौटे। यहाँ आते ही धर्म-प्रचार एवं हिंदी-सेवा में जुट गए। सन् 1818 में 'आर्यन वैदिक स्कूल' की स्थापना की। उन्होंने अपनी पत्नी के साथ इस स्कूल में पढ़ाना आरंभ किया। बच्चों को पढ़ाने के लिए 'शिशु बोध' नामक 3 पुस्तकें लिखीं। उनके शिष्यों में कई लोग कर्मठ समाज-सेवक और हिंदी-प्रचारक बने।

पंडित आत्माराम एवं स्वामी स्वतंत्रानंद

सन् 1912 में पंडित आत्माराम विश्वनाथ मॉरीशस आए। आप हिंदी के अच्छे लेखक और संपादक थे। आप आर्य समाज के मंच से 20 वर्षों तक हिंदी के प्रचार-प्रसार में रत रहे। फिर 1914 में तेजस्वी एवं तपस्वी संन्यासी स्वामी स्वतंत्रानंद जी महाराज का मॉरीशस में पदार्पण हुआ। वे मॉरीशस के कोने-कोने में पैदल पहुँच कर हिंदी पढ़ने-पढ़ाने का संदेश देते रहे। वैदिक धर्म एवं आर्य समाज के मंतव्यों पर हिंदी में धुआँधार प्रवचन करते रहे। उन्होंने अनेक गाँवों में हिंदी पाठशालाएँ खोलीं। 2 वर्ष यहाँ रहकर सैकड़ों व्यक्तियों को हिंदी की ओर उन्मुख किया।

15 मार्च, सन् 1909 में मणिलाल डॉक्टर ने 'हिंदुस्तानी' पत्र निकाला था। इस पत्र के बंद हो जाने पर आर्य समाज ही वह प्रथम स्वैच्छिक संस्था है जिसने 1 जून, 1911 में 'मॉरीशस आर्य पत्रिका' नाम से एक हिंदी पत्र निकाला जिसका संपादन बारी-बारी से पंडित आत्माराम और स्वामी स्वतंत्रानंद जी महाराज ने किया।

इस तरह इन दोनों विद्वानों ने अपूर्व तप-त्याग करके इस देश में हिंदी के वातावरण का निर्माण किया।

पंडित काशीनाथ किष्टो द्वारा हिंदी-आंदोलन

सन् 1916 में पंडित काशीनाथ किष्टो डी.ए.वी. कॉलेज, लाहौर से पढ़कर स्वदेश लौटे। यहाँ आते ही धर्म-प्रचार एवं हिंदी-सेवा में जुट गए। सन् 1918 में 'आर्यन वैदिक स्कूल' की स्थापना की। उन्होंने अपनी पत्नी के साथ इस स्कूल में पढ़ाना आरंभ किया। बच्चों को पढ़ाने के लिए 'शिशु बोध' नामक 3 पुस्तकें लिखीं। उनके शिष्यों में कई लोग कर्मठ समाज-सेवक और हिंदी-प्रचारक बने।

पंडित काशीनाथ जी ने लेखन, संपादन, गायन और जोशीले प्रवचनों के माध्यम से हिंदी का खूब प्रचार किया। वे प्रथम व्यक्ति थे जिन्होंने हिंदी पढ़ाने के लिए बहुतों को प्रशिक्षण दिया। 'आर्य पत्रिका' और 'आर्यवीर' के संपादक होने के नाते उन्होंने सैकड़ों लेख लिखे और मॉरीशसवासियों को हिंदी सीखने की प्रेरणा दी।

पंडित वेणिमाधव सतीराम की हिंदी-सेवा

युवक वेणिमाधव भारत से पढ़कर 1925 में लौटे। वे हिंदी-संस्कृत के अच्छे विद्वान थे व बड़े कुशल वक्ता थे। उन्होंने हिंदी-शिक्षण कार्य में स्तुत्य प्रयास किया। बहुत से आर्य समाजी पंडितों को हिंदी-संस्कृत का अच्छा ज्ञान दिया। उन्होंने दीर्घकाल तक आर्य समाज के पत्रों — 'मॉरीशस आर्य पत्रिका', 'जागृति', 'जागृति-आर्यवीर' और 'आर्योदय' का संपादन किया। वे वर्षों तक पुरोहित-प्रशिक्षण कार्य करते रहे और प्रति सप्ताह 'वैदिक वाणी' कार्यक्रम में ज्ञानवर्धक संदेश रेडियो पर प्रसारित करते रहे। हिंदी के प्रचार-प्रसार में उनका योगदान भुलाया नहीं जा सकता।

श्री मोहनलाल मोहित का हिंदी-शिक्षण में योगदान

मोहनलाल मोहित जी आर्य समाज के भीष्म पितामह थे। उन्होंने दीर्घकाल तक आर्य समाज का हिंदी के माध्यम से नेतृत्व किया। उन्होंने बचपन में कैथी लिपि द्वारा पढ़ाई शुरू की थी। पंडित

काशीनाथ के संपर्क में आकर देवनागरी के माध्यम से हिंदी का अच्छा ज्ञान प्राप्त किया।

वे किशोरावस्था से ही अपने निवास स्थान के आसपास के गाँवों में रहनेवाले युवकों को हिंदी पढ़ाने लगे। सन् 1926 में जब 'आर्य प्रतिनिधि सभा' की पुनर्स्थापना हुई तब वे इस सभा के स्तंभों में से एक थे। बाद में 'आर्य सभा' की स्थापना होने पर इस संस्था के अंतर्गत काम करने लगे। उन्होंने 'आर्योदय' पत्र का लंबे समय तक संपादन किया। वे न केवल शिक्षण द्वारा वरन लेखन द्वारा भी सबको हिंदी सीखने की प्रेरणा देते रहे।

जैमिनी मेहता और स्वामी विज्ञानानंद

सन् 1925 में जैमिनी मेहता जी और 1926 में स्वामी विज्ञानानंद जी मॉरीशस आए। जैमिनी मेहता जी बड़े कुशल वक्ता थे। उन्होंने यहाँ 'आर्य कुमार सभा' की स्थापना की तथा युवकों को हिंदी पढ़ने के लिए प्रोत्साहित किया। उन्हीं की प्रेरणा से 1933 में पं. वासुदेव विष्णुदयाल लाहौर के डी.ए.वी. कॉलेज में पढ़ने गए और 6 वर्षों बाद हिंदी और अंग्रेज़ी के योग्य विद्वान बनकर मॉरीशस लौटे। जैमिनी मेहता जी और स्वामी विज्ञानानंद जी ने अपने व्याख्यानों द्वारा मॉरीशस की नई पीढ़ी को हिंदी की ओर आकृष्ट किया।

भारतीय एवं स्थानीय विद्वानों के भगीरथ प्रयत्न से 1935 तक आते-आते आर्य समाज की 75 शाखाएँ खुल चुकी थीं। सभी शाखाओं में हिंदी की पढ़ाई हो रही थी। हिंदी पाठशालाओं के संचालन के लिए वार्षिकोत्सवों का आयोजन होने लगा। उन अवसरों पर आर्थिक दान के लिए अपील की जाती थी। लोग यथाशक्ति दान देते थे। इस प्रकार के आयोजनों से भोजपुरी बोली के मुकाबले हिंदी का प्रचार बढ़ा और वह अधिकाधिक लोकप्रिय होती गई।

यहाँ यह स्मरण दिलाना आवश्यक है कि 12 जून, 1926 को मोंताई लोंग ग्राम में तिलक विद्यालय की स्थापना हुई थी जिसका प्रमुख उद्देश्य था— हिंदी का शिक्षण। इसी विद्यालय से 24 दिसंबर, 1937 को हिंदी प्रचारिणी सभा ने जन्म लिया। श्री यंतुदेव बुधुजी लिखते हैं, ''सभा का आदर्श वाक्य है— 'भाषा गई तो संस्कृति गई'।'' (अंतरराष्ट्रीय (क्षेत्रीय) हिंदी सम्मेलन 2014 की स्मारिका, पृ.101)

उपर्युक्त कथन में कोई संदेह नहीं। हिंदी के प्रचार-प्रसार में हिंदी प्रचारिणी सभा का योगदान अत्यंत ही प्रशंसनीय है परंतु हम यहाँ रेखांकित करना चाहेंगे कि आर्य समाज ने हिंदी प्रचारिणी सभा की स्थापना के साढ़े तीन दशक पहले से ही हिंदी प्रचार का आंदोलन प्रारंभ कर दिया था। पुराने ज़माने में हमारे पूर्वज भोजपुरी को 'मोटिया' कहा करते थे और हिंदी को 'भाषा', यदि कोई हिंदी में वार्तालाप करता था तो सुननेवाले कहते थे कि वह 'भाषा' बोलता है। आर्य समाज के अनुयायी हिंदी पढ़ाई की प्रेरणा सब को दिया करते थे। आर्य समाजियों का नारा था 'हिंदी बोलो, हिंदी पढ़ो, हिंदी लिखो।' आर्यों के हिंदी प्रेम को रेखांकित करते हुए मॉरीशस के प्रसिद्ध विद्वान श्री जयनारायण राय जी लिखते हैं, ''सनातन धर्म का प्रचार करनेवाले पंडित-पुरोहित केवल पूजा-पाठ और व्रत अनुष्ठान के अवसर पर ही उपदेश देते थे। इसके विपरीत आर्य समाजी पंडित चाहे त्योहार हो या शादी, मृत्यु-जागरण हो या कोई सामाजिक उत्सव, सभी का उपयोग उपदेश देने के लिए करने लगे। इससे हिंदी के प्रचार-प्रसार को बड़ा बल मिला। आर्य समाजी कौन है, इसका फ़ौरन पता चल जाता था क्योंकि वे हमेशा हिंदी बोलने का आग्रह करते थे। उनकी देखा-देखी और आग्रह पर दूसरे भी हिंदी बोलते और इस तरह अधिकाधिक लोगों को हिंदी बोलने की आदत होती गई।''

आर्य समाज का नामकरण पहले-पहल 'आर्य प्रतिनिधि सभा' से हुआ था। सन् 1913 में डॉ. चिरंजीव भारद्वाज ने उसका पंजीकरण 'आर्य परोपकारिणी सभा' के रूप में किया था। सन् 1926 में कुछ लोगों ने 'आर्य प्रतिनिधि सभा' की पुनर्स्थापना की। 9 जनवरी, सन् 1934 में 'मॉरीशस आर्य रविवेद प्रचारिणी सभा' नाम से एक और सभा स्थापित हुई। सन् 1950 में 'आर्य परोपकारिणी सभा' और 'आर्य प्रतिनिधि सभा' का विलय हुआ और नया नामकरण किया गया—'आर्य सभा मॉरीशस'।

कुछ समय बाद 'गहलोत राजपूत महासभा' की स्थापना हुई। सभी ने आर्य समाज की ध्वजा को अपने हाथों में थामकर हिंदी के माध्यम से ही अपना प्रचार कार्य किया। परंतु आर्य सभा मॉरीशस ने इस देश में हिंदी के प्रचार-प्रसार में सभी संस्थाओं से अधिक कार्य किए हैं।

1950 के दशक से भारत के अजमेर की आर्य विद्या परिषद द्वारा संचालित 'विद्या विनोद', 'विद्या रत्न', 'विद्या विशारद' और 'विद्या वाचस्पति' परीक्षाओं में भाग लेने के लिए प्रति वर्ष सैकड़ों बच्चों को आर्य सभा के प्रशिक्षित अध्यापक-अध्यापिकाएँ पढ़ाते

रहे। यह शिक्षण-कार्य कई दशकों तक होता रहा। हज़ारों बच्चों ने उक्त प्रमाण पत्र प्राप्त किए। धार्मिक परीक्षाओं के अतिरिक्त हिंदी प्रचारिणी सभा द्वारा संचालित 'हिंदी साहित्य सम्मेलन', प्रयाग की 'परिचय', 'प्रथमा', 'मध्यमा' और 'उत्तमा' तथा कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय की 'स्कूल सर्टिफ़िकेट' और 'हायर स्कूल सर्टिफ़िकेट' की परीक्षाओं की तैयारी के लिए भी आर्य समाज के प्रशिक्षित शिक्षक-शिक्षिकाओं ने वर्षों तक बड़ी तन्मयतापूर्वक शिक्षण-कार्य किया है। हज़ारों छात्र उपर्युक्त परीक्षाओं में उत्तीर्ण हुए हैं।

वर्तमान में इस सभा द्वारा संचालित 200 सायंकालीन और रविवारीय हिंदी पाठशालाओं में प्राथमिक और माध्यमिक स्तर पर हिंदी का शिक्षण-परीक्षण कार्य नियमित रूप से हो रहा है।

भारतीय एवं स्थानीय विद्वानों के भगीरथ प्रयत्न से 1935 तक आते-आते आर्य समाज की 75 शाखाएँ खुल चुकी थीं। सभी शाखाओं में हिंदी की पढ़ाई हो रही थी। हिंदी पाठशालाओं के संचालन के लिए वार्षिकोत्सवों का आयोजन होने लगा। उन अवसरों पर आर्थिक दान के लिए अपील की जाती थी। लोग यथाशक्ति दान देते थे। इस प्रकार के आयोजनों से भोजपुरी बोली के मुकाबले हिंदी का प्रचार बढ़ा और वह अधिकाधिक लोकप्रिय होती गई।

हिंदी के प्रचार-प्रसार के लिए आर्य सभा की 'विद्या समिति' द्वारा नियुक्त निरीक्षक अध्यापक-अध्यापिकाओं को प्रशिक्षित करने के लिए कार्यशालाएँ चलती रही हैं।

प्राथमिक कक्षाओं में पढ़नेवाले छात्र-छात्राओं की पाठ्य-पुस्तकें तैयार की गईं। 6ठी पास विद्यार्थियों के लिए 'सिद्धांत प्रवेश' परीक्षा का सूत्रपात किया गया। इस कक्षा में भाषा पढ़ाने के लिए 'साहित्य प्रवेश' और धार्मिक शिक्षा देने के लिए 'हमारे महापुरुष' नाम से पुस्तकें तैयार की गईं। आर्य सभा ने अपने डी.ए.वी. कॉलेजों में हिंदी की माध्यमिक पढ़ाई, सभा द्वारा स्थापित 'आर्य गुरुकुल' में 'सिद्धांत भास्कर', 'सिद्धांत शास्त्री', 'सिद्धांत वाचस्पति' और ऋषि दयानंद संस्थान में बी.ए., एम.ए., 'धर्म भूषण', 'धर्म रत्न', 'शास्त्री' आदि परीक्षाओं के लिए हिंदी भाषा और हिंदी के माध्यम से धार्मिक शिक्षण का प्रबंध किया है। आर्य सभा के पंडित-पंडिताओं ने हिंदी के ही माध्यम से सत्संग, भाषण, प्रवचन एवं स्थानीय रेडियो-टेलीविज़न पर न केवल 'वैदिक वाणी' कार्यक्रम के माध्यम से अपितु अनेक उत्सवों के अवसर पर वक्तव्यों के द्वारा घर-घर हिंदी पहुँचाई है। पंडितों के प्रवचनों के अतिरिक्त आर्य समाज के भजनीक और गायक भी अपने मधुर भजनों और गीतों के द्वारा श्रोताओं को हिंदी की ओर आकृष्ट करते रहे हैं।

प्राचीन काल में महादेव चुनून, दासी भगत, महादेव मोरिया आदि गायकों के नाम सब के होंठों पर थे। विवाह के अवसरों पर गम्मट का आयोजन होता था। गीतों में गायकों के प्रश्नोत्तर हुआ करते थे जिनका रस लेने के लिए श्रोतागण रात्रि में देर तक जागते रहते थे। इस तरह संगीत द्वारा भी हिंदी का खूब प्रचार किया गया।

गत 40 वर्षों में आर्य सभा ने 'आर्योदय' पत्र के इतने विशेषांक प्रकाशित किए हैं कि यदि सब संगृहीत किए जाएँ तो अनेक ग्रंथ बन जाएँगे। अनेक आर्य समाजी विद्वानों ने अपनी रचनाओं द्वारा हिंदी साहित्य को समृद्ध किया है।

इस तरह पिछले 100 वर्षों में आर्य समाजी विद्वानों ने हिंदी के प्रचार-प्रसार में बड़े ही प्रशंसनीय कार्य किए हैं।

वर्तमान परिस्थिति

वर्तमान में आर्य सभा के सामने अनेक चुनौतियाँ हैं। नई पीढ़ी के माता-पिता हिंदी बोलते नहीं। इसका दुष्प्रभाव उनके बच्चों पर अचूक रूप से पड़ा है। माँ-बाप बच्चों को हिंदी पाठशालाओं में न भेजकर उन्हें शाम को अन्य विषयों की ट्यूशन लेने के लिए भेजते हैं। ट्यूशन के बोझ तले बच्चे दबे हुए हैं। बहुत से बच्चे अपनी पाठशाला पहुँचने के लिए 7 बजे सुबह घर से निकलते हैं। अपने-अपने विद्यालय में पढ़ाई समाप्त करके सीधे ट्यूशन लेने जाते हैं और शाम को 6 बजे थके-माँदे घर लौटते हैं। रात्रि के भोजन के बाद होमवर्क करने में जुट जाते हैं। हिंदी पढ़ने के लिए उनके पास फ़ुरसत ही कहाँ? माता-पिता समझते हैं कि हिंदी ज्ञान अनावश्यक है।

माता-पिता की इस प्रवृत्ति को बदलने के लिए सभा की ओर से अनेक प्रयास किए जा रहे हैं। समझाया जा रहा है कि अपने देश के इतिहास से शिक्षा लेनी चाहिए। हमारे पूर्वजों ने हिंदी की रक्षा करके

ही अपनी रक्षा की। उन्हें आजीविका के लिए घोर परिश्रम करना पड़ता था। उन्हें विधर्मी बनाने के लिए नौकरी का प्रलोभन दिया जाता था। परंतु अपने धर्म, भाषा और संस्कृति-प्रेम के कारण ही वे अपनी पहचान बनाए रखने में अडिग रहे। माता-पिता को बताया जा रहा है कि भाषा संस्कृति की वाहिका होती है। भाषा-संस्कृति के कारण ही एक जाति अपने अस्तित्व की रक्षा कर सकती है।

आर्य सभा भारत के साधु-संन्यासियों को आमंत्रित करती रहती है। सभी एक स्वर में अपने धर्म और भाषा की रक्षा करने की प्रेरणा देते हैं। माता-पिता टेलीविज़न पर हिंदी धारावाहिक देखते रहते हैं पर हिंदी की ओर आकृष्ट होते ही नहीं। हमारे समय के माता-पिता भोजपुरी-भाषी थे। पहले के सभी बच्चे घर में भोजपुरी बोला करते थे। भोजपुरी जानने के कारण उनमें हिंदी सीखने की लगन थी। वर्तमान में अधिकांश बच्चों की मातृ भाषा क्रिओल है। इसलिए आज के बहुत से माँ-बाप हिंदी से कोई सरोकार नहीं रखते। यह एक कड़वी सच्चाई है। धार्मिक पर्वों के अवसर पर हिंदू समुदाय अपने पूजा-पाठ के लिए मंदिरों में जुट तो जाता है परंतु अपनी भाषा सीखने के लिए समय नहीं निकल पाता। माता-पिता की मनोवृत्ति यही है कि उनके बच्चे पढ़-लिखकर उन विषयों में प्रमाण पत्र प्राप्त करें जिनसे उन्हें शीघ्र नौकरी मिल सके। उनकी यह सोच उचित और स्वाभाविक है। हर माँ-बाप की यही साध होती है कि उनकी संतान बेकार न रहे। परंतु वे यह नहीं समझना चाहते कि भाषा-संस्कृति से कटकर वे अपनी पहचान खो देंगे। आर्य सभा 2 प्राथमिक और 2 माध्यमिक विद्यालय चला रही है। चारों विद्यालयों में लगभग 5000 बच्चे पढ़ते हैं जिनमें 50 प्रतिशत हिंदू बच्चे हैं। बहुत से माता-पिता अक्सर पत्र भेजा करते हैं कि उनके बच्चों को हिंदी न पढ़ाई जाए। इस प्रकार वे हिंदी की उपेक्षा करते हैं।

हिंदी पढ़ानेवाले वर्तमान अध्यापकों में वह समर्पण दिखाई नहीं देता जो पूर्व के कमपढ़ गुरुओं में था। आज के अध्यापकों के पास हिंदी के उच्च प्रमाण पत्र हैं परंतु उनमें बहुत कम लोग ऐसे हैं जो अभिभावकों और बच्चों को हिंदी की ओर प्रेरित करते हैं। जब से सरकार ने हिंदी-शिक्षण के लिए भत्ता देना आरंभ किया है तब से बहुत से हिंदी शिक्षक-शिक्षिकाएँ उच्छृंखल हो गए हैं। उन्हें हिंदी-शिक्षण से कोई मतलब नहीं बस सरकारी भत्ते के लिए ही स्कूलों में अपनी उपस्थिति देते हैं। परंतु आज भी कुछेक ऐसे शिक्षक हैं जिनमें हिंदी पढ़ाने की वही लगन है जो आज से 2-4 दशक पूर्व के अध्यापकों में थी। ये अध्यापक अपनी भाषा-संस्कृति के पुजारी हैं।

आर्य समाज ने अपने स्थापना-काल से अब तक हिंदी आंदोलन को जारी रखा है। आज इस आंदोलन को गति देने के लिए सैकड़ों हिंदी सेवकों की आवश्यकता है।

मॉरीशस
davpailles@gmail.com

9

विदेशी या दूसरी भाषा के रूप में हिंदी शिक्षण में अशुद्धियों का विश्लेषण और शिक्षण में उसका महत्व

—डॉ. शिव कुमार सिंह व श्रीमती डिम्पल राजपूत सिंह

परंपरागत तौर पर विदेशी/दूसरी भाषा के रूप में हिंदी शिक्षण में विद्यार्थियों द्वारा की जानेवाली गलतियों को शिक्षण प्रक्रिया के सबसे महत्वहीन पहलू के रूप में देखा जाता है। हालाँकि प्रशिक्षुओं द्वारा की जानेवाली ये गलतियाँ अपने साथ महत्वपूर्ण गुप्त सूचनाएँ भी लाती हैं जिनके उचित विश्लेषण से शिक्षण प्रकिया को और ज़्यादा प्रभावी बनाया जा सकता है।

जब भी कोई विद्यार्थी कोई भी दूसरी, तीसरी या विदेशी भाषा सीखता है तब सीखने की प्रक्रिया कई अलग-अलग चरणों से होकर गुज़रती है और प्रत्येक चरण में उसकी भाषागत अशुद्धियाँ अलग-अलग तरह की होती हैं। सभी विशेषज्ञ यह मानते हैं कि सीखने की प्रक्रिया के दौरान विद्यार्थी के द्वारा की जानेवाली गलतियाँ सीखने की प्रक्रिया का अभिन्न अंग हैं। 1970 में व्यावहारिक भाषाविज्ञान क्षेत्र के उद्‌भव के बाद से भाषाओं के पठन-पाठन में अशुद्धियों का विश्लेषण भाषा के सीखने-सिखाने के लिए विभिन्न तरीकों के आविर्भाव में एक महत्वपूर्ण स्रोत की भूमिका अदा करता आ रहा है।

सबसे पहले सवाल तो यही उठता है कि अशुद्धियों का विश्लेषण है क्या? अशुद्धियों का विश्लेषण एक व्यवस्थित योजना है जिसमें दूसरी/विदेशी भाषा के प्रशिक्षु के द्वारा उस भाषा को सीखने के दौरान की जानेवाली गलतियों का विश्लेषण करना होता है और इस सिद्धांत को सबसे पहले 1967 में पिट कोर्डर द्वारा प्रतिपादित किया गया और उनके अनुसार गलतियाँ करना हमेशा बुरी बात नहीं है बल्कि इन अशुद्धियों के विश्लेषण से यह समझा जा सकता है कि विद्यार्थी ऐसी गलतियाँ क्यों करते हैं और इसके पीछे क्या-क्या संभावित कारण हो सकते हैं। साथ ही इस विश्लेषण के फलस्वरूप शिक्षक पढ़ने-पढ़ाने के सिद्धांतों में बदलाव कर सकते हैं ताकि विद्यार्थी इन अशुद्धियाँ को कम से कम दोहराए। उदाहरण के तौर पर अगर शिक्षक पूरी कक्षा के छात्रों द्वारा किए गए गृहकार्यों में की गई गलतियों का विश्लेषण करता है और उन अशुद्धियों के आधार पर खुद कोशिश कर सकता है कि कैसे विद्यार्थी उन गलतियों को करने से बच सकता है। ये गलतियाँ व्याकरणिक और व्यावहारिक दोनों हो सकती हैं। इनको दूर करने के लिए पठन-पाठन की सामग्री में क्या-क्या आवश्यक बदलाव करने की आवश्यकता है? उदाहरण के लिए हिंदी में तिर्यक रूप के प्रयोगों के संदर्भ में, हिंदी के विदेशी विद्यार्थी बहुधा 'दोनों घरों में' बोलने या लिखने की जगह 'दोनों घर में' का प्रयोग करते हैं।

आम तौर पर जो पुलिंग शब्द किसी व्यंजन पर खत्म होते हैं, उनका रूप एकवचन और बहुवचन में एक समान ही रहता है हालाँकि तिर्यक रूप में इन शब्दों के बहुवचन रूप शब्द संरचना के नियमानुसार बदलते रहते हैं। अगर शिक्षकों को पता है कि कक्षा के ज़्यादातर छात्र यह गलती कर रहे हैं तो इसका अर्थ है कि शिक्षक को अपने संसाधनों

• पीएचडी
• हिंदी के व्याख्याता साहित्य विभाग लिस्बन विश्वविद्यालय
• वालाडोलिड विश्वविद्यालय, स्पेन (Valladolid Univ., Spain) में यूरोपीय हिंदी सम्मेलन (15-17 मार्च, 2012) में व्याख्यान : 'हिंदी को विदेशी भाषा के रूप में पढ़ाना-एक परिप्रेक्ष्य' (Teaching Hindi as Foreign Language : Perspective)
• FLUL, पुर्तगाल में (Portugal) में 'भारतीय लेखन प्रणाली' पर प्रस्तुति।
• लिस्बन में भारतीय दूतावास, पुर्तगाल एवं लिस्बन विश्वविद्यालय के साहित्य विभाग के सहयोग से विश्व हिंदी दिवस 2011, 2012 और 2013 का आयोजन किया।
• आपने दिल्ली विश्वविद्यालय और पुर्तगाली सांस्कृतिक केंद्र/इंस्टीट्यूटो, Camoes नई दिल्ली के सहयोग से एक नाटक में भाग लिया जिसका शीर्षक थाः ''एक अज्ञात द्वीप की कथा'। • आप नई दिल्ली, भारत में पुर्तगाली दूतावास के सरकारी वेबसाईट के अनुवादक हैं।
• आप पुर्तगाली और अंग्रेज़ी भाषा को हिंदी भाषा में अनूदित करते हैं।

श्रीमती डिम्पल राजपूत सिंह ने लिस्बन विश्वविद्यालय से द्वितीय भाषा के रूप में पुर्तगाली भाषा के शिक्षण में स्नातकोत्तर किया है। साथ ही दो सालों तक हिंदी शिक्षण से जुड़ी रही हैं। **संप्रति** वे 'विदेशी भाषा के पठन-पाठन' विषय पर शोध कर रही हैं।

और पाठ्य-सामग्री में नि:संदेह कुछ बदलाव करने की ज़रूरत है। हालाँकि यह भी संभव है कि विदेशी भाषा या दूसरी भाषा के रूप में हिंदी सीखनेवाले आम तौर पर इस दूसरे नियम को भूल जाते हैं, अत: इस तरह के संदर्भों में छात्रों से ऐसे अभ्यास छोटे-छोटे अंतरालों पर करवाते रहना चाहिए।

कोर्डर (1981) के सिद्धांत से पहले गलतियाँ करना एक गलत आदत समझी जाती थी लेकिन कोर्डर ने न सिर्फ़ यह बताया कि ये गलतियाँ सीखने-सिखाने का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है बल्कि उन्होंने इन गलतियों का महत्व शिक्षकों, शोधकर्ताओं और छात्रों के लिए दर्शाया जो निम्न है:

इन गलतियों का पहला महत्व शिक्षकों के लिए हैं क्योंकि इनके विश्लेषण के द्वारा वे जान सकते हैं कि छात्र का भाषाई स्तर कहाँ तक पहुँच चुका है और उसकी भाषाई दक्षता को बेहतर बनाने के लिए किन-किन बिंदुओं पर ध्यान देने की आवश्यकता है। दूसरा महत्व, भाषा शिक्षण के क्षेत्र के शोधकर्ताओं के लिए है क्योंकि इसके द्वारा वे जान सकते हैं कि भाषा किस प्रकार से सीखी जाती है और भाषा सीखने के दौरान छात्र क्या-क्या तरीके अपनाते हैं। अंत में, तीसरा महत्व, स्वयं छात्रों के लिए, छात्र खुद की गलतियों के विश्लेषण से यह जान सकता है कि जिस नई भाषा को वह सीख रहा है, उस भाषा की संरचना कैसी है और कैसे मान्य वाक्य बनाए जा सकते हैं।

आम तौर पर जो पुलिंग शब्द किसी व्यंजन पर खत्म होते हैं, उनका रूप एकवचन और बहुवचन में एक समान ही रहता है हालाँकि तिर्यक रूप में इन शब्दों के बहुवचन रूप शब्द संरचना के नियमानुसार बदलते रहते हैं। अगर शिक्षकों को पता है कि कक्षा के ज़्यादातर छात्र यह गलती कर रहे हैं तो इसका अर्थ है कि शिक्षक को अपने संसाधनों और पाठ्य-सामग्री में नि:संदेह कुछ बदलाव करने की ज़रूरत है। हालाँकि यह भी संभव है कि विदेशी भाषा या दूसरी भाषा के रूप

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

19वीं शताब्दी में तुलनात्मक भाषाविज्ञान का उद्भव हुआ जिसका मुख्य उद्देश्य ऐतिहासिक संबंधों के आधार पर विभिन्न भाषाओं का अध्ययन करना था।

''इस अध्ययन का मुख्य उद्देश्य भाषाओं के बीच समानता और अन्य सामान्य संबंधों, खासकर सजातीय शब्द रूप या ऐसे शब्द रूप जो 2 या 2 से ज़्यादा भाषाओं में एक ही या नज़दीकी अर्थ देते थे, ऐसे उदाहरणों के आधार पर कई भाषाओं के बीच ऐतिहासिक और उत्पत्ति-संबंधी संबंध स्थापित करना था।'' (कोर्डर-Corder 1972:227) यहीं से भाषा परिवार की परिकल्पना या यूँ कहें कि भाषाओं का वर्गीकरण और उनका सामूहीकरण करने के सिद्धांत की शुरूआत हुई। उदाहरण के लिए भारोपीय भाषाएँ, उनका अध्ययन और उनके बीच की समानताएँ और असमानताएँ।

व्यवहारात्मक/परस्पर तुलनात्मक सिद्धांत

इस सिद्धांत के अनुसार नई भाषा के संग्रहण के दौरान की जानेवाली गलतियों का पहला कारण बहुधा खुद की मातृ भाषा के नियमों और आदतों को सीखी जा रही भाषा में भी उसी तरह प्रयोग करने की कोशिश है। उदाहरण के तौर पर जब कोई प्रशिक्षु किसी नई भाषा को सीखने की शुरूआत करता है तब उस समय तक उसके मन-मस्तिष्क में पहले से ही उसकी मातृ भाषा की भाषा संरचना काफ़ी विकसित हो चुकी होती है और उसको यह पता होता है कि कौन सा वाक्य उसकी मातृ भाषा में मान्य है या अमान्य हालाँकि हो सकता है कि वाक्य अमान्य/मान्य क्यों है इसकी विवेचना वह व्याकरण के आधार पर न कर पाए। अत: प्रशिक्षु अपनी मातृ भाषा में अंतर्निहित ज्ञान को नई भाषा सीखने के दौरान नई भाषा की संरचना में प्रयोग करने की कोशिश करता है (Lado 1957)। इस वजह से माना जाता था कि नई भाषा में होनेवाली गलतियों का प्रमुख कारण मातृ भाषा का हस्तक्षेप है और इन गलतियों को दूर करने के लिए मातृ भाषा और नई भाषा का विश्लेषण और तुलनात्मक अध्ययन करना बहुत ज़रूरी है। हालाँकि 1970 के दशक में व्यावहारिक और सैद्धांतिक कारणों से इस सिद्धांत की बहुत आलोचना हुई क्योंकि बहुतेरे भाषाविदों ने साबित किया कि प्रत्येक भाषा दूसरी भाषा से भिन्न है और साथ ही प्रत्येक भाषा की संरचना अनंत है, अत: भाषाओं का पूर्ण रूप से तुलनात्मक अध्ययन करना संभव नहीं है क्योंकि अनन्त संरचनाओं को वर्गीकृत करना संभव नहीं है। उदाहरण के लिए, भारोपीय भाषाओं के अंदर ही हर भाषा में हिंदी के तिर्यक रूपों की जैसी संरचनाएँ नहीं पाई जातीं। 1967 में कोर्डर सबसे पहले भाषाविद हुए जिन्होंने विदेशी/दूसरी भाषा के पठन-पाठन

में प्रशिक्षु द्वारा की जानेवाली गलतियों के विश्लेषण के महत्व को प्रमुख रूप से रेखांकित किया।

इस आलेख में लिस्बन विश्वविद्यालय के कला संकाय में हिंदी पढ़नेवाले विद्यार्थियों की अशुद्धियों की विवेचना करेंगे और यह जानने की कोशिश करेंगे कि पुर्तगाली-भाषी विद्यार्थियों के द्वारा की जानेवाली गलतियों के क्या-क्या संभावित कारण हैं और उनको कम करने या दूर करने के लिए क्या-क्या उपाय अपनाए जाने चाहिए।

कोर्डर (1971) के अनुसार अशुद्धि विश्लेषण के लिए निम्नलिखित चरणों का अनुकरण करना चाहिए:

1. एक आँकड़ा-कोष (corpus) तैयार करना,
2. गलती और उसके संदर्भ की पहचान करना,
3. उनका वर्गीकरण और विवरण देना और गलती की विवेचना और
4. गलती का प्रभाव और संभावित समाधान

अशुद्धि विश्लेषण के लिए लिये गए निम्न आलेख लिस्बन विश्वविद्यालय के कला संकाय में अध्ययनरत हिंदी के छात्रों के गृहकार्यों से लिये गए हैं।

आलेख की रूपरेखा तैयार करने के लिए छात्रों को 2 चित्र दिए गए जिनमें से वे किसी एक चित्र को उसमें घट रही घटनाओं को अपने शब्दों में वर्णन करने के लिए चुन सकते थे। छात्रों की मातृ भाषा 2 की पुर्तगाली और 1 की फ्रांसीसी, लिंग: 2 महिलाएँ और 1 पुरुष, उम्र क्रमश: 55 वर्ष, 30 वर्ष और 28 वर्ष। तीनों छात्रों ने 2 साल (240 घंटे) हिंदी सीखी है। आलेखों में अशुद्धियाँ गहरे काले रंगों (बोल्ड फ़ॉन्ट) में दर्शाई गई हैं। कोष्ठक में दिए गए शब्द, वे शब्द हैं जो मूल आलेख में नहीं थे, साथ ही (*) लगे वे वाक्य हैं जो या तो वाक्य-संरचना के आधार पर अमान्य हैं या अस्पष्ट हैं।

[आलेख 1] इस **मित्रे** में, घर में, **एक घुरू** दूसरों से बात करता है। एक रोगी ठीक नहीं है। शयाद **घुरू** डॉक्टर है। रोगी को सिरदर्द है। **महलि ठंद** पानी ले जाती है। क्या रोगी को **दाँत दर्द** है? *[1]उनको लेती है। घर साफ़ है, ठीक है। मेज़ पर, फूल हैं। सेब या आम? **बहर** में, बगीचा है। बगीचे में पानी चल रहा है। घर में रोगी **की** सर के ऊपर **घुरू रूमाल रूखता था**। *[2]महिला **इन्तचार** करती हैं कि उनको गुरु **कहाता** है कि रोगी को पानी दे सकती है।

[आलेख 2] पुर्तगाल बड़ा **[देश]** है। पुर्तगाल **पेनंसूला में एक देश या एक स्थान है [जो]** कि स्पेन **की** हिस्सा नहीं है। पुर्तगाल **तक** के सामने हैं। तो **यह** पानी एक **महापूर्ण चिजा** है। *[3]पुर्तगाल **''हमेरिका''** या **''हफ्रका''** को देखता है। पुर्तगाल में मुझे खाना, **संक्रित**, लोग **अच्छवे** लगते हैं। पुर्तगाली लोग **[लोगों को]** भी खाना या शराब बहुत पसंद है। मैं लिस्बन में **रहता हूँ** या यह **शाहर** मुझे बहुत **[पसंद]** है। लिस्बन के पास **सब कुछव** है। एक **आसान शाहर** है, *[4]**द्राम के पास**, ...रात में, लिस्बन में, लोग संगीत **सोना** सकते हैं, **फिल देखना** सकते हैं, **अच्छवा खाना** खा सकते हैं।

[आलेख 3] पुर्तगाल एक देश है। *पुर्तगाल संस्क्रिती से जवान नहीं हैं, पुर्तगाल के पास बहुत **कहनी**। *[5]पुर्तगाल में **मम** शहर **हैं**। बहुत **समुद्रपट** हैं और जंगल हैं। पुर्तगाल **[की]** एक भाषा है, पुर्तगाली **है**। *[6]पुर्तगाल एक देश का **यूरप** है। *[7]एक देश से बहुत सुन्दर है।

अब हम अशुद्धियों के वर्गीकरणवाले चरण की ओर चलते हैं लेकिन इसके पहले यह बताना प्रासंगिक होगा कि अशुद्धियों के वर्गीकरण के लिए कई प्रारूप हैं (ज़्यादा जानकारी के लिए कोर्डर 1973, वाशकेश Vazquez 1986, 91, 99), अत: वर्गीकरण की प्रक्रिया को शुरू करने से पहले किसी एक प्रारूप को निर्धारित करना पड़ता है। इस आलेख में हम अशुद्धियों के वर्गीकरण के लिए वाशकेश द्वारा दिए गए प्रारूप का प्रयोग करेंगे, जो निम्न है:

मानदंड Criteria	अशुद्धि का प्रकार Type of Error
Descriptive linguistics	omission, addition, wrong selection, wrong placement, juxtaposition
Ethological	Inter language, simplification, intra language
Communicative	Ambiguity, Stigmatization
Pedagogical	Induced/Creative, Transitory / Permanent, Fossilization, Individual, Collective, Oral/Written
Pragmatic	discourse pertinence
Cultural	Cultures

ऊपर दिए गए आलेखों में की गई अशुद्धियों को उनके प्रकार के आधार पर नीचे दी गई सारणी में प्रदर्शित किया गया है:

शब्द-संरचना की अशुद्धियाँ: मित्रे, घुरू, शयाद, महलि, ठण्द, दांतदर्द, बहर, इन्तचार, कहाता, पेनंसूला, महापूर्ण, चिजा, हमेरिका, हफ्रका, संक्रित, अच्छवे, शाहर, कुछव, अच्छवा, संस्क्रिती, कहनी, मम, समुद्रपट, यूरप।

निष्कर्ष : सारी अशुद्धियों को सारणी में प्रस्तुत करने के बाद हम देख सकते हैं कि ज़्यादातर गलतियाँ शब्द-संरचना /व्याकरण से जुड़ी है। इस तरह की गलतियों के प्रमुख कारण कई बार, ध्यान भंग होना, इन शब्दों का कम अभ्यास करना आदि हो सकते हैं। कुछ गलतियाँ वाक्य संरचना से भी जुड़ी हैं। 5 गलतियाँ उचित शब्दों के लोप (omission) की हैं, इन लोपों का प्रमुख कारण विद्यार्थियों के द्वारा हिंदी के जटिल वाक्यों की रचना के लिए पुर्तगाली भाषा की संरचना का सहारा लेना है क्योंकि पुर्तगाली में संबंध-सूचक वाक्य खण्ड (जैसे: जो कि) के लिए सिर्फ़ एक ही शब्द (जैसे: que कि) का प्रयोग होता है, अत: यहाँ हिंदी की संरचना में मातृ भाषा पुर्तगाली की संरचना का हस्तक्षेप है। एक अशुद्धि सांस्कृतिक स्तर की है, ''चुरू गुरु...बात करता है।'' गुरु शब्द हिंदी में आदर-सूचक शब्द है, अत: भले ही 'गुरु' शब्द एकवचन में है लेकिन आदर-सूचक संदर्भ में होने के कारण इसके साथ बहुवचनीय क्रिया-रूप का प्रयोग होगा हालाँकि यूरोपीय भाषाओं में आम तौर पर ऐसी व्यवस्था नहीं है खासकर उत्तम पुरुष के लिए। कुछ गलतियों में साफ़ तौर पर देखा जा सकता है कि कैसे इनके लिए मातृ भाषा का हस्तक्षेप एक प्रमुख कारण हो सकता है जैसे: एक रोगी, **की** सर, **की** हिस्सा, *3, *4, *6 और *7। 'एक रोगी', 'एक' का प्रयोग तभी संभव था जब चित्र में कई रोगी होते। 'सर और हिस्सा' के साथ 'की' का प्रयोग भी मातृ भाषा की संरचना का प्रभाव है क्योंकि पुर्तगाली भाषा में ये दोनों शब्द स्त्रीलिंग हैं जबकि हिंदी में पुलिंग। *1 वाक्य अस्पष्ट है।

मात्र 3 आलेखों की अशुद्धियों के विश्लेषण से हमें पठन-पाठन की प्रक्रिया से संबंधित बहुत सारी जानकारियाँ मिलीं। हमें साफ़ तौर पर पता लगा कि अशुद्धियों का प्रमुख कारण सिर्फ़ व्याकरण ही नहीं वरन मातृ भाषा का लगातार प्रभाव भी एक प्रमुख कारण है। समयाभाव के कारण आंकड़ा-कोष (corpus) को ज़्यादा बड़ा नहीं बनाया जा सका, नहीं तो अशुद्धि विश्लेषण से संबंधित और भी जानकारियाँ बाहर आ सकती थीं। लेकिन इसे प्रारंभिक शोध के तौर पर देखा जाए और हो सकता है कि आनेवाले समय में हम कुछ नए निष्कर्ष भी निकाल सकें।

संदर्भ-ग्रंथ Bibliography

- Corder, S.P. (1967). The significance of learner errors. International Review of Applied Linguistics, 5, 161-169.
- Corder, S.P. (1971). Idiosincratic Dialects and Error Analysis. International Review of Applied Linguistics, 9, 161-170
- Lado, R. (1957). Linguistics across Cultures: Applied Linguistics for Language Teachers, Ann Arbor, University of Michigan Press.
- Vázquez, G. (1991), Análisis de errores y aprendizaje de español/lengua extranjeira. Análisis, explicácion y terapia de errores transitórios y fosilizables en cursos universitários para hablantes nativos de alemán, Berlín, Peter Lang.
- Wenden, A. (1991). Learning Strategies for Learner Autonomy. London, Prentice Hall.

लिस्बन, पुर्तगाल
shiv4singh@gmail.com

10

मॉरीशसीय हिंदी रंगमंच : [1834-2015] एक सिंहावलोकन

—श्री राज हीरामन

ऐतिहासिक भूमिका

1834, जब से दास-प्रथा का उन्मूलन हुआ, तभी से शर्तबंध मज़दूर भारत से मॉरीशस टापू में लाए जाने लगे थे क्योंकि अफ्रीकी और मालागासी दासों ने पूर्व फ्रांसीसी उपनिवेशी गोरों के खेतों में काम करने से इंकार कर दिया था। तत्कालीन अंग्रेज़ी सरकार की सहमति से यह व्यवस्था शुरू हुई थी क्योंकि उस समय भारत पर अंग्रेज़, ईस्ट इंडिया कंपनी का शासन था! यह व्यापार 1920 तक चला पर उन भारतीय गिरमिटिया मज़दूरों की हालत दास से कम नहीं थी। अपने निर्वासन काल के दौरान उन भारतीयों ने दासत्व झेलने का संबल अपने साथ लाए धर्म-ग्रंथों (हस्त लिखित रामायण, हनुमान चालीसा आदि), लोक गीतों, संस्कृति, भाषा आदि से पाया था। वे अपने साथ बरतन-हांडी और वेश-भूषा भी लाए थे। उनमें अधिकतर बिहार से थे जो भवानीपुर डिपो, कोलकाता में समुद्री जहाज़ में चढ़े थे। तेलुगू मेनोर और विशाखापट्नम से चढ़े तो तमिल मद्रास से तथा मराठा मुंबई बंदरगाह से चढ़े थे।

बैठकाओं की भूमिका

भारतीय आप्रवासियों ने गोरों का अत्याचार-व्यभिचार सहा तथा लात-घूँसे और कोड़े-मुक्के खाकर भी भारत से लाई धरोहर को आत्मसात किए रखा। गाँव के एक कोने में बनाई घास-फूँस की बैठका में रात-रात को सत्संग किया और अपनी एकजुटता को बनाए रखा जबकि इस गाँव से उस गाँव तक जाना व किसी प्रकार का संपर्क बना था। उन्हें गोरे मालिकों से लिखित मंज़ूरी लेनी पड़ती थी वरना जुरमाना चुकाना पड़ता और जेल भी हो जाती। दिन में बैल से थके, रात में वे उन्हीं बैठकाओं में घासलेट का दीया जलाकर सत्संग करते, अपना दुख-सुख बाँटते, 'रामायण' गाते-बाँचते-सुनते-सुनाते। वहीं सभाएँ लगतीं, तीज-त्योहार मनाते और एकजुट होकर धार्मिक गतिविधियाँ करते। बैठका ही रामलीला, रासलीला, कृष्णलीला, नौटंकी, नाटक, खेला, नाचा, गोंढल, लोकनाटक, होलिका दहन, दशावतार आदि का स्थल बनी। कथा-प्रथा की परिपाटी में रूपक और प्रहसन भी खेले जाने लगे थे। शादी-ब्याहों में 'गीत-गवाय' की रातों में मर्द के कपड़े पहनकर औरतें हुड़दंग करतीं (जो आज भी जारी है)। बैठका ही वह जगह थी जहाँ से गायन और नर्तन की प्रथा आरंभ हुई। धर्म का प्रचार यहीं से विकसित हुआ और यह माना जाता है कि हिंदू संस्कृति की रक्षा यहीं से हुई। भारतीय मूल के लोग यहीं से एकता के सूत्र में बँधे रह गए और बैठकाएँ हमारी आज़ादी का आधार बनीं।

बैठका से ही धर्म और पौराणिक कथाओं पर आधारित नाटक शुरू हुए। सभा-समाजों तथा बैठकाओं के वार्षिकोत्सवों में एकांकी भी मंचित होने लगे। वह समय था जब बिजली गाँवों में या देश में कहीं भी नहीं पहुँची थी

जन्म : 11 जनवरी, 1953
शिक्षा : बी.ए. हिंदी वीज़ एजुकेशन, एम.ए. हिंदी, हिंदी एवं भारतीय दर्शन में डिप्लोमा, टीचर्स सर्टिफिकेट, टाइम्स ऑव इंडिया (बंबई) से पत्रकारिता में सर्टिफिकेट कोर्स तथा पत्रकारिता में डिप्लोमा।
प्रकाशन : आपके अनेक कविता, कहानी, लघुकथा संग्रह आदि प्रकाशित हैं जैसे 'कविताएँ जो छप न सकीं' (1996), 'छपकर रहीं कविताएँ' (1987), 'चुभते फूल' (1988), 'हँसते कांटे' (1999), 'नेहा की निधि' (2012), 'सेवा आश्रम' (2008), 'घाव करे गंभीर' (2009), 'पराए जो थे अपने हो गए' (साक्षात्कार संग्रह, 2009) कई पत्र-पत्रिकाओं में आपके कृति छपते रहते हैं।
पुरस्कार : 'हिंदी सम्मान', 'विश्व हिंदी रत्न', 'कवि सम्मान', 'पाटलीपुत्र सांस्कृतिक सद्भावना सम्मान' सहित आप अनेक संस्थाओं द्वारा सम्मानित हैं।
संप्रति : वरिष्ठ सहायक संपादक, रचनात्मक लेखन और प्रकाशन विभाग, महात्मा गांधी संस्थान, मॉरीशस।

तथा मनोरंजन के साधन ही नहीं थे। इसी कारण लोकगीत और लोकनाटक ने ज़ोर पकड़ा और हमारी संस्कृति को सुदृढ़ किया।

मनोरंजन की अनुपस्थिति में बैठका, सभा, समाजों और मंदिरों के आँगनों में खेले जानेवाले लंबे-लंबे नाटकों से दर्शक नहीं ऊबते थे। रात 10.00 बजे से सुबह तक नाटक के दर्शक हिलते नहीं थे। सुबह 6.00 बजे अगर गोरे मालिकों के खेतों में हाज़िरी नहीं देनी होती तो नाटक का आनंद पहला प्रहर पार कर सकता था पर ध्यातव्य है कि वे नाटक नाटकीय तत्वों से न्यूनतम प्रेरित तथा नाचा से प्रभावित थे अर्थात वे चटपटे संवादवाले नाटक नाच और गानों से भरे-पूरे थे। मुल्क में स्त्रियों की कमी, गोरों के व्यभिचार के भय और एक गुलाम पुरुष की गुलामी के कारण महिलाएँ रंगमंच से दूर रहती थीं। अत: पुरुष ही स्त्री-भूमिका निभाते थे। यह कहना उचित होगा कि मेक-अप के सामान और ज्ञान न होने के बावजूद नाटककारों को मेक-अप की बुनियादी जानकारी होने लगी थी।

एक समय आया, जब मॉरीशस टापू में पारसी नाटक आने लगे। कुल 3 व्यावसायिक नाटक कंपनियाँ आईं। उन नाटक कंपनियों का एकमात्र उद्देश्य था—मनोरंजन!

सिनेमा के आने से नाटक धूमिल

19वीं शताब्दी में जो 'फ़ुल लैंथ प्ले' मॉरीशस टापू में मंचित हुए वे इस प्रकार हैं—'सत्यवादी हरिश्चंद्र', 'सीता-स्वयंवर', 'भक्त प्रह्लाद', 'सावित्री और सत्यवान', 'चंद्रावती', 'लैला-मजनू', 'अलीबाबा चालीस चोर', 'असिरे हरस' आदि। मंचन के स्थान वे ही थे—बैठकाओं के खुले आँगन, चौराहे और मंदिरों के आँगन। आधी शताब्दी तक नाटक के हर रूप का सिलसिला चलता रहा जब तक कि 1948 में मॉरीशस में सिनेमा न आ गया। दर्शक भारतीयता और अभारतीय फ़िल्मों से प्रभावित होने लगे और नाटक धीरे-धीरे धूमिल पड़ता गया तथा लुप्त होता गया पर यह बात किसी से छिपी नहीं है कि गिरमिटिया मज़दूरों के समय की नाटक प्रस्तुति से एक खास दर्शक वर्ग तैयार हो गया था और उनके बच्चों पर भविष्य-निर्माण का गहरा असर पड़ चुका था।

मॉरीशस का हिंदी रंगमंच अभावों के बीच भी पनपा था और पगडंडी से होता हुआ आगे अग्रसर हुआ था जबकि उस समय नाटक यहाँ के बुर्जूआ के लिए था और टापू की 3 नाट्यशालाएँ भी उन्हीं की थीं—1. पोर्ट लुई थियेटर, 2. रोज़ हिल का प्लाज़ा थियेटर और 3. वाक्वा का ट्राफ़ालगार थियेटर जो वाक्वा में अंग्रेज़ शासकों के आवास का एक हिस्सा था और आज 'सेर्ज़ कोंस्तोंतें थियेटर' के नाम से है और जो युवा एवं क्रीड़ा मंत्रालय के अधीन है। यद्यपि ये तीन नाट्यशालाएँ उपनिवेशों के नियंत्रण में थीं और हिंदी रंगमंच का वहाँ प्रवेश न था तथापि यह अभाव में अनाथ बच्चे की तरह जीता रहा।

दक्षिण प्रांत का नाट्याभियान

1955 में दक्षिण प्रांत के निवासी, अंग्रेज़ी पढ़े-लिखे हिंदी प्रेमी, स्व. डॉ. लक्ष्मी प्रसाद रामयाद ने अपने घर सुयाक में सावान ज़िले के सभी हिंदी प्रेमियों एवं हिंदी अध्यापकों का जमावड़ा बनाया और ज़ोर-शोर से नाटक आरंभ किया। श्री नरेश रागेन, श्री रविशंकर कौलेशर, श्री प्रेमचंद ओरी, श्री रामसामी तुलसी, स्व. श्री पूजानंद नेमा, पं. धर्मवीर घूरा, श्री सूर्यदेव सिबोरत, श्रीमती चंद्रावती उतिम (बाद में जिनकी शादी सूर्यदेव सिबोरत से हुई), श्री जगदेव गुमानी, श्रीमती सीता रामयाद और उनकी बहन श्रीमती सरस्वती, श्री बालमुकुंद भीरु, श्री लखन सुमारू, सहोद्री आदि उस अभियान में शामिल हुए थे। यह नाट्य-अभियान मॉरीशसीय नाटक के निर्माण में बुनियादी पत्थर था। उपरोक्त युवा टीम ने एक के बाद एक नाटक खेले, जो मुंशी प्रेमचंद की कहानियों पर आधारित थे। 'बोटी का धन', 'ईश्वरीय अन्याय', 'मंत्र' आदि 'ओलिम्पिया' सिनेमाघर में प्रदर्शित हुए। यह नाटक का महत्वपूर्ण मोड़ था जहाँ तमिल-भाषी नरेश रागेन तथा तेलुगू-भाषी श्री रामसामी तुलसी ने बाद में हिंदी के होकर हिंदी के महान सेनानियों में अपना नाम लिखा। श्री सूर्यदेव सिबोरत जो प्राथमिक पाठशालाओं में 'सहदेव' की भूमिका निभाते थे, 'अंधायुग' में 'कृपाचार्य' बने और 1966 में टीचर्स ट्रेनिंग कॉलेज में 'वंदे मातरम' लिखकर मंचित किया तथा 2004 में बड़ा नाटक 'प्रजाराज रासो' प्रकाशित किया। रामयाद परिवार की महिलाएँ, युवक-युवतियाँ और बच्चे भी नाटक में भूमिकाएँ निभाने में जुट गए। श्री पूजानंद नेमा इस देश के श्रेष्ठ हिंदी कहानीकारों और कवियों में दर्ज हुए तथा श्री प्रेमचंद ओरी देश के प्रथम हिंदी पीएचडी बने।

1963 में 'गुडलैंस' के सिनेमाघर 'किंग्स' में हिंदी लेखक संघ द्वारा उत्तर प्रांत प्रथम हिंदी नाटक प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। उसमें 4 एकांकी प्रस्तुत किए गए। उसी दौरान मॉरीशस की पिछली पीढ़ी के अभिनयकर्ताओं में श्री छत्रदत्त हीरामन उभरकर आए जिन्हें बेस्ट एक्टर के ख़िताब से नवाज़ा गया और जो मॉरीशसीय

रंगमंच में 4 दशकों से कुछ अधिक समय तक छाए रहे। छत्रदत्त ने दर्जनों लंबे नाटकों में मुख्य पात्र की भूमिका निभाई, निर्देशन किया और नाटक प्रदर्शित करने भारत भी गए। उन्होंने ही 'अंधायुग' में 'धृतराष्ट्र' की मुख्य भूमिका निभाई और 'फाँसी नहीं उम्र कैद' तथा 'ऐसा भी होता है' नाट्य-कृतियाँ लिखीं।

1968 में मॉरीशस स्वतंत्र हुआ। सरकार के युवा मंत्रालय के अंतर्गत युवा नाटक समारोहों का विकास होना आरंभ हुआ। हिंदी नाटक में युवकों की दिलचस्पी बढ़ी और इनका प्रचार-प्रसार भी होने लगा। परिणामस्वरूप 'अजनता आर्ट्स', 'हिंदी लेखक संघ', 'हिंदी प्रचारिणी सभा', 'हिंदी परिषद', 'टीचर्स ट्रेनिंग कॉलेज' ने मॉरीशसीय रंगमंच के विकास में पूरा-पूरा सहयोग किया।

1971 में टी.के. जानकी के निर्देशन में उपेंद्रनाथ अश्क के 'बे बात की बात' और 'दो रूपक' मंचित हुए। 1971 में ही अक्टूबर महीने में हिंदी परिषद ने अपनी 3 परिषद शाखाओं के 3 एकांकी प्रस्तुत किए। उपरोक्त नाटकों का मंचन पोर्ट लुई थियेटर में हुआ था। तब तक यह नाट्यशाला नगर पालिका के नियंत्रण में आ गई थी और हिंदी के लिए खुल गई थी।

1972 में प्रियदत्त मेवासिंह** (सांसद थे और हिंदी रंगमंच के अगाध प्रेमी थे) द्वारा स्थापित 'मॉरीशस कला मंदिर' ने स्वतंत्र मॉरीशस की प्रथम नाटक प्रतियोगिता का आयोजन किया। टी.के. जानकी और श्री अभिमन्यु अनत के लिखे नाटक फ़ाइनल में आए। श्री अनत के 'कवि टिंगू' में छत्रदत्त हीरामन सर्वश्रेष्ठ अभिनेता घोषित हुए थे।

** (मॉरीशस के 3 सांसदों व मंत्रियों ने स्थानीय हिंदी नाटक में खूब दिलचस्पी दिखाई और इसके लिए मन लगाकर काम किया। वे हैं 1. प्रियदत्त मेवासिंह, 2. दयानंदलाल बसंतरॉय और 3. खेरसिंह जगतसिंह।)

मॉरीशसीय हिंदी रंगमंच का स्वर्णकाल

1973 हिंदी रंगमंच का स्वर्णकाल माना जाना चाहिए। उसी साल सरकारी स्तर पर शिक्षा मंत्रालय के तहत भारत से नाटक विशेषज्ञ दंपती श्री मोहन महर्षि और श्रीमती अंजला महर्षि बुलाए गए हैं। 1973 में पहली बार हिंदी नाटक प्रतियोगिता की गई। उस प्रथम हिंदी नाटक प्रतियोगिता को भारी सफलता मिली। 29 युवा रंग संस्थाओं ने उसमें भाग लिया था पर चूँकि यह सब मोहन महर्षि दंपती की रेख-देख में हुआ था इसीलिए उन्होंने उस नाटक प्रतियोगिता का नर्सी जैसा प्रयोग किया! प्रतियोगिता में आए श्रेष्ठ अभिनयकर्ताओं, निर्देशकों, निर्माताओं आदि अन्य रंग तकनीशियनों को पहचाना और उनकी एक टीम बनाकर डॉ. धर्मवीर भारती द्वारा लिखित लंबे नाटक 'अंधायुग' की तैयारी शुरू की। यह नाटक 'प्लाज़ा थियेटर' में मंचित हुआ और प्रथम विश्व हिंदी सम्मेलन 1975 नागपुर, भारत में भी।

श्री मोहन महर्षि ने उन चुने हुए रंगकर्मियों की एक फ़ौज खड़ी की और मंत्रालय में 'ड्रामा यूनिट' ही खुलवा दी। यही ड्रामा ऑफ़िसर बाद में चलकर सरकारी वज़ीफ़े पाकर दिल्ली के 'नेशनल स्कूल ऑव ड्रामा' से स्नातक बनकर आए और 'ड्रामा यूनिट' सँभाला। हिंदी के चलते तमिल, तेलुगू और मराठी भाषा-भाषी लोग भी दिल्ली से प्रशिक्षण प्राप्त करने लगे।

इसी तरह से 1973 में हिंदी नाटक प्रतियोगिता के बाद 1974 में उर्दू, 1973 में तमिल, 1976 में मराठी और 1977 में तेलुगू भाषाओं में सरकारी स्तर पर नाटक प्रतियोगिताएँ शुरू कर दी गईं।

लंबे नाटकों का सिलसिला जारी रहता है। मॉरीशस में आयोजित दूसरे विश्व हिंदी सम्मेलन 1976 में श्री मोहन महर्षि की देख-रेख में 2 नाटकों का मंचन हुआ वे थे मोहन राकेश द्वारा लिखित 'आषाढ़ का एक दिन' और बादल सरकार का 'इंद्रजीत'। सम्मेलन के प्रभाव और दूसरे तथा तीसरे नाटक की प्रेरणा से लंबे नाटक मंचित करने की जहाँ क्रांति आई वहाँ अनुभव का विस्तार हुआ और लंबे नाटक लिखनेवाले भी तैयार होने लगे।

'ड्रामा यूनिट' के निर्माण से पहले श्री अभिमन्यु अनत ने श्री मोहन महर्षि का सान्निध्य पाकर एक के बाद एक लंबे नाटक लिखे, उनका निर्देशन किया और 1885-1886 के बाद महात्मा गांधी संस्थान, जहाँ वे कार्यरत थे, से मंचन किया। उनके 'गूँगा इतिहास', 'कोप भवन', 'उर्मिला', 'भरत सम भाई', 'मीमांसा', 'राष्ट्र वाणी', 'रवि गान' आदि।

परंतु इससे पहले 1980 में श्री महेश रामजियावन ने श्री शरद जोशी के हास्य नाटक 'एक था गधा' का निर्देशन और मंचन किया और भारी सफलता पाई। इनके भी पूर्व श्री राजकरण बम्मा ने 'ध्रुवस्वामिनी' का निर्देशन और मंचन किया था। श्री राजेंद्र प्रसाद सदासिंह ने 'शबरंग मोहभंग' और स्व. श्री अस्तानंद सदासिंह ने 'उधार का पति' का बारी-बारी से निर्देशन और मंचन किया।

1986 में भारतीय आप्रवासी की 150वीं वर्षगाँठ पर विनय दसोई ने 'इतिहास साक्षी है' लिखकर उसका निर्देशन और मंचन

किया। श्री महेश रामजियावन ने गिरीश कर्नाड का लिखा 'हयवदन' निर्देशित और मंचित किया। 1993 में मॉरीशस में फिर से विश्व हिंदी सम्मेलन का आयोजन हुआ और सरकार के कहने पर श्री महेश रामजियावन ने 'समय चक्र' लिखा और उस अवसर पर मंचन किया।

यहाँ पहुँचते-पहुँचते नाटक सरकारी पहुना बनता जा रहा था। फिर भी लंबे नाटक का कारवाँ एक बार चला तो बढ़ता ही गया। श्री रामदेव धुरंधर का 'काला इंद्रधनुष', श्री ज्ञानेश्वर रघुवीर के 'समंदर' और 'वतन की आवाज़', श्री धन्नारायण जीऊत के 'बलिदान' और 'हम सब एक हैं', छत्रदत्त हीरामन का 'स्वामी दयानंद' आदि लंबे नाटक लिखे और मंचित किए गए।

1986 के बाद श्री महेश रामजियावन देश के प्रमुख हिंदी नाटककार का स्थान प्राप्त कर लेते हैं। इस स्थान को हासिल करने के लिए श्री महेश ने नाटक को अपनी जान दी, उसमें अपनी आत्मा डाली। 'सीत बसंत', 'एक मुट्ठी मौत', 'सोने का अंडा', 'आज का स्यंतक' आदि लंबे नाटकों का सफल मंचन किया।

हिंदी नाटक में सफलता के बाद भोजपुरी नाटक प्रतियोगिता शुरू कर दी गई। 2015 यानी पिछले वर्ष भोजपुरी नाटक प्रतियोगिता में देश की 25 युवा नाट्य संस्थाओं ने 25 एकांकी-प्रवेश लिया। मार्के की बात यह है कि भोजपुरी नाट्य प्रतियोगिता में स्थानीयता महत्वपूर्ण रहा। स्थानीय नाटककार, थीम, निर्देशन, निर्माता आदि। भोजपुरी में स्क्रिप्ट की कमी की वजह से ही यह संभव हुआ होगा वरना यह एक अच्छी बात से कम नहीं है!

नेशनल ड्रामा फ़ेस्टिवल 2014 के आँकड़ों में हिंदी और भोजपुरी नाटकों के आँकड़ों सहित उनका स्थान क्या था? साथ में देखते हैं स्थानीय और विदेशी स्क्रिप्ट की संख्या तथा 2014 में आए फ़ाइनल एकांकी—

क्रम	भाषा	फ़ाइनल	स्थानीय लेखक	विदेशी लेखक
1.	भोजपुरी	25	23	2
2.	हिंदी	24	19	5
3.	तेलुगू	10	10	0
4.	अंग्रेज़ी	13	8	5
5.	फ्रेंच	17	13	4
6.	तमिल	13	13	0
7.	उर्दू	17	13	4
8.	मन्दारिन	7	7	0
9.	क्रिओल	18	18	0
9	**9**	**144**	**124**	**20**

अर्थात 9 भाषाओं में आयोजित राष्ट्रीय नाटक प्रतियोगिता में भोजपुरी नाटक पहले स्थान पर है और हिंदी दूसरे पर है। हिंदी में 18 संस्थाओं से 39 प्रवेश आए थे जिनमें 11 स्कूल-कॉलेज के (10-18 वर्ष के बीच के) बच्चे थे।

उपरोक्त नाटक प्रतियोगिता में जहाँ सबसे अधिक प्रवेश भोजपुरी नाटकों का है वहाँ नाटक के रचयिता सबसे अधिक स्थानीय हैं। कारण स्पष्ट है, मातृ भाषा, स्थानीय समस्याएँ, स्थानीय वातावरण आदि! प्रतियोगिता में भाग लेने हेतु अब तक सैकड़ों-सैकड़ों एकांकी-नाटक लिखे और मंचित किए जा चुके हैं मगर सब के सब अप्रकाशित रहे हैं। श्री महेश रामजीयावन, स्व. श्री छत्रदत्त हीरामन, श्री अस्तानंद सदासिंह, श्री राजेंद्र प्रसाद सदासिंह, श्री धन्नारायण जीऊत, श्री धनराज शम्भु, श्री ज्ञानेश्वर रघुवीर, श्री सूर्यदेव सिबोरत, श्री रामदेव धुरंधर आदि ने अपने हिंदी नाटक और एकांकी प्रकाशित करवाए।

भोजपुरी नाटक

भोजपुरी नाटक के सबसे सक्रिय लेखक, निर्देशक, निर्माता और अभिनयकर्ता, स्वर्गीय श्री गौकरण सितोहल रहे जिन्होंने भोजपुरी और अन्य भाषाओं में 100 के लगभग एकांकी नाटक लिखे तथा 200 रूपक स्थानीय एवं राष्ट्रीय रेडियो पर प्रस्तुत किए। उन्होंने अपने पूरे परिवार (पत्नी और 3 युवा बेटों) को नाटक की मशाल दे दी और वह जल रही है। 2015 में मृत्योपरांत उनका एकांकी-संग्रह 'ममता' छपा।

हिंदी और भोजपुरी नाटक के स्थानीय रचयिताओं की थीम कुछ इस प्रकार से है—व्यक्ति का विघटन, संयुक्त परिवार में विघटन, विवाह-समस्या, पुनर्विवाह, बहु विवाह, अवैध यौन संबंध, मॉडर्न युवतियाँ और बहुएँ, वर्ण व्यवस्था, सामाजिक असमानता, आप्रवासी पीड़ा, गिरमिटिया मज़दूरों पर गोरों का अत्याचार-व्यभिचार, राजनीतिक घोटाला, अनैतिकता, अंधविश्वास, पर्व, मिथकता आदि।

मॉरीशस में मंचित लंबे नाटक

मॉरीशस में या भारत में कुछ मॉरीशसीय रंगकर्मियों ने बहुत अच्छे और सफल नाटकों का निर्देशन और मंचन किया है। यथा—'ध्रुवस्वामिनी', 'अंधायुग', (1974-75-76)। 'आषाढ़ का एक दिन' (1976), 'तू-तू' एवं 'इंद्रजीत' (1976), 'एक था गधा' (1980), 'शबरंग मोह भंग', 'कोप भवन' (1981), 'भरत सम भाई' (1981), 'दो ठग' (1981), 'गूँगा इतिहास' (1984), 'ओ अमेरिका' (1984), 'राष्ट्र वाणी' (1984), 'हयवदन' (1986), 'रोक दो कान्हा' (1986), 'इतिहास साक्षी है' (1986), 'सीत बसंत' (1989), 'स्वामी दयानंद', 'सिर उठा के जीओ', 'बंदी', 'समंदर', 'पगला घोड़ा', 'काला इंद्रधनुष', 'अंधों का हाथी', 'वरुणा', 'समय चक्र', 'उर्मिला', 'मीमांसा', 'नौशेरा के यात्री' आदि।

मॉरीशस के कुछ प्रमुख नाटककार

श्री अभिमन्यु अनत, श्री महेश रामजियावन, स्व. श्री अस्तानंद सदासिंह, स्व. श्री छत्रदत्त हीरामन, श्री राजेंद्र प्रसाद सदासिंह, श्री टी.के. जानकी, श्री धन्नारायण जीऊत, स्व. श्री गौकरण सितोहल, श्री धनराज शम्भु, श्री विनय दसोई, श्री रामदेव धुरंधर, श्री सूर्यदेव सिबोरत, श्रीमती सीता रामयाद, श्री लालदेव बिखारी, श्री हीरालाल लीलाधर आदि।

मॉरीशस की कुछ प्रमुख नाट्य संस्थाएँ

नटराज आर्ट्स ग्रुप, भारतीय रंग मंदिर, मॉरीशस प्रोफ़ेशनल ड्रामाटिक आर्ट्स, त्रिवेणी कला मंदिर, वाक्वा रंग भूमि कला मंदिर, नोर्जेन ड्रामाटिक फ़ेडरेशन, वाक्वा अमरदीप नेशनल आर्ट्स आदि।

मॉरीशस में लिखी गईं नाट्य-पुस्तकें

1941 में मॉरीशस का पहला नाटक, जयनारायण रॉय द्वारा लिखित तथा हिंदी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित लंबा नाटक 'जीवन संगिनी' है। इसमें 3 अंक हैं और हर अंक में 4-4 दृश्य हैं। उसके पूरे 10 साल के बाद यानी 1951 में स्व. डॉ. ब्रजेंद्र कुमार भगत 'मधुकर' का एकांकी-संग्रह 'आदर्श बेटी' छपा। इसमें 2 एकांकी हैं—'आदर्श बेटी' और 'नव जीवन'। 1972 में ठाकुरदत्त पांडे का 'पाँच एकांकी एक सपना' छपा और 1986 में श्री महेश रामजियावन ने 'सात रंग एकांकी' का संपादन किया। इसमें श्री सूर्यदेव सिबोरत कृत 'शीशा', श्री जगदीश सुकन कृत 'पर्दे के पीछे', श्री लालजी गंगादीन कृत 'अपाहिज', श्री हीरालाल लीलाधर कृत 'तब क्या होगा!' श्री आनंद देबी कृत 'कब तक?', श्रीमती पुष्पा बम्मा कृत 'ओ बी ई', श्री लालदेव बिखारी कृत 'इधर-उधर' तथा श्री हीरालाल बिखारी कृत 'अनोखे अतिथी' के एकांकी हैं। 'अनोखे अतिथि', हीरालाल लीलाधर 1974। 'मॉरीशस के हिंदी एकांकी', संपादक अभिमन्यु अनत (1990)। स्व. श्री अस्तानंद सदासिंह—'आवाज़', 'तू-तू', 'थूक दिया भविष्य पर'। श्री अभिमन्यु अनत—'विरोध', 'तीन दृश्य', 'मरीशा गवाही देना', 'गूँगा इतिहास', 'रोक दो कान्हा', 'भरत सम भाई', 'देख कबीरा हाँसी', 'उर्मिला', 'नौशेरा का यात्री', 'रविगान'। छत्रदत्त हीरामन—'फाँसी नहीं उम्र कैद' और 'ऐसा भी कभी होता है'। धन्नारायण जीऊत (2006)—'युग पुरुष'। श्री राजेंद्र प्रसाद सदासिंह (2014)—'सिर उठा के जीओ'।

उपसंहार

मॉरीशस में नाटक अभावों और बिना मंच के जन्मा और विकसित हुआ, पगडंडी बनाकर चला और मुख्य सड़क पर आ गया। यहाँ के नाटकों में प्रवासी भारतीयों के पीड़ापूर्ण जीवन और विद्रोही स्वर मुखरित हुए। हिंदी, भोजपुरी, नुक्कड़ नाटकों के साथ-साथ नृत्य नाटिका भी लिखी गई हैं। यहाँ का रंगमंच जिस रास्ते पर चल रहा है यह उसका अपना बनाया रास्ता है। आज की पीढ़ी में नाटक-चेत्य बराबर उपस्थित है। वे चाहे नृत्य-दुनिया से आए और परिवार से हिंदी-विरासत में पाए कमल चिंतामणि हों, राजेश सिबुआ हों, नवीन पांडु हों या स्व. श्री गौकरण सितोहल की पत्नी और उनके 3 युवा बेटे धर्मराज, राजेश्वर तथा राजीव हों, कॉलेजों के नए रंग—युवक हों या हर साल हिंदी-भोजपुरी नाटक प्रतियोगिता में भाग लेनेवाले तमाम युवा और युवतियाँ हों सभी ने हिंदी नाटक का भविष्य उज्ज्वल बनाया है पर नाटक लिखनेवालों तथा एक अच्छे स्क्रिप्ट की कमी खल रही है। प्रकाशन तो न के बराबर है।

बैठका और मंदिर के आँगनों से निकलकर हिंदी रंगमंच आज सरकार की शैय में एक नई क्रांति की जोह में है क्योंकि हिंदी की अन्य साहित्यिक विधाओं से नाटक ने कहीं अधिक बंधुआ मज़दूरों का संघर्ष पग-पग पर प्रदर्शित किया है परंतु यह विडंबना ही है कि आज तक इसकी बड़े पैमाने पर कहीं चर्चा ही नहीं हुई है।

मॉरीशस
rajheeramun@gmail.com

11

सूरीनाम, फ़िजी, मॉरीशस में हिंदी पत्रकारिता

—श्रीमती भावना सक्सेना

पत्रकारिता का उद्भव मानव की जिज्ञासा वृत्ति के परिणामस्वरूप हुआ। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और अपने आसपास की घटनाओं से सरोकार रखता है। वह न सिर्फ़ अपने आसपास के घटनाक्रम और परिवेश से परिचित होना चाहता है वरन दुनिया के दूसरे क्षेत्रों में क्या घटित हो रहा है, यह भी जानना चाहता है और अपने परिवेश व अपने क्रियाकलापों के बारे में दूसरों को बताना चाहता है। सूचना व समाचार प्राप्त करने और पहुँचाने के क्रम में पत्रकारिता अपने विविध रूपों में विकसित हुई। आज पत्रकारिता में दैनिक पत्रों से लेकर साप्ताहिक, पाक्षिक, त्रैमासिक, अर्धवार्षिक, वार्षिक आदि सभी पत्रिकाएँ तथा रेडियो, दूरदर्शन, इंटरनेट, इ-मेल आदि जनसंचार की विभिन्न विधाएँ अस्तित्व में हैं। पत्रकारिता सामाजिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक चेतना की अग्रदूत बनकर जनकल्याण और विश्व बंधुत्व की भावना को विकसित करने का सशक्त माध्यम है।

जन्म : 20 जनवरी, 1973, नई दिल्ली।
शिक्षा : दिल्ली विश्वविद्यालय से अंग्रेज़ी व हिंदी में स्नातकोत्तर (एम.ए.) तथा अनुवाद प्रशिक्षण में स्वर्ण पदक प्राप्त।
प्रकाशन : 'सूरीनाम में हिंदुस्तानी भाषा साहित्य और संस्कृति' (2012), कविता संग्रह 'एक बाग के फूल' एवं 'अभिलाषा', महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय विश्वविद्यालय से प्रकाशित, 'सूरीनाम का सृजनात्मक हिंदी साहित्य' का संपादन, 'प्रवासी हिंदी साहित्य' की सह संपादक तथा समय-समय पर पत्र-पत्रिकाओं में लेख, कहानियाँ व कविताएँ प्रकाशित।
संप्रति : गृह मंत्रालय, भारत सरकार के राजभाषा विभाग में वरिष्ठ अनुवादक।

भारत में पत्रकारिता के इतिहास पर एक नज़र डालने पर पता चलता है कि भारतीय पत्रकारिता का उद्भव व विकास सामाजिक चेतना व देशभक्ति को लेकर हुआ जो बाद में स्वराज्य की अवधारणा के रूप में मुखर हुई। धीरे-धीरे इसने अंग्रेज़ सरकार के खिलाफ़ भारतीय समाज में क्रांति लाने का भी काम किया। भारत में पनपी यह चेतना यहीं तक सीमित नहीं रही अपितु उन देशों में भी संचारित हुई जहाँ भारत के सपूत अपनी जड़ों से दूर होकर नई धरती पर अपने अस्तित्व को तलाश रहे थे और अपने आप को स्थापित करने का प्रयास कर रहे थे।

हम बात कर रहे हैं उस पीढ़ी की जो 'लालारुख', 'लेवनीदास' व अन्य जहाज़ों पर चढ़े एक बेहतर कल की खोज में और जा पहुँचे सूरीनाम, फ़िजी और मॉरीशस। 1833 में ब्रिटिश उपनिवेश में दास प्रथा समाप्त होने के बाद बागान मालिकों के लिए कठिनाइयाँ उत्पन्न होने लगीं, श्रमिकों के अभाव में उनका काम ठप्प होने लगा और तब शासकों का ध्यान एशिया की ओर गया, विशेष रूप से भारत की ओर क्योंकि यहाँ की जनसंख्या काफ़ी थी और सस्ते मज़दूर मिलने की संभावना अधिक थी। अत: पुरानी दास प्रथा को शर्तबंध का नया जामा पहनाकर उसे पुन: जीवित किया गया और गिरमिट(एग्रीमेंट) के तहत भोले-भाले हिंदुस्तानियों को सूरीनाम, फ़िजी, मॉरीशस और दक्षिण अफ्रीका भेजा गया।

सामान्यत: यह माना जाता है कि भारत से उपनिवेशों में जानेवाले अधिकांश व्यक्ति, अनपढ़ व श्रमिक श्रेणी के थे क्योंकि उस समय भारत में सिर्फ़ ब्राह्मण और क्षत्रिय ही पढ़े-लिखे होते थे। सोने के देश और बेहतर जीवन की लालसा में भारत से सूरीनाम जानेवाले व्यक्तियों में कुछ ब्राह्मण व क्षत्रिय भी अपना वर्ण छिपाकर भरती हो गए थे। ये लोग 'रामायण', 'गीता', 'पुराण', 'सत्यनारायण कथा' आदि साथ लेकर गए। दिन भर के कठिन परिश्रम के बाद ये अपने साथ लाए 'रामचरितमानस' की चौपाइयाँ पढ़ते, आपस में मिल-बैठकर भजन करते, किस्से-कहानियाँ सुनाते और इन्हीं बैठकों के माध्यम से भाषा, धर्म व संस्कृति का प्रचार होता रहता। भाषा, धर्म और संस्कृति को बचाए रखने के लिए स्वाध्याय मंडलों, हिंदी

कक्षाओं, मंदिर व गुप्त पंचायतों ने जन्म लिया। जिनको देवनागरी लिपि का ज्ञान था उन्होंने अपने बच्चों व अन्य गाँववालों को रात्रि के समय और छुट्टी के दिन पढ़ाना आरंभ किया। यह किसी के घर या झोंपड़ी में होता था। इस तरह परोक्ष रूप से हिंदी का वृक्षारोपण हुआ। स्वाध्याय मंडलों द्वारा हस्तलिखित पर्चे, लेख, कहानियाँ, भजन, प्रार्थना के मंत्र, चौपाइयाँ, दोहे आदि वितरित किए जाते। इसे इन देशों में हिंदी पत्रकारिता का बीजारोपण माना जा सकता है। सूरीनाम, फ़िजी, मॉरीशस, तीनों स्थानों पर इसी पृष्ठभूमि में हिंदी और हिंदी पत्रकारिता का विकास हुआ। धीरे-धीरे प्रवासी भारतीयों ने इन देशों में अपनी जड़ें जमाईं और सशक्त होते गए। अपनी संस्कृति, अपनी अस्मिता को बचाने के लिए उनके द्वारा किए गए प्रयास समय-समय पर विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं के रूप में प्रस्फुटित होते रहे जिनका उल्लेख आगे किया जा रहा है—

मॉरीशस

सन् 1934 में प्रवासी भारतीय मॉरीशस पहुँचे थे। मॉरीशस ले जाए गए साढ़े 4 लाख गिरमिटिया में अधिकांश भोजपुरी-भाषी थे इसीलिए भोजपुरी उन मज़दूरों के बीच संपर्क भाषा बन गई। वर्ष 1901 में महात्मा गांधी की मॉरीशस यात्रा के बाद से मॉरीशस का हिंदुस्तानी समाज हिंदी की धारा से जुड़ने लगा। मॉरीशस में हिंदी पत्रकारिता का आरंभ मणिलाल डॉक्टर द्वारा सन् 1909 में 'हिंदुस्तानी' समाचार पत्र के प्रकाशन से हुआ। यह समाचार पत्र पहले अंग्रेज़ी तथा गुजराती में प्रकाशित होना आरंभ हुआ और फिर गुजराती का स्थान हिंदी ने ले लिया था। इस समाचार पत्र के 2 मार्च, 1913 के संस्करण में 'होली' शीर्षक से एक कविता छपी जिसे मॉरीशस की प्रथम हिंदी कविता होने का श्रेय प्राप्त है। इस समाचार पत्र के माध्यम से ही वहाँ के लोगों में सामाजिक व राजनीतिक चेतना का उदय हुआ लेकिन मणिलाल डॉक्टर के भारत आने के बाद ही इसका प्रकाशन बंद हो गया। सन् 1910 में मणिलाल ने वहाँ आर्य समाज की स्थापना की और एक प्रेस भी खोला। यहीं से सन् 1911 में 'मॉरीशस आर्य पत्रिका' का प्रकाशन प्रारंभ हुआ। यह एक साप्ताहिक समाचार पत्र था जिसे आर्य सभा के पदाधिकारियों की देख-रेख में प्रकाशित किया जाता था। फिर सन् 1916 में पं. काशीनाथ किश्तो ने इसके संपादन का कार्य सँभाला और बहुत निष्ठा से कई वर्षों तक इसे जीवित रखा। इसमें आर्य समाज की शिक्षा के साथ-साथ वैदिक धर्म को भी प्रधान स्थान मिलता था। इसी वर्ष 'ओरिएंटल गजेट' नाम का एक और पत्र प्रकाशित होना आरंभ हुआ जिसका संपादन श्री रामलाल ने किया। इस पत्र में भारतीयों से संबंधित सामग्री प्रचुर मात्रा में छपती थी। सन् 1920 में इंडो-मॉरीशस संघ के तत्वावधान में 'मॉरीशस टाइम्स' का प्रकाशन हुआ। सन् 1924 में श्री राजकुमार गजाधर के संपादन में 'मॉरीशस मित्र' नाम का एक पत्र निकला जिसमें अधिकतर सामाजिक सुधार तथा भ्रातृत्व भाव के लेख छपते थे। फिर सन् 1929 में 'आर्य वीर' नाम का एक द्विभाषिक पत्र निकला। यह एक साप्ताहिक पत्र था जिसके प्रथम संपादक पं. काशीनाथ किश्तो थे। इसमें आर्य समाज के विचारों का बाहुल्य रहता था।

सन् 1933 में सनातन धर्मावलंबियों में श्री रामासामी नरसीमुलु (नरसिंह दास) के संपादन में 'सनातन धर्मांक' पत्र निकलना शुरू हुआ जिसमें हिंदू धर्म और रीति-रिवाज़ों पर विपुल सामग्री दी जाती थी। यह एक द्विभाषिक पत्र था। मॉरीशस के भारतवंशियों में सांस्कृतिक चेतना जागृत करने के उद्देश्य से सन् 1936 में इंडियन कल्चरल एसोसिएशन की स्थापना हुई। इस संस्था ने 'इंडियन कल्चरल रिव्यू' नाम का एक पत्र निकाला जिसके प्रथम संपादक थे डॉ. के. हज़ारीसिंह जो महात्मा गांधी संस्थान, मोका के तत्कालीन निदेशक थे। इसी संस्थान में द्वितीय विश्व हिंदी सम्मेलन का आयोजन सन् 1976 में हुआ था। सन् 1936 में रिव्यू के एक पूरक हिंदी पत्र 'वसंत' का प्रकाशन हुआ जिसके संपादक पं. गिरजानन उमाशंकर थे। 'वसंत' पत्रिका का पुन: प्रकाशन मार्च, 1978 में आरंभ हुआ था। श्री अभिमन्यु अनत 2 दशक से अधिक समय तक 'वसंत' के संपादक के रूप में कार्यरत रहे। श्री अभिमन्यु अनत की सेवानिवृत्ति के बाद डॉ. बीरसेन जगासिंह, श्री रासपाल सिंह, डॉ. हेमराज सुंदर, डॉ. कलावती रघुनंदन तथा डॉ. श्रीमती रामधारी माधुरी क्रमश: विभागाध्यक्ष व संपादक बने। इसकी वर्तमान संपादक महात्मा गांधी संस्थान के सृजनात्मक लेखन व प्रकाशन विभाग की अध्यक्षा, एसोसिएट प्रोफ़ेसर डॉ. राजरानी गोबिन हैं। यह मासिक पत्रिका महात्मा गांधी संस्थान के तत्वावधान में प्रकाशित हो रही है। यह एक साहित्यिक पत्रिका है जिसमें नवोदित रचनाकारों को अधिक स्थान मिलता है। इसका कहानी विशेषांक काफ़ी ख्याति अर्जित कर चुका है। विदेशी हिंदी पत्रों में वसंत का स्थान सर्वोपरि माना जा सकता है तथा इसका स्तर भी भारतीय श्रेष्ठ पत्रों के समान ही है।

महात्मा गांधी संस्थान के सृजनात्मक लेखन व प्रकाशन विभाग द्वारा ही बच्चों की द्विमासिक पत्रिका 'रिमझिम' भी प्रकाशित की जाती है।

वर्ष 1942 में पब्लिक रिलेशंस ऑफ़िस से 'मासिक चिट्ठी' नाम से एक लघु पत्र निकला जो सूचनात्मक अधिक था। सन् 1945 में 'आर्यवीर जागृति' नाम से एक दैनिक पत्र निकला जिसके संपादक प्रो. वासुदेव विष्णुदयाल थे। इसने भी पर्याप्त ख्याति अर्जित की थी परंतु कुछ वर्षों के बाद इसे बंद होना पड़ा। सन् 1948 में 'जनता' पत्र का प्रकाशन प्रारंभ हुआ। इसके प्रथम संपादक श्री जयनारायण रॉय हुए। इसमें साहित्यिक और हिंदी के लिए समर्पित भाव को स्थान मिला। बाद में इसको कुछ समय के लिए बंद होना पड़ा परंतु सन् 1974 में इसका पुन: प्रकाशन प्रारंभ हुआ और यह 1982 तक प्रकाशित होता रहा। उस समय 'जनता' मॉरीशस का सर्वश्रेष्ठ साप्ताहिक पत्र माना जाता था। इसके संपादक श्री राजेंद्र अरुण थे। द्वितीय विश्व हिंदी सम्मेलन के समय इसने हिंदी प्रचार-प्रसार के लिए उत्कृष्ट भूमिका निभाई थी। पिछले 3 दशकों से इसका प्रकाशन नहीं हो रहा है। सन् 1948 में ही एक और पत्र 'ज़माना' भी विष्णुदयाल बंधु के संपादन में निकला। यह मॉरीशस के हिंदी लेखकों का सहयोगी पत्र था और इसमें अधिकतर हिंदी की रचनाओं को स्थान दिया जाता था। अब यह पत्र कभी-कभार ही निकल पाता है। इसके उपरांत आर्य सभा मॉरीशस ने पुन: 'आर्योदय' नाम की एक पत्रिका निकाली। यह पत्रिका आज भी वैदिक धर्म और हिंदी की सेवा बड़ी निष्ठा से कर रही है। सन् 1953 में 'मॉरीशस आमाल गामटेड' के तत्वावधान में 'मज़दूर' का प्रकाशन हुआ जिसमें प्रवासी भारतीयों के समाचारों को प्रमुखता से छापा जाता था। सन् 1959 में श्री ब्रेजेंद्र कुमार मंगर भगत और श्री रामलाल विक्रम के संपादन में 'नवजीवन' का प्रकाशन हुआ। फिर सन् 1960 में मॉरीशस हिंदी परिषद की त्रैमासिक पत्रिका 'अनुराग' का प्रकाशन प्रारंभ हुआ। इस पत्रिका को संपूर्ण मॉरीशसीय लेखकों का सहयोग प्राप्त था। इसके प्रथम संपादक पं. दौलत शर्मा थे। इसमें कविता, कहानी, नाटक, संस्मरण, भेंटवार्ता तथा निबंध को भरपूर स्थान दिया जाता था। 'अनुराग' पत्रिका का प्रकाशन 1960 से 1961 तक फिर पुन: प्रकाशन 1969-1977 तक होता रहा। उस समय यह पत्रिका मॉरीशस की एकमात्र त्रैमासिक साहित्यिक पत्रिका हुआ करती थी। इसके तत्कालीन संपादक मॉरीशस के सर्वश्रेष्ठ हिंदी कवि और लेखक श्री सोमदत्त बखोरी थे। सन् 1961 में ही 'समाजवाद' पत्र का भी प्रकाशन हुआ जो थोड़े दिनों बाद बंद हो गया। प्रशिक्षण महाविद्यालय ने 'प्रकाश' नाम से सन् 1964 में अपना पत्र निकाला था। प्रकाशन में वहाँ के प्रशिक्षणार्थियों की रचनाओं का बाहुल्य होता था। यह पत्र सन् 1974 तक वार्षिक अंक के रूप में प्रकाशित होता रहा। इसके संपादक प्रो. रामप्रकाश थे। सन् 1965 में मॉरीशस में पहली बार एक बाल पत्रिका का प्रकाशन हुआ जिसका नाम था 'बाल सखा'। यह पत्रिका हिंदी लेखक संघ के तत्वावधान में प्रकाशित होती थी।

सन् 1834 में प्रवासी भारतीय मॉरीशस पहुँचे थे। मॉरीशस ले जाए गए साढ़े 4 लाख गिरमिटिया में अधिकांश भोजपुरी- भाषी थे इसीलिए भोजपुरी उन मज़दूरों के बीच संपर्क भाषा बन गई। वर्ष 1901 में महात्मा गांधी की मॉरीशस यात्रा के बाद से मॉरीशस का हिंदुस्तानी समाज हिंदी की धारा से जुड़ने लगा। मॉरीशस में हिंदी पत्रकारिता का आरंभ मणिलाल डॉक्टर द्वारा सन् 1909 में 'हिंदुस्तानी' समाचार पत्र के प्रकाशन से हुआ। यह समाचार पत्र पहले अंग्रेज़ी तथा गुजराती में प्रकाशित होना आरंभ हुआ और फिर गुजराती का स्थान हिंदी ने ले लिया था।

सन् 1970 में मॉरीशस के प्रसिद्ध आर्य नेता, श्री मोहनलाल मोहित के संपादन में 'आर्य समाज' का हीरक जयंती विशेषांक प्रकाशित हुआ तथा सन् 1973 में 'वैदिक जरनल' का प्रकाशन। इन दोनों पत्रों का उद्देश्य हिंदी भाषा को सुदृढ़ बनाना था। सन् 1974 में त्रिओले से 'आभा' तथा 'दर्पण' नाम के 2 विशुद्ध साहित्यिक पत्र निकले। ये मासिक पत्र थे। 'आभा' के संपादक मॉरीशस के उदयीमान कवि, कहानीकार तथा नाटककार, श्री महेश रामजियावन रहे। उनका कहानी विशेषांक पाठकों में काफ़ी चर्चित रहा। इसी के साथ द्वितीय विश्व हिंदी सम्मेलन के स्वागताध्यक्ष, श्री दयानंदलाल वसंतराय के संपादन में 'शिवरात्रि' वार्षिक पत्र का प्रकाशन प्रारंभ हुआ। 'शिवरात्रि' पत्र का प्रकाशन 1972 से 1984 तक होता रहा। इसमें भी हिंदी साहित्य को प्रचुर स्थान दिया जाता था तथा संस्कृत शिक्षा के लिए भी कभी-कभार अच्छे लेख प्रकाशित होते थे। सन् 1975 में हिंदी सरस्वती संघ, त्रिओले की त्रैमासिक पत्रिका 'रणभेरी' का प्रकाशन प्रारंभ हुआ

जिसमें वहाँ के हिंदी रचनाकारों को विशेष रूप से प्रोत्साहन दिया जाता था।

11 फरवरी, 2008 को विश्व हिंदी सचिवालय, मॉरीशस की स्थापना के बाद वर्ष 2008 से ही 'विश्व हिंदी समाचार' का नियमित रूप से प्रकाशन हो रहा है। इसमें दुनिया भर में हिंदी से जुड़ी भाषाई तथा साहित्यिक गतिविधियों के समाचार प्रकाशित किए जाते हैं और इस तरह यह हिंदी प्रेमियों के लिए एक त्रैमासिक संदर्भ ग्रंथ का कार्य करता है। विश्व हिंदी सचिवालय हर वर्ष विशेषांक के रूप में 'विश्व हिंदी पत्रिका' का वार्षिक अंक भी निकालता है जिसमें विश्व में हो रही हिंदी गतिविधियों की जानकारी मिलती है। अंतरराष्ट्रीय स्तर की इस पत्रिका में विश्व के कोने-कोने से हिंदी विद्वानों, रचनाकारों, शिक्षाविदों, भाषाविदों, तकनीकविदों, अध्येताओं, पत्रकारों आदि की रचनाएँ प्रकाशित होती हैं।

इस प्रकार मॉरीशस में हिंदी पत्रों की एक लंबी शृंखला है जो समय के साथ निरंतर बढ़ती जा रही है।

11 फरवरी, 2008 को विश्व हिंदी सचिवालय, मॉरीशस की स्थापना के बाद वर्ष 2008 से ही 'विश्व हिंदी समाचार' का नियमित रूप से प्रकाशन हो रहा है। इसमें दुनिया भर में हिंदी से जुड़ी भाषाई तथा साहित्यिक गतिविधियों के समाचार प्रकाशित किए जाते हैं और इस तरह यह हिंदी प्रेमियों के लिए एक त्रैमासिक संदर्भ ग्रंथ का कार्य करता है। विश्व हिंदी सचिवालय हर वर्ष विशेषांक के रूप में विश्व हिंदी पत्रिका का वार्षिक अंक भी निकालता है जिसमें विश्व में हो रही हिंदी गतिविधियों की जानकारी मिलती है।

सूरीनाम

सन् 1873 में 'लालारुख' से सूरीनाम पहुँचे भारतीय प्रवासियों के पास भारत में हो रहे सभी विकास व परिवर्तनों की खबरें कुछ देर से ही सही लेकिन पहुँचती रहीं। नए आनेवाले जहाज़ों पर लोग संदेश लेकर आते रहे और वहाँ रहनेवाले भाइयों में ऊर्जा का संचार करते रहे। सन् 1911 में भारत के प्रसिद्ध पंडित भाई परमानंद जी ब्रिटिश गयाना आए और वहाँ कई लोगों को वैदिक प्रचारक बनाकर भारत लौटे। उन्हीं में से पंडित कुंज बिहारी त्रिपाठी जी ने सन् 1912 में सूरीनाम आकर निकेरी में वैदिक प्रचार प्रारंभ किया। इसी समय गयाना के प्रसिद्ध नेता, पंडित चंद्रशेखर शर्मा ने यहाँ अपना हिंदी प्रेस खोला। यह था हिंदी पत्रकारिता की दिशा में सूरीनाम में पहला कदम।

साधना भाव में सूरीनाम में हिंदी पत्रों का इतिहास भी यहाँ आए हिंदुस्तानी पूर्वजों के इतिहास के समान ही संघर्षशील रहा। कोई साधन सुलभ न होने पर भी आरंभिक रचनाएँ धार्मिक सत्संग में भाग लेनेवाले प्रचारकों द्वारा हस्तलिखित परचों के रूप में वितरित की जातीं फिर टंकित व साइक्लोस्टाइल करके पुस्तकें निकाली जाने लगीं। आरंभ में इन पत्रों तथा पुस्तकों का मुख्य उद्देश्य सिर्फ़ धर्म-प्रचार ही रहा। धीरे-धीरे अन्य विषयों यथा भाषा व संस्कृति पर चर्चा होने लगी।

सूरीनाम में सबसे पहले वर्ष 1964 में आर्य समाज द्वारा 'आर्य दिवाकर' नाम से एक समाचार पत्र प्रकाशित किया गया। यह समाचार पत्र कई वर्षों तक अविरल प्रकाशित होता रहा। इसमें आर्य समाज से संबंधित सामाजिक सामग्री के साथ-साथ हिंदी की विश्वजनीनता पर लेख लिखे जाते थे। कुछ समय तक पंडित शिव रतन जी के संपादन में 'सरस्वती' मासिक पत्र का प्रकाशन हुआ। यह एक साहित्यिक पत्र था तथा वहाँ स्थापित सरस्वती प्रेस से इसका प्रकाशन होता था। उस समय सूरीनाम में यही एकमात्र हिंदी प्रेस था। 'सरस्वती' ने लघु पत्र होते हुए भी अपनी सही भूमिका निभाई। सूरीनाम के निकेरी शहर से दूसरा पत्र 'भारतोदय' नाम से निकाला गया और भारतोदय प्रेस की स्थापना भी हुई किंतु आर्थिक कठिनाई के कारण प्रेस और पत्रिका दोनों बंद हो गए। निकेरी में प्रवासी भारतीयों की संख्या सर्वाधिक है। सन् 1975 में डॉक्टर ज्ञान हंस अधीन के संपादन में 'धर्म प्रकाश' और पंडित शिवरतन जी के संपादन में 'वैदिक संदेश' का एक साथ प्रकाशन हुआ किंतु ये पत्र भी अधिक दिन तक नहीं चल सके। इनके अथक प्रयासों के बाद भी पत्रिका का प्रकाशन जारी न रह सका।

श्री प्रेमानंद के संपादन में 'प्रेम संदेश' मासिक पत्र का प्रकाशन प्रारंभ हुआ जिसमें साहित्य की प्राय: सभी विधाओं को स्थान मिलता था। इसका प्रकाशन साइक्लोस्टाइल पद्धति से होता था किंतु 2-3 वर्षों तक हिंदी की सेवा कर इसका भी प्रकाशन बंद हो गया। इसी प्रकार श्री महातम सिंह के संपादन में 'शांतिदूत' मासिक पत्र का प्रकाशन हुआ। श्री सिंह ने इसकी रक्षा के लिए भरपूर साहस और

लगन से कार्य किया किंतु यह भी अंततः बंद हो गया। इसका मुद्रण भी साइक्लोस्टाइल विधि से होता था। कुछ दिनों तक यह सर्वाधिक लोकप्रिय रहा। गांधी सांस्कृतिक भवन के शांतिदल द्वारा 'प्रकाश' नाम का साप्ताहिक पत्र निकल रहा था। इसी के साथ एक अन्य पत्र 'विकास' का भी प्रकाशन हो रहा था। सूरीनाम हिंदी परिषद से वर्ष 1998 से 'सूरीनाम दर्पण' नामक द्विमासिक पत्रिका आरंभ की गई किंतु कुछ वर्ष पश्चात यह भी बंद हो गई। वर्ष 2004 से सूरीनाम हिंदी परिषद के अंतर्गत विद्यानिवास सूरीनाम साहित्य संस्थान से 'हिंदीनामा' नामक मासिक अखबार का प्रकाशन आरंभ किया गया किंतु यह भी सतत रूप से प्रकाशित नहीं हो पाता। पंडित हरिदेव सहतू के निर्देशन में गठित सूरीनाम साहित्य मित्र संस्था द्वारा जनवरी, 2003 से चतुर्मासिक पत्रिका 'शब्द शक्ति' का प्रकाशन आरंभ किया गया। वर्ष 2012 में अध्यक्ष, पंडित हरिदेव सहतू के निधन के पश्चात इस पत्रिका का प्रकाशन भी स्थगित है। वर्ष 2013 से सूरीनाम के भारतीय सांस्कृतिक केंद्र की हिंदी शिक्षिका, सुश्री कविता मालवीय के निर्देशन में 'सूरीनाम हलचल' नामक पत्र निकाला जा रहा है।

इस प्रकार हिंदी प्रेस व साधनों के अभाव में अनेक कठिनाइयों का सामना करते हुए भी सन् 1964 से आज तक सूरीनाम में हिंदी पत्रों का दीप जलता रहा है।

फ़िजी

फ़िजी द्वीप में भी हिंदी पत्रकारिता का इतिहास पर्याप्त पुराना है। मणिलाल डॉक्टर ने गिरमिटिया मज़दूर के रूप में फ़िजी पहुँचे भारतीयों को संगठित करने के लिए सन् 1913 में 'द सेटलर' नाम से एक अंग्रेज़ी पत्र का प्रकाशन प्रारंभ किया था। यह पत्र भारतीय समाज में बहुत लोकप्रिय हुआ। इसकी लोकप्रियता से प्रभावित होकर तथा यह सोचकर कि जो भारतीय ग्रामीण क्षेत्र में बसे हुए हैं वे भी इसके समाचारों से लाभान्वित हो सकें, इसका हिंदी संस्करण साइक्लोस्टाइल रूप में निकाला गया। यह हिंदी संस्करण पं. शिवराम शर्मा की देख-रेख में प्रकाशित हुआ। 'द सेटलर' के इसी हिंदी संस्करण को फ़िजी का पहला हिंदी समाचार पत्र होने का गौरव दिया जा सकता है।

दूसरे दशक में फ़िजी में कई हिंदी पत्रों का प्रकाशन हुआ। 'फ़िजी समाचार', 'भारतपुत्र', वृद्धि' तथा 'वृद्धिवाणी' आदि पत्र प्रकाशित हुए किंतु 'फ़िजी समाचार' के अतिरिक्त अन्य हिंदी पत्र अधिक समय तक नहीं चल सके और शीघ्र ही बंद हो गए। 'फीजी समाचार' का प्रकाशन सन् 1923 में प्रारंभ हुआ और यह पत्र सन् 1957 तक निकलता रहा। इस पत्र का प्रकाशन इंडियन प्रिंटिंग तथा पब्लिशिंग कंपनी द्वारा किया जाता था तथा इसके प्रथम संपादक बाबू राम सिंह तथा अंतिम संपादक, नौसोरी के पं. चंद्रदेव सिंह थे।

अगले दशक (1930-1940) में फ़िजी में 2 और हिंदी मासिक पत्र प्रकाशित हुए। पहला पत्र हिंदी मासिक 'वैदिक संदेश' था जिसका प्रकाशन आर्य समाज के कार्यकर्ता पं. श्रीकृष्ण शर्मा करते थे। दूसरा मासिक पत्र 'सनातन धर्म' था जिसका प्रकाशन सन् 1927 में प्रारंभ हुआ था तथा यह फ़िजी की सनातन धर्म महासभा द्वारा नियंत्रित होता था। आपसी ईर्ष्या और द्वेष तथा पारस्परिक विरोध के कारण दोनों ही पत्र शीघ्र ही काल कवलित हो गए।

11 मई, 1935 में फ़िजी में 'शांतिदूत' पत्र का प्रकाशन आरंभ हुआ, इस शंखनाद की ध्वनि आज भी विश्व भर में सुनाई दे रही है। देशी हिंदी पत्रकारिता में जो यश व सम्मान फ़िजी के साप्ताहिक समाचार पत्र 'शांतिदूत' ने अर्जित किया है वह इस बात का ज्वलंत प्रमाण है कि यदि विश्व के भारतीयों को संगठित करने का कोई सशक्त व सार्थक माध्यम है तो वह हिंदी भाषा ही है। 'शांतिदूत' दक्षिण प्रशांत का एकमात्र हिंदी साप्ताहिक समाचार पत्र है जो फ़िजी की राजधानी सूवा में छपता है किंतु फ़िजी के अतिरिक्त वह ऑस्ट्रेलिया, न्यू ज़ीलैंड तथा प्रशांत महासागर के अनेक द्वीपों में बसे हुए भारतीयों द्वारा नियमित रूप से पढ़ा जाता है और प्रति सप्ताह इसकी प्रतीक्षा बड़ी उत्सुकता से की जाती है। यह समाचार साप्ताहिक पिछले 80 वर्षों से निरंतर निकल रहा है तथा राष्ट्रीय व अंतरराष्ट्रीय समाचारों के साथ ही भारत के समाचार भी पाठकों तक पहुँचाता है। कितने ही संकट आए, कितनी ही उथल-पुथल हुई, देश को राजनीतिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक संकट का सामना करना पड़ा किंतु आज भी 'शांतिदूत' अलख ज्योति जगाए अपनी लक्ष्यपूर्ति में लगा हुआ है। निश्चय ही 'शांतिदूत' विदेशी हिंदी पत्रकारिता का कीर्ति स्तंभ है। 'शांतिदूत' के प्रथम संपादक पंगुरदयाल शर्मा ने प्रवेशांक में दिए प्रथम संपादकीय में अपने निम्नलिखित उद्देश्य स्पष्ट किए थे—

(क) फ़िजी के हिंदी-भाषी प्रवासी भारतीयों को दुनिया भर के समाचार हिंदी में देना।

(ख) असत्य और विवादग्रस्त विषयों से दूर रहकर शांति और सद्भाव का प्रचार।

(ग) पार्टीबंदियों से दूर रहकर फ़िजी द्वीप की भलाई।

'शांतिदूत' ने इन सभी उद्देश्यों को पूरा किया है। इसका प्रमाण है 'शांतिदूत' की स्वर्ण जयंती के अवसर पर फ़िजी हिंदी साहित्य समिति के महासचिव, श्री राम नारायण गोविंद के विचार, ''फ़िजी में 'शांतिदूत' साप्ताहिक समाचार पत्र ने हिंदी की जो अमूल्य सेवा की है, सोना-चाँदी के भाव से उसका मूल्यांकन नहीं किया जा सकता। जीवन और जगत के संबंध में इसकी नीति चाहे जो भी रही हो, 'शांतिदूत' के कार्यों से हिंदी भाषा लाभान्वित हुई है।''

भारत के प्रख्यात भाषावैज्ञानिक व फ़िजी, कनाडा, बल्गेरिया आदि देशों में वर्षों हिंदी अध्यापन कर चुके, डॉ. विमलेश कांति वर्मा कहते हैं, ''विदेशी हिंदी पत्रकारिता में जो मानक फ़िजी से प्रकाशित होनेवाले साप्ताहिक हिंदी समाचार पत्र 'शांतिदूत' ने स्थापित किया है वह विदेश का कोई भी पत्र अब तक नहीं कर सका है। निस्संदेह 'शांतिदूत' विदेशी हिंदी पत्रकारिता में एक मील का पत्थर कहा जा सकता है।''

प्रख्यात भारतीय साहित्यकार, प्रोफ़ेसर रामकुमार वर्मा तो 'शांतिदूत' को दक्षिण प्रशांत का कल्प वृक्ष कहते हैं। आज इस वृक्ष की शाखाओं पर हर रंग के फूल हैं। इसमें समाचार, महिलाओं का पन्ना, संस्कृति, स्कूल समाचार, बच्चों का कोना, लेख, साक्षात्कार, स्वास्थ्य, कविताएँ, कहानियाँ, विदेशों में बसे लेखकों के लेख, बॉलीवुड समाचार, धार्मिक व बॉलीवुड पोस्टर आदि सब शामिल रहते हैं। यह एक संपूर्ण पत्रिका है जिसने फ़िजी में हिंदी के प्रसार और उसे प्रतिष्ठित करने में अमूल्य योगदान दिया। समय-समय पर निष्ठावान व समर्पित संपादकों का नेतृत्व व नित नवीन प्रयोग 'शांतिदूत' को निखारते रहे हैं, ऐसा ही उल्लेखनीय प्रयोग था श्री महेंद्र चंद्र शर्मा विनोद द्वारा 'फ़िजी बात' में आरंभ किया गया स्तंभ 'थोरा हमरो भी तो सुनो'। यह बहुत ही लोकप्रिय रहा। व्यंग्य प्रधान शैलीवाले इस स्तंभ में महत्वपूर्ण विषयों पर चर्चा होती थी और लोग व्यग्रता से इसकी प्रतीक्षा करते थे। एक पाठक द्वारा संपादक को लिखे शब्दों में, ''थोरा हमरो भी तो सुना।'' 'शांतिदूत' का एक प्रभावशाली, विचारोत्तेजक और रोचक स्तंभ है। यह स्तंभ निरंतर लिखते रहिए।'' इस प्रकार 'शांतिदूत' फ़िजी में हिंदी व साहित्य के विकास का सशक्त आधार स्तंभ रहा।

'फ़िजी', 'फ़िजी समाचार', 'जागृति' और 'प्रवासिनी' समाचार पत्रों के साथ मिलकर 'शांतिदूत' ने दीर्घकाल तक प्रवासी भारतीयों को फ़िजी, भारत तथा विदेश के समाचारों से अवगत कराया है, समय-समय पर उनका मार्गदर्शन किया है, उनका नित नवीन सामग्री से मनोरंजन किया है और नए कवियों और लेखकों को प्रोत्साहित किया है, वहीं दूसरी ओर फ़िजी के भारतवासियों को संगठित भी किया है, अपने देश, अपनी भाषा तथा अपनी संस्कृति के प्रति उनके मन में सम्मान जगाया है और परोक्ष रूप में हिंदी के प्रचार-प्रसार में बहुत बड़ा योगदान भी दिया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. विदेशों में हिंदी पत्रकारिता, डॉ. पवन कुमार जैन, 1993
2. लैंग्वेज ट्रांस्प्लांटेड द डेवलपमेंट ऑव ओवरसीज़ हिंदी, सं. रिचर्ड के बार्ज व जेफसीगल
3. फ़िजी में हिंदी स्वरूप और विकास 2000, डॉ. विमलेश कांति वर्मा
4. स्मारिका, 7वाँ विश्व हिंदी सम्मेलन, सूरीनाम, 2003
5. विश्व हिंदी पत्रिका, विश्व हिंदी सचिवालय, 2009
6. विश्व हिंदी पत्रिका, विश्व हिंदी सचिवालय, 2010
7. प्रवासी भारतीयों की हिंदी सेवा, श्रीमती कैलाश कुमारी सहाय
8. हिंदी की विश्व यात्रा, प्रो. सुरेश ऋतुपर्ण, 2005
9. 'विश्व की हिंदी पत्र-पत्रिकाएँ' आलेख—डॉ. कामता कमलेश

सूरीनाम
bhawnasaxena@hotmail.com

12

डॉ. उदय नारायण गंगू : हिंदी के उपासक

—श्रीमती शांति मोहाबीर

सन् 1975 में नागपुर में आयोजित प्रथम विश्व हिंदी सम्मेलन के अंतर्गत एक अत्यंत ही महत्वपूर्ण निर्णय लिया गया था। वह निर्णय था विश्व हिंदी सचिवालय की स्थापना का। विश्व हिंदी सचिवालय की स्थापना सन् 2002 में हिंद महासागर के मध्य स्थित एक लघु द्वीप में हुआ जिसे मॉरीशस कहते हैं। विश्व हिंदी सचिवालय एक द्विपक्षीय संस्था है जिसका कार्य 11 फरवरी, 2008 में आरंभ हुआ। अंतरराष्ट्रीय भाषा के रूप में हिंदी का प्रचार-प्रसार करना तथा हिंदी की भव्यता से संपूर्ण विश्व को सुवासित करना इस सचिवालय का उद्देश्य है। सन् 2008 से लेकर अब तक सचिवालय की समस्त गतिविधियाँ एक अस्थायी कार्यालय में संपन्न हो रही हैं। सन् 2018 में इसके नव्य स्थायी मुख्यालय का निर्माण पूरा होने जा रहा है। 'देर है पर अंधेर नहीं'—इस कहावत पर अखंड विश्वास रखनेवालों के विश्वास की विजय होगी। 31 वर्षों का अंतराल बड़ा होता है परंतु शीघ्र ही विश्व भर के हिंदी प्रेमी विश्व हिंदी सचिवालय के मुख्यालय के उद्घाटन के साक्षी होंगे।

शिक्षा : मॉरीशस इंस्टिट्यूट ऑव एजुकेशन और महात्मा गांधी संस्थान से हिंदी अध्ययन में डिप्लोमा, मॉरीशस विश्वविद्यालय से हिंदी विद एजुकेशन में बी.ए., कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, भारत से एम.ए., पीएचडी (हिंदी), ओपन यूनिवर्सिटी ऑव मॉरीशस में शोधरत।

शोध विषय : आर्य समाज द्वारा प्रकाशित हिंदी पत्र-पत्रिकाओं की मॉरीशस के विकास में भूमिका।

प्रकाशन : आर्य सभा मॉरीशस द्वारा प्रकाशित 'आर्योदय' पत्र में लेख प्रकाशित।

संप्रति : हिंदू गर्ल्स कॉलेज में शिक्षिका तथा आर.डी.आई. में अंशकालिक प्राध्यापिका।

विश्व हिंदी सचिवालय की लक्ष्य-पूर्ति निमित्त अनेकानेक हिंदी सेवी सक्रियतापूर्वक कार्यरत हैं। मॉरीशस के हिंदी प्रेमियों की बात होती है तो स्वर्गीय सर शिवसागर रामगुलाम का नाम भी स्वाभाविक रूप से लिया जाता है। हिंदी के प्रति उनकी आस्था अटूट थी। कदाचित इसी अडिग आस्था के कारण उन्हें प्रथम विश्व हिंदी सम्मेलन का अध्यक्ष नियुक्त किया गया था। उन्होंने अपने अध्यक्षीय भाषण में हिंदी के अंतरराष्ट्रीय स्वरूप का उल्लेख करते हुए कहा था कि—

"...हमारे लिए इस बात का अधिक महत्व है कि यह भाषा एक अंतरराष्ट्रीय भाषा है। मेरा विश्वास है कि हिंदी प्यार और एकता की भाषा है।...इसने हमेशा स्वतंत्रता-संदेश दिया है। सांस्कृतिक गुलामी का विरोध किया है। भारत और मॉरीशस को स्वतंत्र कराने में हिंदी का हाथ रहा है।"

(स्व. डॉ. मु. चिंतामणि, 'निबंध प्रदीप', पृ. 41)

आज भी सर शिवसागर रामगुलाम के वचन को सार्थकता प्रदान करने हेतु यहाँ के हिंदी सेवक निरंतर संघर्षरत हैं। आज भी चंद नि:स्वार्थ हिंदी सेनानियों के कारण हिंदी का प्रचार-प्रसार जारी है। ऐसे त्यागी पुरुष हिंदी के ध्वज का मान रखने के लिए अपना सर्वस्व न्यौछावर करने पर तुले हुए हैं। इन हिंदी-साधकों में डॉ. उदय नारायण गंगू का नाम अग्र पंक्ति में अंकित हो चुका है। हिंदी जगत में डॉ. उदय नारायण गंगू एक अदीनात्मन हस्ताक्षर हैं। वर्तमान मॉरीशस में जहाँ भी हिंदी के उन्नयन से संबंधित कोई बात होती है वहाँ पर डॉ. उदय नारायण गंगू अवश्य होते हैं। हिंदी भाषा को विश्व-मंच पर सदर्प आसीन करने हेतु इस वर्ष विश्व हिंदी सचिवालय की शासी परिषद के सदस्य के रूप में मॉरीशसीय पक्ष की ओर से डॉ. उदय नारायण गंगू मनोनीत किए गए हैं। ऐसे सहृदय तथा शालीन हिंदी सेवी से हिंदी संसार को परिचित कराने का मेरा प्रयास सफल हो जाए, ऐसी आशा के साथ प्रस्तुत है उनकी संक्षिप्त जीवनी सहित डॉ. उदय नारायण गंगू का हिंदी के प्रचार-प्रसार में योगदान।

मॉरीशस के दक्षिण प्रांत में तायाक नामक ग्राम स्थित है और यहीं

पर परिश्रमी अभिभावकों के यहाँ 20 जनवरी, 1943 को इनका जन्म हुआ था। मॉरीशस के इतिहास में वर्ष 1943 की अपनी विशिष्टता है। भारतीय आप्रवासियों की संतानें उस समय विपन्नता के गहन अंधकार में अपना अस्तित्व तलाशने का असफल प्रयास कर रही थीं। कदाचित द्वितीय विश्व युद्ध से प्रभावित आपातकालीन परिस्थितियों में हिंदी के इस दिग्दर्शक महायोद्धा का जन्म होना बदा था।

असंख्य कष्ट सहते हुए इन्होंने ज्ञानार्जन किया। डॉ. उदय नारायण गंगू स्वयं ऐसा मानते हैं कि प्रचंड दुख की धधकती अग्नि में तपकर ही व्यक्ति का व्यक्तित्व संकीर्णता की कैद से आज़ाद होता है। इनकी स्वाध्यायी प्रवृत्ति ने इन्हें समस्त बाधाओं तथा चुनौतियों को गले लगाना सिखाया और प्राथमिक शिक्षा के साथ ही इन्होंने माध्यमिक शिक्षा भी पूरी की। प्रोफ़ेसर रामप्रकाश से प्रेरित होकर डॉ. उदय नारायण गंगू भारत के विक्रम विश्वविद्यालय में हिंदी में बी.ए. करने गए और इसके पश्चात उस्मानिया विश्वविद्यालय से इन्होंने एम.ए. किया। बाद में 'भोजपुरी लोक साहित्य' विषय पर शोध किया और विश्व जीवाजी विद्यालय से पीएचडी की उपाधि प्राप्त की। बड़ी-बड़ी उपाधियाँ प्राप्त करने पर भी ये एक सच्चे विनीत विद्यार्थी बने रहे। सदा विद्या की देवी के समक्ष हाथ जोड़कर, नत्मस्तक होते रहे और हिंदी भाषा की जननी संस्कृत और आर्य ग्रंथों का ज्ञान वरण करने का इन्हें सुयोग प्राप्त हुआ।

डॉ. उदय नारायण गंगू 2007 से ऋषि दयानंद संस्थान के डीन पद पर कार्यरत हैं। इस संस्थान के माध्यम से इन्होंने छात्र-छात्राओं को हिंदी, संस्कृत, भारतीय दर्शन तथा अंग्रेज़ी में स्नातक-स्नातिकाएँ बनने का सुअवसर प्रदान किया। पीएचडी के शोध छात्रों को भी इनके दिशा निर्देश में अपना शोध प्रबंध संपन्न करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। डॉ. उदय नारायण गंगू एक विलक्षण शिक्षक हैं।

आदर्श शिक्षक

हृदय से डॉ. गंगू मूलत: एक शिक्षक हैं। 'पढ़ो और पढ़ाओ' इनका आदर्श वाक्य है वे अपने ज्ञान को शिष्यों के हृदय में स्थापित करना अपना परम धर्म समझते हैं। वे एक ऐसे शिक्षक हैं जो अपने शिष्यों के सर्वांगीण विकास के साथ-साथ उनका कल्याण चाहते हैं। अपने शिष्यों को ये मानव-धर्म की शिक्षा अवश्यमेव प्रदान करते हैं। आज भी इनके सीने में एक अत्यंत कोमल शिक्षक-हृदय धड़कता है। इनके शिष्य उच्च पदों के स्वामी हैं ही, अच्छे मानव भी हैं। वे हिंदी प्रेम के बीज को अपने शिष्यों के जीवन में बोकर ही रहते हैं। इनके शब्द-बाण अचूक होते हैं। बैठकाओं में छोटे-छोटे बालकों को वर्णमाला, गिनती तथा व्याकरण का सामान्य ज्ञान देकर इनके शिक्षक-जीवन की यात्रा शुरू हुई। फिर डॉ. गंगू प्राथमिक स्कूल के शिक्षक बने। फिर डिप्लोमा, बी.ए. तथा एम.ए. के छात्रों को पढ़ाने के लिए महात्मा गांधी संस्थान में नियुक्त हुए। समय के साथ ये प्राथमिक और माध्यमिक विद्यालयों में अध्यापन कार्य कर रहे अध्यापकों-अध्यापिकाओं को प्रशिक्षित करने लगे।

डॉ. उदय नारायण गंगू 2007 से ऋषि दयानंद संस्थान के डीन पद पर कार्यरत हैं। इस संस्थान के माध्यम से इन्होंने छात्र-छात्राओं को हिंदी, संस्कृत, भारतीय दर्शन तथा अंग्रेज़ी में स्नातक-स्नातिकाएँ बनने का सुअवसर प्रदान किया। पीएचडी के शोध छात्रों को भी इनके दिशा निर्देश में अपना शोध प्रबंध संपन्न करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। डॉ. उदय नारायण गंगू एक विलक्षण शिक्षक हैं। अपने जीवन के 55 वर्ष इन्होंने शिक्षण-कार्य करते हुए समर्पित कर दिए। इनके छात्र उम्र में इनसे छोटे भी हैं और कुछ बड़े भी। सभी इन्हें 'गुरु जी' ही कहकर संबोधित करते हैं। आश्चर्य तो इसलिए होता है कि जो लोग कभी इनके शिष्य रहे ही नहीं, वे भी इन्हें बड़ी श्रद्धा से 'गुरु जी' बुलाते हैं।

शिक्षा के क्षेत्र में डॉ. उदय नारायण गंगू नींव का पत्थर बनकर बिना किसी प्रत्याशा के, नि:स्वार्थ व समर्पित भाव से हिंदी-ज्ञान का प्रसार करते आ रहे हैं।

दक्ष साहित्यकार

डॉ. उदय नारायण गंगू को साहित्य-सृजन का वर भी प्राप्त है। श्री प्रह्लाद रामशरण इन्हें एक सिद्धस्त लेखक के रूप में स्वीकारते हैं जो हिंदी और अंग्रेज़ी, दोनों भाषाओं पर अधिकार रखते हैं। इनका साहित्यिक जीवन 1963 से आरंभ होता है। 1965 से 'आर्योदय' में इनके लेख, विवरण, निबंध, पल्लवन, संस्मरण, साक्षात्कार, लघुकथाएँ तथा संपादकीय प्रकाशित होते आ रहे हैं। 'मॉरीशस में हिंदी' इनका प्रथम निबंध माना जाता है जिसके लिए इन्हें हिंदी लेखक संघ ने स्वर्ण पदक से सम्मानित किया था।

'अनुराग', 'पंकज', 'वसंत' तथा 'इंद्रधनुष' जैसी स्थानीय साहित्यिक पत्रिकाओं में इनकी रचनाएँ समय-समय पर प्रकाशित होती हैं। दिल्ली की 'इंद्रप्रस्थ', 'प्रवासी भारतीय हिंदी लेखन' विशेषांक तथा 'हिंदी भाषा-स्वरूप', 'शिक्षण' एवं 'वैश्विकता' में इनके निबंध द्रष्टव्य हैं। उदयपुर की 'सत्यार्थ सौरभ' नामक पत्रिका में भी इनके लेख छपा करते हैं। 'विश्व हिंदी पत्रिका' में भी इनके लेख छप चुके हैं।

अपने समाज, साहित्य तथा अपनी हिंदी भाषा के उन्नयन को ध्यान में रखकर डॉ. गंगू अपनी लेखनी का प्रयोग करते हैं। ये एक योग्य निबंधकार हैं। इनके निबंध-संग्रह 'वेद पीयूष' में उच्चकोटि के निबंध संकलित हैं। पत्र-पत्रिकाओं में ये अपने वर्णनात्मक, विचारात्मक, विवरणात्मक, मनोविश्लेषणात्मक, ऐतिहासिक निबंधों को बड़ी ही विश्वसनीयता तथा स्पष्टता से पाठकों तक संप्रेषित करते हैं। कहीं-कहीं तो वे निबंधकार कम दार्शनिक अधिक लगने लगते हैं।

डॉ. उदय नारायण गंगू एक दक्ष जीवनीकार हैं। 'यज्ञमूर्ति पंडित रामलगन', 'मॉरीशस के निर्माता : सर शिवसागर रामगुलाम', 'स्वतंत्रता सेनानी : सुखदेव विष्णुदयाल', 'एक प्रेरक व्यक्तित्व : श्रीमती धनवन्ती रामचरण' और 'हमारे महापुरुष' इनका जीवनी साहित्य है। पंडित वासुदेव विष्णुदयाल की जीवनी इनकी अप्रकाशित कृति है जो शीघ्र ही पाठकों के समक्ष होगी। इनके जीवनी साहित्य का अवलोकन करते हुए आलोचक डॉ. मुनीश्वरलाल चिंतामणि ने लिखा है—

''मॉरीशस में जीवनी साहित्य का अभाव रहा है। कुछ लेखकों ने इस देश के राजनीतिक तथा सांस्कृतिक नेताओं के प्रेरणादायक जीवन पर लेखनी चलाई है जिनमें डॉ. उदय नारायण गंगू, अभिमन्यु अनत, हीरालाल गुप्त, टेकलाल गणेश, ब्रजनाथ माधव के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं।''

'स्वतंत्रता सेनानी : सुखदेव विष्णुदयाल' पुस्तक पर टिप्पणी करते हुए डॉ. चिंतामणि आगे लिखते हैं, ''वास्तव में, डॉ. उदय नारायण गंगू ने व्यवस्थित रूप से और जीवनी के निर्धारित मानदंडों के आधार पर यह पुस्तक लिखकर जीवनी लेखन के इतिहास में अपना अन्यतम स्थान बना लिया है।''

'मेरी रचनावली' पुस्तक अभी प्रेस में है जो डॉ. गंगू के पत्र, पल्लवन तथा संस्मरण-संग्रह है। 'प्रभु मिलन के गीत' इनकी आलोचनात्मक रचना है। 'एक और शताब्दी समारोह' एक ऐतिहासिक शोधपरक ग्रंथ है। अंग्रेज़ी में इनकी 5 पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं।

विचारों की गहनता के साथ-साथ मौलिकता, शैली की रोचकता और यदा-कदा व्यंग्य-विनोदप्रियता इनकी कृतियों में द्रष्टव्य है परंतु इनकी ऋजु शैली ही इनका नैसर्गिक गुण है जो इन्हें एक समर्थ निपुण शिल्पी के दर्जे पर प्रतिष्ठित कर देती है। प्रोफ़ेसर रामप्रकाश डॉ. उदय नारायण गंगू को 'विद्वता, ज्ञान के भंडार, अध्ययन-अध्यापन, अनुसंधान, मौलिक चिंतन में अद्वितीय -अनमोल रत्न' मानते हैं।

सुयोग्य संपादक एवं पत्रकार

एक प्रखर तथा यशस्वी साहित्यकार होने के साथ-साथ डॉ. उदय नारायण गंगू हिंदी जगत के वरिष्ठ संपादन तथा पत्रकार रूप में गण्यमान्य हैं। संपादन क्षेत्र में इनका योगदान अद्वितीय है। सन् 2002 से लगातार ये आर्य सभा मॉरीशस के मुखपत्र 'आर्योदय' के प्रधान संपादक रहे हैं। केवल कलम के स्वामी दीर्घकाल तक प्रधान संपादक पद पर कार्यरत रहकर पत्र-पत्रिकाओं के प्रकाशन में अपना अप्रतिम योग दे पाते हैं। 'आर्योदय' के विशेषांक विशेष पर्वों व अवसरों पर पत्रिका-आकार में प्रकाशित होते रहते हैं। 'आर्योदय' हिंदी, अंग्रेज़ी और फ्रेंच भाषाओं में नियमित रूप से प्रकाशित होनेवाला साप्ताहिक पत्र है। डॉ. उदय नारायण गंगू के संपादकीय एवं लेख जन-कल्याणार्थ होते हैं। ये एक लक्ष्यनिष्ठ तथा शालीन पत्रकार भी हैं। इन्होंने 'ब्रह्मपथ', 'उपासना और विज्ञान' तथा 'स्वामी शिवसंकर' जैसी पुस्तकों का संपादन किया है। उन्होंने अन्य लेखकों की पुस्तकों की भूमिका लिखी है। अक्टूबर 2016 से प्रकाशित हो रही 'द यूथ मैगज़ीन' के संपादन से भी ये जुड़ गए हैं। अत: यह कहना सर्वथा न्यायसंगत है कि डॉ. उदय नारायण गंगू सजग, दूरदर्शी, सार्थक तथा प्रभावी संपादकत्व-शक्ति से सुसज्जित हैं।

शोध प्रतिभा के धनी

डॉ. उदय नारायण गंगू साधक हैं। साधक अनुसंधित्सु होता है।

शोध के माध्यम से मनुष्य ज्ञानोपलब्धि करने में सक्षम रहता है। डॉ. गंगू जी ज्ञान के सच्चे उपासक हैं। 1981 से लेकर अब तक अनेक राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय हिंदी सम्मेलनों, आर्य समाज तथा 'रामायण' संबंधी सम्मेलनों में ये शोध-पत्र प्रस्तुत कर चुके हैं।

1992 में ग्वालियर में 'रामायण सम्मेलन' मॉरीशस में रामायण का प्रभाव', 1999 में लंदन के हिंदी सम्मेलन में 'मॉरीशस में हिंदी', 2000 में डरबन अंतरराष्ट्रीय 'आर्य समाज' सम्मेलन में 'स्पिरिचुआलिज़्म', 2000 ही में मुंबई में आयोजित अंतरराष्ट्रीय आर्य समाज सम्मेलन में 'मॉरीशस में सत्यार्थ प्रकाश', 2002 में हरिद्वार के गुरुकुल कांगड़ी के शती समारोह में 'मॉरीशस में आर्य समाज', 2003 में नैरोबी के अंतरराष्ट्रीय आर्य समाज सम्मेलन में 'आर्य समाज इन मॉरीशस', 2014 में अंतरराष्ट्रीय (क्षेत्रीय) हिंदी सम्मेलन में मॉरीशस की स्वैच्छिक संस्थाओं द्वारा हिंदी का शिक्षण और मलेशिया में 'रामायण तथा महाभारत' विषयों पर डॉ. गंगू ने आलेख प्रस्तुत किए हैं।

राष्ट्रीय स्तर पर भी 2001, 2003, 2008 और 2013 में इन्हें आर्य समाज द्वारा आयोजित सम्मेलनों में आलेख प्रस्तुत करने का अवसर प्राप्त हुआ है। उन्होंने रामायण सेंटर में 2 बार अंतरराष्ट्रीय सम्मेलनों में आलेख प्रस्तुत किए। इन्हें 'रामायण में पर्यावरण' और 'रामायण में मानव मूल्य' विषयों पर शोध-पत्र पढ़ने का योग मिला। राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय सम्मेलनों में सक्रिय योगदान देकर तथा शोध पत्र प्रस्तुत कर डॉ. उदय नारायण गंगू ने प्रमाणित कर दिया है कि वे शोध-प्रतिभा से सुशोभित व्यक्ति हैं।

आस्थावान समाज सेवक

डॉ. उदय नारायण गंगू हरेक मानव के तथा समाज के शुभचिंतक हैं। ये मानव-धर्म, हिंदी भाषा तथा भारतीय संस्कृति के बेजोड़ समर्थक हैं। 'मनुर्भव' का पाठ पढ़ाकर ये समस्त मानव-जाति के मंगल की कामना करते हैं। समाज-सुधार हेतु ये अथक परिश्रम करते हैं। वे स्वयं का जीवन अनुकरणीय बनाने का भरसक प्रयास करते हैं। सामाजिक कार्यों में लीन रहते हैं। आर्य समाज से जुड़कर आर्य धर्म का नि:स्वार्थ प्रचार-प्रसार करने में रत रहते हैं। लोक-कल्याण हेतु पत्र-पत्रिकाओं, रेडियो तथा टी.वी. को माध्यम बनाकर अपने अमूल्य विचार बाँटते रहते हैं। एक वरिष्ठतम उपदेशक के समस्त कौशल और एक महान समाज-सुधारक का विवेक इनके व्यक्तित्व की शोभा है।

डॉ. उदय नारायण गंगू की प्रतिभा सर्वतोमुखी है। इन्होंने अपनी प्रतिभा का बहुत संतुलित, सापेक्ष और बहुमुखी वितरण किया। इनके त्याग, तपस्या तथा सेवाओं के लिए इन्हें कई अवसरों पर सम्मानित किया गया है।

4 नवंबर, 2015 में आधारशिला फाउंडेशन द्वारा ऋषि दयानंद संस्थान, पाई में अंतरराष्ट्रीय हिंदी सम्मेलन के उपलक्ष्य में डॉ. गंगू को 'महर्षि दयानंद सरस्वती सम्मान' से अलंकृत किया गया। 12 मार्च, 1976 को जयपुर, भारत के भारतीय संस्कृति साहित्य कला संस्थान द्वारा तत्कालीन परिवहन मंत्री माननीय श्री रामकिशन वर्मा की अध्यक्षता में डॉ. गंगू ताम्रपत्र प्राप्तकर सम्मानित हुए। सन् 2003 में सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा भारत द्वारा इन्हें 'आर्य रत्न' की उपाधि से और 'वागेश्वरी सम्मान' से विभूषित किया गया। 12 अक्टूबर, 2015 को महात्मा गांधी संस्थान के सुब्रह्मण्य भारती सभागार में शिक्षा मंत्री माननीया श्रीमती लीला देवी दुकन- लछुमन और एम.जी.आई. तथा आर.टी.आई. की महानिदेशिका, श्रीमती सूर्या गयान द्वारा डॉ. उदय नारायण गंगू को उनकी हिंदी सेवाओं के लिए सम्मानित किया गया।

इनकी अभिलाषा है कि समाज सेवा, अध्ययन-अध्यापन तथा स्वाध्याय से वे कभी मुक्त न हों, भविष्य में अधिक से अधिक साहित्य-सृजन में प्रवृत्त हों, 'सत्यम् शिवम् सुंदरम्' की भावना से हिंदी जगत को आलोकित करें तथा यात्रा-वृत्तांत में अपनी लेखनी परखें।

हिंदी भाषा के प्रति अगाध निष्ठा तथा अविचल आस्था रखनेवाले डॉ. उदय नारायण गंगू को कोटिश: प्रणाम।

संदर्भ ग्रंथ–

1. गुरु दक्षिणा, आर्ष गुरुकुल ब्रह्माश्रम व महात्मा गांधी संस्थान के छात्रगण
2. मॉरीशसीय हिंदी साहित्य, डॉ. मुनीश्वरलाल चिंतामणि
3. मॉरीशसीय आर्य समाज की विभूतियाँ, प्रह्लाद रामशरण
4. मॉरीशस में आर्य समाज की बहती अविरल धारा, डॉ. उषा शर्मा
5. निबंध प्रदीप, डॉ. मुनीश्वरलाल चिंतामणि

सैं पॉल, मॉरीशस
mohabeersantee164@gmail.com

13

हिंदी प्रचारिणी सभा की ऐतिहासिकता

—श्री राजेश कुमार उदय

मॉरीशस टापू में हिंदी भाषा के प्रचार-प्रसार में विभिन्न संस्थाओं का योगदान उल्लेखनीय है। इनमें से हिंदी प्रचारिणी सभा का योगदान अभूतपूर्व है। वास्तव में हिंदी प्रचारिणी सभा एक साम्प्रदायिक या धार्मिक अभिविन्यस्त संस्था नहीं है अपितु यह एक विशुद्ध सांस्कृतिक संस्था है और अन्य संस्थाओं के सहयोग से शुद्ध हिंदी के प्रचार-प्रसार में सक्रियतापूर्वक कार्यरत है। 81 वर्षों से इस शैक्षिक संस्था ने हिंदी के प्रति बहुत उत्साह का संचार किया है और आज भी यह उमंग बरकरार है। हिंदी भाषा के लिए यह एक चोटी की संस्था बन गई है। आधुनिक संदर्भ में लगभग 175 बैठकाएँ इस संस्था के साथ संबद्ध हैं। अब यह प्रश्न उठता है कि बैठका का अर्थ क्या है?

बैठका एक ऐसी संस्था या पवित्र जगह है जो भारतीय आप्रवासियों की देन है। इसमें हिंदू भाई-बहन मिल-जुलकर नाना प्रकार की गतिविधियों में भाग लेते थे। बैठका मॉरीशस के हरेक गाँव व शहर में पाया जाता है। अंतर केवल इतना है कि बैठका का रूप गाँव व शहर में कमोबेश अलग है परंतु, उद्देश्य एक ही था और आज भी वही है—'राम गति देहु सुमति' यही हमारे पूर्वजों का नारा भी था। बैठका में ही हिंदी की पढ़ाई का श्री गणेश हुआ। शिक्षा के प्रचार व प्रसार में बैठका का अभूतपूर्व योगदान था। समकालीन संदर्भ में सभी बैठका हिंदी प्रचारिणी सभा से संलग्न हैं।

हिंदी प्रचारिणी सभा ने नियमित हिंदी अध्ययन को प्रोत्साहित करने में अपना भरपूर योगदान दिया है। यह कार्य कुछ उदार व नि:स्वार्थ व्यक्तियों के प्रयास से संभव हुआ है; विशेषत: स्व. श्री गिरधारी भगत जी का नाम सम्मान के साथ लिया जाता है। इस दृष्टि से हिंदी प्रचारिणी सभा की ऐतिहासिकता पर एक झाँकी प्रस्तुत करना तर्कसंगत है।

जन्म : 29 मार्च, 1983, ग्राँ-बुआ गाँव, मॉरीशस में

शिक्षा : ऑल इंडिया इंस्टिट्यूट ऑव मैनेजमेंट स्टडीज़ से डिप्लोमा। दिल्ली विश्वविद्यालय से स्नातक। मॉरीशस विश्वविद्यालय से उत्तर स्नातक। मॉरीशस इंस्टिट्यूट ऑव एजुकेशन से पी.जी.सी.ई.। ओपन यूनिवर्सिटी ऑव मॉरीशस से पीएचडी, शोधरत।

संप्रति : हिंदू गर्ल्स कॉलेज में हिंदी शिक्षक और एम.बी.सी. रेडियो में प्रस्तुतकर्ता।

वास्तव में सभा की स्थापना करने का विचार श्री रामलाल मंगर भगत और श्रद्धेय लेखमन मंगर भगत, अर्थात भगत बंधुओं के दिमाग में एक अंकुरित बीज की तरह था।

इस विचार का जन्मस्रोत भारतीय पुरोहितों के संपर्क, भारतीय पत्र ('मतवाला', 'माधुरी' तथा 'मनोरमा') आदि का प्रभाव था। उन लोगों ने एक ऐसी सभा की स्थापना करने का निश्चय किया जो मात्र हिंदी के प्रचारार्थ होगी।

अब हिंदी प्रचारिणी सभा की स्थापना पर बात करने से पूर्व यह जानना आवश्यक है कि उस समय हिंदी भाषा की युगीन स्थिति कैसी थी?

यह एक अकाट्य सत्य है कि उस समय मॉरीशस के दक्षिण प्रांत, न्यू ग्रोव-रोज़ बेल में हिंदी पढ़ाई का सबसे बड़ा केंद्र था। उस समय दुखी गंगा नाम के एक बहुत बड़े ज़मीनदार थे जिन्होंने नि:स्वार्थ ढंग से हिंदी के प्रचार-प्रसार में आर्थिक योगदान दिया। वे उस ज़माने में हज़ारों रुपए बैठकाओं में खर्च करते थे। श्री मनोहर पंडित तथा श्री बलदेव तिवारी के अतिरिक्त न्यू ग्रोव-रोज़ बेल में और बहुत से हिंदी अध्यापक थे।

हिंदू धर्म की रक्षा, हिंदी भाषा के प्रचारार्थ तथा हिंदू संस्कृति को जीवित रखने में इन आदर्श पुरुषों का परिश्रम सराहनीय रहा।

मॉरीशस में जागृति की लहर तब दौड़ने लगी जब आर्य समाज की स्थापना सन् 1903 में, क्यूर्पिप में हुई थी। इस संस्था ने हिंदी भाषा की पढ़ाई को एक व्यवस्थित रूप दिया। टापू भर में मणिलाल डॉक्टर, डॉक्टर भारद्वाज चिरंजीव, स्वामी स्वतंत्रानंद एवं पंडित वेदांत

शास्त्र के भाषणों से मॉरीशसीय हिंदुओं में जागरूकता का बीजारोपण हुआ। इसी जागृति से प्रभावित होकर भारतीय आप्रवासियों में राजनीतिक आंदोलन की इच्छा भी पैदा हुई।

जयनारायण रॉय द्वारा लिखित लेख से यह पता चला कि श्री रामलाल मंगर भगत ने अपने बंधुओं तथा कुछ मज़दूरों की सहायता से चंदा एकत्रित करना शुरू किया था। हिंदू महासभा को स्थापित करने के उद्देश्य से इन लोगों ने पोर्ट लुई शहर में जाकर धनराशि निरंतर रूप से एकत्रित की।

इसके चलते क्रेव केअर गाँव में श्री रामलाल भगत ने एक हिंदी कन्या पाठशाला खोलने का निश्चय किया था। उस समय पत्र व तार के अतिरिक्त किसी से संपर्क करने का अन्य साधन नहीं था। अत: उन्होंने पत्र-व्यवहार के माध्यम से त्रिओले के एक शिक्षक श्री नेमनारायण गुप्त के साथ संपर्क स्थापित किया और उनको सरस्वती कन्या पाठशाला के हिंदी अध्यापक के रूप में नियुक्त किया।

मॉरीशस में जागृति की लहर तब दौड़ने लगी जब आर्य समाज की स्थापना सन 1903 में, क्यूर्पिप में हुई थी। इस संस्था ने हिंदी भाषा की पढ़ाई को एक व्यवस्थित रूप दिया। टापू भर में मणिलाल डॉक्टर, डॉक्टर भारद्वाज चिरंजीव, स्वामी स्वतंत्रानंद एवं पंडित वेदांत शास्त्र के भाषणों से मॉरीशसीय हिंदुओं में जागरूकता का बीजारोपण हुआ। इसी जागृति से प्रभावित होकर भारतीय आप्रवासियों में राजनीतिक आंदोलन की इच्छा भी पैदा हुई।

क्रेव केअर गाँव में नानन ठाकुर नाम का एक व्यक्ति रहता था। उसके मकान को 3 रुपए मासिक किराए पर लेकर सरस्वती कन्या पाठशाला खोली गई। उस समय काफ़ी छात्राएँ इसलिए मिलीं क्योंकि इस पाठशाला के खोलने का अभिप्राय था लड़कियों को शिक्षा प्राप्त करने का स्वर्णिम अवसर देना। कारण यह है कि उस ज़माने में कन्याओं की अपेक्षा लड़कों को ज़्यादा महत्व दिया जाता था। अर्थात केवल पुरुष वर्ग ही पाठशाला जाता था जबकि लड़कियाँ घर की सफ़ाई और शिशु की देखभाल किया करती थीं। परंतु क्रेव केअर गाँव की यह सरस्वती कन्या पाठशाला मानो लड़कियों के लिए एक वरदान थी। इसीलिए भारी मात्रा में लड़कियाँ हिंदी की पढ़ाई करने जाती थीं। यह बात ध्यातव्य है कि सरस्वती कन्या पाठशाला सप्ताह भर एक संपूर्ण पाठशाला की तरह चलती थी।

श्री रामलाल भगत हर सप्ताह 5 सेंट देकर इस सभा के सदस्य बन गए। सन् 1935 में 'तिलक विद्यालय' नाम को बदलकर 'हिंदी प्रचारिणी सभा' के नाम से उसका औपचारिक पंजीकरण हुआ। इसके संस्थापक, श्री सुरुज प्रसाद मंगर भगत के गुरु का नाम अवंती था। श्री अवंती भारतीय थे जिनका पूरा नाम रामबंस तिवारी था। उन्होंने इस संस्था को 'हिंदी प्रचारिणी सभा' नाम दिया था। उस समय 'प्रचारिणी' शब्द का अर्थ इतना संकुचित व जटिल था कि वकील, मास्टर तथा रजिस्ट्रार इस शब्द को शिक्षा या एजुकेशन से जोड़ते थे। वास्तव में 'प्रचारिणी' शब्द 'प्रचारण' शब्द से नि:सृत है जिसका अर्थ है : लोगों में प्रचार या प्रचलन के रूप में रहने की अवस्था या भाव।

अर्थात एक ऐसी सभा जहाँ किसी विशेष बात, भावना या चीज़ को बढ़ावा दिया जाए। सही अर्थ में हिंदी प्रचारिणी सभा की स्थापना 12 जून, 1926 को लोंग मोउंटेन में हुई थी। संस्थापकों के नाम इस प्रकार उल्लेखनीय हैं—

- श्री रामगुण जीवासिया
- श्री गंगा प्रसाद माथुर
- श्री ऋतुवरण भीनिकसिंह
- श्री उदित अजोधासिंह
- श्री गणेश रामफल
- श्री रामदिन मनराखन
- श्री मोहन लालमनरामलाल मंगर भगत

1935 में हिंदी प्रचारिणी सभा (संपूर्ण द्वीप की अधिकांश बैठकाओं की भांति) एक मात्र छोटी सी साधारण बैठका थी, संपूर्ण द्वीप की अधिकांश बैठकाओं की भांति। यह बात उल्लेखनीय है कि उस समय आर्य समाज की बैठकाएँ भी समस्त टापू में विद्यमान थीं। अत: आर्य समाज के नेतृत्व में इन बैठकाओं का संचालन होता था। उस समय टापू भर में कन्या पाठशालाएँ चलती थीं। हिंदी प्रचारिणी सभा के इस छोटे से बैठका में शाम को हिंदी की पढ़ाई होती थी। वहाँ के हिंदी अध्यापक हिंदी सेवा करने के लिए इतने आतुर थे कि वे हिंदी भाषा को अवैतनिक रूप से सिखाते थे। उनका सेवा भाव सदा के लिए हिंदी प्रचारिणी सभा के इतिहास में अंकित रहेगा।

13 अगस्त, 1932 को संचित पैसों से एक बीघा ज़मीन खरीद ली गई। उस ज़मीन पर फूस का एक बैठका बनाया गया जिसमें संध्या समय श्री रामगुण जीवासिया द्वारा हिंदी की प्राथमिक पढ़ाई होती थी, उसी भूमि पर आज हिंदी भवन है।

1933 में श्री गिरधारी ने 3050 रुपए और श्री लक्ष्मण देबीदीन

ने क्रेव केअर में अपनी ज़मीन का एक टुकड़ा देकर सभा को प्रोत्साहित किया। उस पर एक पाठशाला बनाई गई। 2 फरवरी, 1934 को पंडित बलराम चटर्जी द्वारा उसका उद्घाटन 'सरस्वती कन्या पाठशाला' नाम से किया गया। उस पाठशाला के अध्यापक श्री नेमनारायण गुप्त नियुक्त किए गए थे। वह दैनिक पाठशाला थी जो 13 साल तक चालित होने के बाद अंततः बंद हो गई। उसके स्थान पर आज एक नया भवन निर्मित है।

शनिवार 24 दिसंबर, 1935 को तिलक विद्यालय सभा का पंजीकरण 'हिंदी प्रचारिणी सभा' के नाम से हुआ।

फूस की बैठका के स्थान पर 1935 में लकड़ी का एक मकान खड़ा किया गया। 1940 में सभा की ओर से त्रिओले में एक दैनिक हिंदी पाठशाला खोली गई, अन्य गाँवों में भी सभा ने बैठकाएँ खोलने का प्रोत्साहन दिया।

रविवार 7 दिसंबर, 1941 को सभा ने मॉरीशस में प्रथम बार हिंदी साहित्य सम्मेलन का आयोजन किया। यह सम्मेलन प्रो. वासुदेव विष्णुदयाल के सौजन्य से संभव हो पाया। सम्मेलन के साथ-साथ एक पुस्तक प्रदर्शनी भी लगाई गई जिसके अध्यक्ष श्री नेमनारायण गुप्त थे। इसी बीच कवि सम्मेलन और संगीत सम्मेलन भी हुए थे। साहित्य सम्मेलन के सभापति पंडित लक्ष्मीनारायण चतुर्वेदी 'रसपुँज' और संगीत सम्मेलन के सभापति श्री पराच्याँ थे।

रविवार 7 दिसंबर, 1941 को सभा ने मॉरीशस में प्रथम बार हिंदी साहित्य सम्मेलन का आयोजन किया। यह सम्मेलन प्रो. वासुदेव विष्णुदयाल के सौजन्य से संभव हो पाया। सम्मेलन के साथ-साथ एक पुस्तक प्रदर्शनी भी लगाई गई जिसके अध्यक्ष श्री नेमनारायण गुप्त थे। इसी बीच कवि सम्मेलन और संगीत सम्मेलन भी हुए थे। साहित्य सम्मेलन के सभापति पंडित लक्ष्मीनारायण चतुर्वेदी 'रसपुँज' और संगीत सम्मेलन के सभापति श्री पराच्याँ थे।

भवन निर्माण के लिए जनता से सभा को दस हज़ार रुपए दान प्राप्त हुए। हिंदी भवन 1946 में बनकर तैयार हुआ। उसी वर्ष के 6 दिसंबर को सभा के वार्षिकोत्सव के शुभावसर पर रामकृष्ण मिशन के स्वामी घनानंद द्वारा उसका उद्घाटन समारोह हुआ।

हिंदी प्रचारिणी सभा का संचालन एक कार्यकारिणी समिति द्वारा होता था जिसकी बैठक मासिक और नियमित रूप से होती थी।

परीक्षाएँ

प्राथमिक स्तर पर

प्राथमिक स्तर पर बैठकाओं में परीक्षण व निरीक्षण एक परीक्षक समिति द्वारा होता है। यह समिति 1940 को गठित की गई थी। इससे पूर्व केवल श्री नेमनारायण गुप्त परीक्षक थे। 1960 के अध्यक्ष लक्ष्मी प्रसाद रामयाद थे जबकि मंत्री धर्मवीर घूरा थे। प्राथमिक स्तर पर परीक्षाएँ तो होती थीं परंतु बाद में माध्यमिक परीक्षाओं के बारे में भी सभा के सदस्यों ने सोच-विचार करना आरंभ किया।

माध्यमिक स्तर पर

हिंदी की उच्च शिक्षा के प्रति अभिरुचि जागृत करने के उद्देश्य तथा हिंदी भाषा के प्रचार-प्रसार में हिंदी प्रचारिणी सभा ने माध्यमिक स्तर की परीक्षाओं का आयोजन शुरू किया। उनका यह सोचना था कि यदि हिंदी की पढ़ाई उच्च स्तर पर होगी तो वे ही छात्रगण भविष्य के कर्णधार होंगे और लेखक, शिक्षक तथा विद्वान के रूप में हिंदी भाषा का पताका लहरा पाएँगे। अतः परिचय से लेकर उत्तमा तृतीय खंड तक की पढ़ाई एवं परीक्षाएँ होती आ रही हैं।

हिंदी साहित्य सम्मेलन

यह स्मरणीय बात है कि दिसंबर 1952 में हिंदी प्रचारिणी सभा के मंत्री और कोषाध्यक्ष हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग गए और वहाँ के अधिकारियों से मिलकर उन्होंने अपनी स्थिति के बारे में अपना विवरण दिया। श्रद्धेय राजर्षि पुरुषोत्तम दास टंडन की छत्रछाया में एक आवेदन पत्र पर हस्ताक्षर करने के पश्चात अब तक जितनी सारी परीक्षाओं का आयोजन हिंदी प्रचारिणी सभा करती है, वह अब हिंदी साहित्य सम्मेलन के नेतृत्व में संभव होता है।

हिंदी भवन में शिक्षण कार्य

69 वर्षों से हिंदी प्रचारिणी सभा में हिंदी की पढ़ाई निःशुल्क तथा सुचारु रूप से हो रही है। समय-समय पर माध्यमिक शिक्षा देनेवालों के नाम कुछ इस प्रकार से थे—

- श्री सूर्यप्रसाद मंगर भगत
- श्री अनिरुद्ध द्वारका

- श्री पंडित दौलत शर्मा
- श्री मुनींद्रनाथ वर्मा
- श्री नेमनारायण गुप्त
- श्री चंदन अघुबर
- श्री नवरतन पोखराज
- श्री रविशंकर कौलेशर

श्री नेमनारायण गुप्त जी यद्यपि शिक्षा, मनोविज्ञान और शिक्षण दर्शन के कम ज्ञाता थे परंतु हिंदी के अच्छे विद्वान थे। हिंदी व्याकरण पर उनका जो अधिकार था, वह अपने आप में प्रशंसनीय था। उस युग में बैठकाओं में केवल 12 खड़ी पढ़ाई, अक्षर व शब्द ज्ञान की पढ़ाई होती थी। यदि एक बैठका में हिंदी व्याकरण पढ़ाया जाए तो इसका आशय यह है कि उस बैठका में हिंदी की पढ़ाई उच्च स्तर की हो रही थी। जबकि आजकल हम प्राथमिक स्तर पर छोटे बच्चों से हिंदी व्याकरण से ही हिंदी की पढ़ाई का श्री गणेश करते हैं। अत: यह स्पष्ट है कि उस युग में हिंदी की पढ़ाई बुनियादी स्तर पर होती थी जो एकदम सरल एवं सपाट थी, साथ ही साथ उनकी शिक्षण विधियाँ भी बहुत बोधगम्य थीं।

श्री नेमनारायण गुप्त जी यद्यपि शिक्षा, मनोविज्ञान और शिक्षण दर्शन के कम ज्ञाता थे परंतु हिंदी के अच्छे विद्वान थे। हिंदी व्याकरण पर उनका जो अधिकार था, वह अपने आप में प्रशंसनीय था। उस युग में बैठकाओं में केवल 12 खड़ी पढ़ाई, अक्षर व शब्द ज्ञान की पढ़ाई होती थी। यदि एक बैठका में हिंदी व्याकरण पढ़ाया जाए तो इसका आशय यह है कि उस बैठका में हिंदी की पढ़ाई उच्च स्तर की हो रही थी।

हिंदी प्रचारिणी सभा की गतिविधियाँ

रजत जयंती

श्री जयनारायण रॉय ने हिंदी प्रचारिणी सभा की झाँकी प्रस्तुत करते हुए उसकी रजत जयंती (1935 से 1960) पर अपना लेख प्रस्तुत किया था। उन्होंने हिंदी प्रचारिणी सभा के अंतर्गत हिंदी भवन को हिंदी शिक्षा का विकास स्थल माना।

हिंदी प्रचारिणी सभा द्वारा आयोजित रजत जयंती इसलिए सफल थी क्योंकि उन लोगों ने बहुत ही व्यवस्थित रूप से तैयारी की थी।

रजत जयंती के अवसर पर विभिन्न सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन हुआ था जिनमें नाटक प्रस्तुत करने का भार डॉ. लक्ष्मीप्रसाद रामयाद ने उठाया था। नाटक मंचन उस मौके पर सफल रहा और इसमें बहुत सारे हिंदी सेवियों ने भाग लिया था। यथा—डॉ. लक्ष्मीप्रसाद रामयाद, श्री धर्मवीर घूरा, श्रीमती सावित्री घूरा, श्रीमती सीता रामयाद तथा पंडित उमाशंकर गिरजानंद।

3 दिवसीय रजत जयंती समारोह श्रीमती रॉय द्वारा प्रदर्शनी, आर्य समाज द्वारा रविवारीय कार्यक्रम की अध्यक्षता तथा श्री मोहनलाल मोहित द्वारा आर्यरत्न के नेतृत्व आदि से काफ़ी सफल रहा।

स्वर्ण जयंती

हिंदी साहित्य के वृक्ष को सींचने में तथा हिंदी भाषा के प्रचारार्थ हिंदी प्रचारिणी सभा का योगदान इसलिए अप्रतिम है क्योंकि उस युग में यह एक मात्र संस्था थी जो केवल हिंदी भाषा को उन्नत बनाने में सिर-तोड़ परिश्रम करती थी। अत: इसी उद्देश्य से हिंदी प्रचारिणी सभा ने 29 नवंबर से लेकर 1 दिसंबर, 1985 तक अपनी स्वर्ण जयंती मनाई। इसी संदर्भ में श्री यशपाल जैन का यह कथन दृष्टिगोचर है—

''यदि आज मॉरीशस में ऐसे लेखक पैदा हुए हैं जिनके नाम मॉरीशस के बाहर लिए जाते हैं, तो इसमें हिंदी प्रचारिणी सभा का भी श्रेय है।''

यह जानना आवश्यक है कि श्री यशपाल जैन गांधीवादी लेखक होने के साथ-साथ एक प्रसिद्ध पत्रकार भी थे। 29 नवंबर, 1985 में ही उस समय के शिक्षा मंत्री, श्री आरमुगम परसुरामन का यह कथन उल्लेखनीय है—

''एक संस्था का 50 साल का अंतराल तय करना न सिर्फ़ गौरव का विषय है बल्कि एक महान उपलब्धि भी है...सांस्कृतिक और साहित्यिक गतिविधियों में अपूर्व भूमिका निभाने के अतिरिक्त सभा ने न केवल योग्य अध्यापकों को तैयार किया, वरन अच्छे नागरिक बनाने में भी अमूल्य कार्य किया है।''

स्वर्ण जयंती के उपलक्ष्य में कवि सम्मेलन का भी आयोजन हुआ जिसमें कवियों ने भाग लिया। नाटक मंचन तथा साहित्य गोष्ठी

का भी आयोजन हुआ।

यह कहा जा सकता है कि हिंदी प्रचारिणी सभा के बैठका हिंदी भाषा के प्रचार-प्रसार में न केवल पढ़ाई या परीक्षाएँ आयोजित करते हैं अपितु उनके सौजन्य से अनेक गतिविधियाँ भी होती हैं जिनसे विद्यार्थियों का विकास होता है। औपचारिक तथा अनौपचारिक शिक्षा के माध्यम से ही छात्रों के व्यक्तित्व व चरित्र का निर्माण हो सकता है और यह हिंदी प्रचारिणी सभा के बैठका समकालीन संदर्भ में सफलतापूर्वक कर रहे हैं।

अंततः यह स्पष्ट है कि हिंदी प्रचारिणी सभा से जितने सारे बैठका संलग्न हैं, उनका मात्र लक्ष्य हिंदी भाषा का प्रचार है। हिंदी प्रचारिणी सभा की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि विराट एवं समृद्ध है जिसपर शोध करने की अपार संभावनाएँ हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची–

1. पंडित आत्माराम विश्वनाथ, मॉरीशस का इतिहास, 1923, Atmaram and Sons, Kashmiri Gate, Delhi-10006.
2. चिंतामणि मुनीश्वरलाल, गंगनाञ्चल विश्व हिंदी अंक 4 अक्टूबर-दिसंबर, 1993 अंक वर्ष 16, पंचशील गार्डन, नवीन शारदा, दिल्ली-110032.
3. पूजानंद नेमा, 'वसंत' आप्रवासी विशेषांक 41, 1985, महात्मा गांधी संस्थान, मॉरीशस।
4. रामशरण प्रह्लाद, मॉरीशस का इतिहास, 2004 , नाव. इन. प्रकाशन, नई दिल्ली, भारत।
5. रामशरण प्रह्लाद, भारतीय वांङ्मय में मॉरीशस की संस्कृति, 1994, प्रतिभा प्रिंट्स एंड आर्ट, दिल्ली, भारत।
6. रॉय जयनारायण, मॉरीशस में हिंदी का संक्षिप्त इतिहास, 1970, हिंदी प्रचारिणी सभा, मॉरीशस।
7. करदम जय प्रकाश, विश्व हिंदी पत्रिका, 2010, विश्व हिंदी सचिवालय, स्वीफ्ट लेन क्युर्पिप।
8. बुधु सरिता, मॉरीशस की भोजपुरी परंपराएँ, 2003, एम.जी.आई. प्रेस मोका, मॉरीशस।
9. Ballgobin Vina & Dr. Reddi Sadasivam, Angaje, Exploration into the History, Society and Culture of Indentured immigrants and their descendants in Mauritius, 2013, Volume III, Aapravasi Ghat Trust Fund,1 Quay Street, Port-Louis.
10. Beejadhur Aunauth, Indian in Mauritius, 1995, Pandit Ramlakhan Gossagne Publication, Quatre-Bornes.
11. Bhuckory Somdath, Hindi in Mauritius, 1988, Second Edition, Editions de L'ocean Indien, Stanley, Rose-Hill, Mauritius
12. Bissoondoyal. U&Banymandhub.M, Major Figures of the Mauritius Arya Samaj, 1998, MGI Press Moka.
13. Bissoondoyal Uttam, Selected Works of Basdeo Bissoondoyal, Volume I, 1991, MGI Press, Moka
14. Burton Benedict, Indians in Plural Society, a report on Mauritius (Colonial Office; colonial Research Studies No.34) , H.M.S.O., 1961, London.
15. Chintamunee M. Hindi Literature of Mauritius and other Essays, 1972, Port-Louis
16. Hazareesingh and John Addison, A New History of Mauritius, 1984, Macmillan Publishers, London and Basingstoke.
17. Ramyead L.P., the Establishment and Cultivation of Modern Standard Hindi in Mauritius, 1985 MGI Press, Moka, Mauritius.
18. Reetoo Manoranjan, The 150 years Reetoo Family in Mauritius, 2009 (Publication House is not mentioned)
19. Singh B.B., L`INDE ET L`ILLE MAURICE, 1992, 5TH Edition, Imprimerie de Sri Aurobindo Ashram, Pondicherry, India
20. Varma Moonindra N, Basdeo Bissondoyal, 1997, Unix Printing Ltd, Quatre-Bornes

मॉरीशस

abhikesh1402@yahoo.com

14

जम्मू-कश्मीर में हिंदी की प्रगति एवं समस्याएँ : एक ऐतिहासिक अध्ययन

—डॉ. एन. के. चतुर्वेदी

जम्मू-कश्मीर भारत का मुकुट है। यह भारतवर्ष की उत्तरी सीमा का अंतिम राज्य है और सीमांत प्रदेश प्रत्येक दृष्टि से बड़े महत्व का होता है। कारण यह कि देश की भीतरी रक्षा का भार वास्तव में उसी पर होता है। यह एक प्राकृतिक प्रदेश भी है। कितने ही कवियों ने इसकी सुंदरता और मनोरमता का वर्णन दिल खोलकर किया है। वर्तमान सभ्यता के अनुयायी कश्मीर को भारत का स्वीट्ज़रलैंड कहते हैं। कश्मीर संस्कृत का भी केंद्र रहा है। संस्कृत आज भी वहाँ की सामान्य बोलचाल की भाषा में प्रचलित है। संस्कृत के समान ही हिंदी भाषा और विशेषकर देवनागरी लिपि के प्रचार-प्रसार एवं उसकी रक्षा और उसको सब प्रकार की हानियों से बचाने का कार्य कश्मीर में बखूबी किया गया।

भारतीय नवजागरण के साथ ही भाषा भी राजनीतिक दाव-पेंच की कठपुतली बन गई। पहले तो यह माना जाता था कि भाषा देशगत होती है किंतु बाद में यह प्रचार किया जाने लगा कि ऐसा नहीं, वह तो जातिगत और धर्मगत होती है। पहले धर्म के लिए विचार विशेष का मानना आवश्यक समझा जाता था परंतु 20वीं सदी का आरंभ होते-होते जान पड़ने लगा कि भाषा विशेष के बिना धर्म का नाम ही मिट जाएगा। 20वीं सदी की शुरूआत में भाषा और लिपि के संदर्भ में झूठे प्रचार ज़ोर-शोर से आरंभ हुए और उर्दू भाषा और फ़ारसी लिपि को भारत के अन्य भागों के समान कश्मीर में भी लादने और वास्तविकता को छिपाने का प्रयास किया जाने लगा। यदि देश के इतिहास पर दृष्टि डाली जाए तो ज्ञात होता है कि देश के इतिहास, धर्मग्रंथ, गणित, भूगोल, ज्योतिष, आयुर्वेद, व्याकरण, दर्शन, स्मृति, पुराण, प्रहसन, काव्य और महाकाव्य आदि जिस भाषा और लिपि में लिखे जाते हैं, वही भाषा और वही लिपि उस देश की राष्ट्रभाषा और राष्ट्र लिपि मानी जाती है। युग-युगांतर से इस देश में जो लिपि और भाषा गृहीत थी उस संस्कृत भाषा और देवनागरी लिपि की वैज्ञानिकता के सम्मुख अब भी भूमंडल को नतमस्तक होने के लिए बाध्य होना पड़ता है। वही संस्कृत भाषा और देवनागरी लिपि सहस्त्रों धाराओं में प्रवाहित होती हुई हिंदी भाषा और नागरी लिपि के रूप में आज भी उपस्थित है।

शिक्षा : बी.ए., एम.ए., एल.एल.बी., पीएचडी

शैक्षिक अनुभव : आगरा कॉलेज के इतिहास विभाग व गवर्नमेंट डिग्री कॉलेज में प्रवक्ता, मानविकी एवं सामाजिक विज्ञान विभाग, भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान में सहायक प्राध्यापक के पद पर कार्यरत। जय नारायण व्यास विश्वविद्यालय के इतिहास विभाग में एसोसिएट प्रोफ़ेसर के पद से सेवानिवृत्त।

प्रकाशन : 'आधुनिक भारत का इतिहास भाग-1', 'आधुनिक भारत का इतिहास भाग-2', 'जम्मू-कश्मीर के महाराजा गुलाब सिंह' तथा 25 से अधिक शोधपत्र एवं लेख प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हैं।

बौद्धकाल में जब समाज, धर्म, शासन, सभ्यता आदि में क्रांति की लहरों से उथल-पुथल होने लगा, तब भाषा और लिपि भी इस विप्लव से न बच सकी पर उसने अपनी रक्षा की और प्रकृति का सहारा लेती हुई वह पृथ्वीराज काल तक अनेक रूपों में प्रवाहित होती आई। बौद्धोत्तर काल में युद्ध विग्रह आदि में फँसे रहने के कारण जिन्हें व्याकरण पढ़ने का अवसर न मिला, वे अशुद्ध भाषा का व्यवहार करने लगे और देश के भिन्न-भिन्न भागों की जलवायु के विभेद के कारण उच्चारण में भी भिन्नता होती गई। अतएव अंत में यह पृथकता यहाँ तक पहुँची कि इसे हम मराठी, गुजराती, पंजाबी, बांग्ला, उड़िया, कश्मीरी, बिहारी आदि नामों से पुकार उठे किंतु इन सभी भाषा-भाषियों के धर्म, आयुर्वेद, पुराण, आदि ग्रंथ आज भी उसी संस्कृत भाषा और उसी देवनागरी लिपि में हैं।

पृथ्वीराज के बाद जब इस देश में बाहरी शासन, सभ्यता और

धर्म का संघर्ष हुआ, तब भाषा और लिपि को भी इस लपेट में आना पड़ा किंतु अक़बर काल तक इसमें कोई विशेष परिवर्तन नहीं हो पाया क्योंकि मुहम्मद क़ासिम, महमूद गजनवी, मुहम्मद गोरी, इल्तुतमिश, रज़िया बेगम आदि के दफ़्तर हिंदी भाषा और नागरी लिपि में ही संचालित होते थे और राज्य के सभी काम इन में ही होते थे। जब अक़बर ने शांति, सद्भावना, समानता आदि के नाम पर जाति, धर्म, भाषा तथा लिपि आदि का सामंजस्य आरंभ किया, तब भाषा और लिपि को लेकर भी सतर्क होना पड़ा और केशव, कश्मीरी जी, चैतन्यदेव, स्वामी हरिदास जी, गोस्वामी हितहरिवंश, सूरदास, तुलसीदास आदि महाकवियों ने अपने अमर काव्यों से जिस अमृत की वर्षा की, उससे इस देश के धर्म, भाषा आदि ने बाहरी भावनाओं को उदरस्थ करना आरंभ कर दिया। हिंदी भाषा के माधुर्य से मोहित होकर बादशाह अक़बर तक ने इसमें कविता की और उनके वज़ीर रहीम ख़ानख़ाना तो इस भाषा के महाकवि ही हुए। अक़बर के काल में जब राजा टोडरमल ने माल विभाग में फ़ारसी को जारी किया तब उस काल में भी नागरी लिपि राजा टोडरमल से मूँड़ मुँड़ाकर फ़ारस की द्रुतगामिनी लिपि से दौड़ में बाज़ी मार ले गई थी। वह राजधानी में 'महाजनी' कहलाई, मराठी में 'मोड़ा' और बिहार में 'कैथी' कही गई। यहाँ तक कि पटवारियों के कागज़ात इसी भाषा और घुटी खोपड़ी की लिपि में भरे जाते थे। ये चोटी कटाई हुई लिपियाँ आज भी सारे देश में अपना दौर-दौरा जमाए हुए हैं और सरकारी खज़ानों से लेकर पंसारी की दुकानों तक रोकड़ बाकी पर काबिज़ हैं।

औरंगज़ेब काल में जब विद्रोहों और प्रांतीय स्वतंत्रता के कारण मुगल साम्राज्य चकनाचूर हो रहा था, उस समय भी बादशाह और उसके महल पर हिंदी भाषा का जादू चलता ही रहा था और उसकी दुलारी दुख्तर (पुत्री) जेबुन्निसा ने तो हिंदी में एक काव्य ही बना डाला जिसका नाम है 'नैन बिलास'। उसका पहला दोहा है-

''या रब तुही बचाइयो, नैना भये शरीर।
दिल की नहीं पनाह अब, बिना मिले दिलगीर॥''

और अंतिम दोहा है-

''जेबुन्निसा जहान में दुख्तर आलमगीर।
नैन-बिलास बिलास में खास कही तहरीर॥''

कश्मीर के संदर्भ में ज्ञात होता है कि कश्मीर हिंदू, बौद्ध, मुगल, पठान तथा सिख शासकों द्वारा शासित रहा। कश्मीर में 12वीं सदी तक हिंदू राज्य था और यहाँ की राजभाषा संस्कृत थी। इस्लामी राज्य स्थापित हुआ तो भी पहले पहल राज्य कार्यालयों में संस्कृत भाषा ही प्रचलित थी, यहाँ तक कि काव्य और इतिहास तक उसी भाषा में लिखे गए। बहुत से फ़ारसी शब्दों को संस्कृत रूप दिया गया। बाद में राजभाषा फ़ारसी कर दी गई और वह चलती रही। 1819 में कश्मीर महाराजा रणजीत सिंह के अधीन हो गया और 1820 में यहाँ का शासन गुलाब सिंह को सौंपा गया और उनके उत्तराधिकारियों को राजा की उपाधि प्रदान की गई। कश्मीर के अंग्रेज़ी राज के प्रभाव में आने पर सरकारी दफ़्तरों और पाठशालाओं में उर्दू भाषा और फ़ारसी लिपि प्रचलित की गई परंतु हिंदी की माँग बनी रही और उसके लिए प्रयास होते रहे।

भाषायी आधार पर यदि कश्मीर का वर्गीकरण किया जाए तो स्पष्ट होता है कि कश्मीर की देसी रियासत में 2 मुख्य भाषाएँ बोली जाती हैं—डोगरी और कश्मीरी। डोगरी के साथ पंजाबी भी जम्मू में, जो इस रियासत का एक प्रमुख अंग है, बोली जाती है। डोगरी पंजाबी का वह रूप है जो पंजाब के पहाड़ी विभाग में बोली जाती है। शब्द-भंडार अथवा पद-रचना की दृष्टि से डोगरी को पंजाबी से विलग और विलक्षण भाषा नहीं माना जा सकता। जम्मू, जिसको डुगार भी कहते हैं, पंजाब के साथ मिला है और एक पंजाबी और डोगरे की भाषा में भेद निकालना बड़ा कठिन है। यह भाषा संस्कृत, तद्भव और प्राकृत शब्दों से बनी हुई है। इसमें अरबी-फ़ारसी भाषा के बहुत थोड़े शब्द प्रचलित हैं। जम्मू की अपनी लिपि भी है जिसको 'डोगरी' या 'टोकर' अक्षर कहते हैं। यह लिपि गुरुमुखी लिपि से मिलती है और देवनागरी लिपि का ही एक रूप है। भाषा और लिपि दोनों की दृष्टि से डोगरी और पंजाबी हिंदी के इतने समीप हैं कि यदि हिंदी को इस प्रांत की मातृ भाषा कहा जाए तो उसमें कोई अत्युक्ति न होगी।

कश्मीर के बाकी भाग के लोग कश्मीरी बोलते हैं। इस भाषा की लिपि शारदा है जो देवनागरी का ही एक रूप है। इस लिपि के बहुत से अक्षरों के रूप उन अक्षरों के डोगरी और गुरुमुखी रूपों से भी मिलते हैं। वास्तव में शारदा, डोगरी, गुरुमुखी और देवनागरी लिपियाँ एक ही हैं। यदि कश्मीरी भाषा के शब्द-भंडार और इस भाषा में प्रचलित पदों और वाक्यों की रचना और व्याकरण को देखें तो निस्संदेह इस परिणाम पर पहुँचेंगे कि कश्मीरी भाषा संस्कृत से ही निकली है और इसमें भी उस प्रकार परिवर्तन होता रहा है जिस

प्रकार हिंदी में।

कश्मीर में हिंदी आंदोलन कोई नई बात नहीं है। सरकारी स्कूलों में शिक्षा का माध्यम उर्दू तथा सरकारी दफ़्तरों एवं अदालतों में फ़ारसी लिपि और उर्दू होने के कारण यहाँ के हिंदी प्रेमियों की यह माँग सदा ही बनी रही कि राज्य में हिंदी और देवनागरी को भी वही स्थान मिलना चाहिए जो उर्दू और फ़ारसी लिपि को प्राप्त है। भारत की अंग्रेज़ सरकार ने भारत में देशी भाषाओं के प्रचार के लिए जो नियम बनाए वे यहाँ भी लागू हुए फिर भी यहाँ हिंदी का प्रचार न हो सका।

कश्मीर में हिंदी के प्रचार का प्रथम सराहनीय प्रयास काशी की नागरी प्रचारिणी सभा का था और 1904-05 ई. में ही इस सभा ने यहाँ के विद्यालयों में हिंदी हस्तलिपि परीक्षा का आयोजन 3 वर्षों के लिए आरंभ किया और इसके लिए 5, 3 और 2 रुपए के 3 पुरस्कारों की भी घोषणा की पर कश्मीर के लोगों की अकर्मण्यता के कारण वह इस काम को आगे न बढ़ा सकी। फिर भी जम्मू-कश्मीर के कई लोग इस सभा के सदस्य बन गए और हिंदी का प्रचार करने लगे। कश्मीर के तत्कालीन महाराज सर प्रताप सिंह स्वयं 5 अगस्त, 1916 ई. को काशी की इस सभा के संरक्षक बन गए और उसी वर्ष उन्होंने सभा के वार्षिक अधिवेशन की अध्यक्षता की और मृत्युपर्यंत (1925-26 ई.) इस सभा के संरक्षक रहे।

भाषायी आधार पर यदि कश्मीर का वर्गीकरण किया जाए तो स्पष्ट होता है कि कश्मीर की देसी रियासत में 2 मुख्य भाषाएँ बोली जाती हैं—डोगरी और कश्मीरी। डोगरी के साथ पंजाबी भी जम्मू में, जो इस रियासत का एक प्रमुख अंग है, बोली जाती है। डोगरी पंजाबी का वह रूप है जो पंजाब के पहाड़ी विभाग में बोली जाती है। शब्द-भंडार अथवा पद-रचना की दृष्टि से डोगरी को पंजाबी से विलग और विलक्षण भाषा नहीं माना जा सकता। जम्मू, जिसको डुगार भी कहते हैं, पंजाब के साथ मिला है और एक पंजाबी और डोगरे की भाषा में भेद निकालना बड़ा कठिन है।

जम्मू-कश्मीर के शासक हिंदू थे परंतु वहाँ की बहुसंख्यक प्रजा मुसलमान थी और जिस प्रकार से गलत प्रचार द्वारा उर्दू भाषा को इस्लाम से जोड़ा जा रहा था उसके फलस्वरूप सरकार के विविध विभागों, विशेषकर शिक्षा विभाग में उर्दू समर्थकों का आधिपत्य होने लगा और प्रजा के हिंदी आंदोलन को दबाने के लिए इन विभागों की ओर से नित नए कुठाराघात होने लगे। इन सब से ऊपर, 1932 ई. में मुस्लिम समुदाय के अधिकारों की रक्षा हेतु 'मुस्लिम कॉन्फ्रेंस' नामक संस्था गठित की गई।

1935-40 ई. के बीच की अवधि भारत के साथ ही कश्मीर के लिए भी काफ़ी महत्वपूर्ण थी। 1935 ई. के बाद भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस जिस प्रकार हिंदी की जगह हिंदुस्तानी, जो एक प्रकार से उर्दू ही थी, का प्रचार कर रही थी, उसका असर कश्मीर पर भी पड़ा। इसी अवधि में जम्मू में हिंदी प्रचारिणी सभा की स्थापना हुई जिसने समूचे कश्मीर में हिंदी के प्रचार का सराहनीय प्रयास आरंभ किया।

यह वह समय था जब कश्मीर राज्य में राजनीतिक सुधारों के लिए 'ग्लैंसी कमीशन' ने अपनी रिपोर्ट प्रकाशित की थी जिसमें सरकारी पत्र-व्यवहार और राज्य की असेंबली में भाषा का माध्यम उर्दू होने की सिफ़ारिश की गई थी। पंजाब प्रांतीय हिंदी साहित्य सम्मेलन का 8वाँ अधिवेशन जम्मू में किया गया था जिसमें उक्त सिफ़ारिश का तीव्र विरोध किया गया था और असेंबली और उसके बाहर सर्वत्र हिंदी को उर्दू के बराबर स्थान दिलाने का प्रबल आंदोलन चलाया गया।

इसी अवधि में कश्मीर सरकार ने शिक्षा के सुधार के संबंध में सुझाव देने के लिए कश्मीर शिक्षा सुधार समिति का गठन किया जिसके अध्यक्ष श्री के. गुलाम सैयदेन थे। ये महाशय कश्मीर के शिक्षा विभाग के संचालक भी थे। इस समिति में इनके सहयोगी वर्धा शिक्षा योजना के प्रमुख सदस्य, डॉ. ज़ाकिर हुसैन (जो जामिया मिलिया विद्यापीठ के आचार्य थे और जो हिंदुस्तानी सीखना प्रत्येक भारतवासी के लिए अनिवार्य मानते थे) ने उर्दू का समर्थन किया। इस समिति ने यह स्पष्ट स्वीकार किया कि, 'उर्दू राज्य के अधिकांश निवासियों की मातृ भाषा नहीं है फिर भी वह डोगरी, लँहदा और पंजाबी के बहुत निकट है और बहुत कुछ पहाड़ी और गूजरी से भी मिलती है। अत: उन लड़कों के लिए, जो ये भाषाएँ जानते हैं, शिक्षा का माध्यम उर्दू रखना कुछ कठिन नहीं। इसीलिए इन क्षेत्रों में व्यावहारिक दृष्टि से कोई दूसरी भाषा शिक्षा का माध्यम हो ही नहीं सकती।'

भाषा के साथ ही लिपि जैसी विकट समस्या को भी इस समिति ने सहज ही सुलझा दिया। उसी के शब्दों में 'इसी प्रसंग में लिपि का प्रश्न भी उठाया गया है। जिन लोगों से इस रिपोर्ट को तैयार करते

समय हमने बातें की थीं उनमें से कुछ ने यह सम्मति दी थी कि इस समय जैसे एक लिपि चल रही है वैसे न रहे, उसके स्थान पर फ़ारसी और देवनागरी, 2 लिपियाँ चलाई जाएँ। हमने इस समस्या पर भी पूर्ण विचार किया है। साथ ही हमने शिक्षा के विशेषज्ञों तथा जम्मू-कश्मीर के विविध वर्गों के मान्य लोगों से निजी ढंग से बातचीत भी की है। उन सबको ध्यान में रखते हुए हमारी दृढ़ धारणा है कि ऐसी योजना जिससे इस राज्य के लोगों के 2 भिन्न समुदायों के, जिनमें से एक देवनागरी लिपि ग्रहण करें और दूसरी फ़ारसी, बँट जाने की आशंका हो, प्रबंध और धन दोनों दृष्टियों से कठिन होगी। साथ ही सम्मिलित जातीयता और कश्मीरी भाषा और साहित्य की उन्नति की राह में रोड़े अटकाएगी।'

जम्मू-कश्मीर सरकार ने समिति के भाषा और लिपि संबंधी प्रस्ताव पर आँखें मूँदकर आचरण नहीं किया और 1940 ई. में यह आदेश निकाल दिया कि स्कूलों में शिक्षा के माध्यम के लिए-

(क) भाषा एक ही अर्थात सरल उर्दू होगी किंतु उसको पढ़ने-लिखने के लिए देवनागरी और फ़ारसी दोनों लिपियों को समान रूप से मान्य समझा जाएगा। शिक्षा देने के लिए पाठ्य-पुस्तकें दोनों लिपियों में होते हुए भी एक ही होंगी और

(ख) किसी स्कूल में पढ़नेवाले विद्यार्थियों को पूरी स्वतंत्रता होगी कि वे पढ़ने-लिखने के लिए इनमें से किसी लिपि को चुन लें।

इस आदेश के अनुसार एक ही कक्षा में पढ़नेवाले विद्यार्थियों को इच्छानुसार फ़ारसी अथवा देवनागरी लिपि को स्वीकार करने का अधिकार होगा और अध्यापकों के लिए राज्य की ओर से यह आज्ञा दी गई कि-

''(क) यदि किसी स्कूल में पढ़नेवालों में 100 में से 15 विद्यार्थी किसी लिपि को स्वीकार करें तो उसमें शिक्षा देना अनिवार्य होगा। और

(ख) स्कूलों के अध्यापकों के लिए दोनों लिपियों का जानना आवश्यक होगा। उन्हें एक वर्ष के भीतर दोनों लिपियाँ सीख लेनी होंगी। यदि कोई व्यक्ति दोनों लिपियाँ न जानता होगा तो वह अध्यापक नियुक्त न किया जाएगा और यदि कोई अध्यापक हो भी जाए तो उसे एक वर्ष के भीतर यह कमी पूरी करनी होगी, नहीं तो उसे स्थायी न किया जाएगा।''

सरकार ने जो आदेश निकाले उसने शिक्षा सुधार समिति की सिफ़ारिश के अनुसार शिक्षा का माध्यम उर्दू ही रखा किंतु प्रस्ताव के विरुद्ध फ़ारसी लिपि के साथ ही देवनागरी लिपि को भी स्थान दे दिया।

इस प्रकार कश्मीर में हिंदी की प्रगति का अध्ययन करने पर स्पष्ट होता है कि वहाँ पर हिंदी का प्रचार अत्यंत कठिन काम रहा है। यद्यपि प्राचीन काल से ही वहाँ पर संस्कृत भाषा और देवनागरी लिपि का प्रचलन रहा है फिर भी उसका प्रचार धीमी गति से हुआ। काशी की नागरी प्रचारिणी सभा ने वहाँ हिंदी प्रचार का श्रीगणेश किया और उत्तरोत्तर वहाँ पर हिंदी का प्रचार किया गया। परंतु उसी अनुपात में वहाँ पर हिंदी का विरोध भी बढ़ता गया। स्थिति यह हुई कि उर्दू के साथ देवनागरी लिपि मात्र को स्थान दे देने से वहाँ उग्र विवाद खड़ा हो गया पर धन्य है जम्मू की हिंदी प्रचारिणी सभा जिसने अकेले अपने दम पर कितने ही जगहों पर हिंदी को प्रवेश दिलाया और लगातार आंदोलनरत रही। इसी सभा का प्रयास है कि कश्मीर में हिंदी आज भी जीवित है। आज जम्मू में हिंदी अच्छी तरह फल-फूल रही है और कश्मीर में भी वह दिन-ब-दिन उन्नति ही करती जा रही है।

स्रोत :

1. चंद्रबली पांडे सं. 'हिंदी' पत्रिका, 1940-44 तक, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी।
2. हरिश्चंद्र विद्यार्थी, जम्मू व कश्मीर राज्य में राष्ट्रभाषा हिंदी।
3. किशोरी दास वाजपेयी, राष्ट्रभाषा का इतिहास, जनवाणी प्रकाशन कलकत्ता, 2007।
4. श्रीश जैसवाल, हिंदी का नवजागरण काल एवं भाषा विवाद, हिंदी साहित्य सम्मेलन, इलाहाबाद, 2007।
5. नागरी प्रचारिणी सभा, काशी का वार्षिक विवरण, 1939-40 ई., नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, 1940।
6. वेदव्रत शास्त्री, नागरी प्रचारिणी सभा काशी की अर्ध-शताब्दी का इतिहास, सं. 2000।
7. रामेश्वर प्रसाद, राजभाषा हिंदी : प्रचलन और प्रसार, अनुपम प्रकाशन पटना, 1988।

जोधपुर, राजस्थान, भारत
nkchat19@gmail.com

15

हिंदी वर्तनी का मानकीकरण : अंतरराष्ट्रीय भाषा के परिप्रेक्ष्य में

—श्रीमती स्नेह ठाकुर

हिंदी का विकास हो रहा है। भारत में हिंदी के प्रति जन-जागृति हो रही है, राजनीतिक स्तर पर भी और सामाजिक स्तर पर भी। भारत के प्रधान मंत्री माननीय श्री नरेंद्र मोदी न केवल देश में वरन विदेश में भी हिंदी का प्रयोग कर रहे हैं जो अवश्यमेव हिंदी की गरिमा को बढ़ा रहा है, उसमें चार-चाँद लगा रहा है। मोदी जी द्वारा हिंदी में दिए गए भाषणों पर वातावरण में तालियों की गड़गड़ाहट इस तथ्य की साक्षी है।

कोई भी राष्ट्र जो अपनी भाषा को पददलित करता है वह स्वयं को ही विनाश के गर्त की ओर ले जाता है। स्वभाषा के बिना राष्ट्र गूँगा है। किसी भी राष्ट्र के लिए राष्ट्रभाषा सर्वोपरि होनी चाहिए। दूसरी भाषाओं का सम्मान यथोचित है पर स्वयं की भाषा का निरादर करके नहीं वरन राष्ट्रभाषा को सर्वोच्च पदासीन कर उसे सम्मानित करते हुए करना राष्ट्र का परम धर्म है। भारत हिंदी को जकड़ कर रखनेवाले उच्चासीन अंग्रेज़ीदाँ के शिकंजे से निकल रहा है, उसकी पकड़ कमज़ोर पड़ रही है।

हिंदी की छवि वैश्विक स्तर पर और बेहतर बन सके जिससे कि तकनीकी और सामाजिक विषयों पर लोग जागरूक हो सकें, हिंदी भाषा में भारतीय मूल्यों व परंपराओं के संवर्धन के साथ-साथ आधुनिक वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित हो सके, अंतरराष्ट्रीय भाषा के रूप में हिंदी का सम्यक विकास हो तथा हिंदी को वैश्विक भाषा के रूप में मान्यता दिलाने का विश्व हिंदी सचिवालय का प्रयास प्रशंसनीय एवं सराहनीय है। इस सारस्वत अनुष्ठान की सफलता हेतु मेरी शुभाकांक्षाएँ सभी हिंदी प्रेमी व विश्व हिंदी सचिवालय के साथ हैं।

वैश्विक क्षितिज पर हिंदी के कदम यू.एन. की आधिकारिक भाषा बनने की ओर बढ़ रहे हैं जिसका संकेत विश्व हिंदी सम्मेलनों द्वारा जग-ज़ाहिर हो रहा है। 8वें विश्व हिंदी सम्मेलन में यू.एन. के प्रांगण में व उसके मुख्य सभागार में हिंदी की प्रगति का दिव्य स्वप्न देखा गया जिसका विशिष्ट अतिथि के रूप में साक्षी होने का

शिक्षा : एम.ए., बी.एड. तथा पीएचडी

प्रकाशन : अनमोल हास्य क्षण (नाटक संग्रह), जीवन के रंग (काव्य संग्रह), दर्दे-जुबाँ (उर्दू कविताओं का संग्रह), आज का पुरुष (कहानी संग्रह), जीवन निधि (काव्य संग्रह), आत्म गुंजन (दार्शनिक और भक्ति की कविताओं का संग्रह), हास-परिहास (हास्य कविताओं का संग्रह), जज्बातों का सिलसिला (काव्य संग्रह), अनुभूतियाँ (काव्य संग्रह), पूरब-पश्चिम (आप्रवासी संबंधित आलेख संग्रह), संजीवनी (स्वास्थ्य संबंधी निबंध संग्रह), उपनिषद् दर्शन (ईशोपनिषद्, दार्शनिक और आध्यात्मिक), काव्यांजलि (काव्य संग्रह), अनोखा साथी (कहानी संग्रह), कैकेयी : चेतना-शिखा (उपन्यास), आज का समाज (लेख-संग्रह) आदि।

सम्मान : 'इंटरनेशनल वीमेन एक्सलेंस अवार्ड 2014', 'एडिटर्स चॉइस अवार्ड', 'साहित्य भारती सम्मान', 'विश्व हिंदी सेवा सम्मान', 'प्रवासी हिंदी सेवा सम्मान', 'नारी अस्मिता समिति सम्मान', 8वाँ विश्व हिंदी सम्मेलन 2007, न्यूयॉर्क में 'विशिष्ट अतिथि सम्मान', 'मानद फेलोशिप : रिसर्च फाउंडेशन इंटरनेशनल सम्मान' तथा चौधरी चरण सिंह विश्वविद्यालय, मोहन शोध संस्थान लखनऊ, कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, 'साउथ ऐशियन इन ऑन्टेरियो', नमस्ते कनाडा, फिलेडेल्फिया प्रिकली पोएट्री, हिंदी साहित्य सभा, पैनोरामा इंडिया, राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय साहित्यिक एवं ललित कला संस्थानों आदि द्वारा सम्मानित। आप नाटक, काव्य, कहानी, निबंध, गीत, भजन, गज़ल, रिपोरताज, उपन्यास आदि विधाओं में हिंदी और अंग्रेज़ी दोनों में लेखनी चलाती हैं। आपकी कुछ कृतियाँ उर्दू और पंजाबी भाषा में भी रचित हैं। आपकी रचनाएँ राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई हैं जैसे 'सरिता', 'सुषमा', 'मुक्ता' आदि। आपने अनेक चल-चित्रों में अभिनय तथा साहित्यिक व सांस्कृतिक संगोष्ठियों का आयोजन भी किया।

आप अनेक संगठनों, समितियों, सभाओं आदि के कार्यकारिणी सदस्य रह चुकी हैं। संप्रति आप 'वसुधा' हिंदी साहित्यिक पत्रिका की संपादक व प्रकाशक हैं।

सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ था। 10वें विश्व हिंदी सम्मेलन में 'विश्व हिंदी सम्मान' प्राप्त करते हुए व्यक्तिगत गौरव के साथ इस बात का भान सर्वव्यापी था कि हम इस ओर प्रगति कर रहे हैं। अब यह आशा अनपेक्षित प्रतीत नहीं हो रही है कि हिंदी भारत व विदेश में भी अपने गरिमामय स्थान पर प्रतिस्थापित होने की ओर अग्रसर है।

अब जब हिंदी की प्रगति आश्वस्तता प्रदान कर रही है तो हमें इस प्रगति के बीच भविष्य में बाधक बननेवाली समस्याओं प्रवृत्तियों पर भी अपना ध्यान केंद्रित करना पड़ेगा। शब्द-सीमा के अंतर्गत विभिन्न विषयों पर विचार-विमर्श संभव न हो सकेगा अत: मैं अंतरराष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में हिंदी के मानकीकरण पर अपने विचार व्यक्त करना चाहूँगी।

मैं 50 वर्षों से भारत के बाहर रह रही हूँ। अल्प-काल लंदन में बिताने के बाद 1967 से कनाडा में रह रही हूँ। अनेक विधाओं में पुस्तकों की रचना एवं जनवरी 2004 से 'वसुधा' हिंदी साहित्यिक त्रैमासिक पत्रिका के संपादन-प्रकाशन द्वारा माँ सरस्वती की पूजा-अर्चना कर रही हूँ जो भारत व विदेशों के मध्य हिंदी के सेतु का कार्य कर रही है। तात्पर्य यह कि विदेशों में विदेशियों द्वारा एवं प्रवासी भारतीयों तथा उनकी नई पीढ़ी द्वारा हिंदी सीखने में विघ्न डालनेवाले तत्वों तथा हिंदी की प्रगति में आनेवाली कठिनाइयों से काफ़ी परिचित हूँ।

यह भी जानती हूँ कि हिंदी वर्तनी का मानकीकरण किया जा चुका है पर अब जब हिंदी विश्व भाषा बनने के पथ पर निस्संदेह अग्रसर है तो हमें उस पथ को सुगम बनाने हेतु प्रयत्नशील होना होगा जिससे अधिक से अधिक विदेशी व प्रवासी भारतीय पीढ़ियाँ उसका अनुसरण करें। अत: इस परिप्रेक्ष्य में वर्तनी के मानकीकरण पर पुनर्विचार की आवश्यकता है विशेष रूप से विदेशों के संबंध में, क्योंकि जो भारत में जन्मे, पले-बढ़े हैं कदाचित उनकी आवश्यकताएँ हिंदी के पूर्वमानकीकृत रूप से पूरी हो सकती हैं वे भाषा जानते हैं, उन्हें भाषा का ज्ञान है हालाँकि यह मान्यता भी विमर्श का विषय है। विदेश के संदर्भ में चाहे वह विदेशियों को हिंदी सिखाने की बात हो या फिर प्रवासी भारतीयों की अगली पीढ़ी जो विदेशों में जन्मीं एवं पली-बढ़ी है, उनके हिंदी शिक्षण की बात हो, उस समय के किए गए मानकीकरण पर अब पुनर्विचार की आवश्यकता है।

इस विषय का क्षेत्र व्यापक है। अत: उदाहरणार्थ यहाँ कुछ बिंदुओं पर ही ध्यान केंद्रित कर, सीमित शब्द-संख्या का पालन करने का भरसक प्रयत्न करूँगी।

वर्तनी—अर्थात अक्षर-विन्यास, अक्षर-न्यास, अक्षरी, वर्ण-विन्यास, वर्णन्यास, लेख-नियम, हिज्जे, विवरण आदि। अंग्रेज़ी में यही 'स्पेलिंग' है। 'वर्तनी' वैसे तो बहुअर्थी है पर अब हिंदी में शब्दों की लिपिबद्धता के संदर्भ में वर्ण-विन्यास के लिए रूढ़ हो चुकी है। संस्कृत मूल से बनी वर्तनी अर्थात मार्ग, सड़क, जीना, जीवन, पीसना, चूर्ण बनाना आदि। इस तरह हिंदी-लेखन की दृष्टि से 'वर्तनी' का भाव निकलेगा—वर्णों के शब्द-रूप तक पहुँचने का मार्ग यानी प्रकारांतर से कहा जा सकता है कि किसी शब्द को लिपिबद्ध करने में वर्णों को जिस प्रक्रिया में लिखा जाए, वह है वर्तनी। इसे वर्तन शब्द के 'टिकाऊ' तथा 'ठहरनेवाला' जैसे अर्थों के आलोक में देखें तो वर्तनी का अर्थ और चमक उठेगा। किसी शब्द के लिए टिकनेवाला, ठहरनेवाला या एक स्थिर स्वरूपवाला वर्ण-क्रम। यही आशय ज्ञान मंडल, वाराणसी द्वारा प्रकाशित 'बृहद हिंदी कोश' में दी गई वर्तनी की निम्नांकित परिभाषा में व्यक्त होता है - 'भाषा-साम्राज्य के अंतर्गत भी शब्दों की सीमा में अक्षरों की जो आचार-संहिता अथवा उनका अनुशासनगत संविधान है, उसे ही हम वर्तनी की संज्ञा दे सकते हैं। वर्तनी भाषा का अनुशासित आवर्तन है। वर्तनी शब्दों का संस्कारित पद विन्यास है। यह अक्षर-संस्थान और वर्ण-क्रम विन्यास है।'

हिंदी-लेखन में वर्तनी के मानक स्वरूप की पुन: आवश्यकता क्यों है क्या हम हिंदी के शब्दों की वर्तनी स्थिर करने के प्रयास में इसका सहज विकास बाधित नहीं करेंगे?

भाषा लोक-व्यवहार के सहज प्रवाह के वशीभूत अवश्य होती है पर साथ ही भाषा में हो रहे व किए जा रहे परिवर्तनों को उच्छृंखल भी नहीं छोड़ा जा सकता। भाषा लोक-व्यवहार के स्तर पर बोलचाल की हो या साधारण या विशिष्ट लेखन की, भाषा के एक मानक स्वरूप की आवश्यकता अवश्य होती है। बिना मानक या शब्द व अर्थ का एक निश्चित स्वरूप निर्धारित किए तथा बिना भावों का आदान-प्रदान भी सदा यथोचित रूप से संभव नहीं हो पाता। भाषागत मानकता भाव-संप्रेषण को यथोचित संभव बनाती है। एक क्षेत्र का व्यक्ति दूसरे क्षेत्र की उच्चारण संबंधी भिन्नता होने पर असमंजस, हास्यास्पद या गंभीर, अजीबोगरीब परिस्थिति में पड़ सकता है। एक बांग्ला-भाषी, उत्तर प्रदेश निवासी के घर

भजन- संध्या का आनंद उठा, उस आनंद की पुनरावृत्ति अपने घर करवाने की सोच विनम्र हो पड़ोसी को अपनी हिंदी में न्योता दे आता है कि 'आज हमारे घर भोजन है, परिवार सहित आइएगा।' पड़ोसी भोजन करने पहुँचते हैं और वस्तुत: 'भूखे भजन न होंहीं गोपाला' की स्थिति में पहुँच, भूख से पीड़ित अँतड़ियों को दबाते हुए पेट पकड़ कर बैठ जाते हैं। बांग्ला मोशाय 'भजन' को 'भोजन' उच्चारित कर निमंत्रित कर आए थे और उत्तर प्रदेशी महाशय अपनी समझ में उनके यहाँ 'भजन' करने नहीं 'भोजन' करने गए थे।

कुछ महीने पहले एक पंजाबी-भाषी महिला ने मेरा हाथ बड़े प्यार से पकड़कर कहा, ''मुझे आपका उपन्यास पढ़ने का बड़ा शोक है।'' मैं अचंभित हो उन्हें देखती ही रह गई क्योंकि उनके द्वारा बहुत ही स्नेहपूर्वक पकड़ा हुआ मेरा हाथ मुझे किसी भी स्थिति में उनकी शोक की अनुभूति से अभिसिंचित नहीं कर रहा था कि उन्होंने फिर कहा, ''स्नेह जी मैंने आपका उपन्यास 'कैकेयी चेतना-शिखा' पढ़ा। मुझे उसे पढ़ने का शोक है।'' लेखक को पाठक की हर प्रतिक्रिया शिरोधार्य होनी चाहिए। पाठक का अपना विशिष्ट व्यक्तित्व है, उसकी अपनी ग्रहणशीलता है, पाठक सदैव लेखक की भावना से ही संचालित हो, अनुप्राणित हो, यह आवश्यक नहीं है। यद्यपि साहित्यकार की सबसे बड़ी विशेषता संप्रेषणीयता ही है तथापि साहित्यकार की हर कृति इतनी सौभाग्यशाली नहीं भी हो सकती है कि वह अपने उसी रूप में पाठक के मन-मस्तिष्क पर छा जाए जिस भावना को लेकर साहित्यकार ने उसे रचा है। यह सब कुछ सैद्धांतिक रूप से जानते-समझते हुए भी मानव स्वभावानुसार कुछ आहत हो, बिन सोचे मेरे मुँह से अनायास निकल पड़ा कि ''माफ़ कीजिएगा 'कैकेयी चेतना-शिखा' उपन्यास के प्रकाशन के एक वर्ष बाद ही द्वितीय संस्करण निकलने से बहुत पहले ही उसे राष्ट्रपति भवन पुस्तकालय में रखा गया है, साहित्य अकादमी म.प्र. द्वारा अखिल भारतीय 'वीरसिंह देव' पुरस्कार से सम्मानित किया गया है, राष्ट्रपति द्वारा 'हिंदी सेवी सम्मान' दिया गया है। क्षमा चाहती हूँ कि आपको उसे पढ़ने पर शोक हुआ।'' उन्होंने मेरी पूरी बात सुने बिना बीच में ही काटते हुए बड़े प्यार से मेरा हाथ थपथपाते हुए कहा, ''अजी बहन जी! मुझे पता है, मैं कह तो रही हूँ कि मुझे वह पढ़कर बड़ा अच्छा लगा। मुझे आपके उपन्यास पढ़ने का बहुत ही शोक है। मैं तो आपका नया उपन्यास 'लोक-नायक राम' भी बड़े शोक से पढ़ रही हूँ।'' अब उनके शोक-शौक को मैं समझी।

जब 'भजन' और 'भोजन', 'शौक' और 'शोक' अपने ही देश के व्यक्तियों का उच्चारण गुदगुदाती गलतफ़हमी पैदा कर सकते हैं तो वर्तनी की अनेकता, अपनी-अपनी डफ़ली, अपना-अपना राग, समस्या पैदा कर सकता है, विशेष रूप से विदेशों में जहाँ मूल भाषा हिंदी नहीं है।

भाषा लोक-व्यवहार के सहज प्रवाह के वशीभूत अवश्य होती है, पर साथ ही भाषा में हो रहे व किए जा रहे परिवर्तनों को उच्छृंखल भी नहीं छोड़ा जा सकता। भाषा लोक-व्यवहार के स्तर पर बोलचाल की हो या साधारण या विशिष्ट लेखन की, भाषा के एक मानक स्वरूप की आवश्यकता अवश्य होती है। बिना मानकता या शब्द व अर्थ का एक निश्चित स्वरूप निर्धारित किए, बिना भावों का आदान-प्रदान भी सदा यथोचित् रूप से संभव नहीं हो पाता। भाषागत मानकता भाव-संप्रेषण को यथोचित संभव बनाती है।

हिंदी अनेक क्षेत्रों में समझी, बोली तथा लिखी जाती है। विभिन्न क्षेत्रों की हिंदी में उच्चारण भिन्नता के साथ लेखन में भी भिन्नता आना स्वाभाविक है। बोलचाल में तो फिर भी आमने-सामने के संवाद की स्थिति में स्पष्टीकरण संभव है पर लेखन में वर्तनी की मानकता न होने पर यह अहितकारी है। शब्दों की वर्तनी में एकरूपता का अभाव भ्रम उत्पन्न कर सकता है जिससे अर्थभेद हो सकता है।

भाषा वह साधन है जिसके द्वारा मनुष्य अपने भावों तथा विचारों को बोलकर या लिखकर दूसरों तक पहुँचाता है तथा दूसरे के भावों और विचारों को सुनकर या पढ़कर समझता है।

भाषा के 2 रूप होते हैं—उच्चरित रूप और लिखित रूप। उच्चरित रूप भाषा का मूल रूप है जबकि लिखित रूप गौण एवं आश्रित। फिर भी उच्चरित रूप में दिया गया संदेश सम्मुख अथवा समीप स्थित श्रोताओं तक सीमित रहता है और क्षणिक होता है अर्थात बोले जाने के तुरंत बाद नष्ट हो जाता है। इसके विपरीत लिखित रूप में दिया गया संदेश समय की सीमा तोड़कर, व्यापक होकर सुदूर विदेशों में स्थित पाठकों तक पहुँचने की क्षमता रखता है। स्थायी और व्यापक बने रहना ही लिखित रूप की शक्ति है। यह लिखित रूप स्थायी और व्यापक बना रहे, इसके लिए आवश्यक

है कि लेखन-व्यवस्था, शब्द-विन्यास, लिपिचिह्न, लिपिचिह्नों के संयोजन, शब्द स्तर की वर्तनी, विराम चिह्न आदि लंबे समय तक एक से बने रहें।

वर्तनी का शाब्दिक अर्थ है वर्तन अर्थात अनुवर्तन करना यानी पीछे-पीछे चलना। लेखन व्यवस्था में वर्तनी शब्द स्तर पर शब्द की ध्वनियों का अनुवर्तन करती है। दूसरे शब्दों में, शब्द विशेष के लेखन में शब्द की एक-एक करके आनेवाली ध्वनियों के लिए लिपिचिह्नों के क्या रूप हों और उनका कैसा संयोजन हो, यह वर्तनी (वर्ण संयोजन = अक्षरी) का कार्य है।

इस शताब्दी के आरंभ में जब हिंदी का प्रयोग प्रचलित होने लगा तो साहित्यकारों, लेखकों, कवियों, संपादकों, जनसामान्य ने स्थानीय परंपराओं और रूढ़ियों के अनुसार शब्दों की वर्तनियों को अपनाया और वर्तनी में थोड़ी-बहुत अनेकरूपता आ गई। अत: वर्तनी में एकरूपता लाने के लिए इसका मानकीकरण आवश्यक है। मानकीकरण भाषा को परिमार्जित, परिनिष्ठित करने में सहायक सिद्ध होगा। साथ ही मानकीकरण से भाषा के स्वीकार्य व अस्वीकार्य रूपों में भेद करना सरल हो जाएगा। शुद्ध भाषा लिखने-पढ़ने के लिए शुद्ध उच्चारण बहुत महत्वपूर्ण है। हिंदी के संदर्भ में तो यह कथन और भी सत्य है क्योंकि हिंदी ध्वन्यात्मक भाषा है। हिंदी जिस प्रकार बोली जाती है प्राय: उसी प्रकार लिखी भी जाती है। इसीलिए हिंदी लिखने-पढ़नेवालों के लिए इसका शुद्ध उच्चारण आवश्यक है। जो शुद्ध उच्चारण करेगा वह शुद्ध लिखेगा भी। हिंदी में वर्तनी की जो अनेक अशुद्धियाँ दिखाई देती हैं उसका एक प्रधान कारण अशुद्ध उच्चारण है। असावधानी के कारण प्राय: लोग अशुद्ध उच्चारण करते हैं फलत: लिखने में भी अशुद्धियाँ होती हैं। वर्तनी के मानकीकरण से लिखने के साथ-साथ उच्चारण में भी शुद्धता आएगी।

इस शताब्दी के आरंभ में जब हिंदी का प्रयोग प्रचलित होने लगा तो साहित्यकारों, लेखकों, कवियों, संपादकों, जन सामान्य ने स्थानीय परंपराओं और रूढ़ियों के अनुसार शब्दों की वर्तनियों को अपनाया और वर्तनी में थोड़ी-बहुत अनेकरूपता आ गई। अतः वर्तनी में एकरूपता लाने के लिए इसका मानकीकरण आवश्यक है। मानकीकरण भाषा को परिमार्जित, परिनिष्ठित करने में सहायक सिद्ध होगा। साथ ही मानकीकरण से भाषा के स्वीकार्य व अस्वीकार्य रूपों में भेद करना सरल हो जाएगा।

वास्तव में हिंदी के लेखन-विधान की प्रकृति के अनुसार इसमें वर्तनी की समस्या उत्पन्न नहीं होनी चाहिए क्योंकि हिंदी देवनागरी लिपि में लिखी जाती है। देवनागरी की सबसे बड़ी विशेषता है कि इसमें जैसा लिखा जाता है वैसा ही बोला जाता है, जैसा बोला जाता है वैसा ही लिखा जाता है। यह ध्वन्यात्मक लिपि है जबकि दूसरी भाषाओं में यह बात नहीं है। अत: वहाँ रटना ही विकल्प बन जाता है जबकि हम हिंदी में जो बोलते हैं वही लिखते हैं। इसलिए हमें रटने की आवश्यकता नहीं होती फिर भी हम अपने हिंदी के उच्चारण के प्रति असावधानी से गलत लिखने लगते हैं। यद्यपि विभिन्न अंग्रेज़ी-भाषी क्षेत्रों में भी उच्चारण की भिन्नता है तथापि लेखन के स्तर पर उनका एक मानक रूप है जिसका वे सब पालन करते हैं।

भाषा में वर्तनी की अनेकरूपता से बचने के लिए लिखने-पढ़ने की एकरूप सुविधा के लिए, व्याकरण और शब्दों की वर्तनी, दोनों स्तरों पर वर्तनी का मानकीकरण आवश्यक है। विशेष रूप से आज जब हिंदी की वैश्विक पहचान बन रही है, ऐसी स्थिति में हिंदी की मानक वर्तनी के अभाव में अन्य भाषा-भाषियों के लिए हिंदी सीखना सहज न होगा वरन कठिनतम हो जाएगा। जो भी लोग हिंदी सीखना चाहते हैं या जो सीख रहे हैं उनके सामने कई तरह की उलझनें पैदा हो जाएँगी।

इस दिशा में एक और बात ध्यान देने योग्य है कि जब हिंदी देवनागरी लिपि के रूप में संसार की सर्वाधिक वैज्ञानिक लिपि हमें परंपरा से प्राप्त है तो फिर हम क्यों न इसका सदुपयोग करें? वर्तनी का मानकीकरण करके इसकी रक्षा करते हुए इसे उपयोगी बनाएँ? कंप्यूटर के इस युग में सार्वभौम लिपि के रूप में खरा उतर सकने की सामर्थ्य देवनागरी लिपि में ही है। सबसे अधिक शुद्धता के साथ सभी भाषाओं की ध्वनियों को व्यक्त करने की क्षमता इस लिपि में है। इस अक्षरात्मक लिपि की ध्वन्यात्मक विशेषता यह है कि इसमें शब्दों को उनके उच्चारणों के ही अनुरूप लिपिबद्ध किए जा सकने की सामर्थ्य है।

बिंदु, अनुस्वार, चंद्रबिंदु तथा अनुनासिक चिह्न को लेकर भी हिंदी की वर्तनी में समस्याएँ उत्पन्न हो रही हैं। पहले शिरोरेखा पर बिंदु और चंद्रबिंदु शब्द संरचना के अनुसार लगाए जाते थे परंतु अब चंद्रबिंदु का प्रचलन हटा केवल बिंदु लगाने की प्रथा चल पड़ी है

जो कम से कम विदेश के संबंध में भ्रामक हो सकता है।

संयुक्त व्यंजन के रूप में जहाँ पंचमाक्षर के बाद सवर्गीय शेष 4 वर्णों में से कोई वर्ण हो तो एकरूपता और मुद्रण, लेखन की सुविधा के लिए अनुस्वार का प्रयोग प्रचलित है जैसे गंगा, चंचल, ठंडा, संध्या आदि में पंचमाक्षर के बाद उसी वर्ग का वर्ण आगे आता है, अत: पंचमाक्षर पर अनुस्वार का प्रयोग मान्य है। यदि पंचमाक्षर दोबारा आए तो पंचमाक्षर अनुस्वार के रूप में नहीं बदलेगा जैसे 'अन्न', 'अन्य', 'सम्मेलन', 'सम्मति', 'उन्मुख' आदि के लिए।

वैसे देखा जाए तो आधा 'म' के लिए भी आधा 'न' की तरह शिरोरेखा के ऊपर बिंदु लगाना नई पीढ़ी के लिए शब्द संरचना में भ्रामक हो सकता है। पाठक तथा लेखक को शब्दों की संरचना में याद रखना पड़ेगा, रटना पड़ेगा कि शिरोरेखा पर बिंदु आधा 'म' का प्रतिनिधित्व करता है या आधा 'न' का। यदि केवल न की ध्वनि के लिए अनुस्वार लगाया जाए तो रटने की समस्या नहीं रहेगी। 2 ध्वनियों को पहचानने की समस्या नहीं होगी, विशेष रूप से विदेशियों के लिए जिनकी शब्द-सीमा तथा भाषा-ज्ञान आरंभ में सीमित है।

आजकल जहाँ चंद्रबिंदु की जगह केवल बिंदु के प्रयोग का प्रचलन हो गया है वहाँ ऐसी अवस्था में भ्रम की गुंजाइश रहती है। यह बात अलग है कि आप वाक्य संरचना देखकर उसका यथोचित अर्थ अपने-आप लगा लेते हैं। अत: यहाँ भी हिंदी की नई पीढ़ी को रटना ही पड़ेगा क्योंकि चंद्रबिंदु की जगह बिंदु लगाने से प्राय: अर्थ में भ्रम की गुंजाइश रहती है जैसे 'हँस' और 'हंस' में। अतएव ऐसे भ्रम को दूर करने के लिए चंद्रबिंदु का प्रयोग अवश्य किया जाना चाहिए। यथास्थान चंद्रबिंदु न लगाने की प्रथा भाषा के लिए हितकारी नहीं है। चूँकि हिंदी भारत की भाषा है इसलिए वहाँ अधिकतर प्रयोग में लाई जानेवाली भाषा है। अत: वहाँ आप चूँकि उन शब्दों का संदर्भ जानते हैं इसीलिए अनायास ही ऐसे शब्दों का उपयुक्त अर्थ निकाल लेते हैं लेकिन विदेशियों के लिए यह सदैव संभव नहीं है।

वर्तनी के मानकीकरण से ही हम शब्दों को उनके मूल रूप में रख सकेंगे। यदि ऐसा न हुआ तो अंतत: प्रचलित उच्चारणवाले शब्द ही मान्य हो जाएँगे और शब्द अपना मूल स्वरूप खो देंगे। उदाहरणार्थ अधिकांशत: देखा जा रहा है कि लोग 'ब्रह्मा' को 'ब्रम्हा', 'चिह्न' को 'चिन्ह', 'उऋण' को 'उरिन' आदि बोल और लिख रहे हैं।

यदि मूल स्वरूप बदलना भी है तो भी वर्तनी का मानकीकरण दिशा निर्देश देकर भाषा को एकरूप, एक स्वरूप प्रदान करेगा। श्रुत अवस्था में याद रखने की समस्या बनी रहती है। मानकीकरण वर्तनी को स्थायी व प्रामाणिक बनाएगा। काल परिवर्तनशील है। काल के साथ ही साथ भाषा को समयानुसार, परिस्थिति के अनुसार सामंजस्य बैठाना ही होगा। भाषा तो वही जीवित रह सकती है जो सहज, सुगम हो, नदी के समान सतत प्रवाहशील हो। यदि प्रवाह अवरुद्ध हो गया तो सड़ांध से उसका दम घुट जाएगा। समयानुसार हिंदी वर्तनी का मानकीकरण भी आवश्यक है क्योंकि यह प्रवाह को अवरुद्ध करने के लिए नहीं वरन उसे सहज, सुगम बनाए रखने के लिए काम करेगा।

भाषा भी माँ के समान है। भाषा हमें माँ की तरह पालती है पर हमें माँ के लिए अपने प्यार का एहसास, जज़्बे की गहराई का सही अंदाज़, अधिकतर माँ के चले जाने के बाद ही होता है। कहीं यही दशा हिंदी की न हो!

हिंदी की वर्तनी के मानकीकरण से भारत की नई पीढ़ी भी लाभान्वित होगी। स्वतंत्रता के बाद अंग्रेज़ी समर्थक पीढ़ी हिंदी के विकास में कपोलकल्पित कारणों से बाधक बनती आ रही है, नई पीढ़ी उससे मुक्त हो जाएगी। वर्तनी के मानकीकरण से दिशा निर्देश करना उनकी समस्याओं का अंत कर, स्पष्टता प्रदान कर, लाभकारी सिद्ध होगा। मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा हाल ही में प्रकाशित शिक्षा नीति के अंतर्गत इस पर भी विचार-विमर्श होना लाभदायक सिद्ध होगा। हिंदी को भारत के कोने-कोने में सशक्त बनाने के लिए तथा विदेशों में प्रचार-प्रसार एवं उसकी सहज, सुगम स्थापना हेतु उसकी वर्तनी के मानकीकरण पर पुनर्विचार आवश्यक है जिससे भारत के हर कोने के साथ ही साथ विदेशों में भी उसका एक ही स्वरूप हो।

टोरंटो, कनाडा
sneh.thakore@rogers.com

16

हिंदी भाषा ने हिंदी रंगमंच को बहुआयामी बनाया है

—सुश्री प्रियंका सोनकर

'संस्कृत है कूप जल, भाषा बहता नीर'

कबीरदास ने जिस भाषा को बहता नीर बताया है यह कोई और भाषा नहीं बल्कि हिंदी भाषा है जो नित नूतन और परिवर्तनशील है। इसकी परिवर्तनशीलता ने ही इसे आज बहुआयामी रूप प्रदान किया है। भूमंडलीकरण के इस दौर में आज लोकल ग्लोबल हो गया है और हिंदी भाषा के संदर्भ में देखें तो यह सिद्ध हो जाता है क्योंकि हिंदी भाषा का महत्व जितना 21वीं सदी में बढ़ा है उतना इससे पहले कभी नहीं रहा। आज़ादी से पूर्व हिंदी का प्रचार-प्रसार भारतीय मूल के लोगों के माध्यम से विदेशों में हुआ ही था। साथ ही आज़ादी के बाद भी विशेषकर उदारीकरण तथा सूचना-क्रांति के दौर में भारत एक बड़े बाज़ार के रूप में उभरा है। भारत के समान ही आज विदेशों में हिंदी शिक्षण, जन संचार, मनोरंजन आदि का माध्यम है। आज हिंदी न सिर्फ़ भारत की बल्कि पूरे विश्व में बोली जानेवाली भाषाओं में से एक प्रसिद्ध भाषा बनकर उभरी है। हिंदी की राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय भूमिका के कारण उसके विकास के साथ ही उसके प्रयोग क्षेत्र का भी विकास हुआ है। यही कारण है कि हिंदी भाषा को विश्व में सराहनीय स्थान मिल रहा है। जिस तरह भारत में आज विभिन्न विदेशी भाषाएँ सीखने और सिखाने का प्रचलन बढ़ा है उसी तरह विदेशों में भी हिंदी की माँग बढ़ी है।

'हिंदी ज्ञान मेरे लिए अमृतपान है, जितनी बार उसे पीता हूँ, उतनी बार लगता है, पुनः जीता हूँ।' चेकोस्लोवाकिया के प्रमुख शिक्षाविद एवं भारत में चेकोस्लोवाकिया के राजदूत डॉ. ओदोलेन स्मेकल की यह पंक्ति हिंदी के प्रति सम्मान और उनकी गहरी आत्मीयता को अभिव्यक्त करती है। एक विदेशी नागरिक के ये विचार किसी भी भारतीय के लिए आश्चर्यजनक है। हिंदी के प्रति एक विदेशी नागरिक की इतनी आत्मीयता यह दर्शाती है कि हिंदी में उसकी आत्मा बसती है। एक समय जॉर्ज बुश ने हिंदी को 21वीं सदी की भाषा कहा था।

जन्म : 1987
शिक्षा : स्नातक, स्नातकोत्तर, एमफ़िल, पीएचडी (अध्ययनरत)।
प्रकाशन : विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में लेख, कविताएँ और आलोचनाएँ प्रकाशित।
सम्मान : 2015 में दलित साहित्य अकादमी द्वारा 'वीरांगना सावित्रीबाई फुले सम्मान' से सम्मानित।
संप्रति : दिल्ली विश्वविद्यालय के दौलतराम कॉलेज के हिंदी विभाग में तदर्थ सहायक प्रवक्ता के रूप में कार्यरत।

अंतरराष्ट्रीय स्तर की भाषा के रूप में पहचान बनानेवाली हिंदी का महत्व इस रूप में हम स्वयं लगा सकते हैं कि हिंदी जाननेवालों की संख्या 1 अरब 10 करोड़ है जो विश्व की पूरी जनसंख्या का एक बहुत बड़ा हिस्सा है। इससे विश्व के मानचित्र पर हिंदी की पहचान एक अंतरराष्ट्रीय भाषा के रूप में निर्मित हुई है।

हिंदी ऐसे भाषा परिवार की एक आधुनिक भाषा है जो विश्व में सबसे बड़ा है तथा जिसके बोलनेवालों की संख्या विश्व में अधिक है। डॉ. सुशील कुमार चटर्जी अपनी पुस्तक 'Indo-Aryan and Hindi' में लिखते हैं—''विश्व में सबसे अधिक बोलनेवालों की संख्या चीनी की है, दूसरे नंबर पर अंग्रेज़ी है और तीसरे नंबर पर हिंदी।''

अब हिंदी अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मात्र विचाराभिव्यक्ति का साधन नहीं है अपितु वह राजनीतिक और सांस्कृतिक उद्देश्यों की प्राप्ति में भी एक समर्थ साधन के रूप में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका सिद्ध कर रही है।

इसी रूप में हम हिंदी भाषा और हिंदी रंगमंच के क्रमशः विकास और योगदान पर तथा हिंदी रंगमंच को जिन चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है उसे इस लेख के माध्यम से समझने का प्रयास करेंगे।

नाटक हिंदी साहित्य की प्रमुख विधाओं में से एक है और

रंगमंच इसी विधा का महत्वपूर्ण अंग है। रंगमंच कलाओं का समुच्चय है। साहित्य, संगीत, नृत्य, मूर्ति शिल्प, चित्रकला और वास्तुकला आदि रंगमंच में आकर उसके सम्प्रेषण को बहुस्तरीय बनाती हैं। रंगमंच अनेक मायनों में सर्वाधिक उदारता से दूसरी कलाओं से ग्रहण करनेवाली कला है। आशीष त्रिपाठी के अनुसार रंगमंच की व्यापक ग्रहणशीलता समुद्र की तरह है जिसमें भिन्न-भिन्न कलाएँ नदियों की तरह अपनी विशिष्टताओं के साथ आती और समा जाती हैं। उनका अपना अस्तित्व और उनकी अपनी पहचान समाप्त हो जाती है। वे अपनी स्वतंत्र इयत्ता के साथ नहीं रंगमंचीय होकर ही यहाँ आ सकती हैं।

यूँ तो विश्व में रंगमंच का प्रसिद्ध स्थान है और भारत में भी इसकी प्राचीन परंपरा रही है। संस्कृत की समृद्ध परंपरा से लेकर पारसी थियेटर से होते हुए बांग्ला तथा अन्य भारतीय भाषाओं में इसकी एक विकसित परंपरा रही है। इसी तरह हिंदी में भी रंगमंच ने अपनी महत्वपूर्ण पहचान बनाई है। हिंदी भाषा में विभिन्न नाटक अनूदित हुए और खेले गये। इसलिए आज हिंदी में रंगमंचीयता की बहुलता बहुतायत देखने को मिलेगी किंतु हिंदी रंगमंच के समक्ष कुछ चुनौतियाँ भी हैं। हिंदी भाषा और हिंदी रंगमंच पर विचार करने से पूर्व हिंदी नाटक और रंगमंच के इतिहास पर एक सरसरी नज़र डाल लेना उचित होगा।

हिंदी साहित्य के रंगमंच और हिंदी भाषा के रंगमंच, दोनों को अलग करके देखना इसलिए ज़रूरी है क्योंकि आज हिंदी साहित्य के प्रसिद्ध नाटकों की जगह बहुत से ऐसे नाटकों का मंचन हिंदी में हो रहा है जो अन्य भाषाओं में रचे गए हैं। हिंदी भाषा और हिंदी रंगमंच के लिए यह ज़रूरी भी है क्योंकि भाषा के विकास के लिए हम उसे किसी साहित्य तक सीमित करके नहीं देख सकते हैं। यदि हिंदी साहित्य के इतिहास को देखें तो वहाँ भी हिंदी नाटक का जो इतिहास रहा है वह अधिकतर हिंदी में अनुवादित है।

समाज में आमूलचूल परिवर्तन तथा पुनर्जागरण के लिए भारतेंदु हरिश्चंद्र ने गद्य के क्षेत्र में सर्वप्रथम नाटक का चुनाव किया। उन्होंने कुछ अधूरे, कुछ अनुवाद मिलाकर कुल 17 नाटकों की रचना की। भारतेंदु ने 1883 में 'नाटक' शीर्षक से एक लंबा निबंध लिखा जो हिंदी की आधारशिला कहा जाता है। उनकी सबसे बड़ी उपलब्धि यह रही कि वे नाटक और रंगमंच को अभिन्न मानकर अपनी मित्र मंडली के माध्यम से रंगमंच और अभिनय को प्रोत्साहित करते रहे। उन्होंने संस्कृत, बांग्ला तथा अंग्रेज़ी के नाटकों का हिंदी में अनुवाद किया। जिनमें 'दुर्लभ बंधु', 'द मर्चेंट ऑव वेनिस' इत्यादि प्रमुख हैं। 'अन्धेर नगरी' भारतेंदु द्वारा रचित प्रसिद्ध और महत्वपूर्ण प्रहसन है। यह आज भी प्रासंगिक है तथा हिंदी-भाषी क्षेत्रों में इसका निरंतर मंचन होता रहता है।

हिंदी नाटक के इतिहास में पारसी थियेटर का भी स्थान रहा है। पारसी थियेटर ने व्यवसाय के उद्देश्य से विभिन्न नाटकों का मंचन किया। इसकी प्रवृत्ति व्यावसायिक थी और उद्देश्य मस्ती करना था। यहाँ गौरतलब है कि पारसी थियेटर की स्थिति से भारतेंदु मंडल के लेखक परेशान थे। एक तरफ़ उनमें स्पर्धा थी तो दूसरी तरफ़ वे उनकी लोकप्रियता से क्षुब्ध भी थे। इसलिए उन्होंने नाटक और रंगमंच में फूहड़पन न आ जाए इसका विशेष ध्यान रखा। भारतेंदु के समय में विभिन्न नाट्य मंडलियों की स्थापना हुई जिनमें हिंदी नाट्य परिषद (1906) और हिंदी नाट्य समिति (1908) प्रमुख थीं। इन नाट्य मंडलियों ने हिंदी को बेहतर नाट्य रचनाएँ दीं। भारतेंदु के बाद जयशंकर प्रसाद, उपेंद्रनाथ अश्क, जगदीशचंद्र माथुर, भुवनेश्वर, उदयशंकर भट्ट, लक्ष्मीनारायण मिश्र, सेठ गोविंददास, हरिकृष्ण प्रेमी और विष्णु प्रभाकर इत्यादि नाटककारों ने पौराणिक, ऐतिहासिक नाटक तो लिखे किंतु इन्होंने रंगमंच की आवश्यकताओं को नज़रअंदाज़ कर दिया जिसकी वजह से हिंदी क्षेत्र में रंगमंच को बहुत क्षति पहुँची।

आज़ादी के बाद रंगकर्म को प्रोत्साहन देने के लिए नाटक की सक्रिय भागीदारी के लिए विभिन्न उपाय किए गए। 6ठे दशक में राष्ट्रीय संगीत नाटक अकादमी तथा इसके अंतर्गत नाट्य विद्यालय की स्थापना से सारे देश की नाट्य प्रतिभाएँ एक साथ आईं। हिंदी के माध्यम से सभी भारतीय और कुछ विदेशी भाषाओं के नाटकों का सक्रियता के साथ मंचन हुआ जिसके कारण नाटक लेखन के क्षेत्र में पुनर्जागरण हुआ। इस समय के प्रसिद्ध नाटककारों में मोहन राकेश, लक्ष्मीनारायण लाल तथा धर्मवीर भारती के नाम लिये जा सकते हैं जिन्होंने हिंदी को ऐसे नाटक दिए जिनका मंचन आज भी होता रहता है और हिंदी नाटक के इतिहास में ये नाटक मील का पत्थर भी हैं—'आषाढ़ का एक दिन' (1958), 'मादा कैक्टस' (1959), तथा 'अंधा युग' (1955)। इन नाटकों की खासियत यह रही कि प्रकाशित होने से पहले ही इनका मंचन हुआ। हिंदी क्षेत्र में अभी तक नाटक और रंगमंच को लेकर जो अवरोध उत्पन्न हुए थे

वे धीरे-धीरे खत्म होने लगे थे। अब दोनों पक्षों में एक-दूसरे के प्रति सजगता बढ़ गई। अब केवल नाटक लेखन के तौर पर ही नहीं रचा जा रहा था उसे रंगमंच की दृष्टि से रचा जाने लगा। हिंदी क्षेत्र के कुछ नगरों में रंगमंच सक्रिय हो चला था। बांग्ला तथा मराठी से अनूदित नाटकों ने हिंदी रंगमंच और रंगकर्म को समृद्ध बनाया।

हिंदी रंगमंच के इतिहास में पृथ्वी थिएटर का भी विशिष्ट स्थान रहा है। 5वें और 6ठे दशक में पृथ्वीराज कपूर द्वारा संस्थापित 'पृथ्वी थिएटर' ने अर्ध-व्यावसायिक स्तर पर हिंदी नाटकों का प्रदर्शन किया। यह पारसी रंगमंच का ही सुधरा हुआ रूप कहा जा सकता है। उनकी विशेषता यह थी कि उन्होंने अपने द्वारा ही रचे गए नाटकों का मंचन किया न कि किसी रचनाकार द्वारा रचित किसी नाटक का। इसी दशक में जन नाट्य संघ (इप्टा) एक अर्ध-राजनीतिक संस्था थी। इन दोनों संस्थाओं ने रंगमंच को हिंदी-भाषी क्षेत्रों में जन-जन तक पहुँचाया। इनकी महत्वपूर्ण उपलब्धि यह रही कि इस समय सामान्य जनता को नाटक का जीवंत रूप देखने का अवसर मिला।

रंगमंच में राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय की जितनी भूमिका रही वह काबिल-ए-तारीफ़ है। यह संस्था पूरे समर्पण के साथ अपने उद्देश्यों के अनुरूप रंगकर्म करती रही। संगीत नाटक अकादमी संस्था ने भी रंगमंच में अपना योगदान दिया। इसने हिंदी रंगमंच को आधुनिक स्वरूप दिया। यह प्रयोग का दौर था जिसने ऐसे बहुत से नाटककारों को जन्म दिया जो अपने-अपने क्षेत्र में माहिर थे। इनमें सुरेंद्र वर्मा, लक्ष्मीनारायण लाल, रमेश बक्षी, मुद्राराक्षस, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, नरेंद्र कोहली, असग़र वजाहत इत्यादि प्रमुख हैं। इन सभी नाटककारों ने हिंदी में बहुत ही बेहतरीन और प्रभावशाली नाटकों की रचना की जिसका समय-समय पर मंचन होता रहता है।

पृथ्वी थिएटर और इप्टा के अवसान के बाद से हिंदी रंगमंच के एक नए युग की शुरूआत होती है जिसे पहला आधुनिक रंगमंच का दर्जा मिला। समकालीन रंगमंच की विभिन्न धाराओं और परंपराओं के निर्माण की पहल हम यहाँ से देख सकते हैं। हिंदी रंगमंच में 'समकालीन' से सामान्यत: आशय उन रंग-प्रवृत्तियों से लगाया जाता है, जो 6ठे दशक के उत्तरार्ध में रूप लेने लगी थीं और जिनका प्रवर्तन एवं रूप-निर्धारण बांग्ला रंगमंच में शंभू मित्र, उत्पल दत्त जैसे शीर्ष रंगकर्मी कर रहे थे। हिंदी में ये प्रवृत्तियाँ हबीब तनवीर, इब्राहिम अल्काजी, सत्यदेव दुबे, श्यामानंद जालान, ओम शिवपुरी, ब.व. कारंत, सत्यव्रत सिन्हा, लक्ष्मीनारायण लाल, शांता गांधी, बृजमोहन शाह, रजिंदरनाथ और मोहन महर्षि जैसे रंगकर्मियों के रंग कार्य में पहले-पहल दिखाई देती हैं जो अलग-अलग कालखंडों में प्रमुख रहीं। यह समय पूरी तरह से अल्काजी युग के नाम से भी जाना जाता है क्योंकि उन्होंने एक लंबे अरसे के बाद नाटक और रंगमंच के बीच की खाई को पाटने का प्रयास किया। उनकी महान उपलब्धि यह भी रही कि उन्होंने नाट्य कृतियों को महान साहित्य के साथ-साथ महान रंग प्रयोगों की आधारभूमि बनाई। हिंदी रंगमंच को आधुनिक संवेदना के साथ जोड़कर उन्होंने इसे समकालीन और सर्वकालीन बनाया। 'अंधा युग' (धर्मवीर भारती) और 'आषाढ़ का एक दिन' (मोहन राकेश) की बेहतरीन रंगमंचीयता का श्रेय अल्काजी को जाता है और यही कारण है कि हिंदी की ये दोनों कृतियाँ रंगमंच में अनूठी और बेजोड़ मानी जाती हैं। यथार्थवादी और दृश्य प्रधान नाटकों का मंचन इब्राहिम अल्काजी के रंगकर्म की प्रमुख विशेषता थी। समकालीन हिंदी रंगमंच की दूसरी धारा 1973 से प्रमुख हुई, हबीब तनवीर इसके नेतृत्वकर्ता थे। हबीब तनवीर प्रतिबद्ध और परंपरा के सजग रंगकर्मी थे। इन्होंने भारतीयता का विशेष ख्याल रखा। लोकनाट्यों से ऊर्जा ग्रहण करके हबीब तनवीर और ब.व. कारंत जैसे महान रंगकर्मियों ने रंग प्रयोगों से रंगमंच को अधिकाधिक सहज और भारतीय बनाया।

हिंदी रंगमंच को गरिमा और प्रतिष्ठा प्रदान करने में इब्राहिम अल्काजी और उनके शिष्यों के साथ सत्यदेव दुबे, श्यामानंद जालान, ओम शिवपुरी, राजेंद्रनाथ, मोहन महर्षि आदि का महत्वपूर्ण योगदान रहा। इन्होंने यथार्थवादी रंग शिल्प के भीतर अपना रंगकार्य किया। इब्राहीम जी उच्च घराने से थे और उनकी शिक्षा-दीक्षा अंग्रेज़ी में हुई थी किंतु उन्होंने हिंदी को रंगकर्म का आधार बनाया। अपना संपूर्ण सृजनात्मक कर्म उन्होंने हिंदी भाषा में किया और परिणामस्वरूप हिंदी का पहला पूर्ण आधुनिक रंगमंच सामने आया। उन्होंने हिंदी रंगकर्म पर पश्चिम के महान नाटककारों और उनकी कृतियों को उनकी प्रतिष्ठा के अनुरूप प्रस्तुत किया और इस तरह हिंदी रंगकर्मियों, नाटककारों और प्रेक्षकों को विश्व की महान रंग परंपराओं और कृतियों का परिचय तथा श्रेष्ठ प्रतिस्पर्धा भाव मिला। प्रेरणा और चुनौती दोनों ही उनके सम्मुख थे। सोफ़ोक्लीज, यूरीपडीज, शेक्सपीयर, इब्सन, मोलियर, अल्बेयर कामू, स्ट्रिंडबर्ग, सेमुअल बेकेट, ज्याँ एनुई, चेखव, पिरेंदेलो, लोर्का, जार्ज बुखनर,

सार्त्र और जॉन आस्बर्न जैसे श्रेष्ठ नाटककारों के महान नाटक एक साथ हिंदी में एक-एक कर सामने आए और हिंदी भाषा और हिंदी रंगमंच महान कृतिकारों और कृतियों का वाहक बना। इब्राहिम अल्काजी ने हिंदी रंगमंच की दशा और दिशा को बदलने में अपनी सर्वश्रेष्ठ भूमिका निभाई।

हिंदी के नाटकों के मंचन के बावजूद इब्राहिम अल्काजी पर पश्चिम का आरोप ज़्यादा मढ़ा गया और उनकी रुचि एवं रंग-दृष्टि को विदेशी मानकर उनकी आलोचना की गई। जयदेव तनेजा जैसे आलोचक उनके रचना कर्म और भारत, भारतीयता व हिंदी भाषा के प्रति प्रेम को व्यक्त करते हुए लिखते हैं कि भारतीय और भारतीयता के संदर्भ में आश्चर्यजनक तथ्य है कि तथाकथित अंग्रेज़ी-प्रिय और पाश्चात्य संस्कृति एवं तकनीकी-प्रिय इब्राहिम अल्काजी ने 1947 में नाट्य प्रशिक्षण के लिए इंग्लैंड जाते हुए ही पूरी गंभीरता से यह सोच लिया था कि इस देश का सार्थक रंगकर्म सिर्फ़ हिंदी/ हिंदुस्तानी में ही हो सकता है। अल्काजी का हिंदी भाषा के प्रति प्रेम हिंदी रंगमंच के लिए एक महान उपलब्धि थी। तमाम प्रशंसनीय टिप्पणियों और आलोचनाओं के बावजूद अगर देखा जाए तो इब्राहीम अल्काजी ने हिंदी में एक गंभीर एवं पूर्ण रंगकर्म की बुनियाद रखी और उसे सम्मान और गौरव दिलाया।

हिंदी रंगमंच पर हबीब तनवीर ने 1954 में 'आगरा बाज़ार' तथा 1958 में 'मिट्टी की गाड़ी' के प्रदर्शन कर यथार्थवादेतर कल्पनापूर्ण भारतीय 'रंग-दृष्टि' का प्रारंभिक अवतरण कर लिया। 1960-73 के समकालीन रंगमंच के प्रथम दौर में हबीब तनवीर के साथ-साथ जिस निर्देशक ने दूसरी धारा के विकास में महत्वपूर्ण कार्य किया, वे हैं शान्ता गांधी। रंगकर्म की दूसरी धारा ने 1973 में एक महत्वपूर्ण मोड़ लिया। यह वर्ष समकालीन हिंदी रंगमंच के दूसरे युग का प्रस्थान बिंदु कहा जा सकता है। 1973-76 का समय आधुनिक रंगमंच का स्वर्णिम युग कहलाता है। इस समय बहुत से प्रसिद्ध हिंदी नाटकों का मंचन हुआ जिसने हिंदी भाषा और हिंदी रंगमंच को गौरव प्रदान किया। यही वह समय था जब विभिन्न कथा साहित्य का हिंदी भाषा में नाट्य रूपांतरण हुआ। समकालीन हिंदी रंगमंच मानक हिंदी बोलियों के समन्वय से उभरनेवाली हिंदी नाट्य भाषा की खोज पर बल दे रहा है।

हिंदी रंगमंच ने भाषायी उदारता के माध्यम से अपने स्वरूप को बहुलतावादी बनाए रखा है। बहुत से लोक और संस्कृत नाटक हिंदी रंग परंपरा से जुड़कर बड़ी संख्या में अन्य भारतीय तथा विदेशी भाषाओं में मंचित होते रहते हैं। अन्य भारतीय भाषाओं के नाटकों के अनुवाद ने हिंदी मंच पर हुए निरंतर प्रयोगों से समग्र भारतीय रंगमंच को प्रभावित किया। इस प्रकार हिंदी का रूप दिन दूना रात चौगुना निखरने लगा। जिस तरह आज अंतरराष्ट्रीय पटल पर अंग्रेज़ी व्याप्त है, उसी प्रकार हिंदी के नाटकों का भारतीय भाषाओं के बीच आदान-प्रदान में बढ़ोतरी हुई।

हिंदी भाषा की रंगमंच में बढ़ती लोकप्रियता को मानते हुए प्रसिद्ध नाटककार नेमिचंद जैन का कहना है कि हिंदी में नाटक और रंगमंच को लेकर जितनी सामग्री पुस्तकाकार में प्रकाशित हुई है, उतनी देश की दूसरी भाषाओं में नहीं मिलती। बेशक, उसका स्तर हिंदी रंगकर्म की असमता से जुड़ा हुआ है इसलिए कुछ बहुत अच्छा है और कुछ बहुत ही प्रारंभिक स्तर का है। हिंदी ही एकमात्र ऐसी भाषा है जिसमें बहुत सारे नाटक किसी व्यावसायिक या पैसा-कमाऊ दबाव से नहीं लिखे गए हैं। उन्हें लिखने की प्रेरणा नाटककार को अपने भीतर या समाज से मिली है। उन्होंने महसूस किया है कि उन्हें नाटक में कोई ऐसी ज़रूरी और अतिरिक्त बात कहनी है जो वे कहानी, कविता या उपन्यास में नहीं कह पाते। ऐसे सभी नाटक पूरी तरह से कामयाब हों या न हों, यह अलग बात है। जैसे उपन्यास भी कभी कामयाब होता है, कभी नहीं होता। कविता के साथ भी ऐसा ही है। हिंदी में इस तरह के सृजनात्मक प्रेरणा से लिखे गए नाटकों की बड़ी संख्या है।

हिंदी एक ऐसी भाषा रही है जिसने रंगमंच के स्तर पर कभी भेदभाव नहीं किया। यह ऐसी भाषा रही है जिसमें अगर जयशंकर प्रसाद खेले जा सकते हैं तो आगा हश्र कश्मीरी जैसे लोग भी खेले जा सकते हैं। आगा हश्र कश्मीरी के नाटक 'रुस्तम सोहराब', 'यहूदी की लड़की' और दूसरे नाटक हिंदी के नाटक मानकर ही खेले जाते रहे हैं। भाषा और रंगमंच के स्तर पर हिंदी भाषा ने कभी छलावा नहीं किया और न ही किसी साम्प्रदायिक वैमनस्य का माहौल पनपने दिया।

विभिन्न भाषाओं के नाटकों के अनुवाद या विदेशी नाटकों के रूपांतरों ने हिंदी नाटक लेखन को गति प्रदान की है जिससे विभिन्न रंगकर्मियों, दर्शकों तथा हिंदी नाटककारों को तरह-तरह के विचारों, संवेदनाओं और रुझानों से टकराने और उनको अपने कार्य में समाविष्ट करने का अवसर मिला है। इससे हिंदी रंगमंच में काफ़ी

समृद्धि आई है। हिंदी क्षेत्र और हिंदी भाषा की ग्रहणशीलता अद्भुत है। दूसरी भाषाओं के बहुत से नाटककारों के नाटक हिंदी भाषा में खेले गए हैं, इसके साथ ही साथ इनका अनुवाद और रूपांतरण भी हुआ है जिसमें शेक्सपीयर, मोलियर, स्टिगबर्ग, इब्सन और ब्रेख्त प्रमुख हैं। अपने एक साक्षात्कार में नेमिचंद जैन ने हिंदी और रंगमंच पर गर्व करते हुए कहा था कि अन्य भाषाओं के विविध कथा और शैली के नाटकों को प्रस्तुत करके हिंदी रंगमंच ने महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ हासिल की हैं। बहुत कुछ इस कारण भी हिंदी रंगमंच पर जो काम है, वह सभी भारतीय भाषाओं के मुकाबले बेहतर न भी हो तो समकक्ष अवश्य है। अब हिंदी रंगकर्म की स्थिति, उसमें चाक्षुष तत्वों की कल्पनाशीलता और कई बार अभिनय का स्तर भी बेमिसाल है और हम इस पर गर्व कर सकते हैं। नेमिचंद जैन का हिंदी में रंगमंच के विकसित रूप पर गर्व करना लाज़मी है क्योंकि आज संपूर्ण भारतवर्ष में विभिन्न छोटे-बड़े शहरों में प्रत्येक महीने हिंदी नाटक तो खेले ही जाते हैं, नुक्कड़ नाटकों ने भी हिंदी भाषा को गतिशीलता प्रदान की है।

देवेंद्र राज अंकुर हिंदी भाषा को किसी एक संकुचित दायरे में बाँधकर रखने के विरोधी हैं। उनका मानना है कि 'यह तो हिंदी भाषा की विशालता और उदारता का परिचय है कि उसने जितना अंतरराष्ट्रीय रंगमंच को हिंदी के सामने एक्सपोज़ किया है और दूसरी भाषाओं के नाटकों को जितना हिंदी में लाकर उसने दिखाया उतना दुनिया में किसी और भाषा ने शायद ही किया हो। कुछ हद तक आप अंग्रेज़ी का उदाहरण दे सकते हैं। हमारे देश में हिंदी ने ही यह किया है। हिंदी के कितने नाटक भारत की दूसरी भाषाओं में अनुवादित होकर मंचित हुए हैं? बहुत कम उदाहरण मिलेंगे। लेकिन कन्नड़, बांग्ला, गुजराती, तमिल तथा तेलुगू से जो कुछ भी महत्वपूर्ण है और सिर्फ़ नाटक के स्तर पर नहीं, साहित्य की दूसरी विधाएँ हैं—उपन्यास, कहानियाँ, कविताएँ आदि जितनी भी हिंदी में आई हैं शायद ही किसी और भाषा में आई हों। इतनी उदारता मुझे नहीं लगता कि हिंदुस्तान के रंगमंच में कभी रही है और यही क्यों? आप रंगमंच की ही बात क्यों कर रहे हैं—हिंदी ने अपने आपको संकुचित दायरे में नहीं बाँधे रखा। यह उसके लिए बहुत बड़ा वरदान भी कहा जा सकता है। मानक रचने का उसने काम किया।'

छोटे-छोटे शहरों के हिंदी क्षेत्र में होनेवाले रंगकर्म ने रंगमंच को बड़े कैनवस पर स्थापित करने का प्रयास किया है क्योंकि महानगरों में दूरियों की समस्या, परिवहन की समस्या, साधन जुटाने की समस्या इत्यादि का सामना करना पड़ता है जबकि छोटे-छोटे शहरों में ऐसा नहीं है।

हिंदी रंगमंच अपनी निजी पहचान बनाने के लिए नई रंग-शैलियों की खोज और बेहतर प्रयोग करके एक निश्चित स्वरूप पाने की कोशिश में लगा हुआ है। वर्तमान जीवन और परिवेश ने हिंदी नाटक तथा रंगमंच को विधा और विधानगत स्तर पर प्रभावित किया है : वर्तमान हिंदी नाटक और रंगमंच की विरासत के रूप में जो भग्नावशेष प्राप्त हुआ था, आज उस पर विशाल एवं भव्य रंगमहल खड़ा है। रंगमंच की दृष्टि तथा समझ में आमूल परिवर्तन होने के कारण रंगदर्शन में और इसलिए नाटक की रचना-प्रक्रिया में परिवर्तन आया है जिसने रंगशाला की पूर्वागत समस्त सीमाओं एवं रंग-रचना के विधि-निषेधों की बाध्यताओं को भी तोड़ दिया है। निष्कर्षत: यह कह सकते हैं कि हिंदी भाषा ने हिंदी रंगमंच को बहुआयामी बनाया है।

संदर्भ सूची—

1. तिवारी भोलानाथ, 1987 हिंदी भाषा का अंतरराष्ट्रीय संदर्भ, पेज नं. 26
2. त्रिपाठी आशीष, 2012 समकालीन हिंदी रंगमंच और रंगभाषा, पेज नं. 15
3. त्रिपाठी आशीष, हिंदी रंगमंच :समकालीन परिदृश्य, पेज नं. 119
4. त्रिपाठी आशीष, समकालीन हिंदी रंगमंच और रंगभाषा, पेज नं. 121
5. त्रिपाठी आशीष, हिंदी रंगमंच : समकालीन परिदृश्य, पेज नं. 123
6. सं, पुष्कल, अजीत, अग्रवाल, हरीशचंद्र, 2004 नाटक के सौ बरस, पेज नं. 445
7. नाटक के सौ बरस, पेज नं. 442
8. नाटक के सौ बरस, पेज नं. 380-381

सहायक ग्रंथ—

1. तिवारी भोलानाथ, 1987 हिंदी भाषा का अंतरराष्ट्रीय संदर्भ, पांडुलिपि प्रकाशन दिल्ली।
2. त्रिपाठी आशीष, 2012 समकालीन हिंदी रंगमंच और रंगभाषा, शिल्पायन प्रकाशन, नई दिल्ली
3. अग्रवाल हरीशचंद्र, 2004 नाटक के सौ बरस, शिल्पायन प्रकाशन, नई दिल्ली।
4. तनेजा जयदेव, 2002 समकालीन हिंदी नाटक और रंगमंच, तक्षशिला प्रकाशन दिल्ली।
5. सिंह बच्चन, 1989 हिंदी नाटक, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली।
6. कौड़ा, स्वामी प्यारी, 2013 स्वातंत्र्योत्तर हिंदी नाटक और रंगमंच, के.एल. पचौरी प्रकाशन नई दिल्ली।

नई दिल्ली, भारत
priyankasonkar@yahoo.co.in

17

अंतरराष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में हिंदी भाषा और हिंदी सिनेमा

—श्री प्रवीण सिंह चौहान

भाषा संस्कृति की धरोहर होती है। किसी भी संस्कृति के विकास एवं प्रचार-प्रसार हेतु भाषा की बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका होती है। भारत एक बहुभाषी एवं बहुसांस्कृतिक देश है परंतु किसी अन्य भाषा की तुलना में हिंदी भारतीय भाषा के रूप में अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सबसे अधिक जानी-पहचानी जाती है। यह गौरव का विषय है कि हिंदी आज भारत की सीमा लांघकर विश्व के हर कोने तक जा पहुँची है। विश्व के ज़्यादातर देशों में हिंदी न केवल पढ़ाई जा रही है बल्कि शान से बोली भी जा रही है। इस व्यापकता के पीछे अन्य कारकों के अलावा सिनेमा भी एक कारक है जिसके माध्यम से हिंदी विश्व की सिरमौर बन पाई है। हिंदी भारत की ही नहीं उसके मुख्य सिनेमा की भी भाषा है। विश्व में हिंदी सिनेमा भारतीय सिनेमा का प्रतिनिधित्व करता है। हिंदी भाषा के संदर्भ में बात की जाए तो इस बात को आसानी से नकारा नहीं जा सकता कि वर्तमान में हिंदी भाषा के प्रचार-प्रसार का सबसे सशक्त और प्रभावी माध्यम है—हिंदी सिनेमा। यह सत्य है कि सिनेमा मनोरंजन का माध्यम है लेकिन उससे भी बड़ा सत्य यह है कि आज के युग में सिनेमा शिक्षण-प्रशिक्षण एवं संप्रेषण का सबसे बेहतर ज़रिया है। हिंदी सिनेमा एक ऐसे माध्यम के रूप में हमारे बीच है जो अपने आप में कई कलाओं और संस्कृतियों को समेटे हुए है। बात अगर वैश्विक स्तर पर हिंदी भाषा के प्रचार-प्रसार की हो तो हिंदी सिनेमा सबसे ज़्यादा प्रभावी और सरल माध्यम के रूप में नज़र आता है। हिंदी भाषा की लोकप्रियता में हिंदी सिनेमा का विशेष योगदान है। इसमें तनिक भी संदेह नहीं है कि हिंदी सिनेमा ने हिंदी भाषा की लोकप्रियता में वृद्धि की है बल्कि उसकी व्यावहारिकता को भी बढ़ाया है।

नाट्यकला एवं फ़िल्म अध्ययन में एम.ए.।
अनुवाद तथा सिनेमा केंद्रित द्विमासिक ई-पत्रिका 'ट्रांसफ्रेम' का संपादन एवं प्रकाशन।
वर्तमान में मुंबई फ़िल्म उद्योग में सिनेमाटोग्राफर-एडिटर के रूप में कार्यरत।

भारतीय सिनेमा और हिंदी भाषा

भारतीय सिनेमा विश्व का सबसे बड़ा और विविधता पूर्ण सिनेमा उद्योग है। प्रतिवर्ष 900 से भी अधिक फ़िल्मों का उत्पादन करनेवाला भारतीय सिनेमा विश्व का सबसे बड़ा उत्पादक है। भारतीय सिनेमा के अंतर्गत भारत के विभिन्न भागों और विभिन्न भाषाओं में फ़िल्में आती हैं। यह कई स्तरों में विभाजित है—मुख्यत: प्रचलित हिंदी सिनेमा जिसे व्यावसायिक सिनेमा भी कहा जाता है। इसके अलावा स्थानीय सिनेमा, कला सिनेमा तथा डायस्पोरा सिनेमा। बीच में समानान्तर सिनेमा भी चलन में आया था। वैसे तो विश्व भर में कई अलग-अलग भाषाओं में सिनेमा है और भारत में ही लगभग कई स्थानीय भाषाओं का सिनेमा है। हिंदी के अलावा और भी अन्य भारतीय भाषाओं में फ़िल्मों का निर्माण होता है लेकिन हिंदी फ़िल्मों की लोकप्रियता का ग्राफ़ इन सबसे ऊपर रहा जिसकी प्रसिद्धि विश्व के कोने-कोने में फैलती चली गई। आजकल सिनेमा सेटलाइट एवं इंटरनेट जैसे माध्यमों के द्वारा विश्व के अनेक देशों तक अपनी पहुँच बना रहा है। हिंदी फ़िल्म उद्योग का मुख्य केंद्र मुंबई है जिसे 'बॉलीवुड' कहा जाता है। भारतीय फ़िल्में विदेशों में भी देखी जाती हैं। भारतीय सिनेमा ने 20वीं शती के आरंभिक काल से ही विश्व के सिनेमा जगत पर गहरा प्रभाव छोड़ा है। भारतीय फ़िल्मों का अनुकरण पूरे दक्षिण एशिया तथा मध्य पूर्व में हुआ। वर्तमान में हॉलीवुड तथा चीनी फ़िल्म उद्योग के साथ भारतीय सिनेमा भी वैश्विक उद्योग बन चुका है।

हिंदी साहित्य की तरह ही हिंदी सिनेमा भी हिंदी भाषा, भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता से पूरे विश्व को परिचित करा रहा है। भारत के बाहर बसे भारतीय मूल के लोगों की दूसरी व तीसरी पीढ़ी के बीच

हिंदी को लोकप्रिय बनाने में हिंदी सिनेमा के प्रक्रियात्मक योगदान को स्वीकार किया जाने लगा है।

जब हम भारत व भारत के बाहर अहिंदी-भाषी राज्यों तथा देशों में हिंदी के प्रचार-प्रसार की बात करते हैं तो हिंदी फ़िल्मों की भूमिका को नज़रअंदाज़ नहीं कर सकते हैं। हिंदी फ़िल्में, विशेषकर उनके गीत अफ्रीका, मध्य-पूर्व, मध्य एशिया, दक्षिणपूर्व एशिया और पूर्वी यूरोप के कुछ हिस्सों में बहुत ही लोकप्रिय हैं। अपने समय के सबसे बड़े सितारे एवं निर्देशक राज कपूर ने 'श्री 420' का निर्माण किया था। उस फ़िल्म में एक गाना था 'मेरा जूता है जापानी, ये पतलून इंग्लिश्तानी, सिर पर लाल टोपी रूसी, फिर भी दिल है हिंदुस्तानी' आज भी रूस में लोग इस गाने पर बड़े चाव के साथ गाते-नाचते नज़र आते हैं। रूस के सेंट पीटर्सबर्ग में हिंदी पढ़नेवाले बारान्निकोव की 3 पीढ़ियाँ हिंदी से जुड़ी हुई हैं। डॉ. पीटर बारान्निकोव मानते हैं कि हिंदी के प्रचार-प्रसार में हिंदी सिनेमा ने जितना योगदान दिया है उतना और किसी माध्यम ने नहीं दिया है। राज कपूर पूरे सोवियत संघ में बहुत ही लोकप्रिय थे। यहाँ तक कि वहाँ के भूतपूर्व राष्ट्रपति श्री बोरिस एल्त्सिन को भी 'आवारा हूँ' गीत गुनगुनाते हुए सुना गया। लाखों रूसवासियों ने हिंदी फ़िल्मों को देखने-समझने के लिए हिंदी भाषा सीखी। ज़ाहिर सी बात है कि हिंदी फ़िल्में कई पूर्वी यूरोपियन देशों, जैसे पोलैंड, हंगरी और बुल्गारिया में भी बहुत सफल हुई थीं। ऐसे में भारत की गौरवशाली परंपरा, उसका स्वर्णिम इतिहास और सामाजिक संस्कृति की अनुगूँज तथा विश्व के कोने-कोने में हिंदी के माध्यम से प्रसारित-प्रचारित करने में भारतीय सिनेमा के योगदान को कैसे विस्मृत किया जा सकता है?

अंतरराष्ट्रीय स्तर पर हिंदी सिनेमा की लोकप्रियता

हमारे फ़िल्मकार भारत ही नहीं यूरोप, अमेरिका और खाड़ी देशों के अपने दर्शकों को ध्यान में रखकर फ़िल्मों का निर्माण कर रहे हैं। यह गौरव का विषय है कि हमारी फ़िल्में ऑस्कर-अवार्ड तक अपनी पहुँच बना रही हैं। हिंदी सिनेमा की अंतरराष्ट्रीय स्तर पर लोकप्रियता का कारण देखें तो इसके पीछे कई तत्व नज़र आते हैं—

- प्रवासी भारतीय
- व्यावसायिक प्रतियोगिता व बढ़ता हुआ अंतरराष्ट्रीय बाज़ार
- भारतीय भाषा, सभ्यता एवं संस्कृति के प्रति आकर्षण
- विदेशी शिक्षण संस्थानों में हिंदी का बढ़ता अध्ययन-अध्यापन
- हिंदी भाषा को सीखने व सिखाने का मनोरंजक व सशक्त माध्यम होना

जहाँ-जहाँ भारतीय बसे हैं, वहाँ भारतीय व्यंजनों की तरह हिंदी फ़िल्में भी पहुँचने लगी हैं। डिजिटल क्रांति के बाद हिंदी फ़िल्में तेज़ी से मूल रूप में सारी दुनिया में दस्तक देने लगी हैं। मॉरीशस फ़िजी, सूरीनाम तथा त्रिनिदाद जैसे देशों में भारतीय मूल के निवासियों की उल्लेखनीय संख्या होने के कारण वहाँ हिंदी फ़िल्में स्वत: सस्नेह प्रचारित होती हैं। भारत से सर्वाधिक भारतवंशी दक्षिण अफ्रीका में बसे हुए हैं। इनमें दक्षिणी भारत के राज्यों के भी भारतवंशी बड़ी तादाद में हैं। वे अपने मनोरंजन के लिए हिंदी फ़िल्में देखते हैं। कुछ साल पहले दक्षिण अफ्रीका में ही 'आइफ़ा अवार्ड' समारोह में आमिर ख़ान की फ़िल्म लगान का भव्य प्रीमियर हुआ था। उसके बाद ही दक्षिण अफ्रीका में हिंदी फ़िल्मों का प्रदर्शन तेज़ हुआ। प्रवासी भारतीय अपने बच्चों के प्रति अपने उत्तरदायित्व को समझते हुए उन्हें भारतीय संस्कृति और सभ्यता से परिचित कराने तथा हिंदी भाषा सिखाने हेतु उन्हें हिंदी सिनेमा देखने के लिए प्रोत्साहित करते हैं।

हिंदी सिनेमा अंतरराष्ट्रीय बाज़ार पर भी अपनी धाक जमा रहा है, वैश्वीकरण के चलते व्यावसायिक प्रतियोगिता बढ़ी है। हिंदी सिनेमा की बढ़ती लोकप्रियता और बाज़ार ने कई देशों का ध्यान आकृष्ट किया है। विदेशों में हिंदी फ़िल्मों की बढ़ती लोकप्रियता को इससे और बढ़ावा मिला है।

भारत की पुरातन संस्कृति, इतिहास और बौद्ध धर्म से संबंध के चलते भी लंबे समय से भाषाविद और दूसरे देशों के विद्वान हिंदी के अध्ययन के लिए प्रेरित होते रहे हैं। वर्तमान में भी यह आकर्षण कम नहीं हुआ है और हिंदी फ़िल्मों ने इस आकर्षण को बनाया हुआ है। हिंदी सिनेमा भारतीय संस्कृति को जानने-देखने का सबसे सुलभ माध्यम है।

हिंदी विश्व के 30 से अधिक देशों में पढ़ी-पढ़ाई जाती है, लगभग 100 विश्वविद्यालयों में उसके लिए अध्यापन केंद्र खुले हुए हैं। अकेले अमेरिका में लगभग 20 केंद्रों में उसके अध्ययन अध्यापन की व्यवस्था है। टोक्यो यूनिवर्सिटी में हिंदी का अध्यापन साल 1908 से चालू हो गया था। पर अब कुछेक सालों से वहाँ पर हिंदी फ़िल्मों की लोकप्रियता भी बढ़ती जा रही है। वहाँ तो हिंदी फ़िल्मों का प्रदर्शन करते हुए ही हिंदी सिखाई जाती है। 'एक था टाइगर', 'धूम 2', '3 इडियट्स' और 'इंग्लिश-विंग्लिश' जैसी

हिंदी फ़िल्मों को जापानी जनता ने खूब सराहा। इन फिल्मों को अपार सफलता मिली। अमेरिका के कई हिंदी सिखानेवाले स्कूलों में दूसरी-तीसरी पीढ़ी के भारतवंशियों को चर्चित हिंदी फ़िल्मों के लोकप्रिय गानों और संवादों के माध्यम से हिंदी सिखाई जा रही है।

समूचे विश्व को और ज़्यादा निकट लाने के लिए निश्चित ही इस क्षेत्र में आज भी बेहतर ढंग से काम किए जाने की आवश्यकता है। फ़िल्मों में मनोरंजन और अर्थ उत्पादन के साथ-साथ इनकी सार्थकता का भी ध्यान रखा जाए तो हिंदी सिनेमा और भी प्रभावशाली माध्यम सिद्ध हो सकता है। लेकिन इतना तो तय है कि आज फ़िल्मों के माध्यम से भी हिंदी को वैश्विक स्तर पर सम्मान प्राप्त हो रहा है।

हिंदी फ़िल्में और भाषा प्रचार की प्रक्रिया

शिक्षण संस्थानों में हिंदी सिखाने में जितना वक्त लगता है, उससे कहीं कम समय में हिंदी फ़िल्में अपने दृश्यों और गीतों के माध्यम से भाषा सिखा-समझा देती हैं। दृश्य-श्रव्य माध्यम (सिनेमा) के द्वारा सीखने और सिखाने में बहुत अंतर है क्योंकि सिनेमा में जो भाव अभिनय के साथ दिखाए जाते हैं वे किताबों से पढ़कर अनुभव नहीं किए जा सकते। हिंदी सिनेमा किताबों को अभिनय, गीत-संगीत, भाव-संवाद आदि के द्वारा परदे पर जीवंत करता है।

सिनेमा की भाषा आम भाषाओं से बहुत ही भिन्न होती है। सिनेमा की भाषा दृश्य-श्रव्य गुणों से परिपूर्ण होती है। हिंदी सिनेमा ने कई सारी प्रक्रियाओं से गुज़रकर अपनी दृश्य भाषा का आविष्कार किया है। हम अपनी आम बातचीत के दौरान भी दृश्य भाषा का प्रयोग करते हैं। मसलन हम लोग भी यहाँ या वहाँ बैठने के लिए उंगली से संकेत करते हैं। मौखिक भाषा को न जाननेवालों या कम जाननेवाले लोग संकेतों को ग्रहण करते हुए भाषाई आरोह और अवरोह के आधार पर पूरा अर्थ समझ जाते हैं। फ़िल्मों में दृश्य की ताकत मौखिक भाषा की बाधाओं को दूर कर उसे और ज़्यादा संप्रेषणीय बना देती है। इसलिए फ़िल्में हिंदी भाषा को न जाननेवालों तक अपने अर्थ का संप्रेषण संभव कर पाती हैं। हिंदी फ़िल्मों की दृश्यता हिंदी भाषा के अर्थ प्रसार में सहायक रही है। भारत में प्रतीकों की प्रचुरता और प्राचीनता अर्थ संप्रेषण में कारगर सिद्ध हुई है। हिंदी फ़िल्मों ने इस प्रतीकात्मकता को अपनाकर अपनी संप्रेषणीयता गैर हिंदी-भाषी क्षेत्रों में सुनिश्चित की है। दृश्य भाषा के विकास और प्रतीकात्मकता बुनावट के सहारे हिंदी, हिंदी फ़िल्मों के द्वारा उन जनसमूहों में समाहित और लोकप्रिय हुई जो किसी अन्य माध्यम द्वारा संभव न थी।

हिंदी के प्रचार-प्रसार में हिंदी सिनेमा का योगदान

भाषा शिक्षण (सुनना, बोलना, पढ़ना और लिखना) के अनेक माध्यम हैं जिनमें से सिनेमा हिंदी शिक्षण का बहुत ही आकर्षक, मनोरंजक एवं सर्वाधिक सशक्त साधन है जो अपने गीतों, संवादों और दृश्यों के द्वारा बहुत कुछ समझा देता है। हिंदी को लोकप्रिय बनानेवाले माध्यमों में हिंदी सिनेमा सबसे सबल माध्यम है।

विदेशों में प्रदर्शित की जा रहीं हिंदी फ़िल्मों से अनायास ही हिंदी समृद्ध होती जा रही है। हिंदी का एक वैश्विक और अंतरराष्ट्रीय समृद्ध रूप विकसित हो चुका है और पिछले कुछ वर्षों में हिंदी भाषा के विकास के पीछे फ़िल्म अभिनेताओं, निर्देशकों, गीतकारों और उनकी फ़िल्मों का बहुत ही बड़ा योगदान है। बहुप्रचलित और स्वीकारी हुई हिंदी भाषा सिनेमा में सुनाई देती है। सिनेमा को जानने-समझनेवाले विद्वान भी अब यह मानने लगे हैं कि सिनेमा की भाषा का प्रभाव वर्तमान ही नहीं वरन भविष्य में आनेवाली पीढ़ियों के दिशा निर्देशन में सहायक होगा।

भाषा-प्रसार उसके प्रयोक्ता-समूह की संस्कृति और जातीय प्रश्नों को साथ लेकर चला करता है। भारतीय सिनेमा निश्चय ही हिंदी भाषा के प्रचार-प्रसार में अपनी विश्वव्यापी भूमिका का निर्वाह कर रहा है। उसकी यह प्रक्रिया अत्यंत सहज, बोधगम्य, रोचक, संप्रेषणीय और ग्राह्य है। हिंदी यहाँ भाषा, साहित्य और जाति तीनों अर्थों में ली जा सकती है। जब हम भारतीय सिनेमा पर दृष्टिपात करते हैं तो भाषा का प्रचार-प्रसार, साहित्यिक कृतियों का फ़िल्मी रूपांतरण, हिंदी गीतों की लोकप्रियता, हिंदी की उपभाषाओं, बोलियों और सांस्कृतिक एवं जातीय प्रश्नों को उभारने में भारतीय सिनेमा का योगदान जैसे मुद्दे महत्वपूर्ण ढंग से सामने आते हैं। हिंदी भाषा की संचारात्मकता, शैली, वैज्ञानिक अध्ययन, जन संप्रेषणीयता, पटकथा के निर्माण, संवाद लेखन, दृश्यात्मकता, दृश्य भाषा, कोड निर्माण, संक्षिप्त कथन, बिंबधर्मिता, प्रतीकात्मकता, भाषा-दृश्य की अनुपातिकता आदि मानकों को भारतीय सिनेमा ने गढ़ा है। भारतीय सिनेमा हिंदी भाषा, साहित्य और संस्कृति का लोकदूत बनकर लोगों तक पहुँचने की दिशा में अग्रसर है।

हिंदी सिनेमा और साहित्य

हिंदी फ़िल्मों ने हिंदी साहित्य को भी आम लोगों (जिनमें

वे लोग भी शामिल हैं जो निरक्षर हैं या फिर हिंदी लिख-पढ़ नहीं सकते) तक पहुँचाने में सफलता अर्जित की है। हिंदी साहित्य की कई महत्वपूर्ण रचनाओं जैसे- 'नदिया के पार', 'शतरंज के खिलाड़ी', 'तीसरी कसम', 'सूरज का सातवाँ घोड़ा', 'तमस', 'सारा आकाश' आदि पर फ़िल्में बनी हैं। हिंदी साहित्य का प्रचार-प्रसार विश्व भर में फ़िल्मों के माध्यम से हुआ है।

साहित्यिक कृतियों का सिनेमाई रूपांतरण साहित्य को नई संचारात्मक और संप्रेषण शक्ति प्रदान करता है। निरक्षर लोग और गैर हिंदी-भाषी लोगों तक भी साहित्य की पहुँच हिंदी सिनेमा के फलस्वरूप बन पाई है। यदि गौर से अध्ययन करें तो हम पाते हैं कि भाषा साहित्य सृजन का मूल आधार है जबकि वहीं साहित्य जब सिनेमाई पर्दे पर आता है तो दृश्य उसके केंद्र में होता है। भाषाओं का व्याकरण जहाँ सीमित होता है वहीं सिनेमा का व्याकरण बहुत ही व्यापक है।

निष्कर्ष

यह बात विचारणीय है कि हिंदी को भारत और भारत के बाहर लोकप्रिय बनाने में हिंदी सिनेमा की भूमिका के बारे में ज़्यादा चर्चा-परिचर्चा नहीं की जा रही है। हिंदी फ़िल्मों की ताक़त को अमेरिका और अन्य पश्चिमी देशों में महसूस किया जा सकता है। दूसरी और तीसरी पीढ़ी के भारतीय छात्र बहुत बड़ी संख्या में हिंदी फ़िल्मों के संवादों और गीतों के माध्यम से हिंदी सीखते हैं। ऐसे छात्रों को 'हेरिटेज लर्नर' कहा जाता है। पश्चिमी विश्वविद्यालयों में हिंदी शिक्षक अपनी कक्षा में छात्रों को कई व्याकरण संबंधी जटिलताओं को समझाने के लिए हिंदी फ़िल्मों के कई तत्वों जैसे, गीत, लोकप्रिय संवादों के वीडियो अंश, पोस्टर और ट्रेलर आदि को सम्मिलित करते हैं।

पूरा उप-महाद्वीप और दक्षिण एशियाई समुदाय हिंदी फ़िल्मों का बहुत बड़ा अनुगामी हैं। विश्व भर के दक्षिण एशियाई डायस्पोरा के लोगों के लिए तो हिंदी फ़िल्में मनोरंजन का मुख्य स्रोत हैं और अब तो फ़िल्मों की बदौलत हिंदी भाषा जापान में भी अपने लिए रास्ता बना रही है। इस बात को भी नकारा नहीं जा सकता कि लंबे समय से बुद्धिज़्म और प्राचीन भारतीय संस्कृति के कारण कई लोग हिंदी सीखने हेतु प्रोत्साहित हुए हैं। 'इंग्लिश-विंग्लिश', '3 इडियट्स', 'रा वन', 'ओम शांति ओम' और अभी हाल में ही 'धूम 3' नामक हिंदी फ़िल्में डब या सबटाइटल के साथ जापान में प्रदर्शित की गईं।

हिंदी फ़िल्म उद्योग ने आम बोलचाल की एक मानक हिंदी को भारत और विदेशों में बसे बहुत बड़े जन-समूह के समक्ष प्रचारित-प्रसारित किया है। हिंदी भाषा हिंदी सिनेमा के माध्यम से दुनिया भर के दूरदराज़ के एक बड़े भू-भाग में समझी जानेवाली भाषा स्वत: बन गई है। हिंदी भाषा को पूरे विश्व में लोकप्रिय बनाने में हिंदी सिनेमा के योगदान और महत्व पर ध्यान देने का समय अब आ गया है।

आधार ग्रंथ :

- विनय लाल व आशीष नंदी (सं), फ़िंगरप्रिंटिंग पॉपुलर कल्चर: द मिथिक एण्ड दि आइकॉनिक इन इण्डियन सिनेमा, ऑक्सफ़ॉर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, दिल्ली, 2006 में संकलित है।
- सिनेमा, भाषा, रेडियो: एक त्रिकोणीय इतिहास, कथादेश पत्रिका: जुलाई, 2012।
- Comrie, Bernard (2004), The World's Major Languages, Croom Helm.
- Bhatt, P.C. (2002), Hindi Shikshan, Tapish-Tanju enterprises, Indore.
- http://www.jagran.com/editorial/apnibaat-cinema-literature-and-hindi-12885232.html

मुंबई, भारत
praveenkrrish66@gmail.com

हिंदी और सूचना-संचार प्रौद्योगिकी

'विश्व हिंदी पत्रिका' हिंदी संबंधी अद्यतन सूचनाएँ, विचार व जानकारियाँ आप तक पहुँचाने में कृत संकल्प है। हिंदी के विकास की अनंत संभावनाओं की तलाश अब चौतरफ़ा हो चली है। इन संभावनाओं के बीच सूचना-संचार प्रौद्योगिकी वह उभरता क्षेत्र है जिसमें हिंदी अपने नवीनतम रूप में ढलती नज़र आ रही है। पत्रिका के इस अंक में हिंदी और सूचना-संचार प्रौद्योगिकी के अंत:संबंध पर अपने विचार व्यक्त करनेवाले विशेषज्ञों के आलेख संकलित हैं जो तकनीकी दौड़ में हिंदी की बहुआयामी भूमिका को रेखांकित करते हैं। इंटरनेट की दुनिया में हिंदी के टूटते-बनते स्वरूप तथा अनुवाद क्षेत्र में हिंदी की उपादेयता बढ़ाने में कैट टूल्स जैसे प्रोग्राम्स के महत्व पर आधारित आलेख हिंदी की विकास-यात्रा का साक्ष्य प्रस्तुत करते हैं। साथ ही, मॉरीशसीय संदर्भ में हिंदी शिक्षण को संगणक-प्रयोग किस तरह रुचिकर और अधुनातन बना सकता है, इस पर भी विचार किया गया है। इसके अतिरिक्त नए क्षेत्रों में हिंदी की तकनीकी दौड़, इंटरनेट की दुनिया में हिंदी का भविष्य, चुनौतियाँ व संभावनाओं पर भी विचार-विमर्श प्रस्तुत है।

18

नए क्षेत्रों में हिंदी की तकनीकी दौड़

—श्री बालेंदु शर्मा दाधीच

हम एक लंबे अरसे से भारतीय भाषाओं खासकर हिंदी के प्रति तकनीकी कंपनियों के बढ़ते रुझान की चर्चा करते रहे हैं लेकिन पिछले दिनों 'माइक्रोमैक्स' नामक कंपनी ने 'यूनाइट ए 106' के नाम से एक अलग मोबाइल फ़ोन ही निकाल दिया जिसे भारतीय भाषाओं में काम करने के लिए खास तौर पर डिज़ाइन किया गया था। इस मोबाइल फ़ोन में पहले से ही भारतीय भाषाओं के एप्लीकेशन, कीबोर्ड, फ़ॉन्ट और सुविधाएँ मौजूद हैं और अपनी भाषा में काम करने के लिए अलग से कुछ डाउनलोड करने की अनिवार्यता नहीं है।

'माइक्रोमैक्स' को लगता है कि भारतीय उपभोक्ता की शक्ति का अच्छा अनुमान हो गया है। उसका यह प्रयोग खासा सफल रहा है और इससे प्रेरित होकर अब दूसरी कंपनियाँ भी हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं में सक्षम स्मार्टफ़ोन लॉन्च करने में जुटी हैं। 'इंडस ओएस' के नाम से भारतीय भाषाओं का एक ऑपरेटिंग सिस्टम आ गया है जिसे बड़ी संख्या में मोबाइल फ़ोनों पर स्थापित किया गया है। इसकी लोकप्रियता का आलम यह है कि एंड्रॉयड के बाद 'इंडस ओएस' के दूसरे नंबर का सबसे लोकप्रिय मोबाइल फ़ोन ऑपरेटिंग सिस्टम बनने का दावा किया जा रहा है यानी एप्पल के आई.ओ.एस. ऑपरेटिंग सिस्टम को इस खाँटी भारतीय भाषाई ऑपरेटिंग सिस्टम ने पीछे छोड़ दिया है।

हिंदी और भाषाई बाज़ार की मज़बूती की कुछ मिसालें हैं ये लेकिन बात दूरसंचार तक ही सीमित नहीं है। एक तरफ़ डिजिटल इंडिया को व्यावहारिक दृष्टि से सफल बनाने के लिए सरकार भारतीय भाषाओं में तकनीक को प्रोत्साहित करने में जुटी है तो दूसरी ओर इ-कॉमर्स के क्षेत्र में अचानक इन भाषाओं की अहमियत समझी जा रही है। आमाज़ोन के सी.ई.ओ., जेफ़ बेज़ोस ने हाल ही में बयान दिया था कि भारत में इ-कॉमर्स के क्षेत्र में स्थानीय बाज़ार अरबों अमेरिकी डॉलर का है। इस बाज़ार तक पहुँचने में भारतीय भाषाओं की अहम भूमिका होनेवाली है। आमाज़ोन खुद अपनी वेबसाइट और वेब सेवाओं को भारतीय भाषाओं में लाने पर काम कर रही है। इस बीच एक लोकप्रिय वेबसाइट, स्नैपडील ने आपको अंग्रेज़ी के साथ-साथ हिंदी और कुछ अन्य भाषाओं में भी सेवाएँ लेने का विकल्प दे दिया है। दूरसंचार और इ-कॉमर्स के क्षेत्र में हमारी भाषाओं का बढ़ता दखल एक बड़ी घटना है क्योंकि अब तक हम इन भाषाओं की तरक्की को कंप्यूटर और भाषाई वेबसाइटों तक ही देखकर खुश हो जाते थे। जिन सेवाओं में अब भाषाई दखल हुआ है वे जन-जन से जुड़ी हुई सेवाएँ हैं और इस जुड़ाव के दूरगामी परिणाम होने तय हैं।

गूगल ने जब भारतीय भाषाओं का प्रयोग करनेवाले 50 करोड़ लोगों को इंटरनेट पर लाने की बात की तो एक अरसे बाद एक बार फिर भारतीय भाषाओं और भारतीय उपभोक्ता की शक्ति का एहसास हुआ था। इससे पहले भी इन्पुट मैथड एडीटर (आई.एम.ई.), इंटरफ़ेस लोकलाइज़ेशन, ब्लॉग, इ-मेल सेवाओं, मशीन अनुवाद तकनीकों, ध्वनि से पाठ रूपांतरण आदि के क्षेत्रों में हिंदी से संबंधित खासी तरक्की हम देख चुके थे लेकिन

बालेंदु शर्मा दाधीच प्रसिद्ध हिंदी तकनीकविद और संपादक हैं। वे अमेरिका, रूस, इंग्लैंड, जापान, मॉरीशस, दक्षिण अफ्रीका, नेपाल आदि देशों में आयोजित अंतरराष्ट्रीय सम्मेलनों में तकनीकी सत्रों का संचालन/भागीदारी कर चुके हैं। वे राष्ट्रपति के हाथों प्रदत्त आत्माराम पुरस्कार से सम्मानित हैं।
उनके द्वारा विकसित प्रमुख हिंदी सॉफ़्टवेयर हैं माध्यम (हिंदी वर्ड प्रोसेसर), स्पर्श (हिंदी टाइपिंग ट्यूटर), सटीक (फ़ॉन्ट परिवर्तक), संशोधक (यूनिकोड वर्तनी संशोधक), छाया (हिंदी यूनिकोड ग्राफिक्स सॉफ़्टवेयर), हिंदीशिप, (फाइल संपीड़न युक्ति), वर्चुअल हिंदी टाइपराइटर (हिंदी टंकण सॉफ़्टवेयर) आदि।

गूगल की तरफ़ से शुरू किया गया इंडियन लैंग्वेज इंटरनेट एलायंस (आई.एल.आई.ए.) इस सबसे बड़ी इंटरनेट कंपनी की तरफ़ से भारतीय भाषाओं के प्रति उपजी विशेष दिलचस्पी का द्योतक था।

बात गूगल तक सीमित नहीं रही, माइक्रोसॉफ़्ट ने भी बड़े पैमाने पर हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं में नई तथा क्रांतिकारी तकनीकों के विकास पर फ़ोकस किया है। वैसे माइक्रोसॉफ़्ट ही वह कंपनी है जिसके ऑपरेटिंग सिस्टमों के ज़रिए यूनिकोड की शक्ति भारतीय उपभोक्ता तक पहुँची और वह हमारी भाषाओं में भी उसी सरलता तथा सहजता के साथ काम करने में सक्षम हुआ जैसे अंग्रेज़ी में। इस बीच फ़ेसबुक और एप्पल ने भी हिंदी की ओर कदम बढ़ाए हैं। फ़ेसबुक अपने यहाँ आनेवाली टिप्पणियों का अनुवाद करने की सुविधा दे रहा है तो एप्पल की युक्तियों पर भी हिंदी में काम करना आसान हुआ है।

ताज़ा घटनाक्रम में इस बात का ज़िक्र करना ज़रूरी है कि माइक्रोसॉफ़्ट के ट्रांसलेटर ऐप में हिंदी और अंग्रेज़ी के बीच परस्पर अनुवाद करना संभव हो गया है। यह ऐप न सिर्फ़ विंडोज़ पर काम करता है बल्कि एंड्रॉयड स्मार्टफ़ोन पर भी डाउनलोड किया जा सकता है और आईफ़ोन पर भी। बिंग सर्च इंजन पर हिंदी में मेनू से लेकर ऑन स्क्रीन कीबोर्ड और हिंदी-अंग्रेज़ी में पारस्परिक (दोतरफ़ा) अनुवाद की सुविधा आ गई है। माइक्रोसॉफ़्ट ऑफ़िस में काम करते हैं तो अब उसी तरह अपनी वर्तनी की त्रुटियाँ ठीक कीजिए जैसे अंग्रेज़ी में करते हैं—प्रूफ़िंग टूल जो मौजूद है। खुद वर्ड के भीतर भी मशीन अनुवाद होने लगा है। थिसॉरस से लेकर ऑटोकरेक्ट तक की सुविधा उपलब्ध है यहाँ।

वास्तव में तकनीक की दुनिया में हिंदी की स्थिति उतनी दयनीय नहीं है जितनी कि दूसरे कारोबारी क्षेत्रों में, खासकर पिछला एक दशक हिंदी के तकनीकी विकास की दिशा में अहम सिद्ध हुआ है। 10 साल पहले हिंदी में डिजिटल युक्तियों पर काम करने के इच्छुक लोगों को जिस किस्म की उलझन और बेचारगी के अनिवार्य एहसास से गुज़रना पड़ता था वैसा अब नहीं रहा। थोड़ी-बहुत कोशिश कीजिए तो आप अधिकांश तकनीकी माध्यमों पर हिंदी में काम कर ही लेंगे। हालाँकि हिंदी आज भी अंग्रेज़ी, यूरोपीय भाषाओं, जापानी, रूसी और अरबी जितनी सबल, सक्षम और सशक्त नहीं हुई है लेकिन उसने तरक्की निस्संदेह की है।

यह तरक्की नज़र भी आती है। हर नए कंप्यूटर ऑपरेटिंग सिस्टम (विंडोज़, मैकिंटोश, लिनक्स आदि) में यूनिकोड की कृपा से हिंदी-देवनागरी पहले से ही विद्यमान है। हाथ में रखे जानेवाले अधिकांश हेंदहेल्द डिवाइसेज़ (टैबलेट, स्मार्टफ़ोन आदि) में भी हिंदी लिखना नहीं तो कम से कम पढ़ना और हिंदी की वेबसाइटों को देखना बहुत आसान हो गया है। थोड़ी सी कोशिश करेंगे तो लिखना भी सुगम हो जाएगा। गूगल हिंदी इन्पुट के रूप में अच्छा आई.एम.ई. वहाँ मौजूद है जो रोमन पद्धति से हिंदी में लिखना संभव बनाता है। दूसरी तरफ़ सीडैक ने हिंदी के मानक तरीके (इंस्क्रिप्ट) से हिंदी टंकण के लिए ऐप जारी किया है।

हिंदी समर्थित वेब सर्विसेज़ (इ-मेल, अनुवाद, टेक्स्ट टू स्पीच, इ-कॉमर्स, क्लाउड आधारित सर्विसेज़) का उपभोग करना बहुत जटिल नहीं रहा। अपने आसपास की तकनीकी सेवाओं में भी यदा-कदा हिंदी दिखने लगी है जैसे एटीएम मशीनों पर। देवनागरी में टाइप करने के ऑफ़लाइन, ऑनलाइन ज़रियों (टूल) की कोई कमी नहीं रही और करीब-करीब हर आधुनिक सॉफ़्टवेयर पर चाहे वह माइक्रोसॉफ़्ट परिवार से आया हो या फिर एडोब परिवार से, यूनिकोड हिंदी में पूरा या थोड़ा काम किया जा सकता है हालाँकि पेजमेकिंग, ग्राफ़िक्स, एनीमेशन आदि से जुड़े सॉफ़्टवेयरों में हिंदी का शत-प्रतिशत समर्थन न होना कुछ निराश करता है, खासकर उन संस्करणों में जिन्हें कुछ साल पहले तक खरीदा गया था। इस श्रेणी के अधिकांश सॉफ़्टवेयर अब यूनिकोड हिंदी का समर्थन करने लगे हैं लेकिन ज़रूरत है ऐसे टूल निर्मित करने की जो पहले खरीदे गए संस्करणों को भी यूनिकोड समर्थित बना दें। क्वार्क एक्सप्रेस, इन-डिज़ाइन, कोरल ड्रॉ, फ़ोटोशॉप आदि इस श्रेणी में आते हैं। अलबत्ता माइक्रोसॉफ़्ट के पेजमेकिंग अनुप्रयोग पब्लिशर में अरसे से हिंदी यूनिकोड समर्थन मौजूद है।

तकनीकी विश्व में हिंदी की बहार दिखाई देती है—सोशल नेटवर्किंग और ब्लॉगिंग में। इनमें से पहला माध्यम चढ़ाव पर तो दूसरे में ठहराव है। जिस अंदाज में हिंदी विश्व ने फ़ेसबुक को अपनाया है, वह अद्‌भुत है। दिल्ली और मुंबई जैसे महानगरों को भूल जाइए, लखनऊ, पटना और जयपुर जैसी राजधानियों को भी भूल जाइए, छोटे-छोटे गाँवों और कस्बों तक के युवा, बुज़ुर्ग, बच्चे फ़ेसबुक पर आ जमे हैं और खूब सारी बातें कर रहे हैं—हिंदी में। वाट्सऐप ने पिछले एक-डेढ़ साल में तेज़ी से लोकप्रियता हासिल की है। सुखद है कि वहाँ भी हिंदी को लेकर कोई बाधा नहीं है।

सोशल नेटवर्कों की हिंदी भी अपने आप में विलक्षण है—हिंदी, अंग्रेज़ी, देशज, तकनीकी, चित्रात्मक और अनौपचारिक शब्दावली से भरी हुई, लेकिन है बहुत दिलचस्प। आप चाहें तो इस हिंदी का छिद्रान्वेषण कर उसकी भाषाई सीमाओं, त्रुटियों और विसंगतियों

पर थीसिस लिख सकते हैं लेकिन यदि आप हिंदी के प्रसार में दिलचस्पी रखते हैं तो यह तथ्य अधिक महत्वपूर्ण हो जाता है कि वह है तो हिंदी ही। शायद हिंदी की एक अलग खुशबू। कौन जाने आगे चलकर सोशल नेटवर्किंग और ब्लॉगिंग से उपजी शब्दावली, वाक्य-विन्यास और भाषिक प्रवृत्तियाँ मुख्यधारा की हिंदी पर भी कोई न कोई असर डालें।

पिछले 3-4 सालों में यदि तकनीकी दुनिया में हिंदी से जुड़ी कोई क्रांति दिखाई देती है तो वह है सोशल नेटवर्किंग की क्रांति। चूँकि संदेशों का आदान-प्रदान नेटवर्किंग की मूलभूत अनिवार्यता और पहचान है, इसलिए वह एक से दो, दो से चार लोगों को आपस में संपर्क करने के लिए प्रेरित कर रही है और संदेश जब तक अपनी भाषा में न हो, अपने आसपास के परिवेश से जुड़े हुए न हों, तब तक न तो बात कहनेवाले को तसल्ली देते हैं और न ही उसे सुननेवाले को। अंग्रेज़ी में संदेश भेजकर देखिए। अगर आपकी मातृ भाषा हिंदी है तो आपको एक कसक सी महसूस होगी। लगेगा कि अभिव्यक्ति में वह बात नहीं आई लेकिन उसी को हिंदी, बांग्ला, गुजराती या तमिल में भेजकर देखिए तो सुकून महसूस होगा। हमारी मातृ भाषा माँ के समान है जिसके साथ कोई संकोच, कोई परदा, कोई औपचारिकता और कोई आडंबर करने की ज़रूरत नहीं है। जैसा सोचते हैं वैसा लिख सकते हैं। तकनीकी दुनिया में हिंदी जैसी भाषाओं को आगे बढ़ाने के लिए फ़ेसबुक एक बहुत अच्छा उपकरण सिद्ध हो सकता है।

तकनीकी विश्व में हिंदी की बहार दिखाई देती है—सोशल नेटवर्किंग और ब्लॉगिंग में। इनमें से पहला माध्यम चढ़ाव पर तो दूसरे में ठहराव है। जिस अंदाज़ में हिंदी विश्व ने फ़ेसबुक को अपनाया है, वह अद्‌भुत है। दिल्ली और मुंबई जैसे महानगरों को भूल जाइए, लखनऊ, पटना और जयपुर जैसी राजधानियों को भी भूल जाइए, छोटे-छोटे गाँवों और कस्बों तक के युवा, बुजुर्ग, बच्चे फ़ेसबुक पर आ जमे हैं और खूब सारी बातें कर रहे हैं—हिंदी में।

हज़ारों लोग जो हिंदी में टाइपिंग करना नहीं जानते थे, वे सिर्फ़ इसलिए टाइपिंग के टूल्स की तलाश में लगे हैं ताकि वे हिंदी में संदेश भेज सकें। हज़ारों अन्य लोग ऐसा सफलतापूर्वक कर भी चुके हैं। बहुतों ने खास तौर पर इसीलिए हिंदी में टाइपिंग सीखी है। उनकी छोटी-छोटी टिप्पणियाँ हिंदी की समन्वित शक्ति में इज़ाफ़ा कर रही हैं। अच्छी बात यह है कि अब मोबाइल पर हिंदी में बोलकर लिखना भी संभव हो गया है। खासकर एंड्रॉयड आधारित मोबाइल फ़ोन में, जहाँ गूगल वॉइस इन्पुट में हिंदी को सक्रिय करना आसान है। परिणाम भी अच्छा है। नई-नई सुविधा है सो कुछ त्रुटियाँ तो रहेंगी। आखिरकार दशकों से विकसित हो रहे सीडैक के श्रुतलेखन में भी अब तक त्रुटियाँ हैं।

बात सोशल नेटवर्किंग की चल रही थी। क्या वह हमारी भाषा को विकृत भी कर रही है? हाँ, यकीनन क्योंकि जिस अंदाज़ में वह हमारे दैनिक जीवन का हिस्सा बनती जा रही है उसमें प्रयुक्त भाषा का बहाव दैनिक जीवन तक भी होना स्वाभाविक है। बहुत से लोग धीरे-धीरे उन शब्दों को अपना लेंगे जिनकी रचना फ़ेसबुक की उर्वर भूमि पर हुई है किंतु यह भाषा पर है कि वह किस समझदारी के साथ अपने आपको विकृतियों से मुक्त रखते हुए नए शब्दों को अपनाती है। आवश्यक नहीं कि ये शब्द परिनिष्ठित हिंदी का हिस्सा बनें लेकिन हमारी समग्र शब्दावली का हिस्सा वे ज़रूर बन सकते हैं क्योंकि भाषा वही आगे बढ़ती है जो तरल और बहती हुई नए तत्वों से वितृष्णा नहीं रखती बल्कि 'सार सार को गहि रहे, थोथा देई उड़ाय' वाली प्रवृत्ति से युक्त है।

हिंदी में अभिव्यक्ति की उत्कंठा सिर्फ़ यहीं नहीं है, जहाँ कहीं भी संचार की आवश्यकता है वहाँ-वहाँ यह उत्कंठा, यह आकांक्षा, यह बेचैनी दिखाई देती है। इंटरनेट के संदर्भ में मैं अपने अनुभव से कह सकता हूँ कि कंटेंट या विषय-वस्तु ने हिंदी का जितना प्रसार किया है उससे कहीं अधिक उसका प्रसार संचार के तकनीकी साधनों ने किया है। आज टैबलेट और स्मार्टफ़ोन के युग में भी हम उसी परिघटना को अनुभव कर रहे हैं जो कुछ साल से सोशल नेटवर्किंग और ब्लॉगिंग के संदर्भ में देखते आए थे।

भारत में प्रति व्यक्ति आय में बढ़ोतरी हुई है, शिक्षा का भी प्रसार हुआ है और तकनीकी चीज़ों के प्रति संदेह का भाव कम हुआ है। ये चीज़ें आर्थिक दृष्टि से भी लोगों की पहुँच में आ रही हैं। उसी के साथ-साथ संवाद की ज़रूरत भी पड़ रही है और वहाँ अपनी भाषा की ज़रूरत पड़ ही जाती है। लोग लंबे समय तक रोमन में एस.एम.एस. मोबाइल संदेश भेजते रहे सिर्फ़ इसलिए कि उनके मोबाइल फ़ोन में हिंदी टाइप करने का कोई ज़रिया नहीं था और बिना हिंदी में अपनी बात कहे संतुष्टि नहीं होती। इस बीच मोबाइल फ़ोन, खासकर स्मार्टफ़ोन की क्षमता बढ़ी है तो उनमें एक से अधिक भाषाओं की सुविधाएँ समाहित करना अपेक्षाकृत आसान हो गया है। कोई तकनीकी रुकावट नहीं है। अगर रुकावट है तो

कंपनियों के स्तर पर जो अलग-अलग उत्पाद को अलग-अलग वर्ग को ध्यान में रखकर बाज़ार में उतारती हैं। उन्हें लगता है कि किसी खास मोबाइल फ़ोन में हिंदी होनी ज़रूरी है क्योंकि यह आम लोगों तक पहुँचनेवाला है। दूसरी ओर कुछ महँगे, आधुनिक और स्मार्टफ़ोन में हिंदी टेक्स्ट इन्पुट की अनिवार्यता उन्हें महसूस नहीं होती क्योंकि उन्हें लगता है कि जो वर्ग इन्हें खरीदनेवाला है वह तो पहले ही अंग्रेज़ीदाँ बन चुका है और उसे हिंदी में संदेश भेजने की क्या ज़रूरत पड़ेगी ? जैसे-जैसे हम खाँटी हिंदी प्रेमियों की आर्थिक क्षमता बढ़ती जाएगी, उनकी यह धारणा टूटेगी और एक-एक कर सब हिंदी की शरण में आ जाएँगे। हिंदी के पास संख्या, बल और बाज़ार जो हैं।

इस बीच, दूरसंचार जगत में एंड्रॉयड ऑपरेटिंग सिस्टम काफ़ी लोकप्रिय हो गया है। यह गूगल की तरफ़ से शुरू की गई मुक्त स्रोत (ओपन सोर्स) परियोजना है जिसमें दुनिया भर के लाखों विकासक (डेवलपर्स) हाथ बँटाते हैं लेकिन इसके विकास को सही दिशा में सुसंगठित ढंग से आगे बढ़ाने का दायित्व गूगल का है। नि:शुल्क और मुक्त स्रोत होने के नाते इसे कोई भी मोबाइल युक्ति (डिवाइस) निर्माता अपने उत्पाद में नि:शुल्क इस्तेमाल कर सकता है। अच्छी बात यह है कि यह बेहद शक्ति-संपन्न भी है, लगभग एप्पल के आई.ओ.एस. जितना ही जो एप्पल की निजी संपदा (प्रोपराइटरी ऑपरेटिंग सिस्टम) है। एप्पल के उत्पादों का सुंदर-सुघड़ चेहरा-मोहरा, कामकाज की तेज़ी व सहजता और सबसे अहम टच स्क्रीन आधारित कमांड इसी आई.ओ.एस. ऑपरेटिंग सिस्टम की बदौलत है लेकिन एप्पल का ऑपरेटिंग सिस्टम सिर्फ़ उसी के उत्पादों (आईफ़ोन, आईपैड) आदि में इस्तेमाल हो सकता है। अच्छी बात यह है कि आई.ओ.एस. और एंड्रॉयड दोनों के नए संस्करणों में हिंदी-देवनागरी समर्थन मौजूद है। इस बीच माइक्रोसॉफ़्ट परिवार की ओर से भी विंडोज़ 10 के रूप में नया ऑपरेटिंग सिस्टम जारी किया गया है जो डेस्कटॉप के साथ-साथ टैबलेट्स और स्मार्टफ़ोन्स के भी अनुकूल है। अपने उत्पादों में हिंदी समर्थन देने के मामले में माइक्रोसॉफ़्ट दूसरी कंपनियों से आगे है और विंडोज़ 10 में भी यही स्थिति है। विंडोज़ के पिछले संस्करण विंडोज़ 8 में भी यह समर्थन मौजूद था।

विंडोज़ 10 और आई.ओ.एस. तो ठीक है लेकिन एंड्रॉयड में हिंदी की मौजूदगी की खास अहमियत है। नि:शुल्क होने के कारण आज ज़्यादातर टैबलेट्स और स्मार्टफ़ोन्स में, भले ही उन्हें नोकिया-सैमसंग जैसी बड़ी कंपनियों ने निर्मित किया हो या फिर कार्बन मोबाइल जैसी छोटी कंपनियों ने, एंड्रॉयड का खूब इस्तेमाल हो रहा है। उसमें हिंदी की मौजूदगी का अर्थ है, इन सभी मोबाइल डिवाइसज़ में हिंदी का समर्थन। कंप्यूटरों में लिनक्स ऑपरेटिंग सिस्टम भी नि:शुल्क और मुक्त स्रोत मॉडल को लेकर आया था लेकिन नाकाम हो गया था। सौभाग्य से उसी लिनक्स पर आधारित एंड्रॉयड मोबाइल युक्तियों में कुछ यूँ छा गया है कि जिस स्मार्टफ़ोन या टैबलेट में देखो, एंड्रॉयड ही नज़र आता है। भारत सरकार की तरफ़ से जारी किए गए आकाश टैबलेट में भी यह था तो बी.एस.एन.एल. और एम.टी.एन.एल. की तरफ़ से जारी किए गए टैबलेट में भी मौजूद है। एंड्रॉयड का सबसे ताज़ा संस्करण है 'एंड्रॉयड 7' यानी नूगट जो पिछली 22 अगस्त, 2016 को जारी किया गया, हालाँकि एंड्रॉयड 2.3 के ज़माने से ही उसमें हिंदी समर्थन मौजूद है। आकाश में हिंदी नहीं थी क्योंकि उसमें एंड्रॉयड 2.2 इस्तेमाल किया गया था। नए संस्करणों में एंड्रॉयड 2.3 (जिंजरब्रैड और उसके बाद के संस्करण) मौजूद हैं। हार्डवेयर कंपनियाँ जितने बेहतर ऑपरेटिंग सिस्टम का इस्तेमाल करेंगी, हिंदी के प्रति अनुकूलता उतनी ही बढ़ती जाएगी।

मोबाइल और टैबलेट्स के क्षेत्र में एप्लीकेशनों (ऐप्स) ने भी अपनी मज़बूत उपस्थिति दर्ज कराई है और जिन मोबाइल युक्तियों में ऑपरेटिंग सिस्टम के स्तर पर हिंदी का समर्थन मौजूद नहीं है, उनमें एप्लीकेशनों और इंटरनेट ब्राउज़र के ज़रिए हिंदी का इस्तेमाल संभव हो गया है। हालाँकि अभी तक दूरसंचार उपकरणों में उस किस्म का सार्वत्रिक यूनिकोड हिंदी समर्थन मौजूद नहीं है जैसा कि डेस्कटॉप, लैपटॉप, अल्ट्राबुक और नेटबुक्स (जिन्हें छोटे-बड़े कंप्यूटर की श्रेणी में गिना जाता है) में है। अलबत्ता, जैसे-जैसे प्रयोक्ताओं की संख्या बढ़ेगी, उसका आना तय है। इस लिहाज़ से अगले दो-तीन साल महत्वपूर्ण रहेंगे।

ब्लॉगिंग पर इन दिनों नए पाठकों को आकर्षित करने, अपने कंटेंट की ताज़गी बनाए रखने और मोटीवेशन बनाए रखने का दबाव है। सोशल नेटवर्किंग के लोकप्रिय होने का प्रभाव ब्लॉगिंग पर पड़ा है और उसमें जिस तेज़ी के साथ विस्तार आ रहा था, वह गति मंद पड़ी है। कारण, सोशल नेटवर्किंग अपने दोस्तों के साथ जुड़े रहते हुए अपनी बात कहने का मौका देता है और अपेक्षाकृत अधिक सुलभ तथा आसान है। वहाँ आप जो टिप्पणी कर रहे हैं, वह छोटी सी, अनौपचारिक भी हो सकती है और दूसरों की टिप्पणियाँ भी इस्तेमाल और शेयर की जा सकती हैं। इसलिए अच्छा लिखने का दबाव नहीं है। इस वजह से हर कोई सोशल नेटवर्किंग में कुछ न कुछ कह देता है। ब्लॉगिंग के साथ ऐसा नहीं है। वह अधिक गंभीर

और अधिक रचनात्मक माध्यम है। दूसरे जो लोग सोशल नेटवर्किंग पर सक्रिय हैं, उनके लिए फिर ब्लॉगिंग पर भी सक्रिय बने रहना ज़्यादा समय साध्य हो जाता है जिससे ब्लॉगिंग की विकास दर के साथ-साथ ब्लॉगों के अपडेशन की स्थिति प्रभावित हो रही है।

हालाँकि कुछ हद तक इसका अप्रत्यक्ष लाभ हिंदी से ही जुड़े कुछ दूसरे क्षेत्रों को हुआ है जैसे इ-पत्रिकाओं या वेबसाइटों को। ब्लॉगिंग की दुनिया में मज़बूत जगह बना चुके चेहरों को अब यह माध्यम थोड़ा छोटा लगने लगा है और वे अपनी वेब-मौजूदगी को अपग्रेड करने में जुटे हैं। नतीजा है, हिंदी में नई-नई, ताज़गी से भरी वेबसाइटों का आगमन। इनमें मोहल्ला, भड़ास मीडिया, विस्फोट, तरकश, नुक्कड़, मीडिया खबर, देशकाल, जनादेश, डेटलाइन इंडिया, परिकल्पना, हस्तक्षेप, प्रवक्ता, हिंदी होमपेज, सामयिकी, हिंद युग्म, मीडिया दरबार, चौराहा, मीडिया सरकार, फुरसतिया, सृजनगाथा, युगज़माना, जनता जनार्दन, अर्थ काम, साहित्य कुंज, साहित्य शिल्पी, तकनीक, ऑर्ग वगैरह शामिल हैं। देखते ही देखते ब्लॉगिंग समुदाय की बदौलत हिंदी में विविधताओं से भरी सामग्री की धारा बह निकली है जो बहुत सजीव, जीवंत और हिंदी की विशुद्ध खुशबू लिये हुए है। हिंदी जगत में जिस किस्म के विवाद, धमाल, उठा-पटक, हंगामे और बहसें होती रही हैं और शायद इसीलिए इन सब को पढ़ना खाँटी हिंदी पाठक के लिए अधिक रुचिकर भी है। अगर किसी घटना को कई कोणों से देखना-पढ़ना और समझना चाहते हैं तो हिंदी के युवाओं के उल्लास और रचनाकर्म से भरी इन वेबसाइटों पर एक नज़र ज़रूर डालिए।

लेकिन आर्थिक समस्या इन सब को प्रभावित कर रही है। छोटी-मँझोली वेबसाइटों, ब्लॉगिंग आदि से आय के बहुत सीमित ज़रिए उपलब्ध हैं और वे भी हिंदी में उतने प्रभावी नहीं हैं। कारण है, आम हिंदी पाठक का इ-कॉमर्स संस्कृति के साथ अधिक जुड़ाव न होना। विज्ञापनदाता भी अंग्रेज़ी को अधिक वरीयता देते हैं। टेलीविज़न विज्ञापनों में जिस तरह हिंदी चैनलों का दबदबा है उसकी तुलना में ऑनलाइन मीडिया की स्थिति एकदम विपरीत है। इसका कारण है कि हम विज्ञापनदाताओं को हिंदी ऑनलाइन मीडिया की शक्ति के बारे में शिक्षित नहीं कर पा रहे। मेरा अनुमान है कि लगभग 5 साल बाद स्थिति उलट जाएगी क्योंकि टेलीविज़न और प्रिंट के रुझानों का प्रभाव अंततः इंटरनेट पर भी दिखाई देना तय है। हालाँकि कुछ इ-पत्रिकाएँ, वेबसाइटें और ब्लॉग निजी तथा सरकारी संस्थाओं के सहयोग से विज्ञापन हासिल कर पा रहे हैं फिर भी इस माध्यम से होनेवाली आय बहुत कम है और ऐसे प्रकाशनों की संख्या भी गिनी-चुनी है। गूगल एडसेंस में हिंदी विज्ञापनों की शुरूआत हो गई है। फ़िलहाल इससे होनेवाली आमदनी हिंदी वेब संस्थानों के लिए ऊँट के मुँह में जीरे के समान ही है जबकि अंग्रेज़ी में स्थिति अलग है। शायद धीरे-धीरे हिंदी में भी स्थिति बदले। गूगल हिंदी को लेकर संजीदा दिखता है और भारत को फ़ोकस कर विज्ञापनों के अभियान चला रहा है। हिंदी की वेबसाइटों और पोर्टलों को केंद्र में रखकर उसने 'गूगल हिंदी वेब' नामक परियोजना शुरू की है। शुरूआती जोश अच्छा लगा था लेकिन अब उत्साह मद्धिम पड़ता हुआ दिखता है।

जहाँ तक बड़े हिंदी पोर्टलों (विशाल वेबसाइटें) का सवाल है, वे अब पूरी तरह स्थापित हो चुके हैं और किसी अच्छे बिज़नेस मॉडल की तलाश में जुटे हैं। ऐसे अधिकांश वेब पोर्टल या तो बहुराष्ट्रीय पोर्टलों के हिंदी संस्करणों के रूप में चल रहे हैं या फिर उन्हें किसी न किसी समाचार पत्र समूह की ऑनलाइन शाखा के रूप में पेश किया गया है। प्रभासाक्षी इस मामले में एक अपवाद है जो पूरी तरह वेब माध्यम को समर्पित परियोजना है। वेब दुनिया भी इसी तर्ज़ पर शुरू हुआ था लेकिन मोटे तौर पर वह नई दुनिया समूह से ही निकला था। हालाँकि नई दुनिया अखबार समूह के अधिग्रहण के बाद स्थिति बदल गई है। कुछ हिंदी वेब पोर्टलों में कुछ चिंताजनक ट्रेंड भी दिखाई दे रहे हैं। उनमें से एक भाषा से संबंधित है जिसमें अंग्रेज़ी भाषा और यहाँ तक कि रोमन लिपि का भी सीमा से अधिक इस्तेमाल किया जा रहा है। दूसरी चिंता इन पोर्टलों पर फ़ोकस किए जानेवाले कंटेंट को लेकर है। मुख्य धारा के कुछ पोर्टल चटपटी, यौन विषयों से जुड़ी और हल्की-फुल्की खबरों को मुख्य खबरों के रूप में प्रोजेक्ट कर रहे हैं। इन पर ऐसी तस्वीरें, खबरें, लेख और सवाल-जवाब खास तौर पर उभारकर दिखाए जाते हैं जिन्हें मुख्य धारा की मीडिया में दिखाना ठीक नहीं समझा जाता। न जाने क्यों, उन्हें यह लगता है कि न्यू मीडिया पर इसी किस्म का कंटेंट बिकता है। मेरा अनुभव तो इसके अनुरूप नहीं है। मुझे आशंका है कि फ़िलहाल 2-3 पोर्टलों तक सीमित यह ट्रेंड कहीं दूसरे पोर्टलों तक भी न पहुँचे और धीरे-धीरे पाठकों की रुचि, पसंद-नापसंद और अपेक्षाओं को प्रभावित करना शुरू कर दे। हिंदी न्यू मीडिया की सफलता की कहानी सस्ते हथकंडों के आधार पर नहीं लिखनी चाहिए।

गुरुग्राम, भारत
balendu@gmail.com

19

कैट टूल्स के रहस्य

— प्रो. राजेश कुमार

आपने कैट टूल्स के बारे में सुना होगा या शायद न सुना हो। प्रस्तुत लेख में हम आपसे इन्हीं के बारे में बात करना चाहते हैं ताकि आप देख सकें कि ये आपके लिए कितने उपयोगी हैं या उपयोगी नहीं हैं।

मशीन अनुवाद और कैट टूल्स

आपको याद होगा कि एक समय में मशीन अनुवाद पर खूब चर्चा हुई थी, बहुत से शोध और परियोजनाएँ शुरू और बंद हुईं। भारत में भी सीडैक ने इस पर कुछ काम किया था लेकिन मशीन अनुवाद अपनी आंतरिक उलझनों और काम के विस्तार और अत्यल्प उपयोगिता के कारण बहुत दूर तक नहीं चल पाया और मुहावरे में कहें तो आज उसका कोई नामलेवा तक नहीं है।

जैसा कि आप जानते होंगे मशीन अनुवाद के पीछे, अनुवाद के समय मानव मस्तिष्क में चलनेवाली सारी प्रक्रिया को मशीन को दे देने का सिद्धांत था। इसका अर्थ था समूचे भाषिक तत्वों को मशीन में डाल देना जिसमें शब्दभंडार, व्याकरण, प्रयोग आदि शामिल थे। यह कोई दुरूह कल्पना नहीं थी किंतु इसका कार्यान्वयन दुरूह साबित हुआ और फिर बात यह भी है कि विवेक नामक तत्व पर विज्ञान अभी बहुत आगे नहीं जा सका है जिसकी अनुवाद कार्य (और अन्य कार्यों में भी) में बहुत अहमियत है।

जन्म : 27.07.1957

शिक्षा : पीएचडी भाषा विज्ञान, दिल्ली विश्वविद्यालय।

प्रकाशन : साहित्य, भाषा शिक्षण, दूरस्थ शिक्षा आदि के क्षेत्र में आपके कई पुस्तक, आलेख तथा शोध पत्र प्रकाशित हैं।

पुरस्कार : श्री रामजी वोरा सेवा सम्मान, समन्वयक फॉरम सम्मान तथा विभिन्न कार्यों के लिए उत्तर प्रदेश साहित्य अकादमी एवं टेलीग्राफ द्वारा सम्मानित।

संप्रति : संयुक्त निदेशक (अकादमिक) तथा क्षेत्रीय प्रबंधक, राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान, नोएडा, उ.प्र.। साथ ही आप गूगल, माइक्रोसॉफ़्ट, एप्पल, नोकिया आदि के प्रमुख मानद भाषाविद, हिंदी समिति, ब्रिटेन द्वारा आयोजित अंतरराष्ट्रीय वार्षिक प्रतियोगिता 'हिंदी ज्ञान प्रतियोगिता' के मानद राष्ट्रीय समंवयक, भारत के 'प्रवासी इंडिया' पत्रिका के मानद सलाहकार तथा 'युग तेवर' के संपादक हैं।

इस बीच दुनिया गूगल के पीछे के 'खोज' सिद्धांत की उपयोगिता को समझ चुकी थी जिसके अल्गोरिद्म अथाह सामग्री से प्रासंगिक सामग्री पल भर में आपके लिए प्रस्तुत कर देते हैं। कैट टूल्स के लिए इसी सिद्धांत को अपनाया गया जिसका पूरा रूप कंप्यूटर एडेड ट्रांसलेशन (हिंदी में कुछ-कुछ कंप्यूटर साहाय्य अनुवाद) टूल्स है।

इसके पीछे मूल धारणा यह है कि जो अनुवाद आप पहले कर चुके हैं उसे आपको फिर से करने की ज़रूरत नहीं है। हो सकता है कि आपकी रचनात्मकता इस बात की कुछ खास कायल न हो लेकिन यह सिद्धांत उस अनुवाद के लिए बहुत उपयोगी साबित हुआ जो ज्ञानपरक साहित्य से संबंधित था और इस अनुवाद की मात्रा मोटे तौर पर 85 प्रतिशत तक है।

आप सभी कार्यालयों, कंपनियों आदि के द्वारा प्रकाशित होनेवाली वार्षिक रिपोर्ट के उदाहरण से यह बात आसानी से समझ सकते हैं। हर वार्षिक रिपोर्ट में प्राय: 80 प्रतिशत सामग्री पुरानी होती है, आँकड़े भले ही बदल जाते हैं। ऐसे में अगर यह काम अनुवादक को दोहराना न पड़े तो समझिए कि उसका कितना समय बचेगा और उसमें वह और कितना उत्पादक कार्य कर सकेगा।

अनुवाद एक उद्योग

अगर आप अभी भी कैट टूल्स से कुछ खास प्रभावित नहीं हुए तो मैं आपको बताना चाहूँगा कि अनुवाद आज पूर्ण उद्योग के रूप में विकसित हो चुका है। अनेक स्थानीय और अंतरराष्ट्रीय कंपनियाँ इसमें काम करती हैं जिनका काम कुछ से लेकर सैकड़ों भाषाओं में

फैला होता है। इसका टर्नोवर अरबों डॉलर में है और कैट टूल्स में काम करना पेशेवर अनुवादक के लिए अनिवार्य हो चुका है और हाँ, अच्छे अनुवादक अनुवाद के लिए रु. 5 प्रति शब्द या इससे ज़्यादा मानदेय माँगते हैं और लेते हैं।

मुझे पूरा विश्वास है कि इस आख़िरी बात से आपमें कैट टूल्स के बारे में जानने की जिज्ञासा ज़रूर पैदा हुई होगी। आगे की पंक्तियों में हम आपको इसका कुछ परिचय देने की कोशिश करेंगे।

बाज़ार में उपलब्ध प्रमुख कैट टूल्स

बाज़ार में लगभग दर्जन भर कैट टूल्स उपलब्ध हैं जिनमें प्रमुख हैं—एस.डी.एल. ट्राडोस, मीमोक्यू, वर्डफ़ास्ट, फ्युएंसी, मेम्सोर्स, आर्टिल देज़ावू, ओमेकाटी, मैटकैट, लॉजिटर्म प्रो, मेटाटेक्सिस आदि। इन कैट टूल्स की विशेषताएँ और उनकी सुविधाएँ हालाँकि अलग-अलग होती हैं लेकिन ये मुख्य रूप से एक ही सिद्धांत पर काम करते हैं।

कैट टूल्स के मुख्य घटक

कैट टूल एक कंप्यूटर प्रोग्राम होता है जिसका मुख्य रूप से 2 घटक होते हैं। एक तो ट्रांसलेशन मेमोरी (अनुवाद मेमोरी) जिसे संक्षेप में टी.एम. कहा जाता है और दूसरा घटक है—ग्लोसरी या शब्दावली। प्रोग्राम मुख्य रूप से अनुवाद मेमोरी से मूल पाठ के लिए समकक्ष ढूँढ़कर सहायता करता है और शब्दकोश आपको शब्दों का अर्थ दिखाता चलता है। आपके कंप्यूटर के स्क्रीन पर दोनों चीज़ें अनुवाद के लिए कार्यक्षेत्र के साथ खुल जाती हैं। ज़्यादातर कैट टूल्स में आप इन्हें अपनी मरज़ी से वांछित स्थान पर खींच सकते हैं।

अंतरिम अनुवाद दस्तावेज़

इससे पहले कि आप अनुवाद का काम शुरू करें कैट टूल आपके लिए अंतरिम अनुवाद दस्तावेज़ (इंटरिम ट्रांसलेशन डॉक्यूमेंट—संक्षेप में आई.सी.टी.) तैयार करता है जिसमें ये प्रक्रियाएँ होती हैं—

1. खंड विभाजन या सेग्मेंटेशन—इस प्रक्रिया में कैट टूल आपके अनुवाद के दस्तावेज़ के पाठ को खंडों में विभाजित कर देता है। यह आम तौर पर वाक्य समाप्ति चिह्नों यानी पूर्णविराम और प्रश्नचिह्न, संबोधन चिह्न, अनुच्छेद चिह्न आदि के आधार पर किया जाता है। हालाँकि इसे कॉलन, सेमीकॉलन आदि के आधार पर भी किया जा सकता है। जब आप कैट टूल के कार्यक्षेत्र पर नज़र डालेंगे तो यह आपको एक तालिका जैसा नज़र आएगा। इस तालिका में 2 कॉलम होते हैं और कुछ पंक्तियाँ होती हैं। हर कॉलम-पंक्ति में पाठ का एक खंड रखा जाता है जो प्राय: एक वाक्य होता है। मूल पाठ के सामने के खाने में आपको अनुवाद टाइप करना होता है। कुछ कैट टूल आपको इसे बदलकर मूल पाठ ऊपर रखने और अनुवाद उसके नीचे करने की सुविधा भी देते हैं।

कैट टूल आपको अपनी मरज़ी से किसी खंड को और आगे खंड (या खंडों) में विभाजित करने और एकाधिक खंड जोड़ने के विकल्प भी देता है। खंड विभाजन का एक जो सबसे बड़ा लाभ मुझे दिखाई देता है वह यह है कि अब आपके सिर पर बड़े लंबे दस्तावेज़ अनूदित करने का भार नहीं रहता बल्कि आपको बस एक बार में एक ही वाक्य का अनुवाद करना होता है। इससे अनुवाद का काम बोझिल नहीं लगता। इसके साथ ही कैट टूल के साथ जुड़ा शब्दकोश आपको शब्दकोश में उपलब्ध, बस उस खंड के शब्दों का ही अर्थ दिखाता है, इसलिए शब्दों के अर्थ देखना भी आसान हो जाता है।

2. पूर्व अनुवाद—आई.सी.टी. में कैट टूल आपके लिए खुद ब खुद अनुवाद मेमोरी में उपलब्ध मूल पाठ से मिलान के अनुवाद ले आता है जो अनुवाद बॉक्स में रख दिए जाते हैं। ऐसा नहीं है कि कैट टूल 100 प्रतिशत मिलान ही लाता हो। इसमें आप अपनी इच्छा से मिलान का प्रतिशत 1 से 100 के बीच निर्धारित कर सकते हैं। इसे आम तौर पर 75 प्रतिशत के आसपास रखना सुविधाजनक रहता है। इसके बाद कैट टूल एक फ़ॉर्मूले के अंतर्गत उसी प्रतिशत के मिलान आपके लिए ले आएगा। यानी आपके किए 100 प्रतिशत मिलान का अनुवाद तो होगा ही (जिसमें कैट टूल संदर्भ मिलान (कॉन्टेक्स्ट मैच) की सुविधा देती है) और आपके द्वारा इससे कम निर्धारित प्रतिशत के मिलान भी लाए जाएँगे जिन्हें फ़ज़ी मिलान कहा जाता है। आप अपनी सुविधा से तय कर सकते हैं कि एक मिलान दिखाया जाए या ज़्यादा। ज़्यादा मिलान दिखाने की स्थिति में कैट टूल उन्हें मिलान के घटते प्रतिशत के क्रम में दिखाता है।

100 प्रतिशत या संदर्भ मिलान में तो आपको किसी सहायता की ज़रूरत नहीं होगी लेकिन अगर मिलान इससे कम है तो कैट टूल एक और ज़बरदस्त सहायता पेश करता है। आपको खुद आँखें गड़ाकर मूल और फ़ज़ी मिलान में अंतर करने की ज़रूरत नहीं होती

यह काम कैट टूल आपके लिए करता है और आपको दिखाता है कि मूल पाठ और फ़ज़ी मिलान में कहाँ-कहाँ अंतर हैं, क्या जोड़ा गया है और क्या हटाया गया है। तो आप फ़ज़ी मिलान में जो जोड़ा गया है, उसे जोड़कर और जो हटाया गया है, उसे हटाकर अपना अनुवाद कम श्रम में मुकम्मल कर सकते हैं।

लेकिन सहायता का क्रम यहीं ख़त्म नहीं होता। अगर मूल पाठ और फ़ज़ी मिलान में संख्याओं का अंतर है तो कैट टूल अनुवाद में इसे अद्यतित करने का काम खुद ब खुद कर देता है यानी अगर सुझाव में 1975 लिखा है और मूल पाठ में यह बदलकर 2016 हो गया है तो इसे आपको बदलने की ज़रूरत नहीं होगी, कैट टूल आपके लिए यह कर देगा।

कैट टूल अनुवाद मेमोरी से केवल एक ही सुझाव नहीं देता बल्कि आपकी इच्छा के आधार पर 10 या ज़्यादा सुझाव भी दे सकता है और इस तरह आप एक से अधिक सुझावों से अपने अनुवाद में मदद ले सकते हैं। ऐसा हो सकता है कि 75 प्रतिशत के सुझावों में जो बात पहले सुझाव में छूट गई हो और वह दूसरे में उपलब्ध हो आप दोनों को मिलाकर अपना अनुवाद पूरा कर सकते हैं।

कैट टूल एक कंप्यूटर प्रोग्राम होता है जिसका मुख्य रूप से 2 घटक होते हैं। एक तो ट्रांसलेशन मेमोरी (अनुवाद मेमोरी) जिसे संक्षेप में टी.एम. कहा जाता है और दूसरा घटक है—ग्लोसरी या शब्दावली। प्रोग्राम मुख्य रूप से अनुवाद मेमोरी से मूल पाठ के लिए समकक्ष ढूँढ़कर सहायता करता है और शब्दकोश आपको शब्दों का अर्थ दिखाता चलता है। आपके कंप्यूटर के स्क्रीन पर दोनों चीज़ें अनुवाद के लिए कार्यक्षेत्र के साथ खुल जाती हैं।

3. अनुवाद रचना—अगर आपकी अनुवाद मेमोरी में मूल पाठ के लिए कोई मिलान उपलब्ध नहीं है तो कैट टूल आपको अनुवाद रचना की सुविधा देता है। इसमें यह शब्दावली से संबंधित शब्दों के अर्थ ढूँढ़कर आपके लिए ले आता है और आप उन शब्दों को व्याकरण में पिरोकर अपना अनुवाद पूरा कर सकते हैं। इससे आपका शब्दों के अर्थ ढूँढ़ने और उन्हें टाइप करने का श्रम बच जाता है।

कॉनकॉर्ड खोज

ऐसा भी तो हो सकता है कि कैट टूल की खोज की अल्गोरिद्म ठीक से न समझ पा रही हो और अनुवाद मेमोरी में उपलब्ध अनुवाद को न ला पा रही हो या वह उसकी रेंज से बाहर हो। ऐसे में कैट टूल आपको कॉनकॉर्ड खोज की सुविधा देता है। उदाहरण के लिए मान लीजिए कि एक वाक्य (या खंड) पहले के किसी अनुवाद का आधा भाग है। अनुवाद मिलान खोज की 75 प्रतिशत के विकल्प पर निर्धारित सुविधा इसे आपके लिए नहीं ला सकती हालाँकि वह आपके मूल वाक्य का 100 प्रतिशत मिलान है लेकिन कॉनकॉर्ड खोज इसे ढूँढ़ लेगी और आपके लिए ले आएगी। कॉनकॉर्ड खोज से आप वाक्यों, वाक्यांशों या शब्दों के अनुवाद की भी खोज कर सकते हैं। अनुवाद में शब्दावली की संगतता और एकरूपता बनाए रखने में यह सुविधा बहुत मददगार होती है। उदाहरण के लिए मान लीजिए कि आप भूल गए हैं कि आपने 'मेमोरी' का अनुवाद 'मेमोरी' किया है या 'स्मृति' तो कॉनकॉर्ड खोज आपको यह बता सकती है।

मशीन अनुवाद

फिर मशीन अनुवाद लेकिन अब थोड़े भिन्न संदर्भ में। गूगल ट्रांसलेट से तो सभी परिचित हैं। (वैसे माइक्रोसॉफ़्ट तथा 1-2 और कंपनियाँ भी यह काम करती हैं।) नहीं, उसके द्वारा दिए जानेवाले अनुवाद का समर्थन करने का मेरा कतई कोई इरादा नहीं है। (अगर वह 'जॉर्ज बुश' का अनुवाद 'जॉर्ज झाड़ी' देगा तो भला कोई कैसे समर्थन कर सकता है!) मैं सिर्फ़ यह कहना चाहता हूँ कि जैसे कैट टूल आपके लिए अनुवाद रचना का काम करता है (जो कुछ न कुछ मददगार होता ही है) वैसे ही कैट टूल आपके लिए खंड का मशीन अनुवाद भी करने का काम करता है। इसके लिए यह आपके निर्देश के अनुसार गूगल आदि वेबसाइट की सहायता लेता है। इसे आप अतिरिक्त सहायता की तरह ले सकते हैं जिससे आप काफ़ी हद तक शब्दों का अर्थ तलाशने और उन्हें टाइप करने के श्रम से बच जाते हैं और आपका समय भी बचता है, जैसा कि हम सभी जानते है, 'समय धन है'!

आप जो अनुवाद करते हैं वह अनुवाद मेमोरी से जुड़ता रहता है और इस तरह आपका खज़ाना बढ़ता रहता है। यहाँ तक कि आप अपने पुराने अनुवाद कार्य को भी मेमोरी में जोड़ सकते हैं। आप सभी काम के लिए एक ही मेमोरी बना सकते हैं या अलग-अलग विषयों के काम के लिए अलग-अलग मेमोरी बना सकते हैं। आप

एक बार में एक या अधिक मेमोरी भी कैट टूल में जोड़ सकते हैं और इसी तरह एक या अधिक शब्दकोशों के साथ भी काम कर सकते हैं। इसी तरह कैट टूल आपको शब्दकोश में नए शब्द जोड़ने और अनावश्यक शब्द हटाने की सुविधा भी देता है।

कैट टूल मूल पाठ में उन शब्दों को भी चिह्नित कर देता है जिनके अर्थ शब्दकोश में उपलब्ध हैं तो आपको पता चल जाता है कि शब्दकोश से कौन-सी और कितनी सुविधा उपलब्ध है।

इस तरह आप देख सकते हैं कि कैट टूल से आपके अनुवाद के काम में कितनी सहायता मिलती है लेकिन यह तो सहायता की बस शुरूआत है। इसमें और बहुत सी सुविधाएँ होती हैं जो अनुवादक के रूप में आपके जीवन को सरल बनाती हैं।

कैट टूल्स में संपादन के समय ट्रैक चेंज (या परिवर्तन ट्रैक करने) की सुविधा भी होती है। वर्ड दस्तावेज़ की तरह इसमें किए जानेवाले सभी बदलाव अलग से दिखाई देते हैं। इसका यह लाभ होता है कि अनावश्यक बदलाव अस्वीकृत किए जा सकते हैं और आवश्यक बदलाव स्वीकार किए जा सकते हैं।

हर कैट टूल्स का मूल्य अलग-अलग है लेकिन यह लगभग रु. 30,000 के आसपास होता है। इसके साथ ही हर कैट टूल्स साल 2 साल में अपना अद्यतन बाज़ार में पेश कर देता है जिसे खरीदना भी समय के साथ बने रहने के लिए ज़रूरी हो जाता है।

फ़ॉर्मेटिंग

अनुवाद के काम में फ़ॉर्मेटिंग या स्वरूपण एक बहुत बड़ा मुद्दा होता है। अगर आप वर्ड फ़ाइल में अनुवाद कर रहे हैं या तो आपको मूल के अनुसार बार-बार अनुवाद के पाठ का फ़ॉन्ट बदलना होगा, उसे बोल्ड, इटैलिक वगैरह करना होगा, अनुच्छेद बनाने होंगे, सामग्री सेंटर में करनी होगी, शीर्षक-उपशीर्षक बनाने होंगे आदि-आदि जो एक लंबी और उबाऊ प्रक्रिया हो सकती है और अनुवाद के काम में बाधक भी बन सकती है या फिर आपको यह काम करने के लिए किसी दूसरे व्यक्ति की मदद लेनी होगी यानी काम का खर्च बढ़ जाएगा। लेकिन कैट टूल्स आपके इस पूरे काम को अपने ऊपर ले जाता है। जिसके लिए आपको अलग से कुछ नहीं करना पड़ता। फिर वह चाहे फ़ॉन्ट का आकार हो, बोल्ड, सेंटर, इटैलिक, शीर्षक, उपशीर्षक, तालिका, बुलेट, बॉक्स, नंबरिंग, हैडर, फ़ुटर, फ़ुटनोट, शेडिंग, चित्रों को सही स्थान पर रखना, आपको सब कुछ वैसा ही मिल जाता है जैसा मूल दस्तावेज़ में होता है और इनमें से ज़्यादातर चीज़ें आपको दिखाई भी नहीं देंगी यानी आपके अनुवाद के काम में बाधक नहीं बनेंगी।

इतना ही नहीं, कैट टूल्स वर्ड फ़ाइल ही नहीं बल्कि अनेक फ़ाइल फ़ॉर्मेट का समर्थन करते हैं जैसे एक्सेल, पावर पोइंट, टेक्स्ट फ़ाइल, पीडीएफ़, एचटीएमएल, सॉफ़्टवेयर फ़ाइलें आदि, यानी आप इन सभी फ़ाइलों का कैट टूल्स में अनुवाद कर सकते हैं। आम तौर पर जिस फ़ाइल फ़ॉर्मेट में आपका मूल दस्तावेज़ होता है उसी में आपका अनूदित दस्तावेज़ भी तैयार हो जाता है। अनुवादक के लिए और इससे भी बढ़कर, डीटीपी के लोगों के लिए, वेबसाइट और सॉफ़्टवेयर डिवलॉपर के लिए यह बहुत उपयोगी सुविधा है।

संपादन

अनुवाद के काम में संपादन और प्रूफ़ पठन के महत्व से भला कौन इंकार कर सकता है? कैट टूल्स में अनुवाद कार्य के इस महत्वपूर्ण चरण को भी ध्यान में रखा गया है।

कैट टूल दस्तावेज़ को आपके लिए 2 रूपों में खोल सकता है—एक तो अनुवाद के लिए, दूसरे संपादन या प्रूफ़ पठन के लिए। इस तरह आप—

- खुद अपने कार्य का संपादन और प्रूफ़ पठन कर सकते हैं और/या
- अन्य संपादक या प्रूफ़ शोधक को अपना काम भेज सकते हैं।

ऐसी स्थिति भी हो सकती है कि संपादक या प्रूफ़ शोधक कैट टूल्स पर काम न कर पाता हो। इसके लिए कैट टूल्स में सुविधा होती है कि फ़ाइल का वर्ड दस्तावेज़ के रूप में निर्यात करके संपादन के लिए भेज दिया जाए और जब वह दस्तावेज़, संपादन या प्रूफ़ रीडिंग के बाद लौट आए तो उसे कैट टूल्स में आयात कर लिया जाए।

ट्रैक बदलाव

कैट टूल्स में संपादन के समय ट्रैक चेंज (या परिवर्तन ट्रैक करने) की सुविधा भी होती है। वर्ड दस्तावेज़ की तरह इसमें किए जानेवाले सभी बदलाव अलग से दिखाई देते हैं। इसका यह लाभ

होता है कि अनावश्यक बदलाव अस्वीकार किए जा सकते हैं और आवश्यक बदलाव स्वीकार किए जा सकते हैं।

कैट टूल्स वर्ड फ़ाइल ही नहीं बल्कि अनेक फ़ाइल फॉर्मेट का समर्थन करते हैं जैसे एक्सेल, पावर पोइंट, टेक्स्ट फ़ाइल, पीडीएफ, एचटीएमएल, सॉफ़्टवेयर फ़ाइलें आदि, यानी आप इन सभी फ़ाइलों का कैट टूल्स में अनुवाद कर सकते हैं। आम तौर पर जिस फ़ाइल फ़ॉर्मेट में आपका मूल दस्तावेज़ होता है उसी में आपका अनुदित दस्तावेज़ भी तैयार हो जाता है। अनुवादक के लिए और इससे भी बढ़कर, डीटीपी के लोगों के लिए और वेबसाइट और सॉफ़्टवेयर डिवेलपर के लिए यह बहुत उपयोगी सुविधा है।

संपादन की अन्य सुविधाएँ

शब्द संसाधकों या वर्ड प्रोसेसर में उपलब्ध संपादन की अन्य सुविधाएँ भी कैट टूल्स में उपलब्ध रहती हैं जैसे— 'खोजें', 'खोजें और बदलें' (यह मूल और अनुवाद दोनों में किया जा सकता है), 'खींचें और जोड़ें', 'हटाएँ', 'जोड़ें', और तो और ज़रूरत पड़ने पर इसमें मूल पाठ में भी संशोधन किया जा सकता है।

आपके पास हर खंड में संपादक या परियोजना प्रबंधक आदि के लिए टिप्पणी छोड़ने का अवसर भी रहता है ताकि वे समझ सकें कि आपने कोई विशेष प्रयोग क्यों किया है या अनुवाद में क्या समस्या थी।

स्वतः प्रोपागेशन

कैट टूल्स में स्वत: प्रोपागेशन की सुविधा भी रहती है जिसका अर्थ यह है कि अगर आपने किसी अनुवाद खंड की पुष्टि की है तो वह आपके द्वारा निर्धारित प्रतिशत के अनुसार आनेवाले खंडों में और पिछले खंडों में भी अनुवाद को अद्यतित कर दे। उदाहरण के लिए आपने एक अनुवाद खंड की पुष्टि की और वैसा ही खंड (या वाक्य) आगे भी आता है तो वहाँ अनुवाद अपने आप हो जाएगा और अगर आपने पहले उसके समकक्ष खंड का कुछ और अनुवाद किया था और अब आपने मन बदल लिया है तो वर्तमान खंड की पुष्टि होने पर वह पिछला खंड भी बदल जाएगा।

तथापि अगर आप प्रोपागेशन 100 प्रतिशत के स्थान पर कम प्रतिशत जैसे 75 प्रतिशत पर निर्धारित करते हैं तो यह इस आधार पर आगेवाले 75 प्रतिशत तक समानतावाले खंडों में अनुवाद का प्रोपागेशन करेगा लेकिन आगे से पीछे दोनों दिशाओं में 75 प्रतिशत से अधिक समानता के पहले से अनुवाद या प्रोपागेट हो चुके खंडों को प्रभावित नहीं करेगा।

कैट टूल आपको अनुवाद से पहले ही इसका विश्लेषण भी दे सकता है कि पाठ में कितने प्रतिशत खंड दोहराए गए हैं और कितने प्रतिशत तक। यह सुविधा अनुवादकों के लिए कुछ अहितकारी है क्योंकि ऐसे में क्लाइंट दोहरावाले भाग के लिए भुगतान नहीं करता।

स्वतः सुझाव

स्वत: सुझाव या ऑटो सजेस्ट कैट टूल्स की ऐसी बेहतरीन सुविधा है जो आपके काम को और भी सरल बना देती है। इसके लिए कुछ कैट टूल्स आपके लिए स्वत: सुझाव के लिए टी.एम. या शब्दावली की तरह स्वत: सुझाव शब्दावली भी बना देते हैं। इस सुविधा के अंतर्गत जब आप अनुवाद करने के लिए टाइप करना शुरू करते हैं तो आपके द्वारा टाइप किए गए वर्ण और फिर वर्ण-गुच्छ से मिलानवाली शब्दावली और स्वत: सुझाव शब्दावली में उपलब्ध आइटम आपके सामने आ जाते हैं और आप अपनी पसंद के सुझाव बस एंटर दबाकर अपने अनुवाद में शामिल कर सकते है। यह सुझाव शब्द से लेकर वाक्यांश तक हो सकता है और अगर आप ऑनलाइन रहते हुए काम करते हैं तो कैट टूल स्वत: सुझावों की इस सूची में मशीन अनुवाद में उपलब्ध आइटम भी जोड़ देता है। शायद इसी को तो कहते हैं, 'सोने पे सुहागा'!

वर्तनी शोधन

कैट टूल्स वर्तनी शोधन की सुविधा भी देते हैं। इसके अंतर्गत, ठीक वर्ड दस्तावेज़ की तरह गलत शब्द हाइलाइट हो जाते हैं जिन्हें आप राइट क्लिक करके सुधार सकते हैं तथापि हिंदी भाषा के लिए यह सुविधा अभी सीमित है। आप वर्तनी शोधक चलाकर भी वर्तनी की जाँच कर सकते हैं जिसमें एक क्लिक से सभी आवृत्तियाँ सुधारने की सुविधा मिलती है।

गुणवत्ता आश्वासन

आप चाहे कितने भी अच्छे अनुवादक या भाषाविद क्यों न हों लेकिन कुछ चूक तो आपसे हो ही सकती है क्योंकि आप कैट

टूल तो नहीं हैं न! मेरा कहने का मतलब है कि कैट टूल यहाँ भी आपको ठोस सहायता प्रदान करता है।

गुणवत्ता आश्वासन या क्वालिटी एश्युरंस के अंतर्गत कैट टूल अनेक तरह से अनुवाद की जाँच करता है। यह जाँच आपके द्वारा अनुवाद करते समय ही चलती रहती है और आप अलग से भी गुणवत्ता आश्वासन के लिए प्रोग्राम चला सकते हैं। इसमें कैट टूल निम्नलिखित की जाँच करता है—भाषा की चूक जैसे शब्दों का दोहराव (हिंदी में यह जालिम आपको 'अलग-अलग' की भी त्रुटि दिखाएगा), शब्दों के बीच अनावश्यक स्थान, विरामादि विन्यासों से पहले अनावश्यक स्थान, वाक्य के अंत में पूर्णविराम आदि के बाद अनावश्यक स्थान, मूल पाठ से विरामादि विन्यास में भिन्नता, ऐसे में यह हिंदी पूर्णविराम (।) की भी गलती दिखाता है, नंबरों की भिन्नता, मूल पाठ और अनुवाद में आकार की भिन्नता, टैग की समस्या (पाठ के फ़ॉर्मेट की पहचान के लिए कैट टूल्स 'टैग्स' का इस्तेमाल करते हैं), शब्दावली की भिन्नता आदि।

कैट टूल की इस गुणवत्ता आश्वासन की सुविधा से आप त्रुटिरहित, एकरूप, और सटीक अनुवाद करने में सक्षम होते हैं।

क्लाउड पर कैट टूल

अन्य कार्य क्षेत्र की तरह कैट टूल्स के लिए क्लाउड की सुविधा भी उपलब्ध है। जिन लोगों को क्लाउड के बारे में नहीं पता उनके लिए बताना चाहूँगा कि क्लाउड वह सुविधा है जिसमें आप इंटरनेट पर किसी सर्वर पर काम करते हैं। आप अपने कंप्यूटर पर ही काम करते हैं लेकिन यह काम कहीं और सहेजा जाता है। इसका लाभ यह होता है कि फ़ाइलों के लेन-देन में लगनेवाला समय बच जाता है, काम की गोपनीयता, एकरूपता, संगतता आदि पर क्लाइंट का नियंत्रण ज़्यादा हो जाता है और काम के खो जाने, सहेजे न जाने आदि के झंझट समाप्त हो जाते है।

क्लाउड पर काम करने के कई लाभ हैं और इसके कई प्रकार हैं। उदाहरण के लिए बहुत सारे अनुवादक और संपादक एक साथ काम और सहयोग कर सकते हैं, समस्याओं का समाधान तत्काल कर सकते हैं, आपके लिए बड़ी या विषय के लिए विशिष्ट अनुवाद मेमोरी और शब्दकोश उपलब्ध हो सकते हैं और आपको कैट टूल खरीदने की ज़रूरत नहीं रह जाती। क्लाउड पर काम करने की यह सुविधा क्लाइंट की ओर से भी मिल सकती है और आप खुद भी काम करने के लिए क्लाउड पर अपना स्थान खरीद सकते हैं।

क्या कैट टूल हिंदी में काम करता है?

वैसे तो यह सवाल कुछ गैर-ज़रूरी सा लग सकता है क्योंकि अगर ऐसा न होता तो फिर इस लेख को हिंदी पाठकों के लिए लिखना मुनासिब न होता। फिर भी स्पष्ट करने के लिए कहना चाहूँगा कि कैट टूल्स हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं में भी काम करते हैं लेकिन जैसा कि मैंने कहा है वर्तनी शोधन और टाइप समर्थन की दृष्टि से कहीं-कहीं कुछ समस्याएँ आ सकती हैं पर वे नगण्य हैं। सभी मुख्य सुविधाएँ हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं के लिए उपलब्ध रहती हैं और ये कैट टूल्स यूनिकोड और टीटीएक्स दोनों तरह के फ़ॉन्ट में काम करते हैं तो प्रौद्योगिकी की इस देन का लाभ उठाएँ तथा ज़्यादा पेशेवर, सटीक कुशल और क्षिप्र अनुवादक बन जाएँ।

कैट टूल्स का मूल्य

हर कैट टूल्स का मूल्य अलग-अलग है लेकिन यह लगभग रु. 30,000 के आसपास होता है। इसके साथ ही हर कैट टूल्स साल 2 साल में अपना अद्यतन बाज़ार में पेश कर देता है जिसे खरीदना भी समय के साथ बने रहने के लिए ज़रूरी हो जाता है।

एक नज़र में यह राशि बहुत ज़्यादा लग सकती है लेकिन कैट टूल्स के लाभों को देखते हुए पेशेवर अनुवादक के लिए यह काफ़ी फ़ायदे का सौदा होता है और उस स्थिति में तो इससे बचा भी नहीं जा सकता जब क्लाइंट की माँग ही हो कि काम कैट टूल में ही करना है और संस्थान की दृष्टि से तो यह मूल्य बहुत ज़्यादा नहीं रहता।

कौन-सा कैट टूल लें?

यह थोड़ा मुश्किल सवाल ज़रूर है क्योंकि इनकी कीमतों को देखते हुए आप 1-2 से ज़्यादा कैट टूल्स शायद नहीं ले सकेंगे। इसमें सुविधा यह है कि हर कैट टूल के डेमो संस्करण उपलब्ध हैं और आप उन्हें आज़माकर अपनी पसंद तय कर सकते हैं।

ProZ.com अनुवादकों की प्रमुख वेबसाइट है जहाँ इस बारे में और सामग्री मिल सकती है। वहाँ समूह खरीद भी चलती रहती है जिनमें कैट टूल्स और सस्ती दरों पर उपलब्ध हो सकते हैं।

गुजरात, भारत
drajeshk@yahoo.com

20

इंटरनेट की दुनिया में हिंदी का भविष्य

डॉ. साईनाथ विट्ठल चपले

इक्कीसवीं सदी सूचना क्रांति एवं इंटरनेट का युग है। इस दौर में कंप्यूटर और इंटरनेट विश्व को जोड़ने का सरल माध्यम बन गया है। विश्व में प्रथम कंप्यूटर की निर्मिति सन् 1939 में हुई। प्रारंभिक काल में कंप्यूटर का आविष्कार अंकीय प्रक्रिया से गणितीय समस्याएँ हल करने के लिए किया गया। कंप्यूटर की विकास यात्रा में उसने अपनी अमर्यादित क्षमता और उपयोगिता को सिद्ध करते हुए मनुष्य के समग्र जीवन को घेरने का प्रयास किया है। आज विज्ञान, तंत्रज्ञान, शिक्षा, रसायन, भौतिकी, सूचना, रक्षा, अभियांत्रिकी, मीडिया जैसे क्षेत्रों में उसकी गहरी पैठ ने उसे स्वतंत्र प्रयोग की मर्यादा को लाँघने के लिए विवशकर इंटरनेट सूत्र में बाँध दिया है। कंप्यूटर का इंटरनेट में बँध जाना कुछ न होकर नेटवर्किंग संस्कृति का जन्म था। इंटरनेट सत्ता ने कंप्यूटर को विश्व का संवेदी संवाहक बनाने के लिए सारे विश्व को ग्राम बनाया। इंटरनेट एक-दूसरे से जुड़े कंप्यूटरों का एक विशाल विश्वव्यापी नेटवर्क है। इंटरनेट से जुड़े कंप्यूटरों पर एक-दूसरे से आपस में अंतर्जाल नियमावली (Internet Protocol) के माध्यम से सूचनाओं का आदान-प्रदान होता है। सन् 1969 में पहली बार इंटरनेट की सहायता से एक डाटा दूसरी जगह पहुँचा तो पूरे विश्व को एक साथ जोड़ने का सपना पूरा होता हुआ नज़र आया। इंटरनेट की क्रांति विश्व में एक अद्‌भुत क्रांति है जिसने पूरे विश्व को अपनी मुट्ठी में बंद करके रखा है। इंटरनेट की शुरूआत के बाद पूरा विश्व एक घर के समान हो गया। इंटरनेट के ज़रिए हम घर बैठे सभी सूचनाओं का आदान-प्रदान कर सकते हैं। इंटरनेट के आने से मनुष्य की पहचान बदल गई। इसी बात को स्पष्ट करते हुए डॉ. सुनिल कुमार लवटे ने लिखा है, ''पहले मनुष्य 'नागरिक' (Citizen) कहलाता था, अब उसका अधिकांश व्यवहार संगणक, इंटरनेट के पटल पर होने लगा और वह 'Netizen' बन गया। वे आगे लिखते हैं, 'सिटिज़न' का 'नेटिज़न' बनना न मात्र स्थित्यांतर या स्थानांतर था अपितु वह एक नए ज्ञान समाज (Knowledge Society) की ओर मनुष्य का अग्रसर होना है।'' आज इंटरनेट के प्रयोग ने मनुष्य को सिटिज़न से नेटिज़न बना दिया।

चपले साईनाथ विट्ठल का जन्म 5 मार्च, 1980 ई., बन्नाली, जिला नांदेड, महाराष्ट्र राज्य में हुआ। इन्होंने हैदराबाद केंद्रीय विश्वविद्यालय से एम.फिल., पीएचडी तथा एम.ए. की उपाधि प्राप्त है। 'मिथक का काव्यात्मक आख्यान' पुस्तक शिल्पायन 2009, हिंदी कोविद रत्नमाला-संपादित, 2014, नेहा 2014 में प्रकाशित तथा अन्य कई पत्र-पत्रिकाओं में आलेख प्रकाशित हैं।
हैदराबाद केंद्रीय विश्वविद्यालय से एम.फिल. में प्रथम स्थान प्राप्त करने पर 'रूपचंद छाजेड जैन स्वर्ण पदक' से पुरस्कृत हैं। हिंदी गद्य साहित्य में मुख्यतः हिंदी के दुर्लभ उपन्यास एवं कहानियों पर कार्य और साहित्य के समाजशास्त्र में इनकी विशेष रुचि है।

सन् 1990 में टिम बर्नर्स ली से विश्वव्यापी वेब (वर्ल्ड वाइड वेब) की एक ऐसी ज्ञान सत्ता निर्मित हुई कि उसने मनुष्यता की पहचान ही बदल दी। इंटरनेट को विश्व का सबसे बड़ा कंप्यूटर नेटवर्क कहा जाता है। आज के वैश्विक ग्राम में इंटरनेट मनुष्य के जीवन का महत्वपूर्ण अंग बन गया है। इंटरनेट ने जीवन के सभी क्षेत्रों को घेरा है। इससे कोई व्यक्ति, संस्था, संगठन अछूता नहीं रहा। इंटरनेट का जाल इतना फैल गया है कि वह केवल कंप्यूटर तक ही सीमित न होकर अनेक गैजेट्स, जैसे—मोबाइल, टैबलेट, लैपटॉप, इ-बुक रीडर आदि डिवायसों पर इंटरनेट के माध्यम से विश्व की सूचनाओं को प्राप्त कर रहा है। इंटरनेट हमारे जीवन में ऐसे रच-बस गया है कि इसके बिना कोई कार्य करना शायद ही संभव हो। इंटरनेट के ज़रिए हम पत्र व्यवहार,

मैसेजिंग, ब्लॉगिंग, ऑनलाइन ऑडियो और वीडियो कॉल तथा चैट कर सकते हैं। इसके साथ-साथ संगीत, चलचित्र, वीडियो के इलेक्ट्रॉनिक स्वरूप का आदान-प्रदान करते हैं। इंटरनेट के माध्यम से केवल सूचनाओं का ही आदान-प्रदान या मनोरंजन नहीं होता, शिक्षा, अनुसंधान, निजी और विदेशी व्यापारी संघटनों, व्यवसाय और अंतरराष्ट्रीय संबंधों की जानकारी हासिल कर सकते हैं। वर्तमान युग में इंटरनेट शिक्षा से लेकर शॉपिंग तक फैल गया है। इंटरनेट के कारण अंतर, समय, स्थल की कल्पना खत्म हो गई है। आज हम पलक झपकते ही सात समुंदर पार संपर्क करने में सक्षम हुए हैं। इसका श्रेय इंटरनेट को ही जाता है।

वेब पर हिंदी का पहला कदम

23 सिंतबर, 1999 को हिंदी जगत को एक नायाब तोहफ़ा 'वेबदुनिया' के माध्यम से मिला। सन् 1999 से पहले अंग्रेज़ी के बिना इंटरनेट की कल्पना नहीं की जा सकती थी तभी श्री विनय छजलानी और उनकी टीम ने 15 वर्षों के अथक प्रयासों के बाद भारत के पहले हिंदी वेब पोर्टल 'वेबदुनिया' का शुभारंभ किया। इसके द्वारा इंटरनेट तथा वेबसाइट पर हिंदी भाषा और साहित्य के प्रयोग का 'भारत युग' शुरू हुआ। 'वेबदुनिया' के माध्यम से पल भर में अनगिनत पाठकों के लिए ताज़ी ख़बरें, साहित्य, आलेख, मनोरंजन, धर्म, ज्योतिष और ज्ञानवर्धक सामग्री उपलब्ध हुई। वेब दुनिया का यह कार्य 'खुल जा सिमसिम' की तरह हिंदी पाठकों की आँखें चौंधिया देता है। 'वेबदुनिया' के प्रकाशन से हिंदी भाषा, साहित्य का प्रकाशन, रूपांतरण, लिप्यंतरण वैश्विक बना।

इंटरनेट की दुनिया में हिंदी का स्थान एवं भविष्य

वर्तमान दौर सूचना और क्रांति का है। इसमें हिंदी को अपना स्थान निश्चित करने के लिए लंबा रास्ता तय करना होगा। केवल हिंदी के सहारे इंटरनेट के माध्यम से दुनिया को नाप नहीं सकते यद्यपि समय के साथ इंटरनेट की दुनिया से हिंदी की दोस्ती बढ़ रही है, इसमें दो मत नहीं है। आज हिंदी इंटरनेट के साथ कदम-ताल करते हुए दिखाई दे रही है यद्यपि इसमें कमियाँ हैं। इन्हें पूरा करने के लिए हिंदी जगत के विद्वानों को लंबा रास्ता तय करना होगा। इंटरनेट पर हिंदी अपनी मज़बूत स्थिति दर्ज़ कराने में अंग्रेज़ी और चीनी (मंदारिन) भाषा के मुकाबले असफल रही है।

इंटरनेट की दुनिया में चार चाँद तब लगे जब इंटरनेट पर नाम देने के लिए ज़िम्मेदार अंतरराष्ट्रीय संस्था 'इंटरनेट कॉर्पोरेशन ऑव असाइंड नेम एंड नंबर' यानी आई.सी.ए.एन.एन. ने भारत सरकार की 7 क्षेत्रीय भाषाओं में वेब पते लिखे जाने से जुड़े आवेदन को मंज़ूरी दी। इससे यह अनुमान लगा सकते हैं कि इंटरनेट पर जो अंग्रेज़ी का दबदबा था वह खत्म होने लगा है। यह माना जा रहा है कि अगले कुछ ही वर्षों में इंटरनेट पर हिंदी में सभी वेब पते लिखने की शुरूआत होगी। हिंदी में इंटरनेट पर वेब पता लिखना सच में काबिले तारीफ़ है और आनेवाले समय में इंटरनेट की दुनिया में हिंदी के माध्यम से बड़ा बदलाव होगा और हिंदी विश्व की शीर्ष भाषाओं में स्थान प्राप्त करेगी, ऐसा मेरा विश्वास है।

आज इंटरनेट पर हिंदी ने अपना स्थान मुकम्मल किया है और इंटरनेट पर वह बिंदी की तरह कार्य कर रही है। आज इंटरनेट पर समाचार पत्र, साप्ताहिक एवं मासिक पत्र-पत्रिकाएँ, इ-किताबें, हिंदी वेब साइट्स, ब्लॉगिंग, इ-मेल और सोशल नेटवर्क (फ़ेसबुक, वाट्सऐप, ट्विटर, वाइबर, आई.एम.ओ. और वी चैट आदि) पर हिंदी में कार्य करने की सुविधा है। इतना ही नहीं, आज हिंदी के द्वारा अपने हाव-भावों को अभिव्यक्त करने के लिए 'इमोजी' की तरह 'हिमोजी' का आगाज़ हुआ है। वर्तमान समय में हिंदी में उपरोक्त कार्य करने में हम सक्षम हैं। इसका श्रेय 'यूनिकोड' को जाता है। जैसा कि आपको विदित है कि पहले कंप्यूटर पर हिंदी फ़ॉन्ट की काफ़ी दिक्कतें थीं पर यूनिकोड ने कंप्यूटर के लिए बेहतरीन कार्य किया जिसके चलते हिंदी और कंप्यूटर का रिश्ता मज़बूत हो गया। यूनिकोड प्रत्येक अक्षर के लिए एक विशेष संख्या प्रदान करता है चाहे वह कोई भी प्रोग्राम या कंप्यूटर अथवा कोई भाषा हो। आज यूनिकोड सभी प्रोग्राम, कंप्यूटर, टैबलेट, आई.ओ.एस. और एंड्रॉयड फ़ोन में इनबिल्ट है और उसके विशेष फ़ॉन्ट का नाम 'मंगल' है। यूनिकोड के आने से इंटरनेट पर हिंदी पाठकों की संख्या बढ़ी पर इंटरनेट और कंप्यूटर पर टाइप करने के लिए कोई एक मानक कुंजीपटल नहीं है जिसके कारण हिंदी प्रयोगकर्ता को कई मुश्किलों का सामना करना पड़ता है। वैसे इंटरनेट और कंप्यूटर पर हिंदी में टाइप करने के लिए 3 विकल्प उपलब्ध हैं। पहला है 'रेमिंग्टन टाइपराइटर' पद्धति। इस पद्धति में काफ़ी मुश्किलें हैं और श्रमसाध्य होने के बावजूद यह जटिल एवं अवैज्ञानिक है। द्वितीय है 'फ़ोनेटिक्स'। इस पद्धति में रोमन में टाइप करने से कंप्यूटर उसे देवनागरी में रूपांतरित कर देता है। इसमें टाइप करते समय

व्यावहारिक दिक्कतें आती हैं। गलत टाइप करने पर कंप्यूटर द्वारा विकल्प दिए जाते हैं फिर भी इस पद्धति में हमें अंग्रेज़ी पर ही निर्भर रहना पड़ता है।

इंटरनेट और कंप्यूटर पर टाइप करने के लिए सबसे वैज्ञानिक एवं आसान पद्धति है 'इंस्क्रिप्ट' कीबोर्ड। भारत सरकार द्वारा मानक कीबोर्ड के तौर पर 'इंस्क्रिप्ट' को देखा जाता है। यह कीबोर्ड वैज्ञानिक एवं आसान है। प्रत्येक अक्षर के लिए एक कोड निर्धारित किया गया है जिससे हिंदी में आसानी से टाइप कर सकते हैं। इंस्क्रिप्ट की दूसरी एक खास बात है कि इस कीबोर्ड के माध्यम से लगभग 22 भारतीय भाषाओं में टाइप कर सकते हैं। वर्तमान में इंटरनेट और कंप्यूटर पर टाइप करने के लिए 'इंस्क्रिप्ट' और 'गूगल इनपुट', ये 2 आसान तरीके हैं। आशा है कि आनेवाले समय में हिंदी टाइपिंग के लिए मानकीकृत कुंजीपटल बने। हिंदी को इंटरनेट पर स्थापित करने के लिए भारतीय सॉफ़्टवेयर क्षेत्र की अग्रणी कंपनियों ने इसकी ओर ध्यान दिया है। हिंदी को इंटरनेट और कंप्यूटर पर लाने और उसके विकास के लिए प्रगत संगणन विकास केंद्र (CDAC- Centre for Development of Advance Computing) भारतीय भाषाओं के लिए प्रौद्योगिकी विकास (TDIL-Technology Development for Indian Languages), वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग (CSTT - Commission for Scientific Technical Terminology),भारतीय भाषा संस्थान (CIIL - Central Institute of Indian Languages) और भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (IIT - Indian Institutes of Technology) तथा सी.एस. डी.एस. (CSDS - Centre for the Study of Developing Societies) ने काबिले तारीफ़ कार्य किया है।

वैश्वीकरण के दौर में हिंदी को अपना स्थान कायम करने के लिए अन्य देशों की भाषाओं के साथ कदम से कदम मिलाकर चलना होगा। वर्तमान समय में विश्व के लगभग 147 विश्वविद्यालयों में हिंदी में अध्ययन-अध्यापन होता है। हिंदी को इन विश्वविद्यालयों से जोड़ने में इंटरनेट की सबसे बड़ी भूमिका रही है। इंटरनेट पर हिंदी के आगमन से आप्रवासी भारतीयों को काफ़ी मदद मिली है और उनके बच्चों के लिए हिंदी में अध्ययन-अध्यापन आसान हो गया है। इंटरनेट पर समाचार पत्र, पत्र-पत्रिकाएँ, साहित्य, समाज और संस्कृति को पढ़कर वे उत्साहित होते हैं। विदेश में अपनी भाषा की सोंधी-सोंधी खुशबू उन्हें इंटरनेट के द्वारा मिलती है। इंटरनेट युग में हिंदी में वेब साहित्य विपुलता में दिखाई देता है। हिंदी में वेबसाइट्स और ब्लॉग ने इंटरनेट की दुनिया में अपना परचम लहराया है। इंटरनेट पर हिंदी की अनेक वेबसाइट्स हैं। विकीपीडिया, एन्साइक्लोपीडिया पर भी हिंदी में प्रचुर मात्रा में हिंदी साहित्य उपलब्ध है। हिंदी में नियमित रूप से ऑनलाइन समाचार पत्र, पत्र-पत्रिकाएँ, किताबें, कहानी, कविता, नाटक, उपन्यास, आलोचनात्मक साहित्य, ज्योतिष, मनोरंजन, सामयिकी एवं ब्लॉग प्रकाशित होते रहते हैं।

इंटरनेट पर प्रकाशित हिंदी समाचार पत्रों की बात करें तो लगभग सभी समाचार पत्र अपने इ-संस्करण निकाल रहे हैं। इ-संस्करण के कारण एक से एक समाचार पत्रों को मुफ़्त में पढ़ने का अवसर प्राप्त हुआ है। आज इंटरनेट पर हिंदी के इ-समाचार पत्रों में नवभारत टाइम्स, दैनिक जागरण, दैनिक भास्कर, हिंदुस्तान, अमर उजाला, जनसत्ता, राष्ट्रीय सहारा, डेली न्यूज़, नई दुनिया, हिंदी मिलाप, राजस्थान पत्रिका, यूनाइटेड भारत, हिंदुस्तान टाइम्स, बी.बी. सी. हिंदी आदि प्रमुख हैं। हिंदी समाचार चैनलों ने विश्व को मुट्ठी में बाँध लिया है जिसमें डी.डी. नेशनल, डी.डी. न्यूज़, एन.डी.टी. वी. इंडिया, आज तक, ज़ी न्यूज़, आई.बी.एन. 7, इंडिया टी.वी., ए.बी.पी. न्यूज़ आदि प्रमुख हैं। समाचार न्यूज़ के अलावा व्यवसाय, मनोरंजन, संगीत, चलचित्र, कॉमेडी, राजनीतिक समाचार, स्वास्थ्य और बाज़ार, खेल, धार्मिक, युवा चैनल आदि की भरमार है।

इंटरनेट पर हिंदी भाषा और साहित्य से संबंधित जानकारी देनेवाले लगभग 80 पोर्टल हैं। इन पोर्टलों पर हिंदी की विभिन्न प्रकार की जानकारी उपलब्ध हैं। वर्तमान दौर में वेब पर हिंदी वेबसाइट्स कुकुरमुत्ते की तरह फैल रही हैं। आज सभी सरकारी और निजी संस्थानों ने अपने-अपने पोर्टल खोले हैं। आज भाषा, साहित्य, विज्ञान, व्यवसाय, विधि, कला, संस्कृति, मनोरंजन, संगीत, शायरी, पर्यटन, शिक्षा, खेल, स्वास्थ्य, पुरातत्व, धर्म, ज्योतिष, कृषि, सिनेमा, दर्शन, अध्यात्म एवं योग की अनेक वेबसाइट्स हैं। जहाँ तक हिंदी भाषा और साहित्य की बात है, उसमें अनेक वेबसाइटों ने इंटरनेट पर अपना स्थान दर्ज कराया है। ये वेबसाइट्स हिंदी के प्रचार-प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं। प्रमुख वेबसाइट्स में हिंदी समय, वेबदुनिया, हिंदी नेस्ट, साहित्य कुंज, कविता कोश, गद्य कोश, रचनाकार, सृजनगाथा, अनुभूति, अभिव्यक्ति, सामयिकी, हिंदी वेब, एन्साइक्लोपीडिया, विकीपीडिया, भारतकोश, लघुकथा,

गर्भनाल, इ-विश्व, एन.सी.ई.आर.टी., इग्नू, आर्काइव, विश्व हिंदी सचिवालय, हिंदी चेतना, साहित्य शिल्पी, लेखनी, भारतीय कोश, हिंदी साहित्य मंच, प्रवक्ता, पुस्तक खोज, सरल हिंदी, साहित्य वैभव, साहित्य कुंज, साहित्य यात्रा, कविता किताब डाउनलोड, हिंदी गगन, समकालीन साहित्य, शब्दमाला, हिंदी युग्म, आलोक पुराणिक, शब्दकोश.कॉम, उर्दू से हिंदी शब्दकोश, हिंदी शब्द तंत्र, अक्षर पर्व, सृजन सम्मान, हिंदी विकी शब्दकोश, वर्धा शब्दकोश और लाइब्रेरी जेनेसिस आदि उपरोक्त वेबसाइट्स ने हिंदी को वैश्विक रूप प्रदान किया।

हिंदी वेबसाइट्स के साथ-साथ पत्र-पत्रिकाओं ने भी रफ़्तार पकड़ ली है। आज के दौर में अधिकतर प्रकाशकों और संपादकों ने हिंदी पत्र-पत्रिकाओं के इ-संस्करण बहुत ही किफ़ायती मूल्य में उपलब्ध करा रखे हैं। पत्र-पत्रिकाओं के इ-संस्करण आने से हिंदी पाठकों को बहुत आसानी हुई। आप्रवासी भारतीय एवं दक्षिण भारत के सुदूर प्रांतों के पाठकों के लिए यह वरदान सा साबित हुआ जिसके कारण हिंदी पाठकों की संख्या दुगनी हो गई। साहित्य में मुद्रित पत्र-पत्रिकाओं, पुस्तकों के इ-संस्करण उपलब्ध होने से मुद्रित सामग्री का पाठक वर्ग भी दोगुना-तिगुना हुआ है। वेब साहित्य पर प्रकाशित हिंदी साहित्य आशय, समस्या, स्वरूप, पात्र, भाषा सभी दृष्टि से देखा जाए तो पैदाइशी वैश्विक होता है।[3]

हिंदी पत्र-पत्रिकाओं के 3 प्रकार हैं—एक तो वेब पत्रिकाएँ हैं, दूसरा मुद्रित पत्र-पत्रिकाओं के इ-संस्करण हैं और तीसरे रूप में पत्र-पत्रिकाओं के मुद्रित एवं इ-संस्करण भी उपलब्ध हैं। उपरोक्त पत्रिकाओं में कुछ पत्रिकाएँ मासिक, त्रैमासिक, अर्धवार्षिक एवं वार्षिकी हैं। आज हिंदी में इन पत्र-पत्रिकाओं की संख्या 100 से अधिक है। इन पत्रिकाओं में हिंदी साहित्य, गद्य एवं पद्य, अनुवाद, तुलनात्मक साहित्य, शोध, आलोचना और समकालीन लेखन की अद्यतन जानकारी प्रकाशित होती है। इंटरनेट पर हिंदी इ-संस्करण पत्रिकाओं में 'हंस', 'समकालीन भारतीय साहित्य', 'बहुवचन', 'नया ज्ञानोदय', 'पाखी', 'भाषा', 'वेब दुनिया', 'विश्व हिंदी पत्रिका', 'वर्तमान साहित्य', 'साहित्य अमृत', 'वागर्थ', 'समयांतर', 'उत्तरवार्ता', 'संवेदन', 'आदिवासी', 'युद्धरत आम आदमी', 'दलित दस्तक', 'समय के साखी', 'पक्षधर', 'समकालीन तीसरी दुनिया', 'परिचय', 'लमही', 'कलास्रोत', 'नया पथ', 'सबलोग', 'उम्मीद', 'समसामयिक सृजन', 'चाणक्य गति', 'वाङ्मय', 'हिंदी नेस्ट', 'गीता प्रेस गोरखपुर', 'चंदामामा', 'साहित्य कुंज', 'भारतीय सरिता', 'भारतीय पक्ष', 'साहित्य सरिता', 'हिंदी परिचय', 'सखी', 'भारत दर्शन', 'अन्यथा', 'तद्भव', 'मीडिया विमर्श', 'निरंतर', 'सृजनगाथा', 'तृप्तिलोक', 'अनुभूति', 'कथायात्रा', 'ज्ञानसिंधु', 'देशकाल', 'कथाक्रम', 'लघुकथा', 'प्रतियोगिता दर्शन', 'वार्ता' आदि प्रमुख हैं। उपरोक्त लगभग सभी पत्र-पत्रिकाएँ नॉटनल की वेबसाइट पर उपलब्ध हैं।

हिंदी में इंटरनेट पर प्रकाशित समाचार पत्र, किताबें एवं पत्र-पत्रिकाओं के साथ हिंदी ब्लॉग ने भी सराहनीय कार्य किया है। स्वतंत्र अभिव्यक्ति के लिए ब्लॉग महत्वपूर्ण साधन है। आलोक कुमार हिंदी के पहले ब्लॉग लिखनेवाले हैं, जिन्होंने 'नौ दो ग्यारह' (9211) ब्लॉग सन् 2003 में बनाया। वर्तमान युग में हिंदी में एक लाख से भी ज़्यादा ब्लॉगस हैं। यह अलग बात है कि इनमें से लगभग 20,000 ही सक्रिय और 10,000 अतिसक्रिय हैं। आलोक कुमार ने ब्लॉग के लिए 'चिट्ठा' शब्द का प्रयोग इंटरनेट पर पहली बार प्रयोग किया जो आज बहुत ही प्रचलित है और गूगल ने अपने शब्दकोश में इसे शामिल कर लिया है। इंटरनेट पर हिंदी ने साहित्यिक सीमाओं को लाँघकर अपना विकास किया है। आज हिंदी साहित्य के अलावा चिकित्सा, विज्ञान, व्यापार, फ़िल्म आदि क्षेत्र में अन्य भाषाओं से कदम से कदम मिलाकर चल रही है। इंटरनेट के प्रयोग के कारण हिंदी प्रेमियों, शिक्षकों, शोधार्थियों को एक चलता फिरता पुस्तकालय प्राप्त हुआ है जिसकी जितनी प्रशंसा की जाए कम है।

इंटरनेट में हिंदी को विश्व स्तर पर लाने के उपाय

आज के ग्लोबल विलेज यानी बड़े से गाँव में सभी एक-दूसरे के संपर्क में हैं। वर्तमान युग में मोबाइल फ़ोन के कारण दुनिया में संचार-क्रांति हुई। इसमें 2 राय नहीं है कि दिन-ब-दिन मोबाइल पर इंटरनेट से कनेक्टेड रहने से मोबाइल का महत्व बढ़ गया है। हम मोबाइल में हिंदी के माध्यम से इंटरनेट का प्रयोग कर रहे हैं तो हमारा जीवन वर्ल्ड वाइड वेब के जाल में फँसता जा रहा है। इंटरनेट की दुनिया में हिंदी का भविष्य उज्ज्वल है इसमें कोई शक नहीं। इंटरनेट पर हिंदी के लिए अपार संभावनाएँ हैं और यदि हिंदी-भाषिकों की वैश्विक जनसंख्या दुनिया में तीसरी है तो क्या हमें इंटरनेट पर तीसरे पायदान पर नहीं होना चाहिए? आनेवाले समय में हिंदी का इंटरनेट के तीसरे पायदान पर स्थान निश्चित करने

के लिए हमें अथक प्रयास की आवश्यकता है और हमें अपनी उपयोजित प्रतिबद्धता (Applied Commitment) सिद्ध करनी होगी तभी जाकर हम हिंदी को विश्व भाषा बनाने में सफल होंगे। हिंदी को विश्व भाषा बनाना हमारा लक्ष्य है पर सवाल है हिंदी की पहल और प्रयोग की। अंतरराष्ट्रीय दूरसंचार संघ (आई.टी.यू.) के अद्यतन सर्वे के अनुसार 2015 में विश्व की 43.4 प्रतिशत जनसंख्या इंटरनेट का प्रयोग करती है। इसी सर्वे के अनुसार सन् 2016 तक यह संख्या 46.1 प्रतिशत तक बढ़ सकती है। आज की तिथि में विश्व में 3,347,733, 401 लोग इंटरनेट का प्रयोग कर रहे हैं।[4]

भारत में इंटरनेट का प्रयोग तेज़ी से बढ़ा है और अधिकतर मोबाइल पर इंटरनेट का प्रयोग करनेवालों की संख्या में भी काफ़ी बढ़ोतरी हुई है। भारतीय इंटरनेट एवं मोबाइल संघटन 2015 के सर्वे के अनुसार भारत में इंटरनेट प्रयोगकर्ताओं की संख्या विश्व में दूसरे पायदान पर है। रिपोर्ट के अनुसार सन् 2014 की तुलना में वर्ष 2015 में इंटरनेट के प्रयोगकर्ताओं में 49 प्रतिशत का इज़ाफा हुआ है और दिसंबर, 2015 में इसकी संख्या 402 मिलियन आँकी गई है।[5]

विश्व में हिंदी भाषा के इंटरनेट के तीसरे पायदान पर न होने का कारण स्वयं हिंदी-भाषियों में जागरूकता की धीमी गति, तकनीकी अड़चनें और इनसे निपटने के उपायों के लोकव्यापीकरण का अनियोजित प्रयास है। हमें सबसे पहले हिंदी पर गर्व होना चाहिए। हिंदी में बात करने एवं कार्य करनेवालों को नगण्य या हेय दृष्टि से नहीं देखना चाहिए। हिंदी के विकास के लिए सभी को इंटरनेट पर हिंदी का प्रयोग करने के लिए प्रेरित करना चाहिए तभी जाकर हिंदी का विकास होगा।

इंटरनेट पर हिंदी के उज्ज्वल भविष्य के लिए उपाय

वर्तमान समय में इंटरनेट पर हिंदी का प्रयोग अधिक मात्रा में हो रहा है पर वैश्विक भाषाओं के दौर में हिंदी को विकास करना होगा तभी जाकर हिंदी को इंटरनेट की प्रमुख भाषाओं में स्थान मिलेगा। इंटरनेट के ज़रिए हिंदी वैश्विक भाषा का रूप ले सकेगी और संसार की महत्वपूर्ण भाषाओं के समक्ष सिर उठाकर खड़ी होगी। इंटरनेट पर हिंदी के उज्ज्वल भविष्य के संबंध में बात करते हुए वरिष्ठ चिट्ठाकार रविशंकर श्रीवास्तव लिखते हैं, ''दुनिया भर में बड़ी संख्या में हिंदी-भाषियों और हिंदी सेवियों की मौजूदगी को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि इंटरनेट पर हिंदी का भविष्य उज्ज्वल है।''[6]

इंटरनेट की दुनिया में हिंदी के उज्ज्वल भविष्य के लिए निम्नलिखित मुद्दों में सुधार की आवश्यकता है:

1. हिंदी के प्रयोग में जिज्ञासु होने की ज़रूरत

हिंदी समुदाय में हिंदी के प्रयोग को लेकर एक उदासीनता की भावना है, इसे दूर करने की आवश्यकता है। भारत के कुछ लोग हिंदी में बात एवं प्रयोग करने में हीनताबोध का अनुभव महसूस करते हैं। हिंदी का प्रयोग करने में हमें कोई शंका नहीं होनी चाहिए उसमें जिज्ञासा होनी चाहिए। अपनी भाषा का प्रयोग करने में गर्व महसूस करना चाहिए तभी जाकर हम विश्व की महत्वपूर्ण भाषाओं के साथ खड़े हो सकेंगे।

2. हिंदी फ़ॉन्ट का मानकीकरण

इंटरनेट पर मुख्य समस्या फ़ॉन्ट की है। हिंदी में फ़ॉन्ट का एकीकरण न होने से उपयोगकर्ता को बहुत सी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। पिछले कुछ वर्षों में मंगल फ़ॉन्ट का ईजाद हुआ है, फिर भी अन्य फ़ॉन्ट के प्रति अंग्रेज़ी जैसी सुविधा हिंदी में नहीं है। हिंदी फ़ॉन्ट का मानकीकरण होने से अंग्रेज़ी की तरह हिंदी फ़ॉन्ट को किसी भी फ़ॉन्ट में परिवर्तित कर सकेंगे। फ़ॉन्ट के मानकीकरण से विश्व में कहीं पर भी हिंदी सामग्री पढ़ने में आसानी होगी जिससे हिंदी उपयोगकर्ताओं की संख्या में बढ़ोतरी होगी।

3. हिंदी कुंजीपटल का मानकीकरण

हिंदी में टाइप करने के लिए अनेक कुंजीपटल हैं जिनमें फ़ोनेटिक्स, रेमिंग्टन, इंस्क्रिप्ट, कृतिदेव आदि प्रमुख हैं। हिंदी में टाइप करने के लिए किसी एक मानक कुंजीपटल के न होने के कारण हिंदी समुदाय को इंटरनेट और कंप्यूटर पर लिखते समय मुश्किलों का सामना करना पड़ता है। कुछ वर्ष पहले भारत सरकार की ओर से इंस्क्रिप्ट कुंजीपटल बनाया गया। इंस्क्रिप्ट को भारतीय मानक ब्यूरो ने एक मानक (स्टैंडर्ड) के रूप में मान्यता प्रदान की है। इंस्क्रिप्ट कुंजीपटल में भी कुछ कमियाँ हैं, उसमें सुधार की आवश्यकता है। आज तक हिंदी में कोई सर्वमान्य कुंजीपटल नहीं है। कुंजीपटल में एकरूपता का न होना बड़ी समस्या है। यदि इस चुनौती को दूर किया जाए तो हमारी सबसे बड़ी जीत होगी। हिंदी में टाइपिंग के लिए मानक कुंजीपटल की ज़रूरत है जिससे कंप्यूटर

और इंटरनेट पर काम करने में सुविधा होगी।

4. हिंदी पोर्टल में विकास

इंटरनेट में पोर्टल की भूमिका महत्वपूर्ण है। पोर्टल के माध्यम से प्रयोगकर्ता जानकारी प्राप्त करता है। हिंदी में पोर्टल की संख्या लगभग 50 के आसपास है। इन पोर्टलों पर हिंदी की विभिन्न प्रकार की जानकारियाँ उपलब्ध हैं। वर्तमान युग में इंटरनेट की बढ़ती माँग के अनुसार हिंदी में पोर्टलों की संख्या दूसरी भाषा की तुलना में नगण्य है। हिंदी को विश्वभाषा एवं इंटरनेट की पहली 3 भाषाओं में स्थान प्राप्त करने के लिए हिंदी पोर्टलों का विकास करना आवश्यक है। हिंदी पोर्टलों के कारण ही हिंदी को विश्वभाषा बनाने का सपना हकीकत में बदल सकता है।

5. सरकारी वेबसाइटों में हिंदी का प्रयोग

भारत को स्वतंत्रता मिले 69 साल हो गए हैं फिर भी हम अंग्रेज़ी भाषा की गुलामी से मुक्त नहीं हुए। नतीजा यह है कि भारत सरकार की अनेक वेबसाइट्स केवल अंग्रेज़ी भाषा में ही हैं जिसके कारण भारत की अधिकांश जनता जानकारी का लाभ प्राप्त नहीं कर पाती। हिंदी के राजभाषा से राष्ट्रभाषा और विश्वभाषा विकास के लिए सबसे पहले भारत के सरकारी विभागों की वेबसाइटों का हिंदी में रूपांतरण करना अनिवार्य है। भारत सरकार के मंत्रालयों की हिंदी वेबसाइटों पर अद्यतन एवं सही जानकारी का अभाव है, इसे दूर करना होगा। सरकारी योजनाएँ एवं जानकारी सामान्य जनमानस तक पहुँचाने के लिए सरकारी वेबसाइटों में हिंदी का प्रयोग करना होगा तभी सच्चे अर्थों में हिंदी के प्रति न्याय होगा।

6. हिंदी सॉफ़्टवेयर में विकास

सूचना प्रौद्योगिकी के युग में भारत ने काबिले तारीफ़ विकास किया है। हमारे देश की सॉफ़्टवेयर क्षेत्र की अग्रणी कंपनियाँ काफ़ी तेज़ी से विकास कर रही हैं लेकिन हिंदी के प्रति इन कंपनियों में उदासीनता दिखाई देती है। प्रगत संगणन विकास केंद्र, भारतीय भाषाओं के लिए प्रौद्योगिकी विकास, वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग, भारतीय भाषा संस्थान और भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान तथा सी.एस.डी.एस. के प्रयासों के बावजूद आज हिंदी के सॉफ़्टवेयरों में उतना सुधार नहीं दिखाई देता जितना अंग्रेज़ी एवं अन्य विदेशी भाषाओं में हैं। कंप्यूटर और इंटरनेट की दुनिया के फ़लक पर हिंदी को अपना स्थान निश्चित करना होगा इसीलिए सरकारी एवं निजी सॉफ़्टवेयर कंपनियों को हिंदी में अत्याधुनिक सॉफ़्टवेयरों का निर्माण करना होगा। सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय भारत सरकार एवं निजी सॉफ़्टवेयर कंपनियों को हिंदी में मानक कुंजीपटल, फ़ॉन्ट, मशीनी अनुवाद एवं अन्य सॉफ़्टवेयर को अद्यतन बनाकर हिंदी को विश्वभाषा बनाने में मदद करनी होगी।

7. हिंदी बोलकर टाइप करनेवाले सॉफ़्टवेयर में सुधार

बोलकर लिखने की सुविधा अंग्रेज़ी एवं अन्य भाषाओं में पहले से है। हिंदी में इसकी शुरुआत सीडैक के श्रुतलेखन ने की। सीडैक का यह सॉफ़्टवेयर 6,000 रुपए में मिलता था फिर भी उसका प्रयोग अप्रत्याशित रूप में था या यूँ कह लीजिए उसका कोई सार्थक उपयोग नहीं था। आज का युग मोबाइल इंटरनेट का युग है। आज एक-दूसरे को मिलते कम हैं पर इंटरनेट में दुनिया के टच में हैं। मनुष्य को आज टाइप करना भी दुष्कर लग रहा है इसलिए वह बोलकर लिखने में ज़्यादा सहज महसूस कर रहा है। बोलकर लिखने की सुविधा गूगल डॉक्स ऐप अलाउद्दीन के चिराग की तरह है जो पलक झपकते ही बोले हुए शब्दों को लिखकर सामने ला देता है। यह केवल मोबाइल में नहीं कंप्यूटर, लैपटॉप और टैबलेट में भी उपलब्ध है। इस सॉफ़्टवेयर के बारे में सोचकर तो अच्छा लगता है मगर इसके प्रायोगिक रूप में कुछ दिक्कतें हैं जैसे—हम जो बोलते हैं, उसका सही लिप्यतंरण न होना, मात्रागत गलतियाँ होना, संयुक्ताक्षर, चंद्रबिंदी आदि में त्रुटियाँ। उपरोक्त कमियों का उपाय निकालकर जैसा बोलते हैं, उसी रूप में त्रुटिरहित लिप्यंतरण हो तो कंप्यूटर, टैबलेट, मोबाइल और इंटरनेट की दुनिया में एक क्रांतिकारी पहल होगी।

8. इ-क्रांति डेटाबेस का विकास

आज के युग को इ-क्रांति का युग भी कहा जाता है। आज के दौर में सभी काम इलेक्ट्रॉनिक या सॉफ़्ट रूप में हो रहे हैं। जैसे इ-गवर्नेंस, इ-शिक्षा, इ-हेल्थकेयर, इ-पुलिस, इ-अभियोजन, इ-साहित्य, इ-बुक्स और इ-डाक आदि। इ-क्रांति के कारण सूचनाओं का आदान-प्रदान तेज़ी से हो रहा है। वर्तमान युग की इ-क्रांति में हिंदी डेटाबेस की कमी है इसलिए इ-क्रांति में हिंदी डाटाबेस बढ़ाने की ज़रूरत है तभी जाकर इ-क्रांति के सभी क्षेत्र में हिंदी माध्यम से जानकारी हासिल हो सकती है।

9. मोबाइल पर हिंदी का प्रयोग

वर्तमान समय में मोबाइल पर इंटरनेट का प्रयोग करनेवालों की संख्या बहुत तेज़ी से बढ़ रही है। इंटरनेट पर हिंदी का प्रयोग करनेवाले लोग यह चाहते हैं कि उनके पास ऐसा मोबाइल हो जिसमें हिंदी साइटों की सर्फ़िंग, इ-मेल, गपशप, ब्लॉगिंग, ट्विटिंग, हिंदी टेक्स्ट डिस्प्ले और टाइपिंग शामिल हों। मोबाइल पर इंटरनेट प्रयोक्ताओं में हिंदी की कमी नज़र आती है। कुछ अपवादों को छोड़ दें तो अधिकतर मोबाइल फ़ोन निर्माता हिंदी में काम करने लायक मोबाइल बनाने को लेकर गंभीर नज़र नहीं आते। जिस मोबाइल फ़ोन में हिंदी फ़ॉन्ट सपोर्ट नहीं करते, उनमें 'पाणिनि' एप्लीकेशन के ज़रिए हिंदी कुंजीपटल का इस्तेमाल किया जाता है पर इसमें भी कुछ व्यावहारिक दिक्कतें हैं। मोबाइल में दूसरी कमी हिंदी में बेहतरीन कंटेंट की कमी को लेकर है। आज इंटरनेट पर अंग्रेज़ी के मुकाबले उच्चस्तरीय कंटेंट नहीं है। इस दिशा में कार्य करने की ज़रूरत है तभी जाकर मोबाइल पर हिंदी का भविष्य उज्ज्वल होगा।

10. मौलिक साहित्य की आवश्यकता

आज इंटरनेट पर मौलिक साहित्य की रचना संभव है या नहीं यह एक बड़ी चिंता विद्वानों को है। गंभीर साहित्यकारों को यह चिंता रहती है कि क्या इंटरनेट की सामग्री में मौलिकता होगी या वह केवल पॉप्युलर साहित्य तक सिमटकर रह जाएगी? इंटरनेट पर आज जो भी साहित्य प्रकाशित हो रहा है वह साहित्य मौलिक या प्रकाशन के योग्य है कि नहीं, इसे जाँचने के लिए कोई निर्धारित विशेषज्ञ जाँच समिति नहीं है। मुझे ऐसा लगता है कि अगर इंटरनेट पर जो भी सामग्री प्रकाशित करनी हो उसे जाँच समिति द्वारा प्रमाणित करने के बाद ही प्रकाशित की जाए तो उसमें गंभीरता एवं मौलिकता होगी, ऐसा मेरा विश्वास है।

11. मानक सर्च इंजिन का आविष्कार

हिंदी पाठकों के लिए इंटरनेट पर हिंदी सामग्री खोजने के लिए सबसे बड़ी समस्या सर्च इंजिन की है। आज तक हिंदी में परिपूर्ण डेटाबेस के साथ कोई सर्च इंजिन नहीं बन पाया जिसके कारण उपयोगकर्ता वांछित जानकारी प्राप्त करने में असमर्थ है। हिंदी की यह विडंबना है कि सूचना और प्रौद्योगिकी के विकास के दौर में हिंदी में एक भी परिपूर्ण डेटाबेस युक्त सर्च इंजिन नहीं है। यदि हिंदी को विश्व की दूसरी भाषाओं के साथ स्पर्धा करनी है तो हिंदी डेटाबेस को बढ़ाना होगा तभी जाकर हम हिंदी में गूगल और बायदू की तर्ज़ पर कोई मानक सर्च इंजिन का आविष्कार कर सकेंगे।

12. हिंदी वेबसाइट्स में सुधार

आज हिंदी में वेबसाइट्स का अंबार लगा हुआ है पर इनमें कितनी गंभीरता एवं मौलिकता है, इस पर विचार करने की आवश्यकता है। हिंदी वेबसाइट्स पर दृष्टिपात करने पर हमें यह साफ़ दिखाई देता है कि अधिकतर अंग्रेज़ी वेबसाइट्स की प्रतिकृति ही हैं। इसमें भी सभी वेबसाइटों का अपना एक खाता है और उसी खाते के भीतर रहकर ही वे अपना कार्य करती हैं। तब प्रश्न यह उठता है कि आज की इस बाज़ारवादी और उपभोक्तावादी संस्कृति में मौलिक साहित्य और विचार के लिए जगह मिलेगी या नहीं? भारत में सरकारी एवं निजी वेबसाइट्स अधिक संख्या में हैं। इन वेबसाइटों में स्तरीयता है या नहीं, इसे परखने की आवश्यकता है। सरकारी एवं निजी वेबसाइटों में अधिकतर जानकारी अंग्रेज़ी में रहती है। अगर हिंदी में है भी तो वह जानकारी आधी-अधूरी रहती है। हिंदी में जो भी वेबसाइट्स हैं उनमें अद्यतन जानकारी का अभाव है। हिंदी वेबसाइटों की तकनीकी दिक्कतों को दूर किए बिना इंटरनेट पर हिंदी का भविष्य नहीं है।

13. हिमोजी में विकास

हाल-फ़िलहाल में चैटिंग पर भाव-भंगिमाओं में बात करने के लिए 'इमोजी' का नया-नवेला भाई 'हिमोजी' आ गया है। आपमें से कई लोगों को लग रहा होगा कि यह 'हिमोजी' क्या बला है? आज इंटरनेट की दुनिया में चैटिंग आम बात हो गई है। फ़ेसबुक, वाट्सऐप, वी चैट, आई.एम.ओ. और स्काइप आदि पर चैटिंग करते वक्त कई बार हम जो बात कहना चाहते हैं वह शब्दों में बयाँ नहीं हो सकती तो हम अलग-अलग तरह के स्माइली यानी इमोजी भेजते हैं। अभी तक चैटिंग के दौरान भाव-भंगिमाओं को प्रकट करने के इमोजी अंग्रेज़ी माध्यम में थे पर अपराजिता शर्मा के अथक प्रयासों के कारण 14 मार्च, 2016 को मिरांडा हाउस, दिल्ली में 'हिमोजी' ऐप की शुरूआत की गई। यह हिंदी का पहला ऐसा ऐप है जिसमें बेहतरीन 270 हिमोजी हैं। अपराजिता शर्मा ने मनुष्य के लगभग सभी भावों को ध्यान में रखते हुए कैलिग्राफ़ी के साथ इसे तैयार किया है। हिमोजी हिंदी उपयोगकर्ता के लिए एक सौगात से कम

नहीं है। हिंदी में हिमोजी को लेकर अपराजिता शर्मा कहती है, ''हिंदी अभी इंटरनेट पर बहुत अकेली है। हम अपनी भाषा के नाम पर कर क्या रहे हैं। हमें अभी हिंदी के लिए बहुत सारा काम करना है सिर्फ़ कविता कहानी नहीं लिखनी और भी कई शाखाएँ हैं जहाँ काम करना बाकी है।''[7] हिमोजी अभी अपनी शैशव अवस्था में है। अपराजिता जी के साथ हमें इसपर अथक परिश्रम करने की आवश्यकता है ताकि हिंदी में अधिक से अधिक संख्या में हिमोजी तैयार करें और हिंदी को विश्वभाषा बनाने का सपना पूरा हो।

14. हिंदी में स्कैनिंग की त्रुटिरहित तकनीक में विकास

वर्तमान समय में इंटरनेट पर अथाह सामग्री उपलब्ध है पर जहाँ हिंदी सामग्री की बात आती है वहाँ अन्य भाषा के मुकाबले हम कमज़ोर दिखाई देते हैं। हिंदी में जो भी प्रकाशित सामग्री है उसका इ-संस्करण न के बराबर है। हिंदी में उपलब्ध अथाह ज्ञान-सागर को इंटरनेट पर लाना आज के युग की माँग है। हिंदी में जो भी सामग्री प्रकाशित है उसे त्रुटिरहित ओ.आर.सी. स्कैनिंग के माध्यम से इंटरनेट पर उपलब्ध कराया जाए तो इंटरनेट पर हिंदी उपयोगकर्ताओं के हाथ ज्ञान का भंडार लग जाएगा और हिंदी का विकास होगा।

15. अनुवाद सॉफ़्टवेयर में सुधार

आज इंटरनेट पर हिंदी दस्तक दे चुकी है। इंटरनेट पर अन्य भाषा के मुकाबले हिंदी का डेटाबेस नहीं है इसलिए हमें अधिकतर समय अनुवाद का सहारा लेना पड़ता है। इंटरनेट पर अन्य भाषाओं से अनुवाद के लिए कई सॉफ़्टवेयर हैं पर उसमें तकनीकी दिक्कतें हैं। कई बार अन्य भाषाओं से हिंदी में हुए अनुवाद हास्यास्पद नज़र आते हैं इसलिए अनुवाद सॉफ़्टवेयर में सुधार की ज़रूरत है। अनुवाद की तकनीक में सुधार के कारण ही हिंदी विदेशी भाषाओं की स्पर्धाओं में अपना स्थान निश्चित करेगी।

16. हिंदी प्रेमी सेलिब्रिटी में हिंदी का प्रयोग

वर्तमान मीडिया और इंटरनेट के दौर में हिंदी के उज्ज्वल भविष्य के लिए बॉलीवुड कलाकार, खिलाड़ी एवं नेता अपने प्रयासों द्वारा हिंदी की स्थिति को बेहतर बनाने में महत्वपूर्ण योगदान दे सकते हैं। आज अमिताभ बच्चन, ऐश्वर्या राय, शाहरुख ख़ान, आमिर ख़ान, सलमान ख़ान, प्रियंका चोपड़ा, माननीय श्री नरेंद्र मोदी, माननीय श्रीमती सुषमा स्वराज, श्रीमती सोनिया गांधी, श्री राहुल गांधी, श्री अरविंद केजरीवाल, श्री मनमोहन सिंह, सुश्री मायावती, सचिन तेंदुलकर, महेंद्रसिंह धोनी, विराट कोहली, सानिया मिर्ज़ा, महेश भूपति, संदीप तोमर, साइना नेहवाल जैसे सेलेब्रिटी के माइक्रोब्लॉगिंग साइट पर, ट्विटर पर लाखों फॉलोअर्ज़ हैं और उनका एक संदेश, एक ट्विट करोड़ों लोगों तक पहुँचता है। उपरोक्त सभी सेलिब्रिटियों के हिंदी प्रयोग से हिंदी के प्रचार-प्रसार में बड़ी भूमिका हो सकती है लेकिन इस दृष्टिकोण से किसी की पहल नहीं दिखाई देती।

उपरोक्त सभी पहलुओं पर दृष्टिपात करें तो यह स्पष्ट है कि आनेवाला समय हिंदी का है पर हिंदी के तकनीकी क्षेत्र में अधिक कार्य करने की आवश्यकता है। आज हिंदी केवल साहित्य की भाषा न होकर बाज़ार, व्यापार और अंतरराष्ट्रीय भाषा बन चुकी है। इन सारी बातों पर गंभीर रूप से सकारात्मक कार्य करें तो इंटरनेट की दुनिया में हिंदी का भविष्य उज्ज्वल है। हिंदी इंटरनेट की अन्य भाषाओं की स्पर्धाओं में दूसरे पायदान पर अपना स्थान ग्रहण करेगी, ऐसा मेरा विश्वास है।

संदर्भ–

1. हिंदी वेब साहित्य—डॉ. सुनिल कुमार लवटे, भूमिका, पृ.-5
2. Milestones in India's Internet Journey—Amrit Ranjan— www.amritranjan.com
3. डॉ. सुनिलकुमार लवटे, विश्व हिंदी पत्रिका, मॉरीशस 2013, पृ.-115
4. http://www.internetlivestats.com/internet-users/
5. http://yourstory.com/2015/11/india-internet-user-base-2015/
6. http://hindi.business-standard.com/common/printpage.php?autono=39017
7. http://khabar.ndtv.com/news/zara-hatke/himoji-creator-aprajita-sharma-says-we-need-to-do-much-more-in-hindi-1287768

कैसरी, तुर्की

saichaple@gmail.com, svchaple@erciyes.edu.tr

21

मॉरीशसीय हिंदी शिक्षण में संगणक का प्रभाव

—श्री धनराज शंभु

हिंद महासागर में एक मोती की तरह उभरा हुआ स्वर्ग के समान एक छोटा सा द्वीप है मॉरीशस। यह 720 वर्ग मील का बहुभाषी, बहुजातीय और बहुसांस्कृतिक टापू है जिसे कई महान लोगों ने अनेक उपमाओं से सम्मानित किया है। मार्क ट्वेन ने कहा था, 'ईश्वर ने पहले मॉरीशस बनाया और इसकी नकल कर स्वर्ग बनाया।' कवियों ने 'स्वर्गसहोदर', 'इंद्रधनुषी देश', 'स्वर्गोद्यान', 'बिना साँप' तथा अन्यों ने अन्य विशेषणों से नामकरण किया। शुरू में अरबों ने 'दीन ओ अराबी', डचों ने 'मोरिस वान नासो', फ्रासीसियों ने 'इल दे फ्रांस' और अंत में अंग्रेज़ों ने 'मॉरीशस' नाम दिया। हमारे भारतीय आज भी इसे मारीच देश की संज्ञा देते हैं। आज यह 'छोटा भारत' भी कहलाता है। विश्व नक्शे पर यह मॉरीशस नाम से प्रसिद्ध हो गया। कभी इसे 'डोडो' का देश कहना भी नहीं भूलते।

इतिहासानुसार मॉरीशस ज्वालामुखी के विस्फोट से निर्मित एक स्थल था जो बाद में घने वन में परिवर्तित हुआ। 1834 से कुलियों के आगमन से भारतीयों ने इस जंगल को एक देश का रूप दिया जो गोरों, अंग्रेज़ों और फ्रांसीसियों का उपनिवेश बना जिसे कठिन परिश्रम कर, अत्याचार सहकर 12 मार्च, 1968 को पूर्वजों ने स्वतंत्र बनाया। इसके प्रथम प्रधान मंत्री, डॉ. सर शिवसागर रामगुलाम बने और 1992 में द्वितीय प्रधान मंत्री, सर अनिरुद्ध जगन्नाथ ने गणतंत्र का स्वर दिलाया। आज यह इंद्रधनुषी देश विश्व नक्शे में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर चुका है। अब यह कृषि प्रधान से बहुउद्योगी देश बन चुका है। आज विशेष रूप से विश्व के सारे देशों से पर्यटक यहाँ के समुद्र, समुद्री खेल, चाँदी सी चमकती बालू, स्वर्ण सी चमकती धूप, चित्र पर्वत और इंद्रधनुषी संस्कृति को देखने के लिए पर्यटन स्थल बना चुके हैं। मार्के की बात यह भी है कि यहाँ पर मुफ़्त शिक्षा, वृद्धों, विकलांगों और छात्रों के लिए नि:शुल्क यातायात, नि:शुल्क स्वास्थ्य चिकित्सा और हर सिर के ऊपर एक छत की व्यवस्था है। 16 साल की आयु तक शिक्षा अनिवार्य है और आज आधुनिकतम टेक्नोलॉजी के माध्यम से पूर्व प्राथमिक से तृतीयक स्तर के प्रशिक्षण का प्रावधान है। विश्व-विख्यात विश्वविद्यालयों की स्थापना हो जाने के कारण संसार के कई देशों से छात्र यहाँ विभिन्न प्रकार की शिक्षा ग्रहण करने आते हैं। हर जगह शांति और समृद्धि से संपन्न इस देश में संसार समाया हुआ है।

जन्म : 14.11.1956
शिक्षा : साहित्य रत्न, कोविद, जी.सी.ई. ए.लेवल, टीचर्ज़ सर्टिफ़िकेट, डिप्लोमा इन मानेजमेंट।
प्रकाशन : 'अभिलाषा' (कहानी संग्रह 2006), 'चेतना जाग उठी' (एकांकी संग्रह, 2002), 'प्रतीक्षा एक नई सुबह की' (एकांकी-संग्रह, 1998), 'एहसास' (कविता-संग्रह, 1996), 'तरंगिनी' (कविताएँ, 1976) आपकी कविताओं और गज़लों का संग्रह अन्य पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए हैं तथा 'वसंत', 'आक्रोश', 'पंकज', 'रिमझिम', 'प्रभात' आदि पत्रिकाओं में आपकी रचनाएँ छपती रहती हैं।
पुरस्कार : आपको श्रेष्ठ नाटककार, वर्धा सरस्वती, काव्यश्री, माननीय नागरिकता, श्रेष्ठ लेखक आदि सम्मान प्राप्त हैं।
संप्रति : आप सरकारी प्राथमिक पाठशाला, मॉरीशस में हिंदी शिक्षक हैं। साथ ही आप हिंदी प्रचारिणी सभा के मंत्री, सरकारी हिंदी शिक्षक संघ के सचिव तथा हिंदी स्पीकिंग यूनियन के काउन्सिल के सदस्य भी हैं।

शैक्षणिक दृष्टि से देखा जाए तो यहाँ 95 प्रतिशत लोग शिक्षित हैं। यहाँ के लोग यह आर्ष वाक्य मानकर चलते हैं कि 'विद्या कामधेनु है'। मुख्य रूप से इस टापू में 11 भाषाओं का शिक्षण होता है। वे क्रमश: इस प्रकार हैं- हिंदी, अंग्रेज़ी, फ्रेंच, उर्दू, अरबी, मराठी, तमिल, तेलुगू, क्रिओल, भोजपुरी और मंदारिन। इसके अलावा संस्कृत का भी पठन-पाठन होता है। यह कहा जा सकता है कि शिक्षा उस समय से इस देश में लागू है जब से उपनिवेश काल था। उस समय भले ही गोरे लोगों को ही पढ़ने का अधिकार था पर हमारे पूर्वज चोरी-चुपके बैठका में पढ़ लेते थे। 1901 में महात्मा गांधी जी के आगमन से शिक्षण कार्य में नवजागरण हुआ और सरकारी

तौर पर शिक्षा-व्यवस्था स्थापित हुई। इससे पूर्व अनौपचारिक रूप से पढ़ाई होती थी पर 1954 से प्राथमिक पाठशालाओं में हिंदी तथा अन्य पूर्वी भाषाओं का पठन धीरे-धीरे सुचारु रूप से पाठ्यक्रम के तहत होने लगा। आज हमारी शिक्षा-प्रणाली 5 स्तरों पर विभाजित है: पूर्वप्राथमिक, प्राथमिक, माध्यमिक, विश्वविद्यालयीय और स्नातकोत्तर। मॉरीशसवासी शिक्षा के महत्व को समझते हैं इसलिए हर कीमत पर अपने बच्चों को पढ़ाने के लिए कटिबद्ध हैं। सरकार की ओर से भी ऐसा प्रयत्न किया जाता है कि कोई भी व्यक्ति अशिक्षित न रह जाए। कानून भी ऐसा बनाया गया है कि जो अभिभावक अपने बालक को न पढ़ाए उसे कानूनी कार्यवाही से गुज़रना होगा। यह भी कानूनी जुर्म है कि 16 की उम्र के बच्चों को कार्य में रखा जाए। इतनी सारी व्यवस्थाएँ जहाँ हो वहाँ शिक्षा में नवीन से नवीनतम पद्धति क्यों न लाई जाए?

हमारे देश में हर स्तर के बच्चों को ध्यान में रखकर उनकी रुचि अनुसार कार्यक्रम एवं पाठ्य-पुस्तक व सामग्री की तैयारी होती है। उन तैयारियों में 'कंप्यूटर' यानी संगणक का महत्वपूर्ण स्थान है। संगणक या कंप्यूटर एक ऐसा आधुनिकतम यंत्र है जो कोई भाषा नहीं समझता केवल 2 संख्याओं को ही पहचान पाता है—1 और 01। संगणक में चाहे कुछ भी डाटा रखा जाए, वह बस इन्हीं 2 संख्याओं से बनी श्रृंखला को पहचानता है। कहा जा सकता है कि प्रारंभिक तौर पर साल 1992 तक कंप्यूटर की तीव्रता में कमी थी। 6 फिर 7 इस तरह समयानुसार बढ़ता गया और आज 100 से भी ऊपर बाइटवाले कंप्यूटर तैयार हो गए हैं। उस समय हिंदी डाटाबेस बनाने की कल्पना नहीं की गई थी पर आज इतने सारे फ़ॉन्ट हो गए हैं और इतने सारे शब्दों का डाटाबेस उपलब्ध है कि शब्दकोश, अंतरजाल, ब्लॉग, ट्विटर, फ़ेसबुक आदि हिंदी में प्रयोग होने लगे हैं। रोज़मर्रा की बातों को भी इनके द्वारा पढ़ा लिखा और बाँटा जा सकता है। कंप्यूटर के माध्यम से टिप्पणी करना, लाइक करना, स्काइप द्वारा बातचीत तथा कंप्यूटर मित्र बनाना आम बात सी हो गई है। जहाँ किसी भाषा की समस्या होती है वहाँ झट से रूपांतर या भाषांतर कर समझने और समझाने का प्रयत्न करते हैं, प्रयोग के लिए नई शब्दावलियों का आविष्कार भी होने लगा है जैसे कुंजीपटल—'कीबोर्ड', अंतरजाल—'इंटरनेट', सजाल—'वेबसाइट', अभिलिपि—'फ़ॉन्ट', चिट्ठा—'ब्लॉग' आदि। आज इंटरनेट की दुनिया स्याही जैसी बन गई है और ब्लॉग कलम जैसी। इसमें चाहे कोई विद्वान हो या कमपढ़, वह भी अपनी अभिव्यक्ति खुलकर कर सकता है। यही कारण है कि आज की शिक्षा पद्धति में यदि संगणक का उपयोग न हो तो हम बहुत पिछड़ जाएँगे। जहाँ अंतरजाल से प्रभावित होकर भूमंडलीकरण, विश्व ग्राम, सिमटती हुई दुनिया मानते हैं वहीं यदि हम शिक्षा में इनको न अपनाएँ तो पीछे रह जाएँगे।

मॉरीशस में हिंदी भाषा के विकास के लिए संगणक का प्रयोग होने लगा है जो आवश्यक भी है। 2016 से पूर्व-प्राथमिक स्तर से 'टैब्लट' का प्रावधान शिक्षा, मानव अनुसंधान, तृतीयक शिक्षा एवं वैज्ञानिक अनुसंधान मंत्री द्वारा किया जा रहा है। यहाँ 2 प्रकार की प्राथमिक संस्थाएँ हैं, एक सरकारी और दूसरी निजी। सरकार ने यह सोच रखा है कि दोनों प्रकार की संस्थाओं के छात्रों को 'टैब्लट' दिया जाएगा। इस कार्य को चलाने के लिए पूर्व-प्राथमिक संस्था के शिक्षकों को भी इस संबंध में उचित 'ट्रेनिंग' या प्रशिक्षण दिया जाता है ताकि वे साधारण से साधारण कंप्यूटर का ज्ञान उन छात्रों को दे सकें। इस तरह इस साल से लगभग 20,000 छात्र प्राथमिक स्तर से कंप्यूटर का लाभ उठा पाएँगे। प्राथमिक पाठशालाओं में भी पाठ्यक्रम में आई.सी.टी. (Information Communication Technology) का प्रावधान है। यह कार्य प्रशिक्षित शिक्षक और कक्षा से संबद्ध अध्यापकों द्वारा किया जाता है। इन छात्रों के लिए हर स्कूल में एक 'कंप्यूटर लैब' (संगणक कक्ष) है जिसमें आधुनिकतम रूप से सजे वातानुकूलित यंत्र, मेज़ और कई दर्जन संगणक भी उपलब्ध हैं। जहाँ कहीं इसकी कमी महसूस होती है वहाँ PTA (परिवार शिक्षक संघ) और अन्य प्रायोजकों द्वारा माँग के अनुसार संख्या को बढ़ाया जाता है। इन छात्रों को शिक्षित करने के लिए सहायक पुस्तकों की तैयारी की जाती है जो राष्ट्रीय पाठ्य-पुस्तक निर्माण संगठन (National Curriculum Centre Research Development) द्वारा होती है। इस प्रकार प्राथमिक स्तर से ही छात्र वर्ड्स, इ-मेल, स्काइप, टंकण, फ़ेसबुक, यूट्यूब, वाट्सऐप आदि के बारे में जानकारी प्राप्त कर लेते हैं। वे समय-समय पर अपने मित्रों से वार्तालाप (चैटिंग) करते रहते हैं। कभी-कभी छात्रों को शिक्षकों की ओर से गृहकार्य के रूप में 'प्रोजेक्ट' (शोधकार्य) भी दिए जाते हैं जिसपर वे अनुसंधान कर अपने प्रौद्योगिकी ज्ञान में वृद्धि लाते हैं।

आज इस प्रक्रिया से लगभग 1,20,000 छात्र लाभ उठा रहे हैं। दूसरी ओर प्रतिक्रियात्मक प्रोग्राम के माध्यम से भी छात्र प्राथमिक

स्तर पर लाभ उठा रहे हैं। दरअसल यह 'साँकोरे' (Sankoré) फ्रेंच प्रणाली द्वारा चलनेवाला एक प्रोग्राम है जिसमें छात्र जीवंत रूप से भागीदारी करते हैं। पाठों को अपने सामने जीवंत रूप में पाकर उनमें विशेष आकर्षण की प्राप्ति होती है। इस तरह शिक्षक भी उनको 'प्रोजेक्ट' के लिए तैयार करते हैं।

विश्व हिंदी सचिवालय के सहयोग से मॉरीशस भर के हिंदी शिक्षकों के लिए भारतीय संगणक विशेषज्ञ, श्री बालेंदु शर्मा दाधीच द्वारा सप्ताह भर की कार्यशाला चली और सभी शिक्षकों ने अपना भरपूर योगदान दिया। अब वे ऐसी स्थिति में हैं कि वे अन्य प्रोग्रामों को उपयोग में लाकर हिंदी को एक नई दिशा दे सकें।

माध्यमिक स्तर तक आज लगभग 60,000 छात्र हिंदी पढ़ रहे हैं। फ़ोर्म 1 जो अगले साल से 7 से 12वीं याने एच.एस.सी. तक पढ़ रहे हैं, उनकी दिलचस्पी संगणक व हिंदी में है। सरकारी नीति के अनुसार छात्रों को कम से कम 9वीं तक अनिवार्य रूप से हिंदी पढ़नी होगी। तत्पश्चात एस.सी. और एच.एस.सी. के लिए विशेष विषय चुनते हैं। व्यावसायिक विषय के बावजूद हमारे छात्र हिंदी विषय का चयन करते हैं। मॉरीशस को गर्व महसूस हुआ जब इस साल 2015 की एच.एस.सी. परीक्षा में हिंदी विषय को लेकर यहाँ का छात्र, केशव पराऊ ने विश्व में प्रथम स्थान प्राप्त किया। उसने पूरी दुनिया में सबसे ज़्यादा अंक प्राप्त कर हमारे हिंदी परिवार को गौरवांवित कर दिया। माध्यमिक कक्षाओं में फ़ोर्म 1 यानी 7वीं से ही बच्चे संगणक के आदी हो जाते हैं। वे प्राथमिक स्तर पर सीखी हुई बातों का विस्तार माध्यमिक स्तर पर करते हैं। जैसे-जैसे वे विकास की राह पर आते हैं वैसे-वैसे वे उपकरणों का अधिकाधिक प्रयोग करते जाते हैं। जहाँ पहले वे संगणक तक सीमित थे, अब वे लैपटॉप, टैब्लट, आईपॉड, मोबाइल फ़ोन आदि का उपयोग करने लगे हैं जिससे वे हिंदी अनुवाद, संपादन, पाठ्यक्रम, लिप्यंतरण, टंकण, संक्षेपण, पावर पोंइट प्रेज़ेंटेशन आदि का ज्ञान रखते हैं। अंतरजाल और महाजाल के माध्यम से तो वे हरेक विषय पर अनुसंधान करने लगे हैं। चाहे वह मुद्रण, टंकण, प्रकाशन, अनुसंधान, रूपांतरण आदि क्यों न हो, सभी से लाभ उठा रहे हैं। एक तरह से यह कहना अनुचित न होगा कि हमारी युवा पीढ़ी ही इस विश्व को आभासी दुनिया, भूमंडलीकरण व विश्व ग्राम बना रहे हैं। माध्यमिक स्तर पर हमारे शिक्षक भी पीछे नहीं हैं। वे हर प्रकार की सामग्री की तलाश में रहते हैं जिससे हमारे छात्रों का लाभ हो।

उच्च शिक्षा की बात करें तो आज मॉरीशस में लगभग 125 हिंदी छात्र शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। पहले जहाँ बैठकाओं तक ही 'रामा गति सुमति देई' सीमित थी और पढ़ाई की मनाही थी, आज यह महसूस कर बड़ी ही प्रसन्नता होती है कि बी.ए., एम.ए. और पीएचडी तक की पढ़ाई होने लगी है। आज हिंदी विषय के छात्रों को मॉरीशस विश्वविद्यालय और महात्मा गांधी संस्थान के मिले जुले सहयोग से शिक्षा प्रदान की जा रही है। शिक्षक वर्ग भी ख्याति प्राप्त और योग्य है जिसमें अधिकतर मॉरीशसीय लोग ही हैं। पीएचडी के लिए भारतीय विश्वविद्यालयों का सहयोग अवश्य लिया जाता है। मार्के की बात यह है कि यहाँ के छात्र भारतीय रचनाकारों के साथ स्थानीय रचनाकारों की रचना पर भी अपना शोध-प्रबंध तैयार करते हैं। ऐसा करने से वे अपने स्थानीय साहित्य के साथ-साथ साहित्यकारों से भी परिचित हो जाते हैं। खुशी की बात यह है कि आज हमारे छात्र 'कंप्यूटर लिटेरेट' हैं व संगणक का उपयोग करना अच्छी तरह जानते हैं और विश्व भर की जानकारी अंतरजाल और महाजाल द्वारा प्राप्त कर लेते हैं। हमारे प्राध्यापक भी उनको प्रोत्साहित करते हैं ताकि वे अपने शोध या गृहकार्य के दौरान संगणक का प्रयोग कर इसमें विशेषज्ञता प्राप्त करें। जब उनको कोई आमने-सामने 'प्रेज़ेंटेशन' करना होता है तो वे बड़ी आसानी से 'पावर पोंइट प्रेज़ेंटेशन' द्वारा लोगों के सामने अपने विचार रखकर मुग्ध कर देते हैं। इसी साल से महात्मा गांधी संस्थान द्वारा ऑनलाइन और दूरस्थ शिक्षा (distance learning) का प्रावधान किया जा रहा है जिससे विद्यार्थी घर बैठे ही अपनी तैयारी कर सकें।

स्वैच्छिक संस्थाओं में 'मॉरीशस ब्रॉडकास्टिंग कॉर्पोरेशन (MBC) का बहुत बड़ा योगदान है। सभी को मानना पड़ेगा कि आज के युग में फ़िल्म संसार संगणक का जितना उपयोग करता है उतना अन्य संस्थान नहीं। गायक, लेखक, संगीतकार, ध्वनि-प्रकाश-विशेषज्ञ तथा दर्शक-श्रोता भी संगणक का प्रयोग आसानी और स्वतंत्र रूप से करने लगे हैं।

हिंदी प्रचारिणी सभा भी इसमें पीछे नहीं है। वह भी अपने हिंदी छात्रों को टंकण प्रशिक्षण देने का प्रयास कर रही है।

आज हिंदी प्रचारिणी सभा 10-12 कंप्यूटरों के साथ हर सप्ताह प्रथमा से उत्तमा के छात्रों के लिए टंकण और संगणक के तकनीकों की शिक्षा व प्रशिक्षण देने का प्रयास कर रही है। इससे हज़ारों छात्र लाभ उठा रहे हैं क्योंकि सभा की वार्षिक कार्यशालाओं में साहित्य

रत्न के 100 से अधिक छात्रों को प्रशिक्षित किया जाता है। कभी उत्सव या स्थापना दिवस हो तो छात्र संगणक की सहायता से ही 'पावर पॉइंट प्रेज़ेंटेशन' करते हैं जिससे उनकी सिद्धहस्तता का परिचय मिल जाता है।

ऋषि दयानंद संस्थान—आर्य सभा मॉरीशस द्वारा संचालित डिग्री कॉलेज में भी छात्रों को संगणक उपयोग का प्रोत्साहन दिया जाता है। यह तो मानी हुई बात है कि हर डिग्री के लिए शोध-कार्य दिया जाता है। अत: यहाँ के शोधार्थी भी अन्य भाषाओं के साथ हिंदी के शोध-प्रबंध संगणक द्वारा टंकित कर चित्रों तथा अन्य प्रकार के आँकड़ों के साथ प्रस्तुत करते हैं।

हिंदी स्पीकिंग यूनियन का भी इस क्षेत्र में बड़ा योगदान है। 10 भाषाओं के यूनियनों में हिंदी स्पीकिंग यूनियन रेलगाड़ी के प्रथम इंजन की तरह है। बाकी 'लोकोमोटिव' (locomotive) या बोगी की तरह पीछे-पीछे आ रहे हैं। यह एक अर्धसरकारी संस्था है जिसने मॉरीशस में बच्चे से लेकर वृद्ध तक को हिंदी सीखने का प्रोत्साहन दिया है। संगणक द्वारा अभिभाषण, पत्रिका-प्रकाशन तथा हिंदी में टंकण व प्रयोग करने की विधियों की जानकारी देने का आयोजन एवं श्रेय इसी संस्था को जाता है। समय-समय पर इस विषय पर गतिविधियों के आयोजन से महत्वपूर्ण कार्य हो रहे हैं। कभी-कभी विदेशी विशेषज्ञों द्वारा भी संगणक के कार्यों को बढ़ाया जाता है।

भारतीय उच्चायोग की अपनी एक अलग भूमिका है। इस क्षेत्र में अपनी प्रेरणा एवं प्रोत्साहन के लिए संस्थाओं को उपकरण के साथ-साथ कई ऐसे सहयोग दे रहे हैं जिन्हें पाकर हमारे छात्र प्रोत्साहित होते हैं। उनकी ओर से हमारे छात्रों को ऐसे फ़िल्म और कार्टून प्राप्त होते हैं जिनमें हिंदी भाषा की वर्तनी के साथ फ़र्राटेदार रूप में शुद्ध उच्चारण के साथ हिंदी भाषा को समझ, बोल और लिख भी सकते हैं।

मॉरीशस भी हर हिंदी-भाषी देश व प्रांत की तरह अंतरजाल से जुड़कर हिंदी भाषा को आगे बढ़ाने का प्रयत्न कर रहा है। अन्यों की तरह यहाँ के छात्र भी अनेक स्तरीय हिंदी साहित्य के वेबसाइटों पर जाकर अनुसंधान करने लगे हैं जिनमें लघुकथा, रचनाकार, अनुभूति, सृजनगाथा, साहित्यमंच, हिंदी चेतना, कविता कोश, गद्यकोश आदि हैं। इन वेबसाइटों से छात्र साहित्य की हर विधा से परिचित होकर आनंद उठा सकते हैं। हमारे वरिष्ठ लेखक, श्री रामदेव धुरंधर तो अब सीधे कंप्यूटर के माध्यम से ही अपना साहित्य रचते हैं और प्रतिदिन कम से कम एक लघुकथा फ़ेसबुक के माध्यम से लोगों तक पहुँचाते हैं। हमारे कुछ ऐसे कवि, लेखक महोदय भी हैं जो अपनी कविता को सीधे संगणक में उतारकर पाठकों तक पहुँचा रहे हैं।

कहा गया है कि संगणक दुधारी तलवार की तरह है। जहाँ एक ओर रक्षा करता है वहीं दूसरी ओर उससे बचने की आवश्यकता भी होती है। छात्रों को सावधानी बरतने की आवश्यकता है ताकि वे अनावश्यक 'साइट्स' में पहुँचकर अपनी हानि न कर बैठें। दूसरी ओर यह देखा गया है कि आजकल छात्र कंप्यूटर द्वारा चैट या वार्तालाप करते समय रोमन अक्षरों द्वारा हिंदी लिखने लगे हैं जो गलत है। गलत उच्चारण के साथ गलत लेखन कर दे कुछ हद तक भाषा को बिगाड़ भी रहे हैं। एक हानि यह भी है कि इ-बुक पढ़ने के कारण अब पुस्तक खरीदकर पढ़ने में वे हिचकिचाते हैं बल्कि अपनी आदत छोड़ रहे हैं फिर उन्हें कैसे पता चलेगा कि सही रूप में एक पुस्तक, रचनाकार या पाठक का रिश्ता क्या होता है। जिन ग्रंथों को हम जीवन पर्यंत साथी मान बैठते हैं उनसे यंत्रों द्वारा रिश्ता कैसे जोड़ा जा सकता है।

निष्कर्षत: यही कहना चाहेंगे कि वैश्विक पृष्ठभूमि में आधुनिकतावाद का दामन थामना ही चाहिए। आज संगणक प्रयोग विज्ञान, तंत्रज्ञान, रसायन, संपर्क, संचार, वार्तालाप, प्रकाशन, फ़िल्म-निर्माण, संगीत, नाटक तथा अन्य मंचों की प्रकाश-व्यवस्था आधुनिकतम गाड़ियों में कई विकल्पों के लिए संगणक का उपयोग हो रहा है। आज बड़े और समृद्धशाली राष्ट्र को अपना रॉकेट, हाइड्रॉजन, अणु-परमाणु बम, हवाई जहाज़, पंडूबी आदि के निर्माण व व्यवस्था के लिए संगणक का होना आवश्यक है। यदि कोई देश इस क्षेत्र में नहीं आ रहा है तो वह पिछड़ जाएगा। दावे के साथ कह सकते हैं कि हमारे मॉरीशसीय छात्र हिंदी भाषा के प्रचार-प्रसार में अपने योग्य शिक्षकों के नक्शे कदम पर चलकर हिंदी के विकास के नए आयामों की ओर अग्रसर होते हुए अपनी अस्मिता की रक्षा कर पाएँगे।

संदर्भ:

1. विश्व हिंदी पत्रिका
2. मॉरीशस एक्ज़ामिनेशन सिंडिकेट
3. महात्मा गांधी संस्थान वेबसाइट
4. विश्व हिंदी सचिवालय

काँतोरेल, मॉरीशस
dhunrazsembhoo@gmail.com

22

हिंदी भाषा प्रौद्योगिकी चुनौतियाँ एवं संभावनाएँ

—श्री रोहित कुमार 'हैप्पी'

पिछले कुछ दशकों में इंटरनेट ने संचार माध्यमों में एक नई क्रांति को जन्म दिया है। नि:संदेह इससे प्रौद्योगिकी प्रभावित हुई है। नए संचार माध्यमों ने प्रौद्योगिकी में नई संभावनाओं के लिए ज़मीन तैयार की और इसी ज़मीन पर सोशल नेटवर्किंग व न्यू मीडिया की फ़सलें तैयार हुई हैं।

सोशल नेटवर्किंग के क्षेत्र में तो प्रौद्योगिकी की अहम भूमिका है। आज इन माध्यमों का प्रयोग संस्थानों से लेकर पारिवारिक आयोजनों तक की सूचनाएँ प्रचारित-प्रसारित करने तक में होता है। सामान्य जनता से संस्थान तक ट्विटर, फेसबुक, गूगल प्लस इत्यादि का प्रयोग करते हैं।

1995 में इंटरनेट उपभोक्ता की मात्रा कुल जनसंख्या के 1% से भी कम थी। यह बहुत रोचक विषय है कि 2016 के आँकड़ों के अनुसार विश्व की कुल जनसंख्या में से 40% इंटरनेट का उपयोग करती है।

इंटरनेट वर्ल्ड स्टैट्स के अनुसार भारत इंटरनेट के उपभोक्ता के रूप में चीन के बाद दूसरे स्थान पर है।

INTERNET USERS - JUNE 30, 2016

#	Country or Region	Population, 2016 Est.	Internet Users 30 June 2016	Internet Penetration	Growth (*) 2000 - 2016	Facebook 30 June 2016
1	China	1,378,561,591	721,434,547	52.3 %	3,106.4 %	1,800,000
2	India	1,266,883,598	462,124,989	36.5 %	9,142.5 %	157,000,000
3	United States	323,995,528	286,942,362	88.6 %	200.9 %	201,000,000
4	Brazil	206,050,242	139,111,185	67.5 %	2,682.2 %	111,000,000
5	Japan	126,464,583	115,111,595	91.0 %	144.5 %	26,000,000
6	Russia	146,358,055	103,147,691	70.5 %	3,227.3 %	12,000,000
7	Nigeria	186,879,760	97,210,000	52.0 %	48,505.0 %	16,000,000
8	Indonesia	258,316,051	88,000,000	34.1 %	4,300.0 %	88,000,000
9	Germany	80,722,792	71,727,551	88.9 %	198.9 %	31,000,000
10	Mexico	123,166,749	69,000,000	56.0 %	2,443.9 %	69,000,000

Source: World Internet User Statistics, June 30, 2016

इंटरनेट के उपभोक्ता के रूप में भारत ने अमरीका को पछाड़ कर दूसरा स्थान प्राप्त किया है लेकिन जहाँ हमारी प्रति व्यक्ति दर 36.5% है, वहीं अमरीका की प्रति व्यक्ति दर भारत से दुगुनी से भी अधिक 88.6% और चीन में यह दर 52.3% है। भारत में इंटरनेट उपभोक्ताओं के आँकड़े स्पष्ट संकेत देते हैं कि भारत में इंटरनेट का उपयोग व प्रचलन बड़ी तेज़ी से बढ़ रहा है।

श्री रोहित कुमार 'हैप्पी' न्यू ज़ीलैंड में 'हिंदी न्यू मीडिया' के माध्यम से हिंदी भाषा, लेखन व साहित्य के प्रचार-प्रसार हेतु प्रयासरत हैं। रोहित मैस्सी यूनिवर्सिटी, न्यू ज़ीलैंड से पत्रकारिता में प्रशिक्षित हैं। इसके अतिरिक्त वे न्यू ज़ीलैंड में इंवेस्टिगेटिव सर्विसेज़, ग्राफ़िक्स व वेब डिवेलपमेंट में भी प्रशिक्षित हैं।

आप मूलतः कैथल (हरियाणा) से संबंध रखते हैं और आप कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय से स्नातकोत्तर हैं। हिंदी में कविता, ग़ज़ल, कहानी और लघु-कथा विधाओं में लेखन करते हैं। आपकी रचनाएँ 'ऑउटलुक', 'नई दुनिया', 'पाञ्चजन्य', 'ज़ी न्यूज़', 'वेब दुनिया', 'पंजाब केसरी', 'वीर प्रताप', 'हरिगंधा', 'शांति दूत', 'सृजन गाथा', 'प्रभा साक्षी', 'अभिव्यक्ति' के अतिरिक्त न्यू ज़ीलैंड की 'स्कूप', 'वायकाटो टाइम्स', 'संडे स्टार', 'इंडियन टाइम्स' और 'एशियन मैग्ज़ीन' में प्रकाशित हुई हैं। श्री रोहित कुमार 'वॉयस ऑव अमेरिका', 'डायचे वेले' पर वार्ताओं में सक्रिय रहे हैं और 90 के दशक में न्यू ज़ीलैंड में 'कम्युनिटी' रेडियो (सर्वश्रेष्ठ कार्यक्रम से सम्मानित), 'रेडियो देस-प्रदेस, 'रेडियो तराना' पर समाचार वाचक रहे हैं।

रोहित न्यू ज़ीलैंड से प्रकाशित इंटरनेट पर विश्व की पहली हिंदी पत्रिका, 'भारत-दर्शन' का संपादन व प्रकाशन करते हैं व निरंतर हिंदी-कर्म में अग्रसर रहते हैं। यह पत्रिका 1996-97 से इंटरनेट पर प्रकाशित हो रही है।

अब प्रश्न यह उठता है कि यदि भारत विश्व के सर्वाधिक इंटरनेट उपयोग करने वाले देशों में से एक है तो निश्चित रूप से भारतीय भाषाएँ भी इंटरनेट पर संतोषजनक प्रगति कर रही होंगी। आइए, 'इंटरनेट पर विश्व की सर्वाधिक उपयोग की जाने वाली भाषा तालिका' पर भी विचार कर लें।

Top Ten Languages Used in the Web - June 30, 2016 (Number of Internet Users by Language)					
TOP TEN LANGUAGES IN THE INTERNET	Internet Users by Language	Internet Penetration (% Population)	Users Growth in Internet (2000 - 2016)	Internet Users % of World Total (Participation)	World Population for this Language (2016 Estimate)
English	948,608,782	67.8 %	573.9 %	26.3 %	1,400,052,373
Chinese	751,985,224	53.1 %	2,227.9 %	20.8 %	1,415,572,934
Spanish	277,125,947	61.6 %	1,424.3 %	7.7 %	450,235,963
Arabic	168,426,690	43.4 %	6,602.5 %	4.7 %	388,332,877
Portuguese	154,525,606	57.9 %	1,939.7 %	4.3 %	266,757,744
Japanese	115,111,595	91.0 %	144.5 %	3.2 %	126,464,583
Malay	109,400,982	37.8 %	1,809.3 %	3.0 %	289,702,633
Russian	103,147,691	70.5 %	3,227.3 %	2.9 %	146,358,055
French	102,171,481	25.9 %	751.5 %	2.8 %	393,892,299
German	83,825,134	88.3 %	204.6 %	2.3 %	94,973,855
TOP 10 LANGUAGES	2,814,329,132	56.6 %	848.4 %	77.9 %	4,972,343,316
Rest of the Languages	797,046,681	33.7 %	1,141.0 %	22.1 %	2,367,750,664
WORLD TOTAL	3,611,375,813	49.2 %	900.4 %	100.0 %	7,340,093,980

Source: World Internet User Statistics, June 30, 2016

जैसा कि उपरोक्त तालिका में दिया गया है, किसी भी भारतीय भाषा को 'इंटरनेट पर विश्व की सर्वाधिक उपयोग की जाने वाली भाषा' के रूप में स्थान नहीं मिला है।

क्या कारण है कि हिंदी व अन्य भाषाएँ इस तालिका में अपना स्थान नहीं बना पाईं?

- इंटरनेट का उपयोग सर्वाधिक इ-मेल करने और फिर सर्च करने के लिए किया जाता है। उसके बाद शेष अन्य के लिए। स्पष्ट है कि भारत में औसतन देखा जाए तो इ-मेल अँग्रेज़ी में ही की जाती है और सर्च भी।
- एक अन्य कारण है कि हम भाषा उपयोग में विश्व पटल पर अपना स्थान नहीं बना सके—वेब साइट विकास में सही भाषा मेटा टैग और विषयवस्तु भाषा टैग का उपयोग न किया जाना।
- यदि हम अधिकतर दैनिक पत्रों और ब्लॉग्स के वेब पृष्ठ स्रोत (Web Page Source) देखें तो पाएँगे कि वेब साइट तो हिंदी में है लेकिन उसका भाषा मेटा टैग अंग्रेज़ी में दिए जाने के कारण सर्च इंजिन इसे अंग्रेज़ी का ही समझते हैं और उसी श्रेणी में उसे रखा जाता है। यह भाषा वाला मेटा टैग कैसा दिखता है! कृपया निम्न टैग देखिए—

  <META NAME="Language" CONTENT="english">
  <META HTTP-EQUIV="Content-Language" CONTENT="en-GB">

  जबकि हिंदी के लिए टैग इस प्रकार होना चाहिए—

  <META NAME="Language" CONTENT="hi">
  <META HTTP-EQUIV="Content-Language" CONTENT="hi">

- वेब के लिए समर्पित सदस्यदल का न होना भी एक अन्य मुख्य कारण है। जब तक दैनिक-पत्रों के पास वेब संपादक न होंगे जो वेब की समझ रखते हों तब तक वेब-पत्रकारिता का संपूर्ण विकास हो पाना कठिन है।

आंकड़े संकेत देते हैं कि भारत में न्यू मीडिया शीघ्रता से बढ़ रहा है और यह शैशवकाल से यौवन की ओर अग्रसर है। इंटरनेट की बढ़ती लोकप्रियता नए-नए प्रयोग सामने लाएगी। एक बार इसकी गति अपने उत्कर्ष पर पहुँचेगी और फिर एक स्थिरता के साथ हिंदी न्यू मीडिया आने वाले कुछ वर्षों में परिपक्व होगा।

तथ्य और कथ्य

भाषाई पोर्टल संख्या में वृद्धि हो रही है। सूचना व समाचार की उपलब्धता सुलभ है लेकिन उसके साथ ही सही सूचना के सत्यापन पर प्रश्न-चिह्न लग जाता है।

पिछले दिनों (अगस्त 2016) में किसी पाठक ने फाने करके पूछा कि सुमित्रानंदन पंत की मृत्यु कहाँ हुई?

'इलाहाबाद' बताने पर उन्होंने कहा कि इंटरनेट पर उपलब्ध जानकारी बहुत भ्रामक है। आप तनिक इसपर शोध करके देखें। सचमुच इंटरनेट पर भ्रामक जानकारियों की भरमार है। लोग शोध तक में विकिपीडिया का उपयोग करते हैं जोकि कभी-कभी घातक होती है।

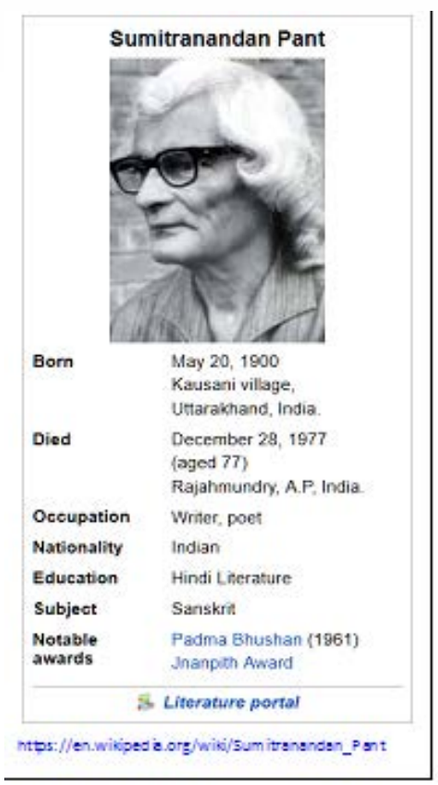

Sumitranandan Pant

Born	May 20, 1900 Kausani village, Uttarakhand, India.
Died	December 28, 1977 (aged 77) Rajahmundry, A.P, India.
Occupation	Writer, poet
Nationality	Indian
Education	Hindi Literature
Subject	Sanskrit
Notable awards	Padma Bhushan (1961) Jnanpith Award

Literature portal

https://en.wikipedia.org/wiki/Sumitranandan_Pant

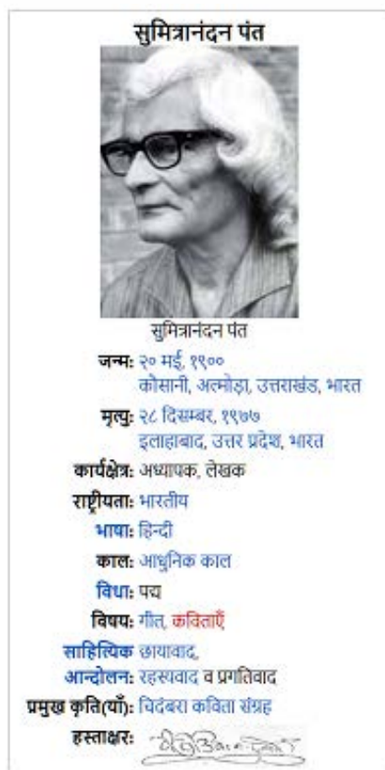

सुमित्रानंदन पंत

सुमित्रानंदन पंत

जन्म: २० मई, १९००
कौसानी, अल्मोड़ा, उत्तराखंड, भारत

मृत्यु: २८ दिसम्बर, १९७७
इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश, भारत

कार्यक्षेत्र: अध्यापक, लेखक

राष्ट्रीयता: भारतीय

भाषा: हिन्दी

काल: आधुनिक काल

विधा: पद्य

विषय: गीत, कविताएँ

साहित्यिक आन्दोलन: छायावाद, रहस्यवाद व प्रगतिवाद

प्रमुख कृति(याँ): चिदंबरा कविता संग्रह

हस्ताक्षर:

उपरोक्त तालिकाओं में पंतजी के निधन स्थल पर ध्यान दें। [अगस्त 2016 तक यही जानकारी उपलब्ध है]

पंतजी का मृत्यु-स्थल अंग्रेज़ी विकिपीडिया पर राजमुंदरी (Rajahmundry, A.P) आंध्रप्रदेश है तो हिंदी विकिपीडिया में 'इलाहाबाद'। अंग्रेज़ी विकिपीडिया के खोजकर्ता के लिए पंतजी का देहांत राजमुंदरी, आंध्रप्रदेश में हुआ और हिंदी खोजकर्ता के लिए 'इलाहाबाद' में!

ऐसे में इंटरनेट का उपयोग विद्यार्थियों को किस प्रकार लाभान्वित करेगा! विकिपीडिया, फेसबुक या गूगल प्लस किसी भी शोध के लिए एक अच्छा आरंभिक बिंदु हो सकते हैं लेकिन उस जानकारी को पूर्णतया प्रामाणिक मान लेना बहुत महंगा पड़ सकता है। अधिकतर सोशल नेटवर्क साइट्स 'कथ्य' उपलब्ध करवाती हैं 'तथ्य' नहीं। तथ्य सरल-सुलभ न होकर खोजने पड़ते हैं। इंटरनेट के उपभोक्ताओं को यह बात अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए।

नए संचार माध्यम और प्रौद्योगिकी

नए संचार माध्यमों ने सभी भाषाओं को प्रभावित किया है और हिंदी भी इसका अपवाद नहीं। हिंदी प्रौद्योगिकी के समक्ष विभिन्न चुनौतियाँ सिर उठाए खड़ी हैं। न्यू मीडिया व वेब पत्रकारिता के लिए तो नई प्रौद्योगिकी अपनाना मूलभूत आवश्यकता है ही, इसके

अलावा परंपरागत मीडिया भी नए माध्यमों व नई प्रौद्योगिकी से प्रभावित हुआ है।

प्रिंट मीडिया

प्रिंट मीडिया की बात करें तो एडोबी के उत्पाद (Adobe Applications) इसके लिए अवश्यंभावी हैं। यह एक सुखद समाचार है कि अब एडोबी भी हिंदी यूनिकोड का समर्थन करता है। हिंदी यूनिकोड का समर्थन होने से अब प्रकाशक को दोहरा परिश्रम नहीं करना पड़ता। पहले प्रिंट मीडिया व वेब के लिए पृथक शब्द संसाधित करने पड़ते थे। एडोबी द्वारा देवनागरी यूनिकोड समर्थन के पश्चात् इस खाई को पाट दिया गया है। अब इंटरनेट और प्रिंट मीडिया के बीच की दूरी लगभग समाप्त हो गई है।

अब एडोबी उत्पादों (फ़ोटोशॉप, इंडिजाइन, इलस्ट्रेटर इत्यादि) में हिंदी यूनिकोड टंकण संभव है और माइक्रोसॉफ्ट वर्ड से हिंदी सामग्री 'कॉपी-पेस्ट' भी कर सकते हैं।

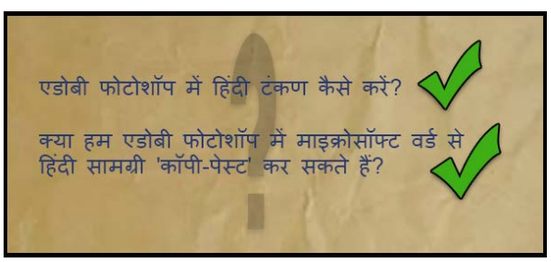

उपरोक्त चित्र के वाक्यों का शब्द-संसाधन फॉटोशॉप में ही किया गया है व कॉपी-पेस्ट का प्रयोग भी सही परिणाम दे रहा है। सनद रहे कि हम यहाँ हिंदी यूनिकोड आधारित फ़ॉन्ट व सामग्री की बात कर रहे हैं।

सही प्रौद्योगिकी का उपयोग किया जाए तो इन्हीं हिंदी यूनिकोड फॉण्ट्स से विंडोज़ फ़ॉन्ट व एप्पल मैक फ़ॉन्ट्स की भांति सुंदर मुद्रण व बेहतर प्रस्तुति संभव है। गूगल भारतीय भाषाओं में नए-नए प्रयोग कर रहा है। इसी कड़ी में बढ़ोतरी करते हुए गूगल नि:शुल्क हिंदी फ़ॉन्ट भी उपलब्ध करवा रहा है जिससे प्रकाशन को वेब व प्रिंट मीडिया में बेहतर ढंग से प्रस्तुत किया जा सकेगा।

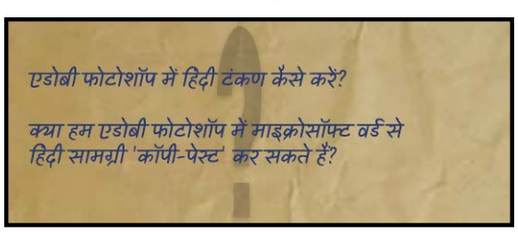

उपरोक्त चित्र में उपयोग किया गया फ़ॉन्ट गूगल द्वारा उपलब्ध हिंदी यूनिकोड फ़ॉन्ट है।

आप चाहें तो गूगल द्वारा उपलब्ध फ़ॉन्ट्स का उपयोग प्रिंट व वेब मीडिया में एक साथ कर सकते हैं।

गूगल द्वारा उपलब्ध करवाए जा रहे अनेक हिंदी यूनिकोड फ़ॉन्ट्स।

गूगल देवनागरी (हिंदी) के अतिरिक्त बंगाली, मलयालम, गुजराती, गुरमुखी, कन्नड़, तमिल, तेलुगु व उड़िया में भी फ़ॉन्ट उपलब्ध करवा रहा है जो कि प्रिंट व वेब दोनों मीडिया में एक साथ काम कर सकते हैं। यूनिकोड से टू' टाइप फ़ॉन्ट या टू' टाइप फ़ॉन्ट से यूनिकोड फ़ॉन्ट का झंझट समाप्त होने को है। इस समय ये फॉण्ट्स माइक्रोसॉफ्ट इंटरनेट एक्सप्लोरर में काम नहीं कर रहे हैं लेकिन निकट भविष्य में संभवत: ये काम करेंगे।

विश्लेषण : हिंदी का परिदृश्य

आर.एन.आई (Registrar of Newspapers for India) के अनुसार भारत में 2014-15 में पंजीकृत प्रकाशनों की संख्या 1,05,443 थी। सर्वाधिक पंजीकृत प्रकाशन हिंदी में हैं जिनकी संख्या 2014-15 में 42,493 बताई गई है और उसके बाद 13, 661 की संख्या के साथ अंग्रेज़ी प्रकाशन द्वितीय स्थान पर हैं। पंजीकृत प्रकाशन वाला सबसे बड़ा राज्य उत्तर प्रदेश है जिसमें पंजीकृत प्रकाशनों की संख्या 16,130 है।

'आनंद बाज़ार' आज भी देश की सर्वाधिक वितरित दैनिक पत्रिका (बंगाली) है जिसके बाद हिंदुस्तान टाइम्स (देहली), द टाइम्स ऑव इंडिया (देहली), द टाइम्स ऑव इंडिया (मुंबई) व पंजाब केसरी (जालंधर) सर्वाधिक पढ़े जाने वाले दैनिक-पत्र हैं। देश में पढ़ी जाने वाली सबसे अधिक लोकप्रिय दैनिक बंगाली, उसके बाद दूसरे, तीसरे, चौथे स्थान पर अंग्रेज़ी व पाँचवें स्थान पर हिंदी दैनिक 'पंजाब केसरी' है। सबसे अधिक प्रकाशन वाली हिंदी सर्वाधिक लोकप्रिय दैनिकों में प्रथम न होकर पाँचवें स्थान पर है।

इसका पहला कारण हिंदी में अत्यधिक प्रतिस्पर्धा व दूसरा कारण सुदृढ़ आधार न होना है।

अंग्रेज़ी प्रकाशनों के साथ यदि हिंदी का तुलनात्मक अध्ययन करें तो चौंकानेवाले तथ्य सामने आते हैं। हिंदी प्रकाशनों में 93.42% निजी स्वामित्व वाले प्रकाशन, 4.46% जॉइंट स्टॉक कंपनी व 0.73% संस्थाओं के आधिपत्य में प्रकाशित होते हैं जबकि अंग्रेज़ी प्रकाशनों का परिदृश्य अलग है। अंग्रेज़ी में 56.38% निजी स्वामित्व, 34.52% जॉइंट स्टॉक कंपनी व 4.42% संस्थाओं के आधिपत्य में प्रकाशित होते हैं। इन आँकड़ों के अध्ययन से सहज निष्कर्ष निकलता है कि हिंदी प्रकाशन अधिकतर निजी हैं जिसके कारण उन्हें ठोस धरातल नहीं मिलता।

इंटरनेट पर हिंदी व न्यू मीडिया

इंटरनेट पर हिंदी प्रकाशनों का विस्तार तेज़ी से हो रहा है। यह प्रसन्नता का विषय है लेकिन कई बार प्रकाशनों का स्तर व भाषा का अवलोकन आपको निराश कर देता है। अधिकतर वेब मीडिया की भाषा अनौपचारिक है लेकिन फिर भी स्तर तो बनाए रखा जा सकता है।

ओ.सी.आर. एक ऐसी तकनीक है जिसमें किसी इमेज़ में से टैक्स्ट को पहचान कर उसे संपादन योग्य टैक्स्ट में परिवर्तित किया जाता है। ओ.सी.आर. मुद्रित हिंदी सामग्री के डिजिटलीकरण के लिए एक महत्वपूर्ण औज़ार है। हिंदी में सही परिणाम देनेवाला 'हिंदी ओ.सी.आर.' नामक एक ही औज़ार उपलब्ध है। यह कम आश्चर्यचकित करने वाला नहीं कि इसे एक हिंदी प्रेमी ने विकसित किया है। जर्मन के डॉ. ऑलिवर हेलविग संस्कृत के एक विद्वान हैं।

सजग नए प्रयोग

सरकार भी भारतीय भाषाओं पर नए-नए प्रौद्योगिक प्रयोग कर रही है। सरकार के प्रयास सराहनीय हैं लेकिन हमें भी अपने स्तर पर प्रयासरत रहना होगा।

हिंदी में नए प्रयोग करने की आवश्यकता है। पिछले कुछ दशकों से हिंदी ओ.सी.आर. (ऑपटिक्ल करेक्टर रिकोग्निशन) तैयार करने के प्रयास हो रहे हैं। बहुत से ओ.सी.आर. आए भी लेकिन उनका परिणाम संतोषजनक नहीं रहा।

ओ.सी.आर. एक ऐसी तकनीक है जिसमें किसी इमेज़ में से टैक्स्ट को पहचान कर उसे संपादन योग्य टैक्स्ट में परिवर्तित किया जाता है। ओ.सी.आर. मुद्रित हिंदी सामग्री के डिजिटलीकरण के लिए एक महत्वपूर्ण औज़ार है। हिंदी में सही परिणाम देनेवाला 'हिंदी ओ.सी.आर.' नामक एक ही औज़ार उपलब्ध है। यह कम आश्चर्यचकित करने वाला नहीं कि इसे एक हिंदी प्रेमी ने विकसित किया है। जर्मन के डॉ. ऑलिवर हेलविग संस्कृत के एक विद्वान हैं। भारत में उपलब्ध किसी भी ओ.सी.आर. का इस जर्मन हिंदी प्रेमी के ओ.सी.आर. से तुलनात्मक अध्ययन आपको सहज ही डॉ. ऑलिवर हेलविग का प्रशंसक बना देगा। आप किसी भी पुस्तक के पन्ने को स्कैन करके इस 'हिंदी ओ.सी.आर.' के माध्यम से संपादित की जा सकने वाली फाइल जैसे माइक्रोसॉफ्ट वर्ड फाइल में परिवर्तित कर सकते हैं।

नए प्रौद्योगिक युग की दशा और दिशा

यदि हम चाहते हैं कि आज के नए प्रौद्योगिक युग में हमारी भाषाएँ विश्व-स्तर पर मान्यता पाएँ और विश्व पटल पर अपना स्थान बनाएँ तो हमें केवल हिंदी व अन्य भारतीय भाषाओं की वेब पर उपस्थिति मात्र से ही संतोष नहीं कर लेना चाहिए बल्कि हमें यह भी सुनिश्चित करना होगा कि हम उनका विकास सही तरीक़े से करें, उनके व्यापक प्रभावों व परिणामों पर विचार करें और उन्हें उत्तम गुणवत्ता प्रदान करें। हमें नए प्रौद्योगिक युग की दशा और दिशा का मनन करना होगा। प्रौद्योगिक व इंटरनेट का संसार तेज़ी से बढ़ रहा है और उसके साथ ही सायबर अपराध भी। प्रतिदिन 37 हजार वेब साइट्स हैक होती हैं। कुल वेब ट्रैफिक में से केवल 44% मनुष्यों से व शेष 56% अवांछनीय स्रोतों से जिनमें वेब बोट, हैकिंग, स्क्रेपर्स और स्पैमर्स सम्मिलित हैं, से आता है। इन सब पर नियंत्रण निकट भविष्य की माँग है।

संदर्भ (Reference):

- Lyne, J. (2013, September 6). 30, 000 web sites hacked A day. How do you host yours? Forbes. Retrieved from http://www.forbes.com/sites/jameslyne/2013/09/06/30000-web-sites-hacked-a-day-how-do-you-host-yours/#59042b2b3a8c
- OFFICE OF THE REGISTRAR OF NEWSPAPERS FOR INDIA. Retrieved August 25, 2016, from http://rni.nic.in/
- Ten things we know to be true–company–Google. Retrieved August 25, 2016, from https://www.google.co.uk/about/company/philosophy/
- Top Ten Internet languages - world Internet statistics. (2016). Retrieved August 25, 2016, from http://www.internetworldstats.com/stats7.htm

न्यू ज़ीलैंड
editor@bharatdarshan.co.nz
www.bharatdarshan.co.nz

मीडिया व अनुवाद

प्रस्तुत अंक के 'मीडिया और अनुवाद' अनुभाग में कुछ उल्लेखनीय आलेख संकलित हैं जिनको पढ़ते हुए विश्व हिंदी समाज को वर्तमान संदर्भ में मीडिया तथा अनुवाद के क्षेत्र में हिंदी की बढ़ती भूमिका के बारे में जानकारी प्राप्त होगी। पठन-पाठन, साहित्य, रेडियो तथा टी.वी. के अलावा अन्य सूचना माध्यमों के ज़रिए भी तेज़ी से अपना विस्तार पा रही हिंदी केवल भावाभिव्यक्ति के लिए एक भाषा ही नहीं बल्कि गंभीर विचारों के आदान-प्रदान के लिए भी किस तरह एक संपर्क भाषा के रूप में उभर रही है, इसकी चर्चा प्रस्तुत आलेखों में की गई है। उद्देश्य यही है कि इसकी विस्तृत जानकारी विश्व हिंदी समाज तक पहुँचाया जा सके कि वेब मीडिया के उभरने से अब हिंदी लेखक, साहित्यकार या पत्रकार अपनी साहित्यिक तथा वैचारिक रचनाएँ प्रकाशित करने के लिए प्रकाशक या फिर किसी औपचारिक प्लेटफ़ॉर्म पर निर्भर नहीं हैं, अब वे अपने विचार फ़ेसबुक, ट्विटर, वाट्सऐप, ब्लॉगिंग, आदि संचार माध्यमों से प्रेषित कर सकते हैं। अत: हिंदी जनसंचार माध्यमों की भाषा बनकर उन्हें और भी लोकतांत्रिक बना रही है। संचार माध्यमों के अलावा व्यावसायिक और साहित्यिक क्षेत्र में भी अनुवाद के माध्यम से हिंदी का प्रचलन बढ़ रहा है। इस प्रक्रिया में जहाँ हिंदी का शब्द-भंडार कई अन्य भाषाओं के सम्मिश्रण से समृद्ध हो रहा है, वहीं साहित्यिक अनुवाद के माध्यम से भारत तथा देश-विदेश के बीच का सांस्कृतिक सेतु और भी सुदृढ़ हो रहा है।

23

सोशल मीडिया और हिंदी

डॉ. सहदेव वर्षाराणी निवृत्तीराव

सोशल मीडिया पर शुरूआत में अंग्रेज़ी का वर्चस्व था। फ़ेसबुक, ट्विटर, वाट्सऐप, गूगल प्लस, ऑरकुट आदि अंग्रेज़ीवालों के औज़ार थे लेकिन समय बदला और स्थितियाँ भी बदलती चली गईं। देश में तकनीक का विकास तीव्र गति से हुआ और उसका उपयोग करनेवाले अपनी भाषा में संवाद करने लगे। इसी वजह से सोशल मीडिया पर हिंदी का प्रभाव काफ़ी बढ़ा है। सोशल मीडिया की वजह से हर एक को अपने आपको अभिव्यक्त करने के लिए एक बड़ा प्लेटफ़ॉर्म प्राप्त हुआ है। इससे पाठकों से बेहतर संवाद हो रहा है। पाठक अपने विचार पोस्ट कर रहे हैं और उनको महत्व भी मिल रहा है। आज स्थिति यह है कि हिंदी के पत्रकारों के फ़ॉलोवर लाख से ज़्यादा हैं अर्थात ये सभी हिंदी फ़ॉलोवर हैं। इसी सोशल मीडिया के कारण वह दुनिया भर की खबरों से अप्डेटड रहती है। मोबाइल पर हर प्रकार के ऐप उपलब्ध हैं जिनसे पाठक अपनी पसंदीदा भाषा में अपनी रुचि की चीज़ें पढ़ सकता है। एप्पल जैसी कंपनी ने भी हिंदी को अपनाना शुरू किया। कुछ साल पहले जिस प्रकार लोग अंग्रेज़ी में लिख रहे थे, अब देवनागरी में लिखने लगे हैं। इस दृष्टि से हिंदी को प्रचारित करने के लिए प्रयास हो रहे हैं लेकिन क्या वे पर्याप्त हैं अथवा नहीं? इसकी पड़ताल प्रस्तुत आलेख का उद्देश्य है।

जन्म : 19.08.1981
शिक्षा : एम.ए. हिंदी, सेट, नेट, पीएचडी।
विभिन्न राष्ट्रीय तथा अंतरराष्ट्रीय पत्रिकाओं में 15 शोध आलेख प्रकाशित हैं।
संप्रति: श्री विजयसिंह महाविद्यालय, पेठवडगाँव, कोल्हापूर में एसोसिएट प्रोफेसर के पद पर कार्यरत।

आज के समय में तकनीक इतनी तेज़ी से बदल रही है कि हम जब तक किसी तकनीक को समझते हैं, उससे पहले नई तकनीक सामने आ जाती है। जो आज 'अप-टु-डेट' है, वह कल 'आउट डेटड' हो रहा है। ऐसे समय में सोशल मीडिया ने न केवल हिंदी साहित्य को प्रभावित किया है बल्कि भाषा को भी बदला है तथा साहित्य और भाषा की दुनिया में विस्फोट किया है। अब एक जगह बैठकर पढ़ना या टी.वी. देखना बाध्यकारी नहीं रहा। सोशल मीडिया से अब पाठकों की चलते-फिरते पढ़ने की आदत बढ़ती जा रही है। कई बार तो सोशल मीडिया ही सच्चाई जानने का एकमात्र साधन होता है। सोशल मीडिया के कारण ही हिंदी का दायरा व्यापक हो रहा है, वह इंजीनियरिंग, मैनेजमेंट आदि विभिन्न क्षेत्रों के लोगों से सीधे जुड़ रही है। इसलिए हिंदी की परिधि इतनी बढ़ रही है कि वह समाज के सभी वर्गों में फैल रही है। समाज के दबे-कुचले वंचित समूहों को सोशल मीडिया से वाणी मिल रही है। इतना ही नहीं, स्त्री-लेखन को भी अभिव्यक्ति का समर्थ माध्यम इसी ने उपलब्ध कराया है।

ऐसे में यह देखना तर्कसंगत होगा कि सोशल मीडिया के आने के बाद साहित्य और भाषा की स्तरीयता में कितना परिवर्तन आया है, संपादक जैसे गेटकीपर के हट जाने से साहित्य में लोगों की रुचि कितनी बढ़ी है, इस माध्यम पर प्रकाशित साहित्य का स्थायित्व कितना है और इसमें संभावनाएँ कितनी हैं? यह बात बिल्कुल सच है कि जो काम प्रिंट और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया मिलकर भी नहीं कर पाए उसे सोशल मीडिया के छोटे-छोटे माध्यमों ने कर दिखाया। इंटरनेट के कारण रचनाकार अपनी रचना को प्रकाशित कराने के लिए किसी के धक्के नहीं खाता, उसको खर्चे का भी भय नहीं रहता। वह तो अपनी रचना को पाठकों के सामने प्रस्तुत करता है और उसका मूल्यांकन पाठक करते हैं। पाठक भी अपने विचार खुलकर व्यक्त करने को स्वतंत्र हैं और रचनाकार को भविष्य में

सचेत रहने की सीख भी देते हैं लेकिन इसकी कुछ कमियाँ भी हैं जैसे—तात्कालिकता, सतहीपन, काल्पनिक भ्रम आदि। फ़ेसबुक जैसे सोशल मीडिया ने तमाम हिंदी जाननेवालों को रचनाकार बना दिया है। सब के सब रचनाकार की पंक्ति में खड़े हो गए हैं। कई बार हम बिना पढ़े लाइक कर देते हैं, इससे रचनाकार भ्रमित हो जाता है लेकिन चाहे जो कहे, सोशल मीडिया भाषा के प्रचार-प्रसार में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। इसके लिए लेखकों को अपनी तारीफ़ सुनने के मोह से बाहर आकर आत्मानुशासन की कठोर डोर से लिखना होगा। इससे साहित्य के साथ-साथ भाषा पाठकों तक बहुत आसानी से पहुँच जाएगी। सब एक ही प्लेटफ़ॉर्म पर एक-दूसरे से संवाद करेंगे। सबसे विशेष बात यह है कि लेखक और पाठक के बीच की दूरी कम हो जाएगी। इस संबंध में अनंत विजय जी का मत सटीक है—

''दरअसल जो लोग सोशल मीडिया को लेकर सशंकित हैं उनको समझना होगा कि कोई भी चीज़ पक्की होने से पहले कच्ची ही होती है। इसी तरह से सोशल मीडिया पर साहित्य इस वक्त अपने कच्चेपन के साथ मौजूद है लेकिन तकनीक का इस्तेमाल हमेशा से भाषा के हित में रहा है। अब अगर हम सोशल मीडिया के एक और उजले पक्ष को देखें तो वह विमर्श और संवाद का एक बेहतरीन मंच है। जिस तरह से हिंदी पट्टी में कॉफ़ी हाउस संस्कृति ख़त्म हो गई, साहित्यिक रुचिवाली पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन धीरे-धीरे बंद होता गया। ऐसे में फ़ेसबुक ने हिंदी के गंभीर मुद्दों को बहस के लिए एक मंच दिया। वहाँ हर तरह के विषय को लेकर बहस होती है। कई बार निष्कर्ष भी निकलता है। वहाँ हिंदी के सवालों पर टकराहट भी होती है जिसकी गूँज इंटरनेट से बाहर भी सुनाई देती है।''

हिंदी के एक वर्ग का मानना है कि सोशल मीडिया अपने आपको उद्घाटित करने का एक बेहतर मंच है। निस्संदेह इससे हिंदी फैल रही है। आज इंटरनेट और फ़ेसबुक के माध्यम से कबीर-सूर से लेकर एकदम नए रचनाकारों की कृतियाँ एक साथ पढ़ने को उपलब्ध हैं। यह एक तथ्य है कि इंटरनेट के कारण ही विश्व पुस्तक मेलों में हिंदी के स्टॉलों पर भीड़ पहले से अधिक बढ़ने लगी है। फ़ेसबुक जैसे सोशल मीडिया के कारण लोग लेखकों से सीधे जुड़ते हैं, प्रकाशकों से जुड़ते हैं। फिर उनसे मिलने के लिए पुस्तकों से जुड़ने के लिए पुस्तक मेलों में आते हैं। वास्तव में सोशल मीडिया के आने से पहले एक प्रकार की संवादहीनता का माहौल बना हुआ था। स्मार्टफ़ोन की इस कनेक्टिविटी ने हिंदी साहित्य की लोकप्रियता बढ़ाने में निश्चित रूप से सहयोग दिया है। अब समय की कमी के बावजूद लोग आपस में जुड़े रह पा रहे हैं। अपनी सुख-दुख की अनुभूति साझा कर रहे हैं।

राजकमल प्रकाशन के संपादकीय निदेशक, सत्यानंद निरूपम की यह बात उल्लेखनीय है—

''लोकप्रिय साहित्य के प्रसार में सोशल मीडिया की भूमिका अभी निर्णायक है। अगर सोशल मीडिया को हमारे समय से घटाकर देखें तो और कोई ऐसा प्रभावी ज़रिया नहीं है जिससे टारगेट रीडर तक कोई भी प्रकाशक या लेखक अपनी किसी पुस्तक को इतनी आसानी से पहुँचा सकता हो। इस प्लेटफ़ॉर्म की सबसे खूबसूरत बात यह है कि इसके ज़रिए न केवल पुस्तक के बारे में लोगों को बताया जा रहा है बल्कि बेचा भी जा रहा है और लोग खरीदकर पढ़ने के बाद इसकी खबर भी वहाँ साझा कर रहे हैं। कई लोग पढ़कर संक्षेप में या विस्तार में अपनी राय भी रख रहे हैं। कोई किसी पुस्तक के बारे में अपनी राय जब अपने फ्रेंड सर्किल में साझा कर रहा है तो और लोग उस राय से सहमति-असहमति जता रहे हैं। इस पूरी प्रक्रिया में लगातार पुस्तक की चर्चा बढ़ती जा रही है। प्रकाशक और लेखक अपनी पुस्तक के बारे में लोगों तक जानकारी पहुँचाने का काम यहाँ पोस्टर, ओडियो, वीडियो जैसे कई माध्यमों से असरदार ढंग से, बड़ी आसानी से कर रहे हैं। दरअसल, सोशल मीडिया लोकप्रिय साहित्य के प्रसार के लिए एक तरह का 360 डिग्री सोल्यूशन है।''

हिंदी फ़ेसबुक और इंटरनेट के कारण ही केवल भारत की सीमाओं में कैद नहीं रही बल्कि वह बड़े स्तर पर संवाद और संपर्क की कड़ी बनी लेकिन इसके इंटरनेट प्रयोग के लिए सबसे बड़ी बाधा हिंदी के मानकीकृत सॉफ़्टवेयर्स की अनुपलब्धता है। इस संबंध में डॉ. अर्जुन चह्वाण जी का सुझाव द्रष्टव्य है—

''एक ऐसा सॉफ़्टवेयर बनाया जाए जो 'सॉफ़्टवेयर का सॉफ़्टवेयर' हो। इसमें अब तक के बनाए गए सभी सॉफ़्टवेयर पैकेज की जानकारी और उसमें निहित सुविधाओं का परिचय दिया गया हो। इससे हिंदी में कार्य करनेवालों को सुविधा होगी तथा संगणक के हिंदीकरण में वृद्धि होगी, इसमें संदेह नहीं।''

वर्तमान में सोशल मीडिया आत्माभिव्यक्ति का एक अत्यंत

महत्वपूर्ण और उपयोगी माध्यम बनता जा रहा है। इसने समाज के पारंपरिक ढाँचे को बदलकर एक सराहनीय हस्तक्षेप किया है। यह आज के समय का विचार है, पुकार है। सोशल मीडिया लोगों की रचनात्मकता को सामने लाने का मंच बन रहा है। निश्चित रूप से सोशल मीडिया अपनी लोकतांत्रिक आवाज़ को बढ़ाने में सहायक सिद्ध हुआ है। इसी की ताकत ने कई बार नेताओं को, उनके फ़ैसलों को, नीतियों और व्यवहारों को बदलने पर भी मजबूर किया है। सोशल मीडिया के कारण ही हिंदी उन इलाकों तक पहुँचने में कामयाब रही है जहाँ पहुँचना उसके लिए मुश्किल था। इसी वजह से हिंदी जाननेवालों की तादाद में वृद्धि हुई है और शायद बहुत सारे लोगों के हिंदी ज्ञान में भी बढ़ोतरी हुई है।

सोशल मीडिया की व्यापकता अगर देखनी है तो इंटरनेट का इस्तेमाल करनेवालों की संख्या देखना उचित होगा। निम्न ग्राफ़ में मोबाइल पर इंटरनेट का इस्तेमाल करनेवालों की संख्या दी गई है जिससे सोशल मीडिया कितनी तेज़ी से फ़ैल रहा है, इसका अंदाज़ा लगाया जा सकता है। भारत में इंटरनेट का इस्तेमाल करनेवालों की संख्या विस्मयकारी है। तकरीबन 243 मिलियन लोग (जून, 2014 डिजिटल इन साइट्स) आज इंटरनेट का इस्तेमाल कर रहे हैं। निश्चित रूप से सोशल मीडिया की सर्व सुलभता ने हिंदी को भी प्रभावित किया है।

गूगल इंडिया की रिपोर्ट के अनुसार 2018 तक लगभग आधा देश इंटरनेट के माध्यम से जुड़ जाएगा। भारत में बढ़ते इंटरनेट उपभोक्ताओं के कारण सोशल मीडिया का वर्चस्व भी मज़बूत हो रहा है।

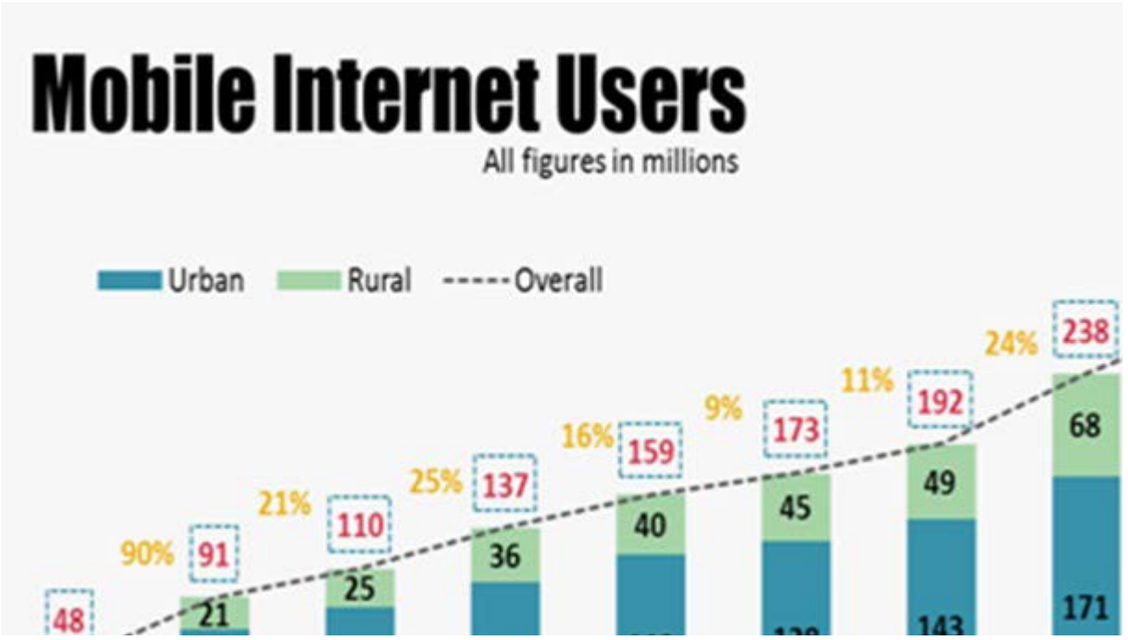

(वर्तमान में भारत तीसरा सबसे बड़ा इंटरनेट प्रयोगकर्ताओं का देश है। सोशल मीडिया पर हिंदी में संवाद करना संभव है, यह भी हिंदी का सकारात्मक पहलू है।)

विश्व बाज़ार के दबाव के कारण विज्ञान, वाणिज्य, व्यापार, खेल, साहित्य आदि की सूचनाएँ हिंदी में देने का दबाव बढ़ रहा है। हिंदी का प्रयोग एस.एम.एस., इ-मेल, इ-कॉमर्स, इ-बुक, इंटरनेट और वेब जगत में बड़ी ही सहजता से किया जा रहा है। कई मल्टीनेशनल कंपनियाँ जैसे माइक्रोसॉफ़्ट, गूगल, आई.बी.एम. ओरेकल आदि व्यापक बाज़ार और भारी लाभ को देखते हुए हिंदी के प्रयोग को बढ़ावा दे रही हैं। स्पष्ट है कि इंटरनेट विश्व के कोने-कोने में पहुँच गया है। इंटरनेट हिंदी भाषा और साहित्य को विश्व स्तर पर प्रस्तुत कर रहा है। इंटरनेट के माध्यम से तमाम सोशल साइट्स पर विश्व भर के लोगों की आवाजाही हिंदी में हो रही है।

वैसे सोशल मीडिया पर हिंदी की स्थिति और दुर्गति, दोनों ही विषयों की चर्चा होनी चाहिए। हिंदी में इसे लेकर परस्पर विरोधी विचार हैं। इसे व्यक्तिगत भड़ास निकालने का मंच कहा गया। इतना ही नहीं, सोशल मीडिया पर एक प्रमुख आक्षेप यह लगाया जा रहा है कि इस पर स्तरहीन रचनाएँ लिखनेवाले भी रचनाकार की पंक्ति में जा बैठे हैं लेकिन सूक्ष्मता से देखने पर यह द्रष्टव्य होगा कि इस पर मौजूद सैकड़ों लेखकों में भी पहचान उसी को मिल पा रही है जो स्तरीय साहित्य रच रहा है। इसी वजह से कई नए लेखकों के सिवाय स्थापित लेखक, पत्रकार और विचारक भी फ़ेसबुक आदि सोशल मीडिया पर नियमित रूप से लिखते हैं। बुद्धिजीवियों के बीच कई महत्वपूर्ण बहसें आए दिन इस पर पढ़ने को मिल रही हैं।

यह समय की माँग है कि हम इस तकनीक को साहित्य और भाषा के संबंध में समझने की कोशिश करें। यहाँ राहुल देव जी की टिप्पणी सार्थक है—

''और हर नए, अपने समय के लिए आधुनिक और सशक्त संचार-संवाद माध्यम की तरह इस सामाजिक मीडिया ने भी मानवीय संबंधों, परिवारों और रिश्तों के आंतरिक समीकरणों, तौर-तरीकों, संवाद शैलियों को प्रभावित किया है। इसने राजनीतिक रणनीतियों, विमर्श और चुनावी नतीजों में अपनी जगह बनाई है। कंपनियों और उनके उत्पादों-सेवाओं के प्रचार-प्रसार, उपभोग, मार्केटिंग और ग्राहकों तक पहुँचने, उन्हें छूने के तौर-तरीकों को बदला है। वाट्सऐप, फ़ेसबुक, ट्विटर, इंस्टाग्राम, लिंक्डइन आदि ने एक ऐसी आभासी दुनिया बना दी है जिसमें 8-10 साल के बच्चों से लेकर 50-60 की गृहणियों को भी अपने चंगुल में ऐसा फाँस लिया है कि उनका अधिकांश मुक्त समय इसमें ही खपने लगा है। व्यापार, उद्योग, अभिशासन, मनोरंजन, राजनीति और मीडिया जगत के लोगों के लिए तो ये मंच महत्वपूर्ण है ही।''

इस तरह सोशल मीडिया की वजह से हिंदी का विस्तार हो रहा है। इसके माध्यम से उसका एक नेटवर्क बन रहा है जो हिंदी के भविष्य के लिए ज़रूरी है। वैसे सोशल मीडिया की कई प्रवृत्तियाँ बताई जा सकती है—

1. फ़ेसबुक जैसा माध्यम नि:शुल्क मंच प्रदान करता है।
2. जो प्रतिभाएँ कल तक छुपी और दबी बैठी थीं, वे आज समाज के सामने मुखर हैं जिससे साहित्य विकास की ओर बढ़ रहा है।
3. साहित्य को घर-घर तक पहुँचाने में सुलभता हुई।
4. यह माध्यम आम जनता के लिए सहजता से उपलब्ध है।
5. इसने संभावनाओं के नए द्वार खोले हैं।
6. सोशल मीडिया ऑनलाइन पत्रिकाओं के माध्यम से नई प्रतिभाओं को उभारने में अहम भूमिका निभा रहा है।
7. इसने स्त्री-लेखन को एक नया आयाम प्रदान किया है।

निष्कर्ष—

कुल मिलाकर सोशल साइट्स आज के समय में लोगों की ज़रूरत बन गई हैं। अधिक से अधिक लोग अपना समय वाट्सऐप और फ़ेसबुक पर गुज़ारना पसंद कर रहे हैं। यह दौर तकनीक का दौर है जिसमें सब कुछ ग्लोबल हो रहा है। बड़ी तेज़ी से परिवर्तित होता दिखाई दे रहा है।

इस तरह इंटरनेट, ब्लॉग, ऑनलाइन पत्र-पत्रिकाएँ देखने के बाद ऐसा लगने लगा मानो अभिव्यक्ति के नए पंख लग गए हैं। सृजनशीलता को एक नई आज़ादी मिली है और अभिव्यक्ति बिना लगाम के घोड़े सी दौड़ने लगी है। स्पष्ट है कि हिंदी ने सोशल मीडिया पर अपना वर्चस्व स्थापित किया है। जहाँ सोशल मीडिया सूचना क्रांति के नवीनतम साधन के रूप में विकसित हुआ है वहीं प्रौद्योगिकी की दुनिया में हिंदी अपना स्थान बना रही है। यह बिल्कुल स्पष्ट है कि मीडिया की लोकप्रियता उसके प्रयोगकर्ताओं की संख्या पर निर्भर करती है। इस दृष्टि से सोशल मीडिया पर हिंदी भाषा का वैभव बढ़ता हुआ नज़र आता है और यह विदित हो रहा है कि आगामी समय में हिंदी इंटरनेट पर प्रयोग होने वाली लोकप्रिय भाषाओं में से एक होगी। सोशल मीडिया के फैलाव से हिंदी का हित ही हो रहा है, बस ज़रूरी यह है कि इस माध्यम पर हम अपनी भाषा को लेकर चलें।

संदर्भ—

1. आजकल, जुलाई 2016, पृ.-13
2. आजकल, जुलाई 2016, पृ.-16
3. मीडियाकालीन हिंदी-स्वरूप एवं संभावनाएँ—डॉ. अर्जुन चह्वाण, पृ.क्र.-201
4. www.adageindia.in/media
5. नया ज्ञानोदय, सितंबर, 2015 पृ.-67

कोल्हापुर, भारत
varsha.sahadev@gmail.com

24

वेब मीडिया और हिंदी

— डॉ. मुकेश कुमार मिरोठा

''इस शताब्दी के आगमन तक सामाजिक परिवर्तन इतना धीमा था कि किसी व्यक्ति के पूरे जीवनकाल में उस पर कोई ध्यान ही नहीं जाता था। अब ऐसा नहीं है। परिवर्तन की रफ़्तार इतनी बढ़ गई है कि हमारी कल्पना शक्ति भी उसके साथ नहीं चल सकती है।''

—सी.पी. स्नो

वैज्ञानिक और उपन्यासकार

मानव जाति का इतिहास पाषाण युग को पार करता हुआ 'क्लिक युग' एवं 'टच युग' में पदार्पण कर चुका है। सामाजिक परिवर्तन का यह दौर सार्वभौमिक रूप में सदैव विद्यमान रहा है किंतु आज संपूर्ण विश्व मीडिया के बड़े धमाके अर्थात मीडिया के तेज़ प्रसार से कम्पायमान है, दोलायमान है। परिवर्तन की इन लहरों की तेज़ी आश्चर्यचकित करती है क्योंकि इसके कारण समाज, संस्कृति यहाँ तक कि हमारे विचारों तक में बदलाव आया है। वस्तुत: यह 'सूचना समाज' के आगमन को संकेतित करता है जहाँ इससे प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से जुड़ा प्रत्येक इंसान 'सूचना-साइनबोर्ड' के रूप में नज़र आता है। सूचना तकनीक की नवीन उपलब्धियाँ संचार माध्यमों को हम तक पहुँचाने के साथ-साथ सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रियाओं को भी नए रूप प्रदान कर रही है। प्रौद्योगिकी के इस दौर में मीडिया एक शक्तिशाली माध्यम के रूप में उभरा है। इसके प्रति लोगों का आकर्षण प्रतिदिन बढ़ता ही जा रहा है। परंपरागत प्रिंट माध्यम के मुकाबले 'न्यू मीडिया' का तेज़ी से विस्तार हुआ है। भूमंडलीकरण, निजीकरण, बाज़ारवाद और सूचना-विस्फोट के कारण मीडिया का दायरा काफ़ी विस्तृत हुआ है। एक स्वतंत्र मीडिया लोकतंत्र का प्राण होता है, अत: सशक्त जनमाध्यम भारत जैसे लोकतांत्रिक देशों के लिए आवश्यक भी हो जाता है। जनता एवं सरकार को उसकी ज़िम्मेदारी का एहसास दिलाकर मीडिया ने अपनी भूमिका का सफल निर्वहन किया है।

जन्म : 01.11.1980
शिक्षा : बी.ए, एम.ए, एम.फिल, पीएचडी।
शोध विषय : 'जगदीशचंद्र के उपन्यासों में अभिव्यक्त ग्राम्य जीवन के बदलते स्वरूप का अध्ययन'।
उदयपुर, नांदेड, इलाहाबाद, यमुना नगर, मुंबई, चुरू आदि जगहों पर आयोजित राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय सेमिनार में आपकी रचनात्मक सहभागिता रही तथा दलित, स्त्री, अल्पसंख्यक और मीडिया विमर्श से आपका गहरा जुड़ाव रहा।
प्रकाशन : पत्र-पत्रिकाओं में आलेख छपते रहते हैं। स्वाधीनता संग्राम काल के अचर्चित कवियों की कविताओं पर आलोचनात्मक पुस्तक शीघ्र प्रकाशित।
संप्रति : सहायक प्रोफेसर हिंदी विभाग, जामिया मिल्लिया इस्लामिया, नई दिल्ली।

कागज़ और कलम रहित माध्यम के रूप में पहचान रखनेवाला वेब मीडिया सामाजिक संदर्भों से अछूता नहीं रह पाया है। भाषा भी सामाजिक व्यवहार की वस्तु है, अत: सामाजिक संदर्भों के साथ उसमें भी परिवर्तन आता है। भाषा मानवता के लिए सबसे बड़ा वरदान है। प्रत्येक भू-भाग की भाषा उस देश की संस्कृति, विचार-प्रणाली और कार्य-पद्धति से संबंधित होती है। भाषा विचारों को दूसरों तक पहुँचाने का साधन भी है। ब्रिटिश राज के दौरान अंग्रेज़ी समाचार पत्रों का वर्चस्व कायम था। स्वतंत्रता पश्चात हिंदी के एवं उसके बाद अनेक क्षेत्रीय भाषाओं के समाचार पत्रों ने आशातीत प्रगति की। इसे 'मौन' या 'मूक-क्रांति' का नाम दिया गया। आधुनिक मीडिया में भी भाषिक स्तर पर इसी तरह की एक क्रांति चल रही है। वस्तुत: प्रत्येक शब्द की अपनी सत्ता होती है। विभिन्न सामाजिक संदर्भों में भाषा का स्वरूप एक

समान नहीं रहता है। इस तरह हम कह सकते हैं कि भाषाओं की प्रकृति लचीली होती है, अत: किसी भी भाषा से कोई भी काम लिया जा सकता है। कमोबेश यही स्थिति मीडिया के संदर्भ में 'हिंदी' को लेकर नज़र आती है। हिंदी के महान प्रचारक, डॉ. मोटूरि सत्यनारायण ने हिंदी के ऐसे रूप को 'जनसंचारी हिंदी' कहा है जिसमें पत्रिका, विज्ञापन और संचार माध्यमों में प्रयुक्त होनेवाला भाषा रूप हो। मीडिया में हिंदी का जो रूप हमें दिखाई देता है उसमें कई शैलियाँ अंतर्निहित होती हैं।

भाषा और संस्कृति का घनिष्ठ संबंध होता है। यदि साहित्य को समाज का दर्पण माना जाता है तो भाषा को संस्कृति का दर्पण समझने में कोई परेशानी नहीं होनी चाहिए। वर्तमान में जब चारों तरफ़ 'मीडिया कल्चर' का शोर हो तो भाषा और मीडिया के संबंधों का अध्ययन आवश्यक हो जाता है। मशहूर विचारक, सच्चिदानंद सिन्हा भाषा और संस्कृति के रिश्तों की पड़ताल करते हुए लिखते हैं, ''भाषा जो प्रतीकों का समुच्चय होती है, संस्कृतियों के संकलन और संप्रेषण का सबसे सबल माध्यम होती है। चूँकि संप्रेषण आम बोलचाल की भाषा के अलावा नृत्य, संगीत, ललित कला और काव्य की भाषाओं के माध्यम से भी होता है बल्कि अधिक सशक्त रूप से।'' यहाँ हम संप्रेषण के एक और सबल माध्यम 'वेब मीडिया' का भी नामोल्लेख कर सकते हैं। वस्तुत: वेब मीडिया अपने आप में एक स्वतंत्र विश्वविद्यालय है जहाँ प्रत्येक भाषा का स्वतंत्र विभाग है। भाषा के बंधनों का यहाँ कोई स्थान नहीं है। अपितु 'फ़ीडबैक' और 'सहभागिता' जैसे तत्व इसे संपूर्ण ही बनाते हैं। जहाँ शब्द की सत्ता हमें ज्ञान से परिचय कराती है वहीं संचार माध्यम हमें जानकारी देने का कार्य करते हैं। शब्द की सत्ता का प्रधान केंद्र साहित्य को माना जाता है। अत: साहित्य शाश्वत रहता है और मीडिया सद्य: प्रभावकारी रूप में दिखता है। आलोचक, ब्रह्मस्वरूप शर्मा इसे गंभीरता बनाम सरलता का सवाल मानते हुए प्रत्युत्तर में लिखते हैं, ''गंभीरता के नाम पर क्लिष्टता और सरलता के नाम पर बाज़ारूपन कभी वांछनीय नहीं रहे। न साहित्य सरलता का विरोधी रहा है और न ही संचार माध्यम गंभीरता के। वस्तुत: संचार माध्यम सहज-सरल भाषा में इतनी गंभीर बात कह जाते हैं कि उसकी दार्शनिक विवेचना की आवश्यकता होती है।'' हम कह सकते हैं कि संचार माध्यम इस तरह से अपने को जनता की भाषा में, जनता के वर्तमान संदर्भों से जोड़कर रख पाता है। आधुनिक ज्ञान प्राप्ति में वेब मीडिया की इस भूमिका से इंकार नहीं किया जा सकता है। अत: वेब मीडिया और भाषा एक-दूसरे के सहयोगी माने जा सकते हैं। इस संदर्भ में भारत के परिप्रेक्ष्य में हिंदी और वेब मीडिया के आपसी संबंधों की पड़ताल ज़रूरी हो जाती है।

वर्तमान समय में हिंदी की स्थिति भारत के वेब मीडिया के संदर्भ में संतोषजनक मानी जा सकती है। फिर भी हमारा प्रयास होना चाहिए कि भविष्य में इसकी स्थिति और मज़बूत बने। तमाम अवरोधों, कठिनाइयों के बावजूद हिंदी ने वेब मीडिया में अपना महत्वपूर्ण स्थान बना लिया है। हिंदी की ग्राह्यता, सामासिक सौंदर्य, साहित्य तथा व्यवहार का लचीलापन उसकी उदारता के प्रतीक एवं परिचायक हैं। हिंदी की समन्वित भावना के महत्व को बताते हुए 'जर्मन रेडियो डॉयचे वेले' के विद्वान डॉ. श्लैंडर लिखते हैं, ''भाषा लोगों के बीच संवाद का माध्यम है, बोलचाल के दौरान विकसित होती है। भारत जैसे विशाल देश में जहाँ हिंदी एक व्यापक क्षेत्र में बोली जाती है, शब्दों का विकास अलग-अलग परिवेश और भावना के समन्वय से हो रहा है। तेज़ी से करीब आते विश्व में नए शब्दों की ज़रूरत हो रही है, उनकी रचना की जा रही है।'' डॉ. श्लैंडर यहाँ हिंदी की उदार, सहज स्वीकार्य शैली की प्रशंसा करते हैं। हिंदी का दायरा विस्तृत है, यही उसका सबसे बड़ा गुण माना जा सकता है। वेब मीडिया में हो रहे भाषिक संक्रमण के कारण शुद्धतावादी लोग हिंदी को बचाने की वकालत करने लगते हैं। ऐसे लोग यह भूल जाते हैं कि हिंदी इतनी कमज़ोर भाषा नहीं है कि अन्य भाषा के चंद शब्द उसे भ्रष्ट या खराब कर दें। हिंदी तो बहती हुई नदी के समान है जिसे किसी भी तरह का बंधन या मानक रोक नहीं सकता है। अगर रोकने की कोशिश भी की जाती है तो वह तमाम बंधनों को तोड़ने का दम भी रखती है। हिंदी की यही विशेषता उसे वेब मीडिया के अनुकूल और उपयोगी बनाती है।

इलेक्ट्रॉनिक मीडिया में संपादक, समाचार संपादक, उपसंपादक आदि पद होते हैं जो भाषिक त्रुटियों को दूर करने का कार्य करते हैं। इसलिए इन्हें इलेक्ट्रॉनिक मीडिया का द्वारपाल भी कहा जाता है। मीडिया की व्यापक दुनिया में अब कई ऐसे माध्यम भी हैं जहाँ तक इन द्वारपालों की पहुँच मुमकिन नहीं है। 'ब्लॉग' एक ऐसा ही माध्यम है जो तमाम तरह के द्वारपालिक अवरोधों से मुक्त है। 'ब्लॉग' के माध्यम से कोई भी व्यक्ति, किसी भी वक्त अपनी बात को करोड़ों लोगों तक पहुँचा सकता है। उसके इस कार्य में भाषा की अहम भूमिका होती है। अत: वह अपनी समझ, स्तर के आधार पर अपनी भाषा का चयन करता है। ध्यान देने योग्य है कि यहाँ वह 'ब्लॉगर' मानकों का पालन करने या न करने में पूरी तरह स्वतंत्र होता है। यही वजह है कि वेब मीडिया में हिंदी की अनेक

शैलियाँ मिलती हैं। कहीं संस्कृतनिष्ठ या साहित्यिक हिंदी, कहीं उर्दू-फ़ारसी मिश्रित हिंदी, कहीं सामान्य हिंदी, कहीं ग्रामीण हिंदी, कहीं लोक-बोली के रंग में रंगी हिंदी, कहीं क्षेत्रीय भाषायुक्त हिंदी और कहीं-कहीं तो 'हिंग्लिश' हिंदी का भी प्रयोग मिलता है। हिंदी की उक्त शैलियाँ आजकल पूरे वेब मीडिया के परिदृश्य पर छाई हुई हैं। इतनी विभिन्न शैलियों के बावजूद हिंदी सुरक्षित है क्योंकि शब्दों की भावना या उसका अर्थ महत्वपूर्ण होता है। प्रयोगकर्ता इस तरह की हिंदी का प्रयोग अपने समूह के साथ करता है क्योंकि यहाँ उसका मकसद केवल अर्थ समझाना होता है। शब्द मर्मज्ञ, महावीर प्रसाद द्विवेदी कहते भी थे कि, ''यह न देखना कि यह शब्द अरबी है या फ़ारसी या तुर्की, देखना सिर्फ़ यह है कि इस शब्द, वाक्य या लेख का आशय अधिकांश पाठक समझ लेंगे या नहीं।'' वेब मीडिया और हिंदी के संबंध में उक्त वाक्य समीचीन प्रतीत होता है।

हिंदी भाषा का संबंध हमारी संस्कृति और संस्कारों से है। हिंदी देश को जोड़नेवाली भाषा भी है। वेब मीडिया का एक उद्देश्य प्रकारांतर से यही नज़र आता है। हम सब इसकी सहायता से अपने विचारों का विनिमय करते रहते हैं। यह सहज रूप से गतिशील प्रक्रिया है। भारत की लगभग 70 प्रतिशत जनता हिंदी भाषा को केवल समझने में ही नहीं, उसमें से अधिकतर लोग इसे पढ़ने-लिखने में भी सक्षम हैं। हिंदी अखबारों, इंटरनेट साइट्स, पुस्तकों, फ़िल्मों, चैनल्स (न्यूज़ एवं मनोरंजक दोनों) की बढ़ती संख्या इसका प्रमाण भी है। इसका एक और प्रमाण वेब मीडिया में बढ़ता हिंदी का प्रभाव है। हिंदी के विकास में वेब मीडिया के योगदान को नकारा नहीं जा सकता है। अब हिंदी और वेब मीडिया भी एक-दूसरे के प्रति समरस भाव रख रहे हैं। प्रसिद्ध साहित्यकार अशोक वाजपेयी इसके लिए हिंदी को आधुनिकता की तरफ़ ले चलने की बात कहते हैं, ''हिंदी को अपनी सारी आधुनिकता के साथ उन सब नई विधियों और यंत्र व्यवस्था से समरस होना चाहिए जो आज की दुनिया में जनसंचार और संप्रेषण के क्षेत्र में सक्रिय हैं।'' आज हिंदी ने अपने को वेब मीडिया के लिए उपयुक्त बना लिया है। 'आजतक' चैनल के पूर्व न्यूज़ डायरेक्टर, कमर वहीद नकवी के अनुसार 1995 के बाद मीडिया की भाषा काफ़ी बदली है और अब भाषा पर एक बार फिर विचार होना चाहिए। हिंदी के कुछ आचार्य भी हिंदी के इस बदलते स्वरूप और बाज़ारीकरण, मीडियाकरण पर सवाल उठाते हैं। मेरा मानना है कि वेब मीडिया के इस युग में हिंदी भाषिक दीवारों को गिराकर हृदयों को जोड़ने का महती कार्य कर रही है। हिंदी ने जन-जीवन में व्याप्त अपनी ताकत को पहचानकर वेब मीडिया में अपनी जगह बना ली है। हिंदी के विद्वान भारत यायावर इस संदर्भ में लिखते हैं, ''आप देखें कि आज मीडिया, सिनेमा, दूरसंचार में हिंदी ने भारत के बाज़ार में अंग्रेज़ी को पटखनी दे दी है। भले राजभाषा के रूप में वह दूसरे स्थान पर रहे पर जन-जीवन में उसी की धुन बजती रहेगी।'' हिंदी की यह ताकत उसकी पहचान भी है और उसके संदर्भों को समझने में सहायक भी।

वेब मीडिया पर हिंदी के बढ़ते प्रसार एवं उसकी रूपगत विविधताओं ने हिंदी भाषा के शुद्धतावादी लोगों को परेशान कर दिया है। यह अंध-भाषावाद और फ़ासीवाद का उदाहरण माना जा सकता है। हिंदी के वेब मीडिया पर मानकीकरण या शुद्धतावादी रूप का विरोध अपने तरीके से करना चाहिए। इसके लिए आक्रामक होने की ज़रूरत नहीं है। तर्क का उत्तर तर्क से दिया जा सकता है। वैसे भी तकनीकी दुनिया में मानकों की स्थिति बहुत अच्छी नहीं है। अंग्रेज़ी को टाइप करने का एक ही 'कीबोर्ड' है लेकिन हिंदी में ऐसी स्थिति नहीं है। हिंदी में टाइप करने के लिए अनेक 'कीबोर्ड' उपलब्ध हैं। अब तो ऐसे सॉफ़्टवेयर भी उपलब्ध है जो आपके अंग्रेज़ी या रोमन में लिखे शब्दों को तुरंत हिंदी में अनुवादित कर देते हैं। विस्टा, इंस्क्रिप्ट, यूनिकोड, गूगल आदि ने अपने संशोधित एवं विकसित 'कीबोर्ड' हिंदी के लिए बनाए हैं ताकि हिंदी वेब मीडिया के दौर में पिछड़ न जाए। अगर हम अंग्रेज़ी या अन्य भाषाओं के किंचित शब्दों का प्रयोग वेब मीडिया में हिंदी के साथ करते हैं तो विवाद नहीं होना चाहिए। जब हम ब्रज, अवधी, मैथिली आदि बोलियों के शब्दों को हिंदी में जगह दे सकते हैं तो अंग्रेज़ी या अन्य भाषाओं के कुछ शब्दों के प्रयोग में आपत्ति नहीं होनी चाहिए। वैसे भी हिंदी जन्म देती है, शब्दों को पालती-पोषती है, वह शब्दों की हत्या नहीं कर सकती। अत: उसका आधुनिक रूप हमें स्वीकार्य होना चाहिए। भाषाविहीन समाज के इस युग में जहाँ चारों तरफ़ अजनबीपन, अकेलापन, कुंठा का आक्रमण हो वहाँ भाषा में आई कुछ त्रुटियों को क्षम्य होना चाहिए। आज की युवाशक्ति, छात्र शक्ति और पढ़ा-लिखा वर्ग अपनी सामर्थ्य और शक्ति के अनुसार वेब मीडिया का उपयोग करता है, अत: इस वर्ग को हमें तमाम भ्रांतियों से मुक्त रखना होगा। उत्तर आधुनिकता के अध्येता सुधीश पचौरी हिंदी की नौजवान पीढ़ी का आह्वान करते हुए लिखते हैं, ''हिंदी की नौजवान पीढ़ी उत्तर आधुनिक समाज में रहती है। वह मीडिया, तकनीक, बाज़ार में रहती है। इसलिए उत्तर आधुनिकता उसके जीवन से काफ़ी नज़दीक है।'' हिंदी की

नौजवान पीढ़ी ने वेब मीडिया को समृद्ध करने का कार्य किया है। हिंदी एवं उसके उपयोगकर्ताओं की अनेकरूपता के बावजूद हिंदी का मीडिया से सह-संबंध सराहनीय है।

भाषा का एक उद्देश्य एक-दूसरे तक अपनी बात पहुँचाना भी होता है। वह दूसरों की बात समझने और अपने मनोभावों को दूसरों तक पहुँचाने का माध्यम होती है। एक भाषा का विकास कभी भी दूसरी भाषा के विकास में बाधक नहीं बनता। कोई भी भाषा प्रसंगानुसार अन्य भाषाओं तथा प्रचलित लोक बोलियों के शब्दों के प्रयोग से और अधिक संपदाशील बनती चली जाती है। आधुनिक परिवारों में तो प्रत्येक सदस्य की भाषा अलग-अलग होती है। मेरे दादा जी 'हाडौती' बोलते थे, ''पिता जी जयपुरी, मैं हिंदी और मेरा बेटा अंग्रेज़ी बोलता है।'' बोली भाषा का यह सहज-सरल रूप हमें आज सर्वत्र दिखाई पड़ता है। शीशा, बटन, क्रिकेट, शर्ट, पिज़्ज़ा, सैंडविच, पास्ता, मोमोज़, पराठा, बिस्किट आदि कई तरह के हज़ारों शब्द सहज रूप से हिंदी में खप गए हैं तो हमें भी अपना पांडित्य-प्रदर्शन छोड़कर उनका स्वागत करना चाहिए। किसी भी भाषा में जान-बूझकर इतर भाषाओं के शब्दों को ठूँसना भी अनुचित है। इससे भाषा का विकास अवरुद्ध होता है। सिनेमा एवं मीडिया ने इस तरह के कई शब्दों को हमारी ज़ुबान का हिस्सा बना दिया है। हिंदी सिनेमा में कई फ़िल्मों एवं गीतों के शब्दों में हिंदी से इतर भाषाओं के शब्दों की बहुतायत है। वेब मीडिया पर भी इसकी प्रतिच्छाया पड़ी है। वर्तमान मीडिया अनेक नवीन शब्दों का निर्माण कर रहा है जिनमें से कई गलत भी होते हैं। पौधारोपण, चौड़ीकरण ऐसे ही शब्द हैं। वस्तुत: मीडिया अपने आप में भाषा-निर्माता भी होता है, अत: उसे अपनी भूमिका का सही तरीके से निर्वाह करना चाहिए। मशहूर भाषाविद, ओमप्रकाश केजरीवाल जनसंचार एवं भाषा के रिश्तों पर प्रकाश डालते हुए लिखते हैं, ''ऐसी परिस्थिति में हममें से जो जनसंचार माध्यम से जुड़े हुए हैं, उनका क्या यह कर्तव्य नहीं हो जाता कि अपनी भाषा का सही-सही प्रयोग करें? मैं पहले ही कह चुका हूँ कि आज की परिस्थितियों में मीडिया ही भाषा की जननी है।'' श्री केजरीवाल यहाँ मीडिया से जुड़े लोगों को भाषा के उपयोग के प्रति आगाह करते हैं और उनकी भूमिका को इसके केंद्र में लाते हैं।

वेब मीडिया से जुड़े लोगों को अन्य लोगों से एक रिश्ता बनाना होता है। प्रिंट, रेडियो, टी.वी., नेट आदि अपने से जुड़े लोगों से अंतरंग एवं अनूठा रिश्ता बनाए रखते हैं लेकिन इन सब की भाषा अलग-अलग होती है। टी.वी. पर तो शारीरिक भाषा की भी महत्वपूर्ण भूमिका है। मानवीय संवेदना के स्तर पर सभी माध्यम एक जैसे दिखाई देते हैं। टी.वी. पर हिंदी भाषा में विस्तार की गुंजाइश नज़र नहीं आती है किंतु वेब मीडिया में भाषा निरंतर गतिशील, परिवर्तनशील रहती है जिससे बोधगम्यता बनी रहती है। वेब मीडिया ने शब्दों के साथ-साथ अपनी सोच को भी बदलने की कोशिश की है। हिंदी के कठिन शब्दों की जगह उनके सरल रूप का प्रयोग इसकी एक बानगी मानी जा सकती है। वेब मीडिया ने तकनीक से संबद्ध अनेक दिक्कतों को दूर करने की भरसक कोशिश की है। वस्तुत: वेब मीडिया पर भाषा संबंधी चर्चा बहुत कम की जाती है, अत: ज़्यादातर मामलों में हिंदी भाषा का मसला गौण ही रह जाता है। वेब मीडिया पर भाषा-विमर्श की शुरूआत होनी चाहिए। कठिन एवं तत्सम शब्दों की जगह सरल रूपों से काम चलाया जा सकता है किंतु यह भी ध्यान रखा जाना चाहिए कि कहीं हम शब्द की आत्मा को तो नहीं मार रहे। टी.वी., सिनेमा एवं वेब मीडिया में हिंदी के साथ रोज़ छल होता है, इस पर भी ध्यान देने की आवश्यकता है। इस प्रसंग में प्रसिद्ध टी.वी. उद्घोषक एवं संपादक, आशुतोष का यह कथन याद आता है कि, ''हिंदी की जितनी सेवा टी.वी. ने की है, उतनी साहित्य ने नहीं।'' आशुतोष के इस कथन को अतिवादी बयान के अतिरिक्त कुछ नहीं माना जाना चाहिए और मीडिया को इस तरह के विवादों से दूर ही रहना चाहिए। अगर वे हिंदी की सेवा कर ही रहे हैं तो इसमें गलत क्या है? अत: मीडिया से जुड़े लोगों को ऐसी बातों से किनारा करके भाषा का समुचित विकास करना चाहिए। उनके ऐसे सार्थक प्रयासों से ही वेब मीडिया एवं हिंदी भाषा, दोनों की उन्नति संभव होगी।

वेब मीडिया वर्तमान समय में हिंदी भाषा के प्रचार-प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। वेब मीडिया किसी भी सर्च इंजन पर 'क्लिक' करते ही हिंदी का अमूल्य, अनंत संसार हमारे सामने उपस्थित कर देता है। वेब मीडिया ने हिंदी को गौरवपूर्ण स्थान दिलाने में सहयोग किया है। वेब मीडिया के प्रभावस्वरूप ही आज भारत के अलावा और भी कई देशों में हिंदी से संबंधित कार्य हो रहे हैं। हिंदी नेक्स्ट, अनुभूति, अभिव्यक्ति, गीत-कविता, कारवां, तस्लीम, मोहल्ला लाइव, कस्बा, छींटे एवं बौछारें, तीसरा खंभा आदि अनेक साइट्स हिंदी को विश्व भर में पहुँचाने का कार्य कर रही हैं। विदेशों में भी अब हिंदी सभाएँ एवं गोष्ठियाँ, सम्मेलन, पुरस्कार समारोह आदि आयोजित होने लगे हैं। इन सब की सूचना हमें वेब मीडिया द्वारा पलक झपकते ही मिल जाती है। कई अखबार एवं पत्र-पत्रिकाएँ ऑनलाइन निकलने लगी हैं। नई-नई संस्थाएँ

दिन-प्रतिदिन वेब मीडिया के माध्यम से हिंदी की सेवा करने में निरंतर संलग्न हैं। आज शिक्षा से जुड़ा प्रत्येक माध्यम वेब मीडिया पर उपलब्ध है। विज्ञान, स्वास्थ्य, साहित्य, फ़िल्म, समसामयिक, वित्त, महिला, बाल, पुरुष, सौंदर्य, शिक्षा, ज्योतिष, सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, व्यापार, सरकारी एवं निजी संस्थान, खाना-खज़ाना, खेल, पर्यटन, ग्रामीण, क्षेत्रीय, निजी पृष्ठ आदि विविध विषयों पर समुचित सामग्री आज वेब माध्यम पर हिंदी में सर्वसुलभ हैं। विभिन्न प्रकार की पत्र-पत्रिकाएँ, अखबार आदि निरंतर अपने को अपडेट करते रहते हैं ताकि कोई भी हिंदी जाननेवाला वैश्विक परिदृश्य में स्वयं को हिंदी से जुड़ा हुआ महसूस कर सके। अद्यतन जानकारी उसकी अपनी भाषा में उसे मिलती रहे, यही वेब मीडिया की सफलता का एक प्रमाण भी है।

वेब मीडिया ने विश्व में हिंदी को प्रस्थापित करने का भी कार्य किया है। गूगल ने अहिंदी-भाषियों के लिए 2007 में हिंदी में ट्रांसलेटर प्रोग्राम लॉन्च करके सराहनीय कार्य किया है। इसके बाद से वेब मीडिया में हिंदी का दायरा और भी ज़्यादा विस्तृत हुआ है। 'इंडिब्लॉगर' नामक संस्था (यह भारतीय ब्लॉग पोर्टल को संचालित करती है) के अनुसार सन् 2010 में हिंदी में ब्लॉग की संख्या 350 थी जो 2013 में बढ़कर 1300 के लगभग हो गई है। इनमें से कई ब्लॉग छोटे शहरों एवं कस्बों से संचालित होते हैं। इनकी भाषा में हिंदी की जीवंतता एवं माटी की महक मिलती है। हिंदी में कई ब्लॉग तो ऐसे हैं जो रोज़ाना 500 से ज़्यादा विज़िटर्स द्वारा हिट किए जाते हैं। एलेक्सा (वेबसाइट्स की रैंक बतानेवाली सर्वाधिक प्रामाणिक पद्धतिवाली साइट) के अनुसार हिंदी की कई साइट्स ऐसी हैं जिन्होंने विज़िटर्स की संख्या की दृष्टि से नवीन रिकॉर्ड बनाए हैं। इस साइट ने हिंदी ब्लॉग की एक रैंक बनाई है जो इस प्रकार है—

1. छींटे एवं बौछारें
2. कस्बा
3. तीसरा खंभा
4. मेरा पन्ना
5. उड़नतश्तरी
6. इधर-उधर की
7. हिंदी ब्लॉग
8. सारथी
9. नुक़्ता-चीनी
10. मोहल्ला

इनके अलावा भी कई ब्लॉग हैं जो हिंदी की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। ऐसे ब्लॉगों में विज्ञान आधारित (तस्लीम, आधारभूत ब्रह्मांड, विज्ञान) स्त्री-विमर्श पर आधारित (नारी, चोखेर बाली, औरत की हकीकत) वाद-विवाद, वार्तालाप, समाज, राजनीति, सिनेमा, साहित्य, मीडिया आधारित (मोहल्ला लाइव, कस्बा, संवाद समूह, हिंद-युग्म समूह, परिकल्पना, महाजाल, जील आदि) बच्चों के लिए (बालमन) आदि प्रमुख हैं। इनकी निरंतर बढ़ती संख्या हिंदी की ताकत को बढ़ाने का कार्य कर रही है। भारत में हिंदी अनुवाद का बढ़ता क्षेत्र भी वेब मीडिया एवं हिंदी के परस्पर संबंधों की देन माना जा सकता है। यह वेब मीडिया का बढ़ता प्रभाव ही माना जा सकता है कि हिंदी माध्यम अब बाज़ार के लिए भी ज़रूरी हो गया है। हिंदी माध्यम से शिक्षित आधुनिक युवा विभिन्न कॉलसेंटर्स, प्रकाशन घरों, देश-विदेश में शिक्षा प्रदान कर अपनी सेवाएँ दे रहे हैं। हिंदी की बढ़ती माँग और वेब मीडिया की सूचनाप्रदायी शैली ने हिंदी को बाज़ार की मुख्य भाषा बना दिया है। हिंदी-भाषी होने का शर्मबोध अब खत्म होने लगा है। आज का युवा हिंदी की ताकत को पहचान चुका है। वह जान गया है कि हिंदी-भाषी होना अब शर्म नहीं, गौरव का प्रतीक है। विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र की सबसे ज़्यादा बोली जानेवाली भाषा में अब रोज़गार के अवसरों की भरमार है। अच्छे वेतन के साथ तमाम तरह की सुविधाएँ अब इनको मिलने लगी हैं। अब हिंदी-भाषियों में वेब मीडिया की सार्थक भूमिका के कारण आत्मविश्वास दिखने लगा है। वे अब अपने पर एवं अपनी भाषा पर पूर्णत: यकीन करने लगे हैं। अंग्रेज़ी न जानने की कुंठा वेब मीडिया के हिंदी स्वरूप के समक्ष तिरोहित हो रही है। जब से हिंदी बाज़ार की भाषा बनी है, मीडिया की भाषा बनी है तब से हम अपनी भाषा की इज़्ज़त करने लगे हैं। अब हममें भी भाषा के प्रति गर्व की भावना पैदा होने लगी है। वेब मीडिया की भाषा बनकर हिंदी ने सोने पे सुहागावाली बात को सार्थक सिद्ध कर दिया है। अत: आज नेता, अभिनेता, लेखक आदि सभी वेब मीडिया की इस ताकत का अपने-अपने तरीके से उपयोग करने में लगे हुए हैं।

वेब मीडिया के आगमन से पूर्व साहित्यकार अपनी कृतियों को पाठकों तक पहुँचाने के लिए मंच एवं जान-पहचान का सहारा लेते थे। विभिन्न प्रकाशकों एवं विश्वविद्यालयों के चक्कर काटा करते थे ताकि अपनी कृति को ज़्यादा से ज़्यादा पाठकों तक पहुँचा सकें। वेब मीडिया के पदार्पण ने लेखकों एवं प्रकाशकों, दोनों को सुविधाएँ प्रदान की हैं। अब कई साधनहीन मगर वैचारिक, रचनात्मक प्रतिभा के धनी लेखक गुमनामी के अँधेरे से निकलकर वेब मीडिया के प्रकाश से चमक रहे हैं। उनकी अद्वितीय प्रतिभा अब प्रकाशकों की मनमर्ज़ी का शिकार नहीं रह गई है। अब वे अपने लेखन को सीधे पाठकों तक पहुँचा रहे हैं। इसके लिए वेब मीडिया ने उन्हें अनेक मार्ग सुझाए हैं जिनमें ब्लॉग, यूट्यूब, फ़ेसबुक, गूगल प्लस, ट्विटर आदि प्रमुख हैं। लिखित सामग्री के साथ-साथ अब लेखक

ऑनलाइन एवं लाइव दृश्य-प्रस्तुति द्वारा भी अपनी बात सीधे पाठकों तक पहुँचाने में भी समर्थ है। उन्हें अब तुरंत ही प्रतिक्रिया भी मिल जाती है। यही न्यू-मीडिया वर्तमान साहित्य को नए क्षेत्रों तक ले जा रहा है। अब कोई भी व्यक्ति अपने रचनात्मक अवदान को बिना किसी संघर्ष के वेब मीडिया के माध्यम से लोगों तक कभी भी कहीं भी सुलभ करा सकता है।

साहित्य से जुड़े अनेक लोग निरंतर स्तरीय सामग्री का प्रकाशन वेब मीडिया पर कर रहे हैं। अब तो वेब मीडिया पर इनका अलग पाठक वर्ग भी तैयार हो चुका है जो साहित्यिक भाषा को वरीयता देता है लेकिन हमें यह ध्यान रखना होगा कि वेब मीडिया के अधिकतर पाठक कठिन हिंदी को समझने में असमर्थ होते हैं, अत: उनके लिए जटिल शब्दों की जगह आम बोलचाल की सरल हिंदी का प्रयोग करना चाहिए। प्रकाशनार्थ, यथाचित, किंचित, यद्यपि, आरोपण, निरूपण आदि शब्दों के प्रयोग में विशेष सावधानी बरतनी चाहिए। अगर ऐसा नहीं होता है तो आम पाठक तादात्म्य स्थापित नहीं कर पाता और उकताकर अन्य मनोरंजक साइट्स पर चला जाता है। हमें भी दलाल, दल्ला, भड़ुआ, कमीना, नपुंसक एवं अन्य समानार्थी शब्दों से बचना चाहिए। इस तरह के शब्दों के प्रयोग से हिंदी का स्तर गिरता है। 'सब्ज़ी अच्छी न बनी हो तो ज़्यादा मिर्च डाल दो' वाले प्रयोगों से हमें दूर रहना होगा। इस तरह के शब्दों के प्रयोग से हम वेब मीडिया पर अपनी उपस्थिति तो दर्ज करा सकते हैं लेकिन वह स्थायी बनी रहेगी, इसमें संदेह है।

व्यावसायिकता के इस युग में हिंदी भाषा के संदर्भ में वेब मीडिया के महत्व को समझा जा सकता है। फिर भी सूचना क्रांति के इस युग में अनेक बिंदु ऐसे हैं जिन्हें अभी तक वेब मीडिया ने स्पर्श भी नहीं किया है। इसलिए आजकल वैकल्पिक मीडिया की भी माँग उठने लगी है। हिंदी के जाने-माने आलोचक, नीरज कुमार इसकी ज़रूरत महसूस करते हुए लिखते हैं, ''सामाजिक निर्मिति के रूप में साहित्य जिस प्रकार पिछले दो-ढाई दशक में उभरनेवाली दलित-विमर्श तथा स्त्री-विमर्श की छवियों को प्रस्तुत करने में सफल हुआ है वहीं मीडिया इन छवियों से लगभग अछूता है। इसीलिए वैकल्पिक मीडिया की ज़रूरत आज शिद्दत से महसूस की जा रही है।'' उक्त कथन सत्य भी है क्योंकि वेब मीडिया ने अभी तक इस तरफ़ कोई ध्यान नहीं दिया है। वहाँ इस संदर्भ में स्थिति नगण्य एवं शून्य नज़र आती है। अत: दलित, मज़दूर, किसान, स्त्री, अल्पसंख्यक, आदिवासी एवं अन्य हाशिये के लोग जब तक वेब मीडिया के रडार में नहीं आ जाते तब तक भाषिक चेतना की उसकी मुहिम अधूरी ही मानी जाएगी। वेब मीडिया के समक्ष इसे चुनौती भी माना जा सकता है और उसकी कमज़ोरी भी। वेब मीडिया के माध्यम से इतिहास बनता है और अपनी शक्तियों के साथ उजागर भी होता है। हिंदी भाषा के संदर्भ में उसका योगदान अतुलनीय होने के साथ-साथ प्रशंसनीय भी रहा है। इन चुनौतियों का भी वह मुकाबला कर सकता है, ज़रूरत है तो बस थोड़े धैर्य और समय की। अंत में मैं अपनी बात प्रख्यात लेखिका हेमलता महिश्वर के इस कथन से समाप्त करना चाहूँगा, ''जब तक मनुष्य है तो संवेदना है, जब तक संवेदना है तो संवाद है, जब तक संवाद है तो जिज्ञासा है, जिज्ञासा है तो ज्ञान है, ज्ञान है तो भाषा का अस्तित्व बना ही रहेगा।'' वस्तुत: वेब मीडिया ने हिंदी भाषा को जो पंख प्रदान किए हैं, वे उसे विश्व-गगन में उड़ान भरने में सहायक हैं। वेब मीडिया और हिंदी के संबंधों की यह नई उड़ान है जिसे अब कोई भी अवरुद्ध नहीं कर सकता है।

संदर्भ:

1. भूमंडलीकरण की चुनौतियाँ, सच्चिदानंद सिन्हा, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2003, पृ.-29
2. समकालीन भारतीय साहित्य (पत्रिका) (सं. अरुण प्रकाश) आलेख—ब्रह्मस्वरूप शर्मा, साहित्य अकादमी, दिल्ली, मई-जून 2007, पृ.-144
3. हिंदुस्तान (दैनिक समाचार पत्र), डॉ. श्लैंडर, नई दिल्ली, 08-02-99
4. सूचना प्रौद्योगिकी और समाचार पत्र, रविन्द्र शुक्ला, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, 2008, पृ.-53
5. बहुवचन (सं. अशोक मिश्र), आलेख-भारत यायावर, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा (महाराष्ट्र), जुलाई-सितंबर 2013, पृ.-26
6. हिंदुस्तान (दैनिक समाचार पत्र), सुधीश पचौरी, नई दिल्ली, 13-04-2003
7. राजभाषा हिंदी, ओमप्रकाश केजरीवाल, प्रकाशन विभाग, दिल्ली, 1998, पृ.-321
8. अनभै सांचा (सं. द्वारिका प्रसाद चारू मित्र), आलेख-नीरज कुमार, दिल्ली, जुलाई-सितंबर, 2008, पृ.-95
9. संधान, (सं. सुभाष गाताडे) आलेख-हेमलता महिश्वर, रोहिणी, दिल्ली, जनवरी 2004-मार्च, 2005 (संयुक्तांक) पृ.-146

नई दिल्ली, भारत
mirothamukesh@yahoo.in

25

हिंदी भाषा व साहित्य के विकास में अनुवाद का योगदान

—श्री अजय पुर्ति

संसार की हरेक वस्तु परिवर्तनशील है। किसी का परिवर्तन शीघ्र एवं प्रत्यक्ष होता है तो किसी का धीमा और अप्रत्यक्ष। भाषा भी परिवर्तनशील है जिसका परिवर्तन हर समाज, हर युग में होता है। किसी भी भाषा के प्रमुख घटकों—ध्वनि, शब्द, पद, वाक्य-विन्यास, वाक्य, अर्थ, शब्दावली आदि में हमेशा परिवर्तन होता आया है। किसी भी भाषा को उसके पुराने रूप से तुलना करने पर यह परिवर्तन स्पष्ट देखा जा सकता है। यह परिवर्तन मुख्यत: अलग-अलग पीढ़ियों में भी स्पष्ट नज़र आता है।

भाषा के विकास को कई कारण प्रभावित करते हैं। विभिन्न सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक आदि कारणों से भाषाएँ हर युग में अपना रूप बदलती हैं। इनके अलावा कुछ अन्य कारक भी हैं जो भाषा के विकास में अहम भूमिका निभाते हैं। अनुवाद इनमें से एक प्रमुख कारक है। भारत जैसे बहुभाषिक-बहुसांस्कृतिक देश में इसकी उपस्थिति और महत्व एक अनिवार्य घटक है। यहाँ का प्रत्येक व्यक्ति यदि बहुभाषिक न भी हो तो द्विभाषिक अवश्य होता है। सामाजिक जीवन में भाषाई विविधता तथा सम्प्रेषण एवं ज्ञान की अनिवार्यता ने अनुवाद की आवश्यकता में वृद्धि की है। न केवल संस्कृतियों के आदान-प्रदान में बल्कि ज्ञान के प्रचार-प्रसार में भी अनुवाद ने काफ़ी प्रभावशाली कार्य किया है।

जन्मः खूँटी, झारखंड, भारत
शिक्षाः बी.ए., संत जेवियर्स कॉलेज, राँची, झारखंड, एम.ए.- जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, एमफ़िल.- जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली।
संप्रति : जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली में पीएचडी हिंदी अनुवाद के शोधार्थी। जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, दिल्ली के जर्मन अध्ययन केंद्र में मानसून सत्र 2015 में हिंदी के अतिथि प्राध्यापक के रूप में कार्य किया। वर्ष 2011 से अब तक स्वतंत्र अनुवादक के रूप में कार्यरत।

सामाजिक जीवन में हिंदी भाषा और अनुवाद

भारत में प्रत्येक राज्य में अलग-अलग भाषाएँ बोली जाती हैं। हिंदी के अलावा उनकी अपनी मातृ भाषा भी है। बड़े शहरों में हिंदी और अंग्रेज़ी दोनों ही संपर्क भाषा का कार्य करती हैं परंतु छोटे शहरों या कस्बों में हिंदी ही संपर्क भाषा है। अलग-अलग राज्यों की हिंदी भी अलग-अलग होती है जो मुख्यत: उनकी क्षेत्रीयता से प्रभावित होती है। उत्तर भारत में हिंदी की कई बोलियाँ, जैसे भोजपुरी, राजस्थानी, अवधी आदि भी विद्यमान हैं और ये बोलियाँ भी व्यक्ति की भाषा को प्रभावित करती हैं। एक राज्य के लोगों का संपर्क जब दूसरे राज्य के लोगों से होता है तो अनुवाद एक स्वाभाविक प्रक्रिया हो जाती है। इसके मेल से एक नई प्रकार की भाषा तैयार हो जाती है। यह विशेषता मुख्यत: छोटे शहरों में देखने को मिलती है। यही कारण है कि छोटे शहरों या कस्बों में हिंदी अपने मानक रूप में न होकर उस क्षेत्र की भाषा से प्रभावित लगती है। इसके अलावा हिंदी का एक और पक्ष भी है, वह है संस्कृत और उर्दू-फ़ारसी पर इसकी निर्भरता। ऐतिहासिक कारणों से हिंदी पर संस्कृत और उर्दू का बहुत ज़्यादा प्रभाव है। कुछ क्षेत्रों में संस्कृतनिष्ठ हिंदी बोली जाती है, वहीं कुछ अन्य क्षेत्रों में उर्दू का प्रभाव देखने को मिलता है जिसे हिंदुस्तानी भी कहा जाता है। इन दोनों भाषाओं के साहित्य से भी हिंदी में कई अनुवाद हुए हैं जिन्होंने हिंदी की शब्द-संपदा पर काफ़ी प्रभाव डाला है।

शहरों में भी देखा जाए तो बोलचाल की हिंदी अब अंग्रेज़ी से बहुत ज़्यादा प्रभावित हो गई है। नई पीढ़ी की जो हिंदी है उसमें अंग्रेज़ी के बहुत ज़्यादा शब्द आ गए हैं। तकनीक और कई आधुनिक उपकरणों के प्रयोग ने इस प्रकार की हिंदी के प्रयोग में वृद्धि की है। न केवल शब्द बल्कि वाक्य-संरचना भी अब अंग्रेज़ी से प्रभावित

लगती है। इस प्रयोग ने शहरी युवाओं में एक नई प्रकार की हिंदी को जन्म दिया है। कई आलोचनाओं के बावजूद इस पीढ़ी ने अपनी शब्दावली खुद तैयार की है जो निश्चित ही अनुवाद की देन है।

अनुवाद ने भाषा में कुछ नई संकल्पनाओं को भी जन्म दिया है। उदाहरण के लिए अंग्रेज़ी के 'Good Morning' तथा 'Good Night' के लिए हिंदी में 'सुप्रभात' तथा 'शुभ रात्रि' शब्द अस्तित्व में आए जबकि हिंदी में अभिवादन की पद्धति समय पर आधारित नहीं है। कहीं आलोचक इसे गलत परंपरा मानते हैं, इसके बावजूद कहीं-कहीं, जैसे हिंदी शिक्षण में इन शब्दों का प्रयोग किया जाता है क्योंकि 'नमस्कार' से समय का बोध नहीं होता। अंग्रेज़ी के अलावा उर्दू-फ़ारसी से भी कुछ शब्द हिंदी में अनूदित होकर कुछ लोगों द्वारा प्रयोग में लाए जाते हैं। इनमें प्रमुख हैं, शब्बा ख़ैर (Good Night) और अलविदा (Good Bye)। इस संदर्भ में यह भी ध्यातव्य है कि शब्दों का प्रयोग ही उसे काफ़ी हद तक जीवित भी रखता है। दिल्ली मेट्रो में 'विश्वविद्यालय' शब्द इसका अच्छा उदाहरण है। मेट्रो में 'यूनिवर्सिटी' की जगह 'विश्वविद्यालय' शब्द के प्रयोग ने इसे आम जन में लोकप्रिय बनाया है और लोगों में, विशेषकर नई पीढ़ी में 'हिंग्लिश' के बढ़ते प्रभाव के बावजूद इस शब्द को चलन में रखा है।

अनुवाद और हिंदी साहित्य

भारत में प्राचीन काल से ही अनुवाद की एक लंबी परंपरा रही है। प्राचीन भारत में संस्कृत तथा अन्य भाषाओं में लिखित सभी प्रमुख ग्रंथों का अनुवाद हिंदी के साथ-साथ अन्य देशी-विदेशी भाषाओं में हो चुका है। 'पंचतंत्र' और 'हितोपदेश' से लेकर 'रामायण', 'महाभारत' और संपूर्ण वैदिक साहित्य-वेद, पुराण, उपनिषद् आदि सभी प्रमुख ग्रंथों के कई अनुवाद हो चुके हैं। प्राचीन काल के सभी प्रमुख रचनाकार, जैसे कालिदास आदि की प्रमुख कृतियों के भी अनगिनत अनूदित ग्रंथ कई भाषाओं में उपलब्ध हैं। वास्तव में उस युग का दुर्लभ साहित्य अनुवाद के द्वारा ही सुरक्षित रहा है। आज कुछ प्राचीन भाषाएँ भले ही मृत हो गई हों परंतु उनमें लिखा गया अकूत साहित्य भंडार अनुवाद के माध्यम से ही बचा हुआ है। आज सभी ग्रंथ हिंदी में भी उपलब्ध हैं और मूल भाषा से अनभिज्ञ पाठक भी इनसे लाभान्वित हो सकते हैं। इन ग्रंथों के अनुवाद के माध्यम से भाषा के विकास में भी सहायता मिली है। संस्कृत भाषा के कई शब्द हिंदी में घुल-मिल गए हैं और आज हिंदी का एक बड़ा शब्द-भंडार संस्कृत पर ही आश्रित है।

हिंदी साहित्य में नई विधाओं एवं प्रवृत्तियों का जन्म

अनुवाद ने हिंदी साहित्य को तो समृद्ध किया ही, साथ ही इसने साहित्य में कई नई विधाओं एवं प्रवृत्तियों को भी जन्म दिया। अंग्रेज़ी के 'Novel', 'Story', 'Drama', 'Epic', 'Lyric', 'Satire', 'Biography', 'Autobiography', 'Interview', 'Travelogue' आदि ने हिंदी में क्रमशः 'उपन्यास', 'कहानी', 'नाटक', 'महाकाव्य', 'गीतिकाव्य'/'प्रगीत मुक्तक', 'व्यंग्य', 'जीवनी', 'आत्मकथा', 'साक्षात्कार', 'यात्रा वृत्तान्त' आदि की शुरूआत की। शेक्सपीयर के 'Sonnet' के अनुवाद से जहाँ हिंदी में 'गाथा' की शुरूआत हुई वहीं अंग्रेज़ी के 'Elegy' के अनुवाद से हिंदी में भी 'शोक गीत' लिखे जाने लगे। इस तरह के कई उदाहरण हैं जहाँ किसी विधा के अनुवाद के साथ-साथ लक्ष्य भाषा में भी उस विधा का प्रवेश हुआ।

अनुवाद ने हिंदी में पश्चिमी गद्य और पद्य के अनुवाद के माध्यम से हिंदी साहित्य में कई अभूतपूर्व परिवर्तन किए। भारतेंदु युग में गद्य साहित्य की जिस परंपरा का प्रवर्तन हुआ उसमें अनुवाद की बड़ी भूमिका थी। स्वयं भारतेंदु ने भी कई भाषाओं से हिंदी में अनुवाद किया। आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार ''संवत् 1925 में उन्होंने 'विद्यासुंदर नाटक' बांग्ला से अनूदित करके प्रकाशित किया। इस अनुवाद में ही उन्होंने हिंदी गद्य के बहुत ही सुडौल रूप का आभास दिया।''[1] आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने उनके 'सत्य हरिश्चंद्र' को एक बांग्ला नाटक का अनुवाद बताया है। इसके अलावा उनके कई अन्य अनूदित नाटक हैं, जैसे—'कर्पूरमंजरी', 'भारत जननी' आदि। उस युग में हिंदी नाटकों ने वस्तु के साथ-साथ काफ़ी हद तक रूप भी पश्चिमी नाटकों से ग्रहण किया, जैसा कि आचार्य शुक्ल मानते हैं। लेकिन हमारा नाट्य साहित्य बहुत कुछ आगे बढ़ा है। नाटकों के बाहरी रूप-रंग भी कई प्रकार के हुए हैं और अवयवों के विन्यास और आकार-प्रकार में भी विचित्रता आई है। ढाँचों में जो विशेषता यूरोप के वर्तमान नाटकों में हुई है, वह हिंदी के भी कई नाटकों में इधर दिखाई पड़ने लगी है, जैसे—अंक के आरंभ में और बीच में भी समय, स्थान तथा पात्रों के रंग-रूप और वेशभूषा का बहुत सूक्ष्म ब्योरे के साथ लंबा वर्णन। स्वागत भाषण की चाल

भी अब उठ रही है। पात्रों के भाषण भी अब न बहुत लंबे होते हैं, ना ही लंबे वाक्यवाले। ये बातें सेठ गोविंददास जी तथा पंडित लक्ष्मीनारायण मिश्र के नाटकों में पाई जाएँगी।[2]

नाटकों के अनुवाद के साथ-साथ रूपांतर भी हुए हैं जो अनुवाद का ही एक रूप है, जैसे—किंग लियर का 'सफ़ेद खून', मर्चेंट ऑव वेनिस का 'दुर्लभ बंधु' आदि। इन अनुवादों में पात्रों तथा वातावरण में परिवर्तन किए जाते हैं जिससे लक्ष्य भाषा के पाठक आसानी से जुड़ सकें।

अंग्रेज़ी और संस्कृत के अलावा अन्य भारतीय भाषाओं, जैसे मराठी और बंगाली से भी हिंदी में कई अनुवाद हुए। कुछ अनुवाद मूल स्रोत से न होकर अनुवाद के भी अनुवाद थे, जैसे- हैमलेट का अनुवाद 'जयंत' जो मराठी अनुवाद का हिंदी अनुवाद था।

कुछ आलोचकों ने हिंदी उपन्यासों का आरंभ ही बंगाली और मराठी उपन्यासों के अनुवादों से माना है। हिंदी में अन्य भाषाओं से अनूदित उपन्यासों के संबंध में शुक्ल जी ने लिखा है, ''संवत् 1951 तक बाबू रामकृष्ण वर्मा उर्दू और अंग्रेज़ी के भी कुछ अनुवाद कर चुके थे, जैसे—'ठगवृत्तांतमाला' (संवत् 1946) 'पुलिस वृत्तांतमाला' (1947), 'अकबर' (1948), 'अमला वृत्तांतमाला' (1951), 'चित्तौरचातकी' का बंगभाषा से अनुवाद उन्होंने संवत् 1952 में किया। .....फिर बाबू कार्तिक प्रसाद खत्री ने 'इला' (1952) और 'प्रमीला' (1953) का अनुवाद किया। 'जया' और 'मधुमालती' के अनुवाद एक-दो बरस पीछे निकले।''[3]

भाषा के विकास में भी इन अनूदित उपन्यासों ने अहम भूमिका निभाई। इन अनूदित उपन्यासों की भाषा के संदर्भ में शुक्ल जी आगे लिखते हैं— भारतेंदु प्रवर्तित प्रथम उत्थान के अनुवादकों में भारतेंदु काल की हिंदी की विशेषता बनी रही। उपर्युक्त तीनों लेखकों की भाषा बहुत ही साधू और संयत रही। यद्यपि उसमें चटपटापन न था पर हिंदीपन पूरा-पूरा था। फ़ारसी-अरबी के शब्द बहुत ही कम दिखाई देते हैं, साथ ही संस्कृत के शब्द भी ऐसे आए हैं जो हिंदी के परंपरागत रूप में किसी प्रकार का असामंजस्य नहीं उत्पन्न करते। सारांश यह कि उन्होंने 'शूरता', 'चपलता', 'लघुता', 'मूर्खता', 'सहायता', 'दीर्घता', 'मृदुता', ऐसी संस्कृत का सहारा लिया है, 'शौर्य', 'चापल्य', 'लाघव', 'मौर्ख्य', 'साहाय', 'दैर्घ्य' और 'मार्दव' ऐसी संस्कृत का नहीं।[4]

इसी तरह कहानियों के संदर्भ में भी उनका मानना है कि उपन्यासों से भी प्रचुर विकास हिंदी में छोटी कहानियों का हुआ है। कहानियाँ बहुत तरह की लिखी गईं, उनके अनेक प्रकार के रूप-रंग प्रकट हुए। इसमें तो कोई संदेह नहीं कि उपन्यास और छोटी कहानी दोनों के ढाँचे हमने पश्चिम से लिए हैं। हैं भी ये ढाँचे बड़े सुंदर।[5]

पश्चिमी साहित्य के अनुवाद ने उनकी प्रवृत्तियों का भी हिंदी साहित्य में परिचय कराया। पश्चिमी साहित्यिक प्रवृत्तियों के आधार पर हिंदी में भी कई वाद चले। इनमें प्रमुख हैं-स्वच्छंदतावाद (Romanticism), प्रतीकवाद (Symbolism), संरचनावाद, (Structuralism), यथार्थवाद (Realism) आदि। पश्चिमी साहित्य के अनुकरण पर होनेवाली रचनाओं के आधार पर भी हिंदी समेत अन्य भारतीय भाषाओं में नए शब्द प्रचलित हुए, जैसे रहस्यवाद (Mysticism), त्रासदी (Tragedy), मार्क्सवाद (Marxism) आदि। हिंदी साहित्य में छायावाद शब्द का आगमन भी इसी प्रक्रिया में हुआ, जैसा कि शुक्ल जी लिखते हैं, गुप्त जी और मुकुटधर पाण्डेय आदि के द्वारा स्वच्छंद नूतन धारा चली ही थी कि श्री रवींद्रनाथ ठाकुर की उन कविताओं की धूम हुई जो अधिकतर पाश्चात्य ढाँचे का रहस्यवाद लेकर चली थी। परंतु ईसाई संतों के छायाभास (फैंटासमाटा) तथा यूरोपीय काव्यक्षेत्र में प्रवर्तित आध्यात्मिक प्रतीकवाद (सिम्बॉलिज़्म) के अनुकरण पर रची जाने के कारण बांग्ला में ऐसी कविताएँ छायावाद कही जाने लगी थीं। यह वाद क्या प्रकट हुआ, एक बने-बनाए रास्ते का दरवाज़ा-सा खुल पड़ा और हिंदी के कुछ नए कवि उधर एकबारगी झुक पड़े। यह अपना क्रमशः बनाया हुआ रास्ता नहीं था। इनका दूसरे साहित्य क्षेत्र में प्रकट होना, कई कवियों का इस पर एक साथ चल पड़ना और कुछ दिनों तक इसके भीतर अंग्रेज़ी और बांग्ला की पदावली का जगह-जगह ज्यों का त्यों अनुवाद रखा जाना, ये बातें मार्ग की स्वतंत्र उद्भावना नहीं सूचित करतीं।[6]

शिक्षा के क्षेत्र में अनुवाद का योगदान

शिक्षा के क्षेत्र में भी अनुवाद ने हिंदी भाषा को न केवल नया रूप दिया है बल्कि उसे विभिन्न तरीकों से समृद्ध भी किया है। विद्यालयों तथा विश्वविद्यालयों में शामिल पाठयक्रमों में अनूदित पुस्तकों के प्रयोग ने हिंदी भाषा समृद्धि के अलावा एक नई शब्दावली भी विकसित की है। विज्ञान, गणित आदि विषयों में जहाँ सूचना, संदर्भ या जानकारी का स्रोत किसी दूसरे देश या दूसरी भाषा में

हो, वहाँ अनुवाद ने अभूतपूर्व योगदान दिया है। भारत में ऐसे कई संस्थान हैं, जैसे CIIL मैसूर आदि जहाँ दूसरी भाषाओं की पुस्तकों का हिंदी सहित अन्य भारतीय भाषाओं में अनुवाद कराया जाता है। इन विषयों के अलावा सामाजिक विज्ञान, विधि, वाणिज्य, प्रशासन, मीडिया आदि विषय भी हैं जहाँ अन्य भाषाओं से हिंदी में पुस्तकों को अनूदित कर शिक्षा प्रदान की जाती है। साहित्य अकादमी, एन.बी.टी. आदि संस्थाओं ने भी इस क्षेत्र में कई उल्लेखनीय कार्य किए हैं।

पारिभाषिक शब्दावली के निर्माण में अनुवाद का महत्व

अनुवाद का सबसे व्यावहारिक प्रयोग पारिभाषिक शब्दावली के निर्माण में हुआ है। स्वतंत्रता के पश्चात जब हिंदी संघ की भाषा घोषित हुई तब पूर्व प्रचलित पश्चिमी भाषाओं के तकनीकी शब्दों को हिंदी में भी प्रयोग करने के लिए अनुवाद का सब से प्रमुख योगदान रहा। अनुवाद के माध्यम से कई तकनीकी शब्दों का निर्माण किया गया और कई नए शब्द चलन में आए, जैसे 'Physics' के लिए 'भौतिकी', 'Engineering' के लिए 'अभियांत्रिकी' आदि। इस तरह के अनगिनत शब्द आज भी हिंदी में प्रचलित हैं जो अनुवाद की ही देन है। शब्दों को गढ़ने में हिंदी और उर्दू के कई उपसर्गों और प्रत्ययों का सहारा लिया गया, जैसे अंग्रेज़ी में –'tion' से अंत होनेवाले शब्दों के लिए 'करण' प्रत्यय का सहारा लिया गया। उदाहरण के लिए 'Registration' के लिए 'पंजीकरण', 'Ionization' के लिए 'आयनीकरण' आदि। कई अन्य शब्दों के अनुवाद में भी इसी पद्धति का सहारा लिया गया, जैसे– 'शहरीकरण' (Urbanization), 'सौन्दर्यीकरण' (Beautification), 'निजीकरण' (Privatization) आदि। बहुत सारे ऐसे भी शब्द हैं जो अंग्रेज़ी के शब्दों से सीधे अनूदित किए गए हैं और वे आज स्वीकृत भी हैं, जैसे—'लाल फीताशाही' (Red Tapism), 'हरित क्रांति' (Green Revolution), 'काला बाज़ार' (Black Market) आदि। इसी तरह 'रेलवे', 'बैंक', 'विधि', 'चिकित्सा', 'मनोरंजन', 'शिक्षा', 'वाणिज्य' आदि क्षेत्रों में कई अनूदित शब्द प्रचलित हो गए हैं। कई सार्वजनिक जगहों, जैसे 'अस्पताल', 'रेलवे स्टेशन', 'हवाई अड्डा' आदि में भी अनूदित शब्दों का प्रयोग किया जाता है जिससे अंग्रेज़ी नहीं जाननेवाली जनता को काफ़ी सुविधा मिली है। सरकार ने 1961 में शब्दावली निर्माण के लिए वैज्ञानिक और तकनीकी शब्दावली आयोग की भी स्थापना की जिसके तहत कई नए शब्दों का निर्माण किया गया है। इसके अलावा केंद्रीय अनुवाद ब्यूरो ने भी प्रशासनिक तथा कार्यालयी अनुवाद के क्षेत्र में भरपूर योगदान दिया है।

मीडिया की भाषा और अनुवाद

वर्तमान युग में मीडिया के प्रभाव को किसी भी तरह नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता। समाज में इसके सकारात्मक या नकारात्मक प्रभाव या इसकी कार्य शैली को लेकर सवाल किए जा सकते हैं परंतु भाषा को गढ़ने में या उसे एक नया रूप देने में इसकी भूमिका पर सवाल नहीं किए जा सकते।

समाचार के क्षेत्र में अनुवाद की निर्भरता एक अनिवार्य आवश्यकता है। आज भी कई मीडिया चैनलों पर अंग्रेज़ी का एकछत्र राज देखा जा सकता है। इसलिए देसी चैनलों की निर्भरता अंग्रेज़ी समाचार एजेंसियों पर है। वहीं दूसरी तरफ़, देश के चैनल अभी इतने सक्षम भी नहीं हैं कि देश के हर भाग में भारतीय भाषा के प्रतिनिधि भेज सकें। इस कारण जो समाचार प्रेषित किए जाते हैं, वे अक्सर सीधे न होकर अनूदित होते हैं।

प्रिंट मीडिया की भाषा बहुत ज़्यादा पारिभाषिक या साहित्यिक नहीं होती और न ही वह बहुत ज़्यादा अनौपचारिक या बोलचाल की भाषा जैसी होती है। यह बहुत ज़्यादा संस्कृतनिष्ठ या उर्दू–फ़ारसी से लदी भी नहीं होती। संक्षेप में, यह आम जन की समझ में आनेवाली भाषा है। इलैक्ट्रॉनिक मीडिया में भी अनुवाद की यही शैली देखी जा सकती है। प्रिंट मीडिया की तुलना में इसकी पहुँच थोड़ी अधिक होती है। जहाँ प्रिंट मीडिया का एक लक्षित पाठक वर्ग हो सकता है, विशेषकर क्षेत्रीय अखबारों का, वहीं इलैक्ट्रॉनिक मीडिया की पहुँच राज्यों की सीमाओं से परे होती है। इस कारण इस माध्यम में भाषा अधिक मानक होती है। आजकल प्रिंट और इलैक्ट्रॉनिक दोनों ही मीडिया में नई शब्दावलियों का प्रयोग धड़ल्ले से होता है जिनमें हिंदी के अलावा अंग्रेज़ी तथा अन्य भाषाओं से लिए गए शब्दों के प्रयोग से परहेज़ नहीं किया जाता। पत्र–पत्रिकाओं में यह प्रवृत्ति अधिक देखी जा सकती है। कुछ प्रकाशनों में अब विराम चिह्नों की जगह अंग्रेज़ी के 'फ़ुल स्टॉप' का भी प्रयोग देखा जा सकता है। किशोरों को लक्षित पत्रिकाओं में यह अधिक स्वीकृत है। इसके अलावा, टी.वी. पर हिंदी चैनलों में भी समाचार वाचन की भाषा और शैली में काफ़ी बदलाव देखे जा सकते हैं। चैनलों

के संवाददाताओं की रिपोर्टिंग से लेकर उन पर चल रही बहसों तक में भाषा में परिवर्तन देखा जा सकता है।

दृश्य-श्रव्य माध्यमों की हिंदी

इनके अंतर्गत मुख्यत: रेडियो, टी.वी. और सिनेमा आते हैं। इन माध्यमों में अनुवाद की भूमिका सबसे अधिक प्रभावी तथा व्यापक कही जा सकती है। पहले की 'आकाशवाणी' और आजकल के 'एफ़एम' चैनलों की हिंदी में ज़मीन आसमान का फ़र्क है। छोटे या बड़े शहरों में, इन चैनलों की हिंदी अब हिंग्लिश ही हो गई है जो नई पीढ़ी में लोकप्रिय भी है और प्रचलित भी। यही बात टी. वी. के क्षेत्र में 'दूरदर्शन' और प्राइवेट चैनलों को लेकर भी कही जा सकती है। आज टी.वी. पर बहुत सारे ऐसे चैनल हैं जो मनोरंजन के अलावा विज्ञान, इतिहास, भूगोल जैसे ज्ञान आधारित विषयों से संबंधित कार्यक्रम प्रसारित करते हैं। इनमें प्रमुख हैं डिस्कवरी, नेशनल जियोग्राफ़ी, हिस्ट्री आदि। चूँकि इनमें से कुछ चैनलों का केंद्र विदेशों में है इसलिए यह अधिकतर द्विभाषिक या बहुभाषिक होते हैं। इन चैनलों में अनुवाद की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। इनका मुख्य कंटेंट (वस्तु) अंग्रेज़ी में होता है परंतु उसे हिंदी या अन्य भाषाओं में भी उपलब्ध कराया जाता है। कुछ कार्यक्रमों में डबिंग हास्यास्पद भी हो सकती हैं परंतु इसमें अनुवाद की महत्ता और आवश्यकता से इंकार नहीं किया जा सकता।

टी.वी. की भाषा ने भारतीय जनता को कई नए शब्दों से भी परिचित कराया है। आजकल टी.वी. पर आनेवाले कई कार्यक्रम विदेशी कार्यक्रमों की नकल या प्रेरणा होते हैं। इनके नाम अब हिंदी जनता में भी उसी रूप में लोकप्रिय हो चुके हैं। इन्हें अनूदित न करके उसी रूप में अपना लिया गया है। इनमें से कुछ प्रमुख लोकप्रिय शब्द हैं—'रियलिटी शो', 'गेम शो', 'ग्रैंड फ़िनाले', 'स्टैंडिंग ओवेशन', 'स्टिंग ऑपरेशन', 'ब्रेक', 'डेली सोप' आदि।

इसी तरह सिनेमा की हिंदी ने भी आम जनता में हिंदी के प्रयोग को प्रभावित किया है। सिनेमा में सबसे अधिक अनुवाद का प्रयोग विदेशी फ़िल्मों की डबिंग और सब टाइटल में होता है। टी.वी. पर ऐसे कुछ चैनल हैं जो विदेशी फ़िल्मों को डब करके दिखाते हैं तो किसी में मूल भाषा के साथ-साथ स्क्रीन पर नीचे सब टाइटल दिए जाते हैं। कुछ चैनलों में दक्षिण भारतीय फ़िल्मों को भी हिंदी में डब करके दिखाया जाता है। ये मुख्यत: अनुवाद के ही रूप हैं। हिंदी फ़िल्मों के संदर्भ में भी भाषा गौर करने लायक है। यदि कोई फ़िल्म किसी खास क्षेत्र में आधारित न हो तो उसकी हिंदी मुख्यत: हिंदुस्तानी ही होती है। इनमें से अधिकतर शब्द उर्दू-फ़ारसी से हिंदी में अनूदित होकर आए हैं। हिंदी फ़िल्मी गीतों में भी हिंदुस्तानी शब्दों का ही प्रयोग होता है। केवल ऐतिहासिक और पीरियड फ़िल्मों में ही संस्कृत शब्दों का प्रयोग किया जाता है।

आज के विज्ञापनों में भी भाषा का यही रूप है। बहुत सारे विज्ञापन जो एक से अधिक भाषाओं में प्रसारित होते हैं उनमें अनुवाद की काफ़ी ज़रूरत होती है लेकिन अब हिंदी और अंग्रेज़ी को मिलाकर एक नया रूप बना दिया गया है जिसमें अनुवाद की ज़रूरत नहीं है, जैसे— 'Want baal shiny, straight ya thick? Flip open to take your pick !... Ab sunsilk new bahar se wow andar se !'

कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि अनुवाद ने हिंदी भाषा और साहित्य दोनों के विकास में अभूतपूर्व योगदान दिया है। कंप्यूटर के क्षेत्र में हिंदी पहले अंग्रेज़ी पर ही निर्भर थी परंतु आज अनुवाद की बदौलत ही वह कंप्यूटर की भाषा भी बन रही है। इस कारण अब इस क्षेत्र में रोज़गार की भी संभावनाएँ बढ़ी हैं जो एक सकारात्मक परिवर्तन है।

संदर्भ

1. आचार्य रामचंद्र शुक्ल, हिंदी साहित्य का इतिहास, संस्करण 2008, प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली, पृष्ठ 330
2. आचार्य रामचंद्र शुक्ल, हिंदी साहित्य का इतिहास, संस्करण 2008, प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली, पृष्ठ 389
3. वही, पृष्ठ 355
4. वही, पृष्ठ 355-356
5. आचार्य रामचंद्र शुक्ल, हिंदी साहित्य का इतिहास, संस्करण 2008, प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली, पृष्ठ 383
6. वही, पृष्ठ 456-457

नई दिल्ली, भारत
purtyjai@gmail.com

26

लोकतंत्र और मीडिया की भाषा के रूप में हिंदी

—डॉ. रवींद्रनाथ मिश्र

लोकतंत्र में प्रत्येक नागरिक को संवैधानिक दायरे में सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, धार्मिक आदि विचारों की अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता सहज है। लोकतंत्र विचारों की अभिव्यक्ति और उनके आदान-प्रदान से ही विकसित और मज़बूत होता है तथा उसे एक सही दिशा मिलती है। इतिहास गवाह है कि प्राचीन काल से विश्व में जहाँ-जहाँ, जिन-जिन देशों में राजतंत्र के विरोध में गणतांत्रिक समाजों की स्थापना हुई है उनका आधार परस्पर विचारों का आदान-प्रदान और संवाद ही रहा है। आधुनिक युग में लोकतांत्रिक शासन प्रणाली नागरिकों की समानता, स्वतंत्रता, सहकारिता और बंधुता की भावना पर आधारित रही है। आज मीडिया लोकतांत्रिक अधिकारों की रक्षा और सामाजिक न्याय दिलाने के क्षेत्र में सर्वाधिक महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह कर रहा है। देश की सुरक्षा को लेकर वह सैनिक की भांति मातृभूमि की रक्षा के लिए भी काफ़ी सतर्क है। वाल्तेयर का यह कथन लोकतंत्र और मीडिया के संबंध में मंत्रवत महत्व रखता है—''यह हो सकता है कि मैं आपके विचारों से सहमत न होऊँ, फिर भी आपके विचारों की अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की रक्षा के लिए मैं अपने प्राण दे सकता हूँ।'' ऐसे विचार लोकतंत्र की जड़ों को मजबूत करते हैं।

फ्रांसीसी क्रांति के मूल में वाल्तेयर और रूसो के विचार अत्यंत महत्वपूर्ण रहे हैं जिन्होंने उस समय के जनमानस को आंदोलित किया और परिणामस्वरूप एक नए समाज का गठन हुआ। इनमें जहाँ वाल्तेयर ने चर्च और राजतंत्र का विरोध करते हुए स्वतंत्रता की माँग की वहीं रूसो ने कहा कि ''मनुष्य स्वतंत्र जन्मा है पर सर्वत्र बंधनों में है।'' इन दोनों की महत्वपूर्ण भूमिका यह रही है कि इन्होंने भूमि पर सामंतों के अधिकार को चुनौती देते हुए उसके वास्तविक मालिक के रूप में उस जन को रेखांकित किया जो भूमि के उस टुकड़े पर रहता था और उसके माध्यम से अपनी जीविका अर्जित करता था। इस प्रकार की सामाजिक असमानता एवं शोषण का स्वरूप किसी एक देश में नहीं अपितु संपूर्ण विश्व में व्याप्त था और आज भी है। वस्तुतः सच्चा लोकतंत्र वही होगा जिसमें पूरे समाज में स्वतंत्रता, समानता, सहकारिता, बंधुता, उदारता आदि की भावना वास्तविक रूप में मौजूद हो। यह केवल मंत्र के रूप में नहीं अपितु शासन प्रणाली के व्यवहार और रोज़मर्रा के कार्यों में भी हो। इस शासन व्यवस्था में नीचे से नीचे, ऊँचे-से-ऊँचे और हाशिए पर पड़े हुए आदमी को भी आगे बढ़ने और सभी क्षेत्रों में समान रूप से भाग लेने का अवसर प्राप्त हो। वस्तुतः इस दिशा में प्रयास तो बहुत हुए लेकिन उसका परिणाम सकारात्मक रूप में प्राप्त नहीं हुआ।

आज़ादी के बाद हम जिस स्वराज की कल्पना कर रहे थे, उसका सही रूप देखने को नहीं मिला। विश्व के कई देशों ने मुक्ति के बाद प्रगति के क्षेत्र में अभूतपूर्व सफलता

जन्म : 12 जुलाई, 1957, पीतांबरपुर, महुलिया, अंबेडकर नगर (उ.प्र.)
शिक्षा : बी.ए. इलाहाबाद विवि.,एम.ए. कर्नाटक विवि., बी.एड व पीएचडी मुंबई विश्वविद्यालय।
अध्यापन एवं प्रशासकीय कार्य : 1979 से गोवा में विद्यालय, महाविद्यालय में हिंदी अध्यापन करते हुए 1990 से हिंदी विभाग, गोवा विश्वविद्यालय में प्रवक्ता, प्रपाठक, आचार्य, अधिष्ठाता, भाषा एवं साहित्य संकाय।
प्रकाशन : 'डॉ. शिवमंगल सिंह सुमन की कृतियों का समीक्षात्मक अध्ययन', 'समीक्षाएँ : विविध आयाम', 'काव्यास्वाद के नव्य निकष', 'साहित्य : विविध परिदृश्य', 'अंतिम दशक की हिंदी कविता'। देश की विभिन्न हिंदी पत्र-पत्रिकाओं एवं संपादित पुस्तकों में 80 आलेख तथा कोंकणी कविताओं, कहानियों एवं निबंधों का हिंदी में अनुवाद समकालीन भारतीय साहित्य एवं भाषा पत्रिका, नई दिल्ली में प्रकाशित।
संप्रति : अतिथि आचार्य-हिंदी, इंडोलॉजी विभाग, मानविकी एवं सामाजिक विज्ञान संकाय, जाग्रेब विश्वविद्यालय, क्रोएशिया, यूरोप (अप्रैल 2016 से जुलाई 2017)।

हासिल की है। गांधी जी ने स्वराज्य के संबंध में लिखा था कि, ''पूर्ण स्वराज्य कहने का आशय यह है कि वह जितना किसी राजा के लिए होगा उतना ही किसान के लिए, जितना किसी धनवान ज़मींदार के लिए होगा, उतना ही भूमिहीन खेतिहर के लिए, जितना हिंदुओं के लिए होगा, उतना ही मुसलमानों के लिए भी, जितना जैन, यहूदी और सिक्ख के लिए होगा, उतना ही पारसियों और ईसाइयों के लिए। उसमें जाति-पाँति, धर्म अथवा दर्जे के भेद-भाव के लिए कोई स्थान नहीं होगा।'' लोकतंत्र की यही सही अवधारणा है। भारत में इसकी स्थापना के पीछे सुविचारित उद्देश्य था। प्रारंभ में उसे अमलीकरण का जामा पहनाने में बहुत सी सावधानियाँ बरती गईं। कालांतर में जातिवाद, भाषावाद, परिवारवाद, प्रांतवाद, सम्प्रदायवाद आदि के कारण लोकतंत्र का स्वरूप धूमिल हुआ।

70-80 के दशक तक परिवेशगत परिवर्तन के कारण मानवीय सोच और उसके रहन-सहन में भी बदलाव आया। भूमंडलीकरण, बाज़ारवाद, मीडिया विस्फोट, तकनीकी संचार आदि के कारण बदलाव की प्रक्रिया तीव्र हुई। इसके परिणामस्वरूप लोकतंत्र में नवउदारवादी पूँजीवाद का जन्म हुआ जोकि पूँजीवाद के विस्तार के लिए पूरी तरह कटिबद्ध है। इससे रोज़गार के नए अवसर व्यापक रूप से आए और लोगों की जीवन-शैली में भी परिवर्तन आया। गांधी जी की दृष्टि में लोकतंत्र केवल एक राजनीतिक व्यवस्था ही नहीं है, वह सामाजिक और नैतिक व्यवस्था भी है लेकिन पूंजीवाद केवल लाभ की चिंता करता है। वह लाभ के रास्ते में विरोधी के रूप में आनेवाली किसी भी सामाजिक, नैतिक और मानवीय स्थिति की परवाह नहीं करता इसीलिए भारत का वर्तमान लोकतंत्र सामाजिक न्याय, नैतिक उत्थान और मानवीय यातना की कोई चिंता नहीं करता। आज के भारतीय लोकतंत्र में केवल पूंजीवाद के प्रसार की चिंता है, समाज में लोकतंत्र के विकास की, जनता के स्वतंत्र रूप से जीने, सोचने और कुछ कहने के अधिकारों की नहीं।

कवि अष्टभुजा शुक्ल बाज़ारवाद, पूँजीवाद, राजनीतिक शतरंजबाज़ी, अवसरवादिता आदि का सही चित्र खींचते हुए लिखते हैं।

''मुँह में राम बगल में छुरी, पहने पीयर बाना।
जातिधर्म पर खून-खराबा, करते उखमज नाना॥
नेता, तस्कर से प्रधान तक सब मौसेरे भाई।
हम सूखी रोटी को तरसे, उनके लिए मलाई॥
पाँच वर्ष पर जुटें मदारी, खेल करें बहुरंगा।
करि-करि मारें बैल सब हाँफें, बैठे खायं तुरंगा॥''

लोकतंत्र में लोक और तंत्र में दूरियाँ बढ़ती गईं। इसका लाभ समाज के एक तबके को अधिक मिला। इसमें जनता की भागीदारी कम हुई। उत्तर आधुनिकता के दौर में तकनीकी प्रचार के कारण मीडिया आम जनता से जुड़ा। दरअसल लोकतंत्र के इस चौथे पाए की स्थापना जनता को शिक्षा, सूचना और मनोरंजन प्रदान करने के लिए की गई। प्रारंभिक दौर में प्रिंट मीडिया ने अपने संवैधानिक उत्तरदायित्वों का निर्वाह बड़ी कुशलता से किया। आज़ादी के आंदोलनों में समाचार पत्रों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। आज भी उन पत्रकारों को सीमित संसाधनों के बीच त्याग, निष्ठा, ईमानदारी और कर्तव्यबोध के लिए याद किया जाता है। उन्होंने राजनीतिक विश्वासों, सामाजिक रीति-रिवाज़ों और जनता के बुनियादी सांस्कृतिक संवेगों को प्रभावित करने हेतु सराहनीय कार्य किए। मीडिया का धर्म है कि वह जनता के साथ व्यापक स्तर पर संवाद स्थापित कर लोकतंत्र को मज़बूत बनाए। साहित्य की भाँति लोकतंत्र और मीडिया के मूल में लोकमंगल की भावना निहित है। संसदीय लोकतंत्र में संसद, जनता और मीडिया आपस में तालमेल बैठाकर ही लोकतंत्र को शक्तिशाली और प्रभावी बना सकते हैं।

गांधी जी ने स्वराज्य के संबंध में लिखा था कि, ''पूर्ण स्वराज्य कहने का आशय यह है कि वह जितना किसी राजा के लिए होगा उतना ही किसान के लिए, जितना किसी धनवान ज़मींदार के लिए होगा, उतना ही भूमिहीन खेतिहर के लिए, जितना हिंदुओं के लिए होगा, उतना ही मुसलमानों के लिए भी, जितना जैन, यहूदी और सिक्ख के लिए होगा, उतना ही पारसियों और ईसाइयों के लिए। उसमें जाति-पाँति, धर्म अथवा दर्जे के भेद-भाव के लिए कोई स्थान नहीं होगा।''

हमारे संविधान निर्माताओं ने लोकतंत्र और मीडिया के रिश्तों को देश के हित में जाँचा और परखा। दोनों ने लोकमंगल की भावना से काम भी करना शुरू किया। मानव कल्याण के विविध क्षेत्रों में इन दोनों के योगदान को भुलाया नहीं जा सकता। लोकतंत्र को मज़बूत करने में मीडिया सतत प्रयत्नशील रहा है। महात्मा गांधी ने 1903 में दक्षिण अफ्रीका में 'इंडियन ओपिनियन' नामक समाचार पत्र के द्वारा भारतीय विचारों एवं दृष्टिकोणों को हमारे सामने रखा।

पत्रकारिता के संबंध में उन्होंने कहा कि, ''पत्रकार को देश सेवक, लोक सेवक तथा जागरण कर्ता एवं मार्गदर्शक होना चाहिए।''

किसी भी समाज के राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक विकास, उत्थान और गत्यात्मकता के लिए मीडिया की भूमिका को नकारा नहीं जा सकता। इतिहास गवाह है कि समय-समय पर मीडिया ने जनमानस को झंकृत कर लोकतंत्र और समाज की रक्षा की है। आज़ादी के पूर्व पत्रकारिता की कलम ने तलवार की भूमिका निभाई है। हिंदी एवं अन्य भारतीय साहित्यकारों ने साहित्यकार और पत्रकार के रूप में राष्ट्रीय चेतना को प्रखर रूप से झंकृत किया। हिंदी साहित्य में यह चेतना भारतेंदु हरिश्चंद्र मंडल के रचनाकारों से प्रारंभ होकर मैथिलीशरण गुप्त, छायावाद एवं छायावादोत्तर रचनाकारों में रामधारी सिंह 'दिनकर', माखनलाल चतुर्वेदी, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', सुभद्राकुमारी चौहान आदि की रचनाओं में सर्वत्र विद्यमान है। राष्ट्रीय चेतना के प्रहरी महात्मा गांधी पर भी कविताएँ लिखी गईं। कमल किशोर गोयनका अपनी पुस्तक 'गांधी : पत्रकारिता के प्रतिमान' में लिखते हैं, ''गांधी की आर्थिक नीति कोई व्यावसायिक नहीं थी बल्कि वह उनकी भारतीय दृष्टि का अंग थी जिसमें दक्षिण अफ्रीका के भारतीयों को एक सूत्र में बाँधकर वे उन्हें स्वाभिमान, अस्मिता और स्वतंत्रता के साथ सामाजिक परिवर्तन के लिए तैयार कर रहे थे।''

हमारे संविधान निर्माताओं ने लोकतंत्र और मीडिया के रिश्तों को देश के हित में जाँचा और परखा। दोनों ने लोकमंगल की भावना से काम भी करना शुरू किया। मानव कल्याण के विविध क्षेत्रों में इन दोनों के योगदान को भुलाया नहीं जा सकता। लोकतंत्र को मज़बूत करने में मीडिया सतत प्रयत्नशील रहा है। महात्मा गांधी ने 1903 में दक्षिण अफ्रीका में 'इंडियन ओपिनियन' नामक समाचार पत्र के द्वारा भारतीय विचारों एवं दृष्टिकोणों को हमारे सामने रखा। पत्रकारिता के संबंध में उन्होंने कहा कि, ''पत्रकार को देश सेवक, लोक सेवक तथा जागरण कर्ता एवं मार्गदर्शक होना चाहिए।''

साहित्य, लोकतंत्र, मीडिया, न्याय व्यवस्था आदि का मूल धर्म है—जनता की सेवा करना। सेवा एक मूल्य है। मूल्यों में आस्था के बिना जनता की सेवा नहीं की जा सकती। लोकतंत्र की रक्षा के लिए मूल्यों में आस्था अनिवार्य है।

21वीं सदी में वैश्वीकरण के केंद्र में बाज़ारवाद के आने से मूल्यों का क्षरण जिस तीव्र गति से हो रहा है, मनुष्य ने उसकी कभी कल्पना भी नहीं की होगी। इसका प्रभाव व्यक्ति, परिवार, समाज और देश पर व्यापक रूप से पड़ रहा है। दरअसल इससे जीवन का संपूर्ण ताना-बाना ही बदल रहा है। परंपरा और आधुनिकता की कशमकश में जीवन का वास्तविक स्वरूप गायब हो रहा है। मनुष्य प्रकृति को प्रदूषित कर स्वयं की प्रकृति को भी प्रदूषित कर रहा है। प्रकृति अर्थात पवित्रता, निर्मलता, वास्तविकता, शुद्धता आदि। जीवन के बदलाव के साथ साहित्य और मीडिया की भाषा भी बदल रही है। बाज़ारवाद के कारण इतने सारे बाज़ारू शब्दों की निर्मिति हो रही है कि साहित्य लेखन, गंभीर वार्ताओं और हमारे सोचने-समझने की प्रक्रिया में उन शब्दों का बराबर हस्तक्षेप हो रहा है। पहले साहित्य और मीडिया की भाषा में अंतर था। अब साहित्य की शब्दावली सरल एवं व्यंजनापूर्ण हुई है लेकिन मीडिया की भाषा की तरह लगने लगी है। पहले मीडिया की भाषा में पारदर्शिता होते हुए भी उसकी अपनी गरिमा थी। धर्मपाल ने लिखा है कि, ''प्रत्येक भाषा एक विशद अर्थ परंपरा, दर्शन परंपरा और विचार परंपरा की अभिव्यक्ति होती है। जब हम विदेशी भाषा को अपनाते हैं तो प्राय: स्वयं को, विश्व को, व्यक्ति, समाज, संस्थाओं, मान्यताओं, लक्ष्यों, रुचियों, आदर्शों आदि को भी हम उसी भाषा परंपरा और संस्कृति परंपरा में देखने लगते हैं।'' भाषा और साहित्य परिवेश की उपज होती है। जिस समाज में हम रहते हैं, उसकी सोच और भाषा का प्रभाव धीरे-धीरे मनुष्य पर पड़ने लगता है। नई भाषा और सोच के चलते आधुनिक बनने की होड़ में मनुष्य अपनी मौलिकता को खोने लगता है। हमारी लोक संस्कृति के धीरे-धीरे विलुप्त होने के पीछे यही कारण है। तकनीकी दुनिया का विकास होने से घर-गृहस्थी से जुड़े 'खटिया', 'मचिया', 'बीड़ा', 'पीढ़ा', 'बोरसी', 'जुआठा', 'हेंगा', 'खुरपी', 'हाड़ी', 'पतकी', 'तसला', 'कूड़ा', 'हौदी', 'परई', 'कोसा', 'भरूका' आदि अनगिनत लोक शब्दों का रोज़मर्रा के जीवन में कम प्रयोग होने लगा है। लोक की भूमि से ही आधुनिकता का जन्म हुआ है। साहित्य और पत्रकारिता के लिए ये लोक शब्द ऊर्जा की भाँति कार्य करते हैं।

हम देख रहे हैं कि हिंदी भाषा की शब्दावली में काफ़ी परिवर्तन हो रहा है। बहुत सारे नए शब्द जुड़ रहे हैं और पुराने शब्द जो

गौरैया की भाँति रोज़मर्रा की जिंदगी में फुदक रहे थे, उसी की भाँति गायब हो रहे हैं। भाषा में शब्दों के गायब होने का दु:ख आँगन में फुदकती गौरैया के गायब होने के दु:ख से कम नहीं है। इन दोनों के अभाव में जीवन में रिक्तता की अनुभूति हो रही है।

मीडिया लोकतंत्र को सामाजिक, सांस्कृतिक, सुरक्षा आदि अनेक दृष्टिकोणों से मज़बूत कर रहा है। इसमें कोई संदेह नहीं है, लेकिन यह भी बाज़ारवाद की गिरफ़्त में आ गया है। गणतंत्र का रक्षक होने के कारण उसे थोड़ा संयम बरतने की ज़रूरत है। यह सही है कि जब आँधी आती है तो सब कुछ बहा ले जाती है। यहाँ 'एक था पेड़ और एक था ठूँठ' निबंध की याद आती है। ठूँठ मूल्यों के प्रति अडिग रहता है। दरअसल मूल्यों के विघटन के दौर में अपने को बचा पाना कठिन ज़रूर है लेकिन नामुमकिन नहीं। दुखद पक्ष यह है कि मीडिया भी बाज़ारवाद की भाषा को खूब बढ़ावा दे रहा है, जिसका दोहन बाज़ार भरपूर कर रहा है। यहाँ दूरदर्शन पर कुछ समय पूर्व के कतिपय उदाहरण प्रस्तुत किए जा रहे हैं। 'थोड़ी कमाई कर लें फिर वापस लौटते हैं।' (31 अगस्त, 2012, स्टार न्यूज़), 'क्या ढीले पड़ गए हैं बाबा रामदेव!', 'खबरदार! भारी बारिश की आशंका', 'टी.-20 का टाइगर फिर दहाड़ेगा!', 'काले धन पर हल्ला बोल!', 'कब गिर-फ़्तार होंगे गोपाल कांडा?', 'क्या सोनिया का गुस्सा जायज़ है?', 'आडवानी का बयान जायज़ या नाजायज़!', 'क्या संसद में हंगामा फ़िक्स है?', 'सोनिया ने क्यों कहा आक्रमण?', 'कौन किसे कर रहा है ब्लैकमेल?', 'तबाही... तबाही...तबाही', 'पिपासा सबसे बड़ा तमाशा', 'बंगलौर में बजा जीत का डंका', 'कोयले पर जारी है कुहराम', 'बारिश से मुंबई ठप्प!' 'यंगिस्तान ने किया कमाल!' 'राँची में कपड़ा पहाड़ विरोध', 'कर्नाटक में फिर किच-किच', 'ताकत पुरानी नई कहानी', 'फटा पोस्टर निकले राहुल', 'अजब लालू की गजब कहानी' आदि कतिपय पंक्तियाँ 'आजतक' और 'स्टार न्यूज़' की हैं। बाज़ारवाद के प्रभाव के कारण हिंसा, बलात्कार, आत्महत्या, प्रेम प्रसंगों, साम्प्रदायिक दंगों, राजनीतिक वैमनस्य, धार्मिक पाखंडों आदि खबरों को मायावी भाषा का जामा पहनाकर भयावह और आश्चर्यजनक रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है।

हिंदी समाचार पत्रों की भाषा पर बात करें तो 'कितने बदल गए सलमान', 'झीलों के होठों पर मेघों का राग', 'मॉनसून में लोकल ट्रेनों को मिले पासिंग मार्क्स' जैसी शब्दावली का प्रयोग हो रहा है। दूरदर्शन के चैनल दर्शकों को लुभाने के लिए कोई कसर नहीं छोड़ रहे हैं। समाचार के महत्वपूर्ण संवादों को बीच में रोककर विज्ञापन दिखाए जाते हैं। जैसा कि मैंने पहले ही कहा है कि वैश्वीकरण, सूचना तकनीक, पाश्चात्य संस्कृति आदि के प्रभाव के कारण मीडिया की शब्दावली हिंग्लिश का रूप धारण करती जा रही है। आज तकनीकी युग का समय है, ज़ाहिर है कि हिंग्लिश के शब्दों में वृद्धि होगी लेकिन यह इतनी नहीं होनी चाहिए कि मूल भाषा की आत्मा ही मर जाए। दुखद पक्ष तो यह है कि हिंदी समाचार पत्रों में 'प्रतियोगिता' की जगह 'कंपटीशन', 'विकास' की जगह 'प्रोग्रेस' आदि बहुतेरे शब्दों का प्रयोग हो रहा है। जिन हिंदी शब्दों के अर्थ कठिन हैं उनके इक्के-दुक्के प्रयोग हिंग्लिश में हो तो कोई बात नहीं। आजकल हिंदी शब्दों का रोमन लिपि में बहुतायत प्रयोग किया जा रहा है।

हिंदी समाचार पत्रों में हिंग्लिश शब्दों की संख्या बढ़ती जा रही है। यहाँ मैं कतिपय उदाहरण दे देना समीचीन समझता हूँ– 'मर्डर', 'एग्ज़ीक्यूटिव', 'सीनियर इंस्पेक्टर', 'वाचमैन', 'इंफ्रास्ट्रक्चर', 'सब कमिटी', 'फर्स्ट ईयर', 'इंडेक्स', 'पुराने स्टेज', 'डबल चुनौती', 'सपोर्टरों', 'हाई प्रोफ़ाइल', 'कन्फ़्यूजन' आदि। समाचार पत्रों में वाक्यों के अंतर्गत अंग्रेज़ी शब्दों के कतिपय उदाहरण इस प्रकार हैं–''सोसाइटी, फ़ैमिली, कैरियर और महिलाओं और पुरुषों के रोल में बदलाव पर बहस चल रही है।

हिंदी समाचार पत्रों में हिंग्लिश शब्दों की संख्या बढ़ती जा रही है। यहाँ मैं कतिपय उदाहरण दे देना समीचीन समझता हूँ— 'मर्डर', 'एग्ज़ीक्यूटिव', 'सीनियर इंस्पेक्टर', 'वाचमैन', 'इंफ्रास्ट्रक्चर', 'सब कमिटी', 'फर्स्ट ईयर', 'इंडेक्स', 'पुराने स्टेज', 'डबल चुनौती', 'सपोर्टरों', 'हाई प्रोफ़ाइल', 'कन्फ़्यूजन' आदि। समाचार पत्रों में वाक्यों के अंतर्गत अंग्रेज़ी शब्दों के कतिपय उदाहरण इस प्रकार हैं—''सोसाइटी, फ़ैमिली, कैरियर और महिलाओं और पुरुषों के रोल में बदलाव पर बहस चल रही है। कैरियर और फ़ैमिली की ज़िम्मेदारियाँ, वर्क-लाइफ़ बैलेंस हासिल करने का यह पहला तरीका, एंटी-विमेन, एंटी फ़ैमिली, टेली कॉन्फ्रेंसिंग और वर्क फ्रॉम होम, पैटरनिटी लिव का सिस्टम'' आदि अंग्रेज़ी के बड़े-बड़े जुमलों का प्रयोग हो रहा है। 'समाज', 'परिवार', 'कार्य', 'जीवन', 'घर',

'नारी' आदि हिंदी के सरल शब्दों के स्थान पर अंग्रेज़ी शब्दों के प्रयोग का औचित्य समझ में नहीं आता। प्रत्येक भाषा का अपना स्वरूप और गुण होता है। उसकी जगह अन्य भाषा यानी अंग्रेज़ी के शब्दों का हठात प्रयोग करने से उसकी आत्मा का हनन होता है।

आज़ादी के बाद मूल्यों का विघटन हुआ है। इसका प्रभाव मीडिया पर भी दिखाई देता है। इसके कई उद्देश्यों में एक प्रमुख उद्देश्य सेवाभाव था। वह आज भी है लेकिन उस पर बाज़ारवाद का प्रभाव दिखाई दे रहा है। दरअसल बात यह है कि जब ऊपर से नीचे तक हर क्षेत्र में अवमूल्यन हुआ तो भला मीडिया उससे कब तक वंचित रहता? हमारी न्याय व्यवस्था पर भी समय-समय पर कतिपय काले धब्बे लग गए। जनता के सेवकों और विधि निर्माताओं के विषय में भी सबको पता है। विगत कुछ समय से सकारात्मक परिवर्तन की एक हल्की सी बयार चली है। यदि यह आँधी बनकर झंकृत करे तो लोकतंत्र का ढांचा मज़बूत होगा। मीडिया लोकतंत्र की एक बड़ी ताकत है। इसे संभल कर चलना चाहिए अन्यथा जिस प्रकार जल की अबाधित प्रचण्ड धारा अंचल को डुबा देती है और फ़सलों को नष्ट कर डालती है, उसी प्रकार अनियंत्रित कलम सेवा और धुआँधार विज्ञापन भी मीडिया को क्षति पहुँचा सकता है। दुखद पक्ष यह है कि आज अधिकांश प्रचार माध्यम फ़िल्म और दूरदर्शन बाज़ार और बाज़ारू माफ़िया के अधीन हैं जहाँ सामाजिक, मानवीय तथा वैचारिक विषय वस्तु का मीडिया से लगभग गायब होना हमारे जीवन के लिए चुनौती बन गया है। प्रभाकर श्रोत्रिय का कथन है कि, ''जो लोग हिंदी को उदारता की सीख देते हैं, उन्हें समझना चाहिए कि हिंदी कोई जड़ भाषा नहीं है, गतिशील भाषा है, उसने हज़ारों आयातित नए शब्द अपनाए हैं।... परंतु जो कॉर्पोरेट भाषा आ रही है, वह प्रायोजित और आरोपित है और उसका उद्देश्य भाषा की अभिवृद्धि नहीं है। इस अंतर को भली-भाँति समझ जाना चाहिए।'' दरअसल आज जिस तरह से मीडिया पर बाज़ारू हिंदी का प्रयोग हो रहा है उससे हिंदी का नहीं अपितु बाज़ार का लाभ हो रहा है। नूर लखनवी के शब्दों में कहें तो—

''इतने हिस्सों में बंट गया हूँ मैं कि
मेरे हिस्से में कुछ बचा ही नहीं।''

आज संपर्क भाषा के रूप में हिंदी का प्रचार-प्रसार देश में ही नहीं अपितु संपूर्ण विश्व के कई भूभागों में हो रहा है। हिंदी अपने समावेशी स्वभाव के कारण विविध रूपों में विकसित हो रही है। यह सही है कि बाज़ारवाद के कारण उसके मूल स्वरूप में बदलाव आया है लेकिन बाज़ारवाद और आवागमन की सुविधा ने हिंदी को व्यापकता भी प्रदान की है। दूरदर्शन की व्यापकता और लोकप्रियता से अहिंदी परिवारों की नई संतति के बीच हिंदी की लोकप्रियता बढ़ी है। वे अपने माता-पिता की तुलना में अच्छी हिंदी बोल और लिख लेते हैं। संगणक और मोबाइल से इसे और बल मिला है। संगणक के सुडौल, सुंदर और व्यवस्थित शब्दों ने सबको प्रभावित किया है लेकिन जैसे मोबाइल आने पर लोगों ने चिट्ठी लिखना बंद कर दिया है, वैसे ही संगणक के कारण अब हाथ से कलम गायब हो रही है। मीडिया के बहुत सारे सकारात्मक अवदानों के बावजूद उसने हिंदी भाषा की संस्कृति और उसकी गुणवत्ता को प्रभावित किया है। जनसंचार के विविध माध्यमों द्वारा परोसी जा रही हिंदी अपनी मूल प्रकृति को छोड़कर विज्ञापन की बाज़ारू हिंदी बन रही है। हिंदी हमारी अस्मिता और संस्कृति की भाषा है जोकि अपनी सांस्कृतिक अस्मिता और विरासत से कुछ मायनों में वंचित हो रही है। मुझे संतोष इस बात का है कि वह वैश्विक धरातल पर अपना परचम फहरा रही है।

संदर्भ सूची—

1. यंग इंडिया
2. दस्तावेज़
3. कमल किशोर गोयनका—गांधी : पत्रकारिता के प्रतिमान
4. अंतरजाल
5. धर्मपाल—भारत की पहचान
6. वागर्थ—दिसंबर 2009

जाग्रेब विश्वविद्यालय, क्रोएशिया, यूरोप
rnmishra@unigoa.ac.in

27

हिंदी संक्रमण के दौर में

—श्रीमती प्रीति सागर

भाषा सामाजिक-सांस्कृतिक निर्मिति है। समाज, संस्कृति और भाषा का अटूट संबंध है। मानव समाज के विकास के साथ ही भाषा का विकास भी जुड़ा हुआ है। विश्व की भाषाओं का वर्तमान स्वरूप एक लंबी विकास यात्रा का परिणाम है, किसी भी भाषा का स्वरूप हमेशा के लिए निश्चित नहीं होता। भाषा की परिवर्तनशीलता के संबंध में सभी एकमत हैं। हिंदी भी इसका अपवाद नहीं है। अनेक मोड़ों से मुड़ते हुए हिंदी ने एक नवीन रूप धारण कर लिया है। भूमंडलीकरण के इस दौर में अन्य संस्कृतियों और भाषाओं के संयोग से हिंदी की एक और छवि उभर कर सामने आई है। हिंदी के इस नए स्वरूप को सामने लाने और विकसित करने में जनसंचार माध्यमों की अहम भूमिका रही है। प्रत्येक जनमाध्यम की भाषा दूसरे माध्यम से थोड़ी पृथक है। प्रिंट-मीडिया और दैनिक व्यवहार की भाषा में यह अंतर दिखाई देता है। टी.वी. और केबल चैनल सूचनाएँ ही प्रदान नहीं करते, वास्तव में ये माध्यम भी मुख्यत: मनोरंजन और व्यावसायिक लाभ का लक्ष्य लेकर चलते हैं। इनका प्रयास व्यापक है, अत: इन माध्यमों की हिंदी व्यापक समाज तक पहुँच रही है। उसमें कई तरह के बदलाव आ रहे हैं। टी.वी. और केबल के कार्यक्रम मुख्यत: दो प्रकार के होते हैं—सूचना प्रधान और मनोरंजन प्रधान। सूचना प्रधान कार्यक्रमों में समाचार, समसामयिक, आर्थिक, सामाजिक तथा राजनीतिक घटनाओं के बारे में सूचनाएँ, वार्ता एवं परिचय, रिपोर्ट, वृत्तचित्र आदि प्रस्तुत होते हैं जिनमें मानक हिंदी को वरीयता दी जाती है। कहीं समझाने के लिए सरल-सहज शब्दावली का प्रयोग किया जाता है लेकिन मानक रूप के निकट रहने की कोशिश की जाती है।

जन्म : उत्तर प्रदेश।
शिक्षा : एम.एड. तथा हिंदी साहित्य में स्नातकोत्तर एवं पीएचडी।
प्रकाशन : प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं में शोध लेख, कविताएँ, गज़ल आदि प्रकाशित हैं।
संप्रति : महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा के हिंदी एवं तुलनात्मक साहित्य विभाग में एसोसिएट प्रोफ़ेसर।
आपकी आलोचनात्मक एवं सृजनात्मक लेखन में रुचि है तथा आप विभिन्न राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय संगोष्ठियों, सम्मेलनों एवं कार्यशालाओं में भाग लेती रहती हैं।

मनोरंजन प्रधान कार्यक्रमों, जैसे धारावाहिक हिंदी फ़िल्मी गाने, गेम, शो आदि में प्राय: हिंदी का ऐसा रूप प्रयुक्त होता है जो जनसाधारण की पकड़ में हो। इसलिए ऐसे कार्यक्रमों में हिंदी के साथ प्रयोग करने की पूरी छूट ली जा रही है। धारावाहिकों के संवादों में आवश्यकतानुसार क्षेत्रीय या अंग्रेज़ी शब्दों का प्रयोग किया जाता है। पौराणिक धारावाहिकों में प्राय: संस्कृतनिष्ठ हिंदी का प्रयोग किया जाता है। सामाजिक और हास्य प्रधान धारावाहिकों की हिंदी बोलचाल के अधिक निकट रहती है। विशुद्ध मनोरंजन या रोचकता में वृद्धि हेतु भारतीय हिंदी फ़िल्मों को देखा जा सकता है। इनमें मानक हिंदी, ब्रज, अवधी, बघेली, छत्तीसगढ़ी आदि से संयुक्त हिंदी, प्रादेशिक प्रभावों से युक्त हिंदी, जैसे पंजाबी हिंदी, मुंबईया हिंदी, हैदराबादी हिंदी, कलकतिया हिंदी आदि।

इलेक्ट्रॉनिक मीडिया और बाद में सूचना क्रांति के आने के बाद संपूर्ण विश्व एक ग्राम में बदल गया है जिसका प्रभाव भाषा पर भी दिखाई देता है। आज विश्व में कई भाषाएँ मर रही हैं या अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष कर रही हैं। इलेक्ट्रॉनिक मीडिया ने हिंदी को जीवंतता प्रदान की है। टी.वी. चैनलों के कार्यक्रमों से किसी भी समाज की अभिरुचि और जागरूकता का पता चलता है। टी.वी. पर हिंदी विज्ञापनों की बाढ़ यह दर्शाती है कि हिंदी बाज़ारवाद का शिकार हो रही है। बाज़ार की भाषा होने के कारण आज हिंदी जनसंचार माध्यमों की अनिवार्य आवश्यकता बन गई है। हिंदी को विश्व भाषा के रूप में पहचान दिलाने में भी जन-माध्यमों की भूमिका को नकारा नहीं जा सकता। भारत में हिंदी एक विस्तृत क्षेत्र की भाषा है और संपूर्ण देश में संपर्क सूत्र का माध्यम भी किंतु राजकाज की हिंदी और जन-माध्यमों की

हिंदी में अंतर है और केबल चैनल के कार्यक्रमों में प्रयुक्त हिंदी वह हिंदी नहीं है जो विश्वविद्यालयों में पठन-पाठन के केंद्र में है या जिसके शुद्ध स्वरूप के प्रति व्याकरणविद या भाषाविद सचेत रहे हैं। टी.वी. एवं केबल चैनलों के कार्यक्रमों में प्रयुक्त हिंदी का दायरा कहीं ज़्यादा विस्तृत है। इसमें शुद्धता का खास ख्याल नहीं रखा जाता।

बाज़ारवाद के प्रभावों ने भी जनसंचार माध्यमों में हिंदी के प्रयोग को बढ़ावा दिया है। शुरूआती दौर में ऐसी हिंदी या हिंग्लिश को उपेक्षा की दृष्टि से देखा गया लेकिन आज इस नए प्रयोग को सकारात्मक दृष्टि से देखा जा रहा है। पहले कार्यक्रमों को मनोरंजक रूप प्रदान करने के लिए ऐसे प्रयोग किए गए। धीरे-धीरे प्रवृत्ति व्यापक होती गई। क्षेत्रीय टी.वी. और केबल चैनल के कार्यक्रमों तथा अंतरराष्ट्रीय और देशव्यापी चैनल की हिंदी में अंग्रेज़ी शब्दों का व्यवहार बढ़ता जा रहा है। हिंदी का एक नया और मिला-जुला स्वरूप हमारे सामने आ रहा है और धीरे-धीरे यही हमारे बोलचाल और कामकाज की भाषा बनती जा रही है। इस भाषा को देखकर लगता है कि आज की हिंदी संक्रमण के दौर से गुज़र रही है। इस मसले पर तमाम पक्षों से गहन विचार-विमर्श करने की ज़रूरत है कि कैसे यह संभव हो कि हिंदी नई स्थितियों के अनुरूप ढलती भी रहे पर इसका मूल चरित्र नष्ट न हो।

वर्धा, भारत
psagarhv@gmail.com

विश्व हिंदी दिवस
के उपलक्ष्य में
अतिथि विद्वानों का वक्तव्य

28

रूस में हिंदी

—प्रो. ल्युदमीला विक्तोरव्ना ख़ख़लोवा

भारत और भारतीय भाषाओं के प्रति रूस का झुकाव 15वीं शताब्दी में ही झलकने लगा था जब रूसी विश्वयात्री अफ़नासी निकितिन ने भारत की यात्रा की थी। रूस के प्राचीन नगर त्वेर से वे 1468 में भारत के लिए रवाना हुए थे और काले सागर को पारकर अज़रबैजान और ईरान के रास्ते भारत पहुँचे थे। यह वह समय था जब दुनिया अभी वास्को द गामा को जानती भी नहीं थी जिनके बारे में यह कहा जाता है कि वास्को द गामा ने ही भारत की खोज की थी। वास्को द गामा तो अफ़नासी निकितिन के 25 साल बाद भारत पहुँचे थे और उन्होंने यूरोपियन लोगों को भारत का रास्ता दिखाया था। अफ़नासी निकितिन 1468 से 1474 तक भारत में रहे थे फिर भारत से वापस रूस लौटते हुए रास्ते में उनकी मृत्यु हो गई। लेकिन भारत के बारे में उनकी डायरियाँ और संस्मरण सुरक्षित रह गए जिन्हें आज हम रूस में 'तीन समुद्रों के पार की यात्रा' के नाम से जानते हैं।

रूस में जो दूसरा स्रोत रूस-भारतीय संबंधों का हमें मिलता है वह हिंदी या हिंदुस्तानी भाषा से सीधे जुड़ा हुआ है। रूसी विद्वान गेरासिम लेबिदेव (1749-1817) 12 साल तक भारत में रहे थे। शुरू में कुछ वर्ष चेन्नई (मद्रास) में बिताने के बाद वे कोलकाता चले गए थे और लंबे समय तक वहाँ रहे। मूल तौर पर गेरासिम लेबिदेव संगीतकार थे और उन्होंने यूरोपीय संगीत की परंपराओं को भारतीय संगीत परंपराओं से जोड़ने की कोशिश की थी। चूँकि संगीत और नाटक का आपस में बहुत गहरा संबंध है इसलिए उन्होंने भारत के कोलकाता शहर में एक थियेटर की भी स्थापना की थी। थियेटर के अलावा उन्होंने भारत की भाषाओं पर भी महत्वपूर्ण काम किया। वर्ष 1801 में लंदन में उनकी एक किताब प्रकाशित हुई जिसका शीर्षक था—'A grammar of the pure and mixed East Indian dialects' यानी, शुद्ध और मिश्रित पूर्वी भारतीय भाषाओं का व्याकरण। अपनी इस किताब में गेरासिम लेबिदेव ने कोलकाता में बोली जानेवाली हिंदुस्तानी भाषा के व्याकरण पर चर्चा की थी। यह वह भाषा थी जो आम तौर पर कोलकाता के व्यापारी वर्ग के बीच इस्तेमाल की जाती थी लेकिन इसका यह मतलब नहीं है कि सिर्फ़ कोलकाता के व्यापारी ही इस भाषा का इस्तेमाल करते थे। उनकी भाषा कई भाषाओं के शब्दों की खिचड़ी भाषा थी जिसमें मारवाड़ी, बांग्ला, अवधी, भोजपुरी, मैथिली, फ़ारसी आदि भाषाओं के शब्दों की भरमार थी और जिनका व्याकरण भी इन्हीं सब भाषाओं के व्याकरण को मिलाकर तैयार हुआ था।

रूसी कवियों ने सबसे पहले जिस भारतीय कवि की रचनाओं का अनुवाद किया, वे कालिदास हैं। प्रसिद्ध रूसी कवि अलेक्सांदर पुश्किन के पूर्ववर्ती कवि वसीली झुकोवस्की (1783-1852) ने सबसे पहले

शिक्षा : पीएचडी हिंदी तथा भाषाई टायपोलोजी (Linguistic Typology) का अध्ययन।

प्रकाशन : 'भारतीय पत्रिकाओं में हिंदी और पंजाबी', 'राजस्थानी भाषा पर बाहरी भाषिक तत्वों का प्रभाव', 'हिंदी और पंजाबी के शब्दों में लयात्मकता', 'राजस्थान में भाषा संबंधी प्रचलन', 'राजस्थानी उपभाषाओं में वाक्य-रचना', 'सामाजिक भाषा वैज्ञानिक विश्लेषण', 'हिंदी में ध्वनि-व्यवस्था', 'हिंदी पाठ्य पुस्तक', 'पंजाबी पाठ्य पुस्तक', 'गुरु गोविंद सिंह, जप साहिब, रूसी में अनुवाद और व्याख्या' तथा कई शोधपत्र प्रकाशित।

सम्मानः विश्व हिंदी सम्मान, भारतीय दूतावास, मास्को का हिंदी प्रचारक पुरस्कार तथा अन्य।

संप्रति : आप अफ्रीका और एशिया अध्ययन संस्थान, मास्को विश्वविद्यालय, मास्को, रूस में एसोसिएट प्रोफेसर हैं।

कालिदास की रचना 'नल और दमयंती' का रूसी भाषा में अनुवाद किया था। उनके बाद कालिदास की रचना 'अभिज्ञानशाकुंतलम्' का अनुवाद कंस्तांतिन बालमंत (1867-1942) ने किया। फिर उनके परवर्ती कवि ईगर सिविरयानिन (1887-1941) ने भी कालिदास की कई रचनाओं के अनुवाद किए। इस तरह हम देखते हैं कि 19वीं शताब्दी में रूस में भारत के प्रति लगाव बढ़ता जा रहा था। रूसी लोग प्राचीन भारतीय संस्कृति, दर्शन, इतिहास और कला में गहरी रुचि ले रहे थे। इसीलिए रूसी भाषा में सबसे पहले कालिदास की रचनाओं के अनुवाद सामने आए।

19वीं सदी के अंत में रूसी लेखकों अ. विगोरनित्स्की (1897), अ.फ. गिल्फ़ेर्दिंग (1899) और इ.प. यागेल्लो (1902) ने 'हिंदुस्तानी' भाषा के बारे में पहली पुस्तकें लिखीं। आरंभ में ये व्यावहारिक पाठ्य-पुस्तकें थीं और इनमें भाषा के साधारण नियम ही दिए गए थे लेकिन आज इन लेखकों और इन पुस्तकों को रूस में कोई याद भी नहीं करता।

1917 की क्रांति के बाद रूस में आधुनिक भारतीय भाषाओं का गंभीरता से अध्ययन शुरू हुआ। रूस में सबसे पहले उर्दू का अध्ययन शुरू किया गया। अलेक्सेय बरान्निकफ़ (1890-1952) ने लेनिनग्राद विश्वविद्यालय (सेंट पीटर्सबर्ग) में हिंदी या हिंदुस्तानी का अध्यापन शुरू किया। उन्हें रूस में भारतीय भाषाओं के अध्ययन और अध्यापन की परंपरा का संस्थापक कहा जा सकता है। 1934 में उन्होंने 'हिंदुस्तानी' (हिंदी व उर्दू) के व्याकरण की पहली पाठ्य-पुस्तक तैयार की। उन्होंने ही सबसे पहले रूस में हिंदी-रूसी और रूसी-हिंदी शब्दकोशों के निर्माण का काम शुरू किया। इसके अलावा उन्होंने लल्लू जी लाल की रचना 'प्रेम सागर' का अध्ययन और विश्लेषण किया। उन्होंने ही तुलसी के 'रामचरितमानस' का रूसी भाषा में पहला अनुवाद किया। 'रामचरितमानस' का अनुवाद करने में उन्हें 10 साल लगा था। उनके इस काम को रूस में आगे बढ़ानेवालों में वीक्तर बालिन, वसीली बिस्क्रोव्नी, सिम्योन रूदिन, गिओर्गी ज़ोग्राफ़ और ततियाना कतेनिना का नाम प्रसिद्ध है।

वसीली बिस्क्रोव्नी (1908-1978) ने 2 खंडों में जो हिंदी-रूसी शब्दकोश बनाया था, उसका इस्तेमाल आज भी रूस में किया जाता है और उसे हिंदी-रूसी भाषा का सर्वश्रेष्ठ शब्दकोश माना जाता है।

वीक्तर बालिन ने हिंदी साहित्य के इतिहास पर काम किया और मैथिली, अवधी और ब्रज भाषाओं के साहित्य का गहरा अध्ययन किया था। उन्होंने रूसी छात्रों के लिए हिंदी साहित्य के इतिहास का विस्तृत पाठ्यक्रम भी तैयार किया। वीक्तर बालिन को रूस में प्रेमचंद के उपन्यासों और कहानियों के अनुवाद के लिए भी याद किया जाता है। उन्होंने प्रेमचंद के 'निर्मला', 'कर्मभूमि' और 'रंगभूमि' जैसे उपन्यासों का रूसी भाषा में अनुवाद किया था।

प्रोफ़ेसर सिम्योन रूदिन (1929-1978) आधुनिक भारतीय भाषाओं के ध्वनि-विज्ञान के क्षेत्र में अपने गहरे विश्लेषण के लिए मशहूर हैं। उन्हें भारतीय भाषाओं की ध्वनियों की इतनी ज़्यादा जानकारी थी कि वे हिंदी, बांग्ला और मराठी जैसी भारोपीय परिवार की भाषाएँ बड़ी आसानी से बोल लेते थे।

गिओर्गी ज़ोग्राफ़ ने हिंदी और उर्दू भाषाओं के इतिहास और भारतीय भाषाओं के आधुनिक रूप का तुलनात्मक अध्ययन किया तथा उत्तरी भारत के मुहावरों, लोकोक्तियों और भारतीय लोककथाओं पर बड़ा काम किया।

मास्को में भारतीय भाषाओं का अध्ययन और अध्यापन दूसरे विश्वयुद्ध के बाद शुरू हुआ। 6ठे दशक में मास्को विश्वविद्यालय में पूर्वी भाषा अध्ययन संस्थान की स्थापना की गई और उसमें 'हिंदुस्तानी' भाषा पढ़ाई जाने लगी। 1957 में भारत से डॉ. रामकुमार वर्मा को हिंदुस्तानी के अध्ययन व अध्यापन के लिए कोर्स तैयार करने के लिए बुलाया गया था। उन्होंने दो-ढाई साल रूस में रहकर यह काम किया। लगभग उसी समय मास्को के अंतरराष्ट्रीय संबंध संस्थान में भी पूर्वी भाषा अध्ययन केंद्र की स्थापना की गई और वहाँ भी 'हिंदुस्तानी' भाषा पढ़ाई जाने लगी। मास्को के पूर्वी देश अध्ययन संस्थान नामक इंस्टीट्यूट में भी उन्हीं दिनों भारतीय भाषाओं और साहित्य का सक्रिय रूप से अध्ययन शुरू किया गया। येव्गेनी चेलिशेफ़, व्लादीमिर चेर्निशोफ़, तत्याना येलिजारिन्कवा और व्लादीमिर लिपिरोव्स्की हिंदी के क्षेत्र में इस इंस्टीट्यूट के प्रमुख विद्वान माने जाते हैं।

आजकल रूस में हिंदी शिक्षण के मुख्य केंद्र मास्को, सेंट पीटर्सबर्ग तथा व्लादिवोस्तोक में स्थित हैं। मास्को में 3 मुख्य केंद्र हैं जहाँ हिंदी बी.ए. और एम.ए. के स्तर तक पढ़ाई जाती है। ये केंद्र हैं—मास्को विश्वविद्यालय, मानविकी राजकीय विश्वविद्यालय तथा मास्को अंतरराष्ट्रीय संबंध विश्वविद्यालय। तीनों जगह छात्रों को अलग-अलग विषयों में बी.ए. और एम.ए. की डिग्रियाँ मिलती

हैं। उदाहरण के लिए मास्को विश्वविद्यालय में भारतीय इतिहास, भारतीय भाषाशास्त्र और साहित्य, भारतीय अर्थव्यवस्था तथा भारतीय राजनीति में डिग्री मिल सकती है। इन सब विषयों में डिग्री प्राप्त करने के लिए हिंदी सीखना अनिवार्य है। हिंदी के साथ दूसरे विषय भी पढ़ना अनिवार्य हैं। जो विद्यार्थी इतिहास चुनते हैं उनके पाठ्यक्रम में दुनिया का इतिहास, भारतीय इतिहास इत्यादि विषय शामिल होते हैं। भारतीय भाषाशास्त्र सीखनेवालों को आधुनिकतम भाषाविज्ञान के सिद्धांत विस्तार से पढ़ने पड़ते हैं। साहित्यिक आलोचना में दिलचस्पी लेनेवाले छात्रों को आलोचना के प्रमुख सिद्धांत और दुनिया भर के साहित्य का इतिहास पढ़ाया जाता है आदि-आदि। भारतीय इतिहास, भारतीय भाषाशास्त्र और साहित्यिक आलोचना के छात्रों के लिए संस्कृत सीखना आवश्यक समझा जाता है। सभी छात्रों के लिए—चाहे वे भारतीय समाजशास्त्र पढ़ रहे हों या भारतीय अर्थशास्त्र या भारतीय भाषाशास्त्र—पश्चिमी भाषाओं के साथ-साथ (जिनमें अंग्रेज़ी मुख्य है) कम से कम 2 भारतीय भाषाएँ सीखना ज़रूरी है। हिंदी के साथ-साथ दूसरी भारतीय भाषा के रूप में तमिल, उर्दू, बांग्ला, मराठी, पंजाबी आदि भाषाएँ चुनी जा सकती हैं।

1917 की क्रांति के बाद रूस में आधुनिक भारतीय भाषाओं का गंभीरता से अध्ययन शुरू हुआ। रूस में सबसे पहले उर्दू का अध्ययन शुरू किया गया। अलेक्सेय बरान्निकफ़ (1890-1952) ने लेनिनग्राद (सेंट पीटर्सबर्ग) विश्वविद्यालय में हिंदी या हिंदुस्तानी का अध्यापन शुरू किया। उन्हें रूस में भारतीय भाषाओं के अध्ययन और अध्यापन की परंपरा का संस्थापक कहा जा सकता है। 1934 में उन्होंने 'हिंदुस्तानी' (हिंदी व उर्दू) के व्याकरण की पहली पाठ्य-पुस्तक तैयार की।

मास्को विश्वविद्यालय के भारतीय भाषा विभाग का मैं यहाँ विशेष रूप से ज़िक्र करना चाहूँगी क्योंकि मैं वहीं पर पढ़ाती हूँ। भारतीय भाषा विभाग की स्थापना मिखाइल सोतनिकफ़ ने की थी लेकिन विभाग के प्रसार में सबसे बड़ी भूमिका अनातोली अक्स्योनफ़ ने निभाई। आजकल हम मुख्य तौर पर हिंदी, उर्दू और तमिल भाषाएँ पढ़ाते हैं। दूसरी भाषा के रूप में हम बांग्ला, मराठी, संस्कृत और पंजाबी भाषाएँ पढ़ाते हैं। हमारे भारतीय भाषा विभाग में कुल 10 प्राध्यापक पढ़ाते हैं। प्राध्यापन के साथ-साथ ये लोग अनुवाद, आलोचना और भाषा वैज्ञानिक का काम करते हैं। प्रोफ़ेसर ज़ख़ारिन संस्कृत, तेलुगू, कश्मीरी, पाली, हिंदी और उर्दू के विद्वान हैं और आजकल भारतीय भाषा विभाग के अध्यक्ष हैं। डॉ. अलेक्सान्दर दुब्यान्स्की तमिल भाषा के एसोसिएट प्रोफ़ेसर हैं। एसोसिएट प्रोफ़ेसर यूल्या अलेख़ानवा संस्कृत भाषा और साहित्य की विद्वान हैं और संस्कृत नाटक पर उन्होंने विशेष काम किया है। डॉ. गुज़ेल स्त्रिलकोवा मराठी और आधुनिक हिंदी साहित्य तथा डॉ. येकतिरिना अकीमुश्किना उर्दू भाषा और साहित्य की विद्वान हैं और हिंदी भाषा भी पढ़ाती हैं। डॉ. येकतेरिना पानिना रूसी छात्रों को हिंदी भाषा सिखाती हैं। डॉ. अनस्तसीया गूरिया की रुचि संस्कृत कविता और आधुनिक हिंदी कविता में है। उन्होंने कुँवर नारायण, विश्वनाथ प्रसाद तिवारी, लीलाधर मंडलोई तथा सुधीर सक्सेना जैसे हिंदी कवियों की रचनाओं का रूसी भाषा में अनुवाद किया है। मरीया दिदेन्का हमारे विभाग की सबसे युवा प्राध्यापिका हैं और अभी 2 साल पहले ही उन्होंने हिंदी पढ़ाना शुरू किया है। वे भारतीय अर्थव्यवस्था की विशेषज्ञ हैं। इनके अलावा हमारे विभाग में एक भारतीय प्राध्यापक अनिल जनविजय हिंदी के कवि हैं और छात्रों को अनुवाद और हिंदी साहित्य पढ़ाते हैं।

शिक्षा का माध्यम रूसी है। इसका मतलब यह है कि सारे विषय (जिनमें हिंदी साहित्य का इतिहास भी शामिल है) रूसी भाषा में पढ़ाए जाते हैं। इसका कारण यह है कि रूसी छात्रों को हिंदी एकदम शुरू से (यानी वर्णमाला से) सीखनी पड़ती है। इसलिए मास्को आदि विदेशी विश्वविद्यालयों में वैसा पाठ्यक्रम नहीं बनाया जा सकता है जैसा भारतीय विश्वविद्यालयों में बी.ए. और एम.ए. स्तर तक हिंदी पढ़ाने के लिए लागू है। हमारे लक्ष्य भी दूसरे हैं। हमारे यहाँ यह परंपरा है कि भारतीय इतिहास, भारतीय समाजशास्त्र और भारतीय अर्थशास्त्र में बी.ए. करनेवाले छात्रों को सिर्फ़ हिंदी साहित्य ही नहीं बल्कि अपने मुख्य विषयों की किताबें भी हिंदी में पढ़नी चाहिए। वैसे तो अभी तक के हिंदी शिक्षण के इतिहास में पढ़ने तथा पढ़ानेवालों के लक्ष्य बदलते रहे हैं।

सोवियत संघ के दौर में समझा जाता था कि हिंदी और दूसरी भारतीय भाषाएँ सीखने-सिखाने के साथ-साथ एक प्रमुख लक्ष्य यह भी है कि छात्रों के बीच मार्क्सवादी लेनिनवादी विचारधारा, सोवियत रहन-सहन और सोवियत कम्युनिस्ट पार्टी की नीतियों

का भी प्रचार किया जाए। इसलिए तीसरे और चौथे साल के छात्र अपना ज़्यादा समय हिंदी में सोवियत कम्युनिस्ट पार्टी का कार्यक्रम और कम्युनिस्ट पार्टी की हर कांग्रेस की कार्यसूची को ज़बानी याद करने में लगाते थे। हिंदी के लेखकों तथा कवियों की रचनाएँ पढ़ने के लिए तब उनके पास बहुत कम समय बचता था। इंटरनेट उस समय नहीं था सिर्फ़ भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी का हिंदी का अखबार 'जनयुग' ही उन्हें देर-सवेर पढ़ने के लिए मिलता था। हिंदी की जो पाठ्य-पुस्तकें उस समय बनाई जाती थीं उनमें यही विचार प्रमुख रहता था कि रूसी अध्यापकों को यह अच्छी तरह मालूम है कि हिंदी कैसी होनी चाहिए और अगर कोई हिंदी-भाषी कहे कि पाठ्य-पुस्तक में गलतियाँ हैं तो इसका मतलब यह है कि उसे खुद हिंदी नहीं आती है।

सोवियत संघ में भारतीय भाषाएँ सीखने-सिखाने के क्षेत्र में कमियों के साथ-साथ खूबियाँ भी थीं। लौह-पट के अंदर रहते हुए बहुत कम लोगों को विदेश जाने का मौका मिलता था इसलिए सारे रूसी लोग दूरस्थ रहस्यपूर्ण भारत के सपने देखा करते थे। हिंदी के छात्रों को अपने सपनों पर अमल करने का मौका तभी मिल सकता था बशर्ते कि वे खूब मेहनत करें और उन्हें परीक्षा में अच्छे नंबर मिलें। इस तरह उनके मन में हिंदी और दूसरी भारतीय भाषाएँ सीखने की प्रेरणा पैदा होती थी। दूसरी प्रेरणादायक बात यह थी कि हिंदी आदि भारतीय भाषाएँ सीखने के बाद कोई अच्छी दिलचस्प नौकरी मिल सकती थी। मिसाल के तौर पर विदेश मंत्रालय में, मास्को रेडियो में, प्रगति प्रकाशन में या किसी शोध संस्थान में। उस समय लोग पैसा कमाने के बारे में नहीं सोचते थे और वैसे मौके भी कम मिलते थे। शोध करना प्रतिष्ठित काम समझा जाता था। सोवियत संघ के माहौल का एक और गुण यह था कि जो भारतीय लोग सोवियत संघ आते थे वे ज़्यादातर मार्क्सवादी प्रचार के धोखे में चले आते थे। सोवियत संघ आनेवाले ज़्यादातर भारतीय सदाचारी और बुद्धिजीवी होते थे इसलिए रूसी लोगों पर उनका बड़ा प्रभाव पड़ता था। मैं विस्तार से सोवियत वातावरण का वर्णन कर रही हूँ क्योंकि उस पर दूसरी सारी चीज़ें निर्भर करती थीं, यानी भाषा कैसे सिखाई जाए, उसका उपयोग किन-किन क्षेत्रों में किया जाए, विद्यार्थियों में यह भाषा सीखने की इच्छा कैसे पैदा की जाए, वगैरह-वगैरह।

जब रूस में पेरेस्त्रोइका (पुनर्निर्माण या पुनर्गठन) शुरू हुआ तो एकदम सारा वातावरण बदल गया। अब भारत जाने के लिए यह ज़रूरी नहीं था कि कोई अच्छा और सफल विद्यार्थी भी हो। अब हर व्यक्ति टिकट खरीद कर भारत की यात्रा कर सकता था। भारत घूमकर लौटनेवाले छात्र एक-दूसरे को यह बताने लगे कि वहाँ तो अंग्रेज़ी से भी काम चल जाता है। हिंदी जानने की कोई ख़ास ज़रूरत नहीं है। विशेष रूप से किताबी हिंदी जानने की तो बिल्कुल ज़रूरत नहीं है। आपकी शुद्ध हिंदी सुनकर भारत में लोग हँसते हैं। अब भारत से भी पहलेवाले उदार बुद्धिजीवी कम्युनिस्टों की जगह बिल्कुल दूसरे किस्म के लोग रूस आने लगे जिनको भारतीय साहित्य और संस्कृति में इतनी दिलचस्पी नहीं थी जितनी उनकी दिलचस्पी पैसा कमाने में थी। ऐसे लोगों से शादी-वादी की बातें करना उबाऊ बात थी। हिंदी सीखकर नौकरी पाने की संभावनाएँ भी कम होती गईं क्योंकि नए रूस में हिंदी तथा दूसरी भारतीय भाषाओं का उपयोग करने के क्षेत्र पहले से सीमित हो गए थे। रूस की नई सरकार न तो समाजवादी व्यवस्था की सफलताओं का प्रचार करने में रुचि रखती थी और न ही नई पूँजीवादी व्यवस्था का प्रचार करने में। इसलिए मास्को रेडियो में धीरे-धीरे भारतीय भाषाओं में प्रसारण कम होने लगा, प्रगति प्रकाशन में रूसी से भारतीय भाषाओं में अनुवाद करने का काम बंद कर दिया गया। हिंदी में शोध करना भी इतना प्रतिष्ठित काम नहीं रह गया था क्योंकि ऐसे काम के लिए बहुत पैसे नहीं मिलते थे। इसके अतिरिक्त जब छात्रों को हिंदुस्तान और पश्चिमी देशों में किए जानेवाले शोधकार्यों की जानकारी मिली तो उन्हें पता चला कि अर्थशास्त्र जैसे क्षेत्रों में ही नहीं इतिहास और भाषाशास्त्र जैसे क्षेत्रों में भी अंतरराष्ट्रीय स्तर के शोध-अनुसंधान ज़्यादातर अंग्रेज़ी में ही किए जा रहे हैं।

इस स्थिति में हिंदी के अध्ययन-अध्यापन के क्षेत्र में भी एकदम नई समस्याएँ पैदा हो गईं। सबसे बड़ी समस्या तो यह थी कि अब नई पीढ़ी के विद्यार्थियों को यह भी बताना पड़ता था कि हिंदी सीखने के बाद उनके लिए नौकरी पाने की कोई गारंटी नहीं है। पहले हम सोचते थे कि इस नई दुनिया में बहुत कम लोग हिंदी सीखने आएँगे लेकिन ऐसा नहीं हुआ। सरकार की नीति बदलती रही लेकिन रूसी युवा पीढ़ी पहले की तरह जिज्ञासु रही और भारतीय संस्कृति तथा सभ्यता में रूसी लोगों की दिलचस्पी बढ़ती गई। धीरे-धीरे छात्रों को यह मालूम होने लगा कि इस नए वातावरण में भी ऐसे क्षेत्र हैं जहाँ हिंदी का इस्तेमाल किया जा सकता है। उदाहरण के तौर पर भारतीय भाषाशास्त्र के छात्रों के लिए हिंदी में

लिखे मानक हिंदी के व्याकरण ही नहीं बल्कि हिंदी बोलियों के व्याकरण पढ़ना भी ज़रूरी है।

भारतीय समाजशास्त्र के छात्रों को आम लोगों से बात करने के लिए, टी.वी. आदि जनसंपर्क साधनों द्वारा प्रसारित राजनीतिक वाद-विवाद को समझने के लिए अच्छी हिंदी आनी चाहिए। हर छात्र को चाहे वह भारतीय अर्थशास्त्र का विशेषज्ञ बनना चाहता हो या प्राचीन भारतीय इतिहास सीखना चाहता हो, भारतीय जनता की मानसिकता समझने के लिए, भारतीय जीवन को जानने-बूझने के लिए हिंदी में लिखा गद्य और पद्य पढ़ना बहुत ज़रूरी है और अंततः हिंदुस्तानी लोग कितनी भी अच्छी अंग्रेज़ी क्यों न जानते हों, उनके साथ तभी असली दोस्ती बनी रह सकती है जब उनकी मातृ भाषा में उनसे संपर्क और बातचीत होती है। इस तरह पेरेस्त्रोइका (पुनर्निर्माण या पुनर्गठन) के दौर के बाद भी रूस में हिंदी सीखने के इच्छुक युवक-युवतियों की संख्या में कोई कमी नहीं हुई। उल्टा हिंदी सीखनेवालों की तादाद कई गुणा बढ़ गई लेकिन वक़्त के तकाज़ों के अनुसार और छात्रों की आवश्यकताओं और अपेक्षाओं के अनुकूल हिंदी शिक्षण की विधि बदलनी पड़ गई।

इस स्थिति में हिंदी के अध्ययन-अध्यापन के क्षेत्र में भी एकदम नई समस्याएँ पैदा हो गईं। सबसे बड़ी समस्या तो यह थी कि अब नई पीढ़ी के विद्यार्थियों को यह भी बताना पड़ता था कि हिंदी सीखने के बाद उनके लिए नौकरी पाने की कोई गारंटी नहीं है। पहले हम सोचते थे कि इस नई दुनिया में बहुत कम लोग हिंदी सीखने आएँगे लेकिन ऐसा नहीं हुआ। सरकार की नीति बदलती रही लेकिन युवा रूसी पीढ़ी पहले की तरह जिज्ञासु रही और भारतीय संस्कृति तथा सभ्यता में रूसी लोगों की दिलचस्पी बढ़ती गई।

सबसे पहले पुरानी किताबें छोड़कर नई पाठ्य-पुस्तकें चुननी पड़ीं। हिंदी शिक्षण के कुछ केंद्रों में, मिसाल के तौर पर मास्को अंतरराष्ट्रीय संबंध विश्वविद्यालय में यह माना जाता है कि अपनी ही पाठ्य-पुस्तकें तैयार करके छात्रों को उन्हीं के माध्यम से हिंदी पढ़ाई जानी चाहिए परंतु मास्को विश्वविद्यालय और मानविकी राजकीय विश्वविद्यालय के प्राध्यापकों का ख़याल है कि अगर हम अपनी ज़रूरत के अनुसार किसी दूसरी मौजूद किताब को ले सकते हैं तो नई किताब बनाने की क्या ज़रूरत है? इसीलिए मास्को विश्वविद्यालय में हमने हिंदी का आधारभूत कोर्स पढ़ाने के लिए रूपर्ट स्नेल और साईमन वाईटमन की किताब 'टीच योरसेल्फ़ हिंदी' और केंद्रीय हिंदी निदेशालय द्वारा प्रकाशित 'हिंदी रिकॉर्ड/कैसेट की वाचन-पुस्तिका' को चुना। इसका मुख्य कारण यह है कि दोनों किताबों में लेखकों ने बोलचाल की शब्दावली चुनने में कमाल किया है। लगता है कि उन्होंने शब्द आवृत्ति कोश का इस्तेमाल किया है। दूसरी बात यह है कि दोनों किताबें हिंदी बोलने का अभ्यास कराने के लिए लाभदायक लगती हैं। दोनों किताबों में संवाद हैं जिनकी बुनियाद पर छात्र अपने संवाद बनाकर पहले ही पाठ के बाद से आसानी के साथ हिंदी में थोड़ी-बहुत बातचीत करने लगते हैं। मास्को विश्वविद्यालय के नियमों के अनुसार हमारे यहाँ पढ़ाई का माध्यम रूसी भाषा है इसलिए हर पाठ के अंत में जो शब्दावली दी गई है उसका हमें रूसी में अनुवाद करना पड़ा।

व्याकरण का अनुवाद हमने नहीं किया क्योंकि रूपर्ट स्नेल और साईमन वाईटमन की किताब उन विद्यार्थियों के लिए लिखी गई है जिनकी मातृ भाषा अंग्रेज़ी है। अंग्रेज़ी और रूसी बोलनेवाले छात्रों को हिंदी भाषा सीखते समय अलग-अलग दिक्कतों का सामना करना पड़ता है। उदाहरण के तौर पर रूसी छात्रों के लिए 'अपना' जैसे सर्वनाम का प्रयोग करना कठिन नहीं है क्योंकि रूसी में भी ऐसा सर्वनाम है जबकि अंग्रेज़ी बोलनेवाले विद्यार्थियों को समझाना पड़ता है कि यह सर्वनाम कैसे इस्तेमाल किया जाए, उल्टा अंग्रेज़ी व्याकरण में नियमित रूप से यह अंतर प्रकट किया जाता है कि क्रिया का व्यापार करनेवाला खुद कर्ता है या यह व्यापार किसी मध्यस्थ के ज़रिए किया जा रहा है। रूसी में ऐसा नहीं है। आदमी चाहे खुद कुछ सीता है या किसी से सिलवाता है, रूसी में एक ही क्रिया का इस्तेमाल किया जाता है। इसलिए रूसी छात्रों के लिए व्याकरण बनाने से पहले हिंदी और रूसी भाषाओं का तुलनात्मक अध्ययन करना पड़ता है।

रूसी में हिंदी के व्याकरण पर बहुत सी अच्छी किताबें हैं उदाहरण के लिए व्लादीमिर लिपिरोवस्की की किताबें। उनको बुनियाद बनाकर तथा बहुवर्षीय हिंदी पढ़ाने के अपने अनुभव का

उपयोग करके कि हिंदी सीखते समय रूसी छात्र किस प्रकार की गलतियाँ कर सकते हैं, हमने रूपर्ट स्नेल और साईमन वाईटमन की किताब के हर पाठ के लिए व्याकरण की टिप्पणी तैयार की लेकिन एक बात है व्याकरण का नियम समझाना और दूसरी बात है ऐसे अभ्यास कराना जिनके माध्यम से मातृ भाषा में अनुपस्थित व्याकरण का अंतर सीखी जानेवाली भाषा में स्वचालित आ जाए। अक्सर ऐसा होता है कि व्याकरण का नियम समझने पर भी विद्यार्थी बोलते और लिखते समय गलतियाँ करते हैं। वे खुद अपनी गलतियाँ ठीक कर सकते हैं क्योंकि व्याकरण का नियम जानते हैं लेकिन गलतियाँ न होने देने के लिए विशेष अभ्यास करना बहुत ज़रूरी है।

हमारी दृष्टि में सही हिंदी बोलने और लिखने का अभ्यास कराने के लिए सबसे लाभदायक काम है रूसी से हिंदी में अनुवाद करना। इसलिए पाठ्य-पुस्तक के हर पाठ के लिए हमने 20 से लेकर 50 तक रूसी वाक्यों को अनुवाद के लिए तैयार किया। हिंदुस्तान से दूर रहते हुए सबसे मुश्किल काम है छात्रों से बोलचाल का अभ्यास कराना। इसलिए हमारे पाठ्यक्रम में शुरू से ही विभिन्न विषयों पर बोलने की ओर विशेष ध्यान दिया जाता है। हम भरसक प्रयत्न करते हैं कि पहले ही पाठ से छात्र यह महसूस करने लगे कि वह हिंदी बोल सकता है।

हमारी दृष्टि में सही हिंदी बोलने और लिखने का अभ्यास कराने के लिए सबसे लाभदायक काम है रूसी से हिंदी में अनुवाद करना। इसलिए पाठ्य-पुस्तक के हर पाठ के लिए हमने 20 से लेकर 50 तक रूसी वाक्यों को अनुवाद के लिए तैयार किया। हिंदुस्तान से दूर रहते हुए सबसे मुश्किल काम है छात्रों से बोलचाल का अभ्यास कराना। इसलिए हमारे पाठ्यक्रम में शुरू से ही विभिन्न विषयों पर बोलने की ओर विशेष ध्यान दिया जाता है।

कुछ प्राध्यापकों का विचार है कि अगर विदेशी भाषा बोलनेवाले को रोककर उसकी गलतियाँ ठीक की जाएँगी तो वह घबरा जाएगा और अगर एक बार अटक गया तो फिर बाद में कुछ बोल नहीं पाएगा। ऐसे प्राध्यापकों का मानना है कि शुरू से छात्र चाहे जितनी गलतियाँ करके कुछ न कुछ बोले, बाद में उसे अपने आप ठीक हिंदी आ जाएगी। हम ऐसे विचारों से सहमत नहीं हैं। हम सोचते हैं कि अपने आप कुछ नहीं आता। अगर प्यार से गलती ठीक करके फिर छात्र से सही वाक्य दोहराने के लिए कहा जाए तो वह जल्दी और अच्छी हिंदी सीखेगा। हमारे छात्र हिंदी की पढ़ाई के इस तरीके के आदी हो चुके हैं और अगर कोई बाहर का प्राध्यापक आकर गलतियाँ ठीक नहीं करता तो वे उसे लापरवाह समझते हैं।

हिंदी की आधारभूत पाठ्य-पुस्तक की पढ़ाई ख़त्म होने के बाद हम छात्रों को 1-2 हिंदी फ़िल्में दिखाते हैं और एक जासूसी उपन्यास पढ़ाते हैं। फ़िल्म और जासूसी उपन्यास असली भारतीय संस्कृति का तो बहुत अच्छा उदाहरण नहीं देते पर भाषा पढ़ाने के लिए वे इसलिए लाभदायक समझे जाते हैं कि उनकी शब्दावली सीमित होती है और छात्र बार-बार शब्दकोश का इस्तेमाल किए बिना उनको समझ सकते हैं। फ़िल्म देखने का एक और फ़ायदा यह है कि ध्वनि अभिलेखन समझने की आदत पड़ जाती है जो लिखित पाठ समझने से बहुत ज़्यादा मुश्किल होता है। जासूसी उपन्यास और फ़िल्में हँसते-खेलते पढ़ाई जाती हैं। छात्र उपन्यास या फ़िल्म के टुकड़ों को आधार बनाकर नए शब्दों का इस्तेमाल करके छोटे-मोटे नाटक बनाते हैं। जिन घटनाओं का या नायकों का वर्णन नहीं हुआ है उनका वर्णन करते हैं। उदाहरण के तौर पर जासूस का अगला-पिछला खानदान क्या हो सकता है, वह जासूस कैसे बना, उपन्यास ख़त्म होने के बाद नायकों और खलनायकों को क्या हुआ आदि-आदि।

दूसरे साल से हम छात्रों को वास्तविक हिंदी साहित्य भी पढ़ाना शुरू कर देते हैं। दूसरे, तीसरे तथा चौथे साल के विद्यार्थियों के लिए हमने कुछ प्रसिद्ध लेखकों की रचनाएँ इकट्ठी करके एक रीडर बनाई है। कहानियों का चुनाव करते हुए हम ने इस बात का खयाल रखा कि उनके माध्यम से छात्रों को भारत की संस्कृति और भारत की आधुनिक समस्याओं का भी ज़्यादा से ज़्यादा ज्ञान प्राप्त हो सके। रीडर में कहानियों से पहले हर लेखक का परिचय और उसकी रचनात्मकता के बारे में एक संक्षिप्त टिप्पणी भी दी गई है। हर कहानी के अंत में शब्दकोश और कई प्रकार के अभ्यास दिए गए हैं। मुख्य अभ्यासों में निम्नलिखित प्रकार के अभ्यास शामिल हैं—कहानी में मिले नए शब्द उपयोग करके हिंदी से रूसी में और

रूसी से हिंदी में अनुवाद करने का अभ्यास, हिंदी की लोकोक्तियों और मुहावरों का इस्तेमाल करके वाक्य बनाना, नए शब्दों के समानार्थक और विपरीतार्थक शब्द लिखना, कहानी में शामिल शब्दों को उठाकर उनसे कोई दूसरी काल्पनिक घटना या कहानी बनाना, मुख्य पात्रों के चरित्र का वर्णन करना आदि।

रीडर में कहानियों का क्रम ऐसा रखा गया है कि सरल भाषा में लिखी कहानियाँ आरंभ में रखी गई हैं और जिन कहानियों की भाषा कठिन है उनको बाद में रखा गया है। इस तरह दूसरे साल के विद्यार्थियों को हम भीष्म साहनी, कृश्नचंदर, अमरकांत और महेश दर्पण की ऐसी कहानियाँ पढ़ाते हैं जो सरल भाषा में लिखी हुई हैं। तीसरे वर्ष के छात्रों के लिए हम मोहन राकेश, कमलेश्वर, काशीनाथ सिंह, प्रेमचंद, राजकमल चौधरी, पुष्पा सक्सेना आदि लेखकों की कहानियाँ चुनते हैं। चौथे साल के विद्यार्थियों को पढ़ाने के लिए हम निर्मल वर्मा, रघुवीर सहाय, कृष्ण बलदेव वैद, उदयप्रकाश आदि लेखकों की रचनाओं का प्रयोग करते हैं जिनकी भाषा थोड़ी कठिन होती है। एम.ए. के छात्रों को इन सब लेखकों के साथ-साथ समकालीन नए लेखकों की रचनाओं का भी परिचय दिया जाता है।

तीसरे साल से हम छात्रों को साहित्य के साथ-साथ अलग से राजनीतिक, आर्थिक, दार्शनिक और सामाजिक विषयों पर विभिन्न निबंध भी पढ़ाते हैं। निबंध इस आधार पर चुने जाते हैं कि उनमें तात्कालिक समस्याएँ पेश की गई हों ताकि हम छात्रों के साथ उन समस्याओं के समाधान के तरीकों पर भी दिलचस्प वाद-विवाद कर सकें। हम सब भरसक प्रयत्न करते हैं कि छात्र कुछ सीखकर यांत्रिक तौर पर उसे न दोहराएँ बल्कि प्राप्त किए हुए ज्ञान का रचनात्मक तरीके से इस्तेमाल करें। इसलिए हम छात्रों को अपने विचार व्यक्त करने के लिए भी प्रोत्साहित करते हैं।

राजनीतिक, आर्थिक, दार्शनिक और सामाजिक विषयों पर वाद-विवाद करते समय हमें कुछ समस्याओं का सामना करना पड़ता है। सबसे बड़ी समस्या बोलचाल की भाषा की है। हिंदी पढ़ाने के पाठ्यक्रमों में हमेशा लिखा होता है कि पहले बोलचाल की भाषा सिखाई जाए और इसके बाद 'किताबी' हिंदी पर ज़ोर दिया जाए। आम तौर पर बोलचाल की हिंदी का मतलब होता है—शादी-वादी, खाने-वाने की बातें करने की क्षमता यानी अपने परिवार के बारे में बताना, परिचय करना-कराना, रास्ता पूछना आदि। ऐसी बातें सिखाने के लिए बहुत-सी किताबें लिखी जा चुकी हैं लेकिन गंभीर विषयों पर बातचीत करने के लिए अभी तक किसी ने कोई किताब नहीं लिखी है। अंग्रेज़ी की तरह रूसी में भी जो शब्द राजनीति पर लिखे निबंध में उपयोग किए गए, वे ही शब्द दोस्ताना बातचीत में इस्तेमाल किए जाएँगे। इसलिए अगर हमारे छात्रों को 'अनुसूचित जातियाँ और जनजातियाँ' जैसा पारिभाषिक शब्द समाचार पत्र में पढ़ने को मिलता है तो वही शब्द वे बातचीत में उपयोग करते हैं। जब हिंदी बोलनेवाले उनकी भाषा को कृत्रिम तथा किताबी समझते हैं तब छात्र परेशान होकर अध्यापक पर दोष लगाते हैं कि उनको गलत भाषा सिखाई गई थी। ऐसे किसी मामूली नियम से काम नहीं चलता कि सारे तत्सम् शब्दों के बदले अंग्रेज़ी शब्दों का इस्तेमाल किया जाए क्योंकि कोड स्वीचिंग के नियम इतने आसान नहीं हैं। इन नियमों को समझने के लिए ज़्यादा अनुभव चाहिए। अफ़सोस की बात यह है कि ऐसा अनुभव प्राप्त करना आसान नहीं है क्योंकि पढ़े-लिखे लोग आम तौर पर गंभीर विषयों पर अंग्रेज़ी में बात करते हैं और जिन लोगों को अच्छी शिक्षा नहीं मिली है उनको गंभीर बातों में कोई दिलचस्पी नहीं है।

कुछ और समस्याएँ भी हैं जिनको हम सुलझाने की कोशिश कर रहे हैं लेकिन एक बहुत बड़ी समस्या का समाधान हमारे बस की बात नहीं है। यह है हिंदी के उपयोग का विस्तार। जब हिंदी का हर औपचारिक क्षेत्र में इस्तेमाल किया जाएगा, हमारे विद्यार्थियों को अपनी मेहनत का फल मिलेगा। कभी-कभी कहा जाता है कि जवान पीढ़ी नालायक है, उसको पैसे का लालच है, ज्ञान का नहीं। हमारे विद्यार्थी ऐसे नहीं हैं। वे भारत के बारे में ज़्यादा ज्ञान प्राप्त करने में बहुत रुचि लेते हैं, इसलिए विश्वास से कहा जा सकता है कि रूस में हिंदी का भविष्य उज्ज्वल है।

उससे पहले 18वीं सदी के आख़िर में भारतीय भाषाओं के अध्ययन का प्रयास तो किया गया था लेकिन व्यवस्थित रूप से उनके अध्ययन-अध्यापन की कोई व्यवस्था नहीं थी।

मास्को, रूस
khokhl@iaas.msu.ru

29

21वीं शताब्दी में हिंदी शिक्षण : ऑस्ट्रेलिया और एशियाई-पैसिफ़िक संदर्भ में

—डॉ. पीटर फ्रीडलैंडर

जन्म : 1956, कैंब्रिज, इंग्लैंड

शिक्षा : सन् 1991 में आपने एस.ओ.ए.एस, लंदन विश्वविद्यालय से, हिंदी के मध्यकालीन कवि, संत रविदास के जीवन एवं रचनाओं पर आधारित अपना पीएचडी पूर्ण किया है।

प्रकाशन : रविदास की जीवनी और कृतियाँ (1992), वेल्कुम संस्था में हिंदी हस्तलेखों का विवरणात्मक सूची (1996), दायाबाई की बानी (2004) और चरणदास का भक्ति पदार्थ (2013), हिंदी जासूसी कहानियाँ (2015), मौखिक और हस्तलिखित परंपराओं में कबीर की बानी (2015)

संप्रति : 1996 से 2008 तक इन्होंने ला ट्रोब विश्वविद्यालय, मेलबॉर्न, ऑस्ट्रेलिया में हिंदी प्राध्यापक के रूप में कार्यरत रहे। 2008 से 2010 तक सिंगापुर में हिंदी कार्यक्रम की स्थापना की। संप्रति ऑस्ट्रेलियाई राष्ट्रीय विश्वविद्यालय में आप हिंदी के वरिष्ठ प्राध्यापक हैं।

कल जब मैं हवाई अड्डे पहुँचा तो मुझे बेहद खुशी हुई जब मैंने 4 लिपियों में देखा Welcome - bienvenue - 欢迎 स्वागतम्। इससे लक्षित था कि मॉरीशस ने बहु संस्कृतिवाद की विचारधारा को अच्छी तरह से अपनाया।

हिंदी में भी इस तरह की बहुसंस्कृतिवाद है क्योंकि भारत के बाज़ारों में सुनने में आता है 'नमस्ते', 'नमस्कार', 'अस्सलाम वालेकुम', 'आदाब अर्ज़', 'सत सिरी अकाल', 'जय राम जी की', 'राम राम' और हाँ आजकल 'हेल्लो' और 'हाई' भी! देखा जा सकता है कि हम एक-दूसरे के समुदाय का आदर करते हैं।

विश्व हिंदी दिवस के अवसर पर मैं 3 मुख्य प्रश्नों के बारे में अपना विचार व्यक्त करना चाहता हूँ, हिंदी क्यों, कैसे और किस रूप में सिखानी चाहिए।

एशिया प्रशांत महासागर क्षेत्र में अत्यधिक विभिन्नता है। कुछ देशों में, जैसे फ़िजी में गिरमिटिया लोगों ने अपना घर बसाया और आपके देश की तरह हम आज उन संस्कृतियों का फला-फुला रूप देख सकते हैं। फिर कुछ देशों में, जैसे ऑस्ट्रेलिया और न्यू ज़ीलैंड में पुरानी हिंदुस्तानी आबादी बहुत कम है लेकिन पिछले कुछ दशकों से काफ़ी भारतीय लोग बसने लगे।

फिर उत्तर पूर्व की दिशा में जापान, कोरिया और चीन जैसे देश हैं जहाँ हिंदी के प्रति रुचि बढ़ रही है लेकिन अब तक इन देशों में प्रवासी भारतीयों की संख्या कम है। इन देशों के वासियों में अपने देश और भारत के बीच के संबंध की स्थापना की कहानियाँ हैं।

कोरिया में मैंने सुना कि 1,000 साल पहले अयोध्या की एक राजकुमारी और कोरिया के एक राजा की शादी हुई थी। जापान में प्रसिद्ध है कि जब राजकुमार शोतोकू ने बौद्ध धर्म स्थापित किया तो उन्होंने भारत से भिक्षु आमंत्रित किए ताकि उन्हीं के द्वारा प्रथम बौद्ध मंदिर की मूर्ति का अभिषेक सही रीति-रिवाज़ के साथ संपन्न हो सके।

चीन की बात कुछ और है। वहाँ हज़ारों साल से भारत के साथ संबंध रहा और आजकल मैंने पाया कि चीनी लोग अब भी भारत में कुछ जगहों के नाम इस्तेमाल करते हैं जहाँ चीनी तीर्थयात्री के रूप में सदियों पहले भारत में जाकर बसे थे।

मैंने सिंगापुर में भी कुछ सालों तक हिंदी सिखाई और एन.यू.एस. (NUS) में हिंदी कार्यक्रम स्थापित किया। उसके साथ-साथ मैंने वहाँ सुना और देखा कि वहाँ के हिंदुस्तानी समाज का अब भी सुभाष चंद्र बोस के प्रति काफ़ी लगाव है क्योंकि आज़ाद हिंद फ़ौज का केंद्र वहाँ था और उस समय से ही वहाँ स्कूली हिंदी पढ़ाई की परंपरा रही। मेरे लिए खुशी की बात इसमें भी थी कि वहाँ के नौजवान लोगों के दिलों में हिंदी के लिए उत्साह है और वे काफ़ी मात्रा में हिंदी पढ़ने लगे हैं।

अब ऑस्ट्रेलिया जैसे देश में जब लोग जान जाते हैं कि मैं हिंदी सिखाता हूँ तो हमेशा पूछते हैं कि हिंदी क्यों सिखानी चाहिए। काफ़ी विदेशी लोग इस भ्रम में फँस गए हैं कि आजकल हरेक भारतीय अंग्रेज़ी जानता है। इसलिए मुझे ऑस्ट्रेलियाई लोगों को समझाना पड़ता है कि अब भी 90 प्रतिशत भारतीय अंग्रेज़ी नहीं जानते हैं। चाहे ऑस्ट्रेलियाई लोग सिर्फ़ एक भाषा जानते हैं पर भारतीय लोग ऐसे नहीं हैं और लगभग सभी लोग बहुभाषी हैं और कम से कम 2 या 3 या ज़्यादा भाषाएँ जानते हैं।

फिर ऑस्ट्रेलिया में भारतीय अभिभावकों से मैं अक्सर सुनता हूँ कि हिंदी सीखने में कोई फ़ायदा नहीं है। बच्चों को इंजीनियरिंग या मैथ्स पढ़ना चाहिए। लेकिन मैं मानता हूँ कि यह सोच गलत है

कि हिंदी या किसी व्यावहारिक विषय के बीच चयन किया जाए क्योंकि जो बच्चे हिंदी और व्यावहारिक विषय पढ़ते हैं वे और भी प्रतिभाशाली बन जाते हैं।

कभी-कभी विद्यार्थी मुझे अपने हिंदी पढ़ने का कारण बताते हैं। जैसे एक बार एक औरत ने बताया कि वह हिंदी सीखना चाहती थी क्योंकि वह जानना चाहती थी कि उसकी सास उसके बारे में क्या कहती थी। अनेक लोगों ने कई कारण बताए जैसे आगे चलकर अपने बच्चों को हिंदी सिखाना और कुछेक विद्यार्थियों ने बताया कि वे भविष्य में भारत में काम करना चाहते हैं और इसलिए हिंदी सीखते हैं।

इस समय ऑस्ट्रेलिया में लगभग एक तिहाई हिंदी विद्यार्थी भारतीय मूल के हैं और उनकी रुचि इसमें है कि वे खुद के लिए अपनी संस्कृति और धरोहर को समझना चाहते हैं। फिर एक तिहाई है जो विदेशी मूल के हैं लेकिन भारतीय संस्कृति और सभ्यता से आकर्षित हैं जैसे उनकी रुचि, धर्म, योग, आयुर्वेद, कला, संगीत, नृत्य या बॉलिवुड में है। फिर आखिरी तिहाई ऐसा है जिनकी रुचि किसी भारतीय बॉयफ्रैंड या गर्लफ्रैंड में है। लगभग सभी विद्यार्थी बताते हैं कि वे ज़्यादा गहराई से भारतीय सभ्यता को समझने की कोशिश कर रहे हैं।

फिर एक और प्रश्न है कि हिंदी कैसे सीखें? अक्सर भारतीयों के लिए मुख्य बात है कि अपनी बोली, उपभाषा या दूसरी भारतीय भाषा से कैसे मानक हिंदी सीखें जबकि वे पहले से बुनियादी तौर पर हिंदी जानते हैं। उनकी हिंदी में अमानक प्रयोग, पंजाबीपन या गुजरातीपन है लेकिन अक्सर अगर वे मन लगाकर पढ़ते रहें तो काफ़ी जल्दी हिंदी सीखते हैं।

लेकिन दूसरी ओर गैर हिंदुस्तानी के लिए समस्या कुछ और है। उन्हें न सिर्फ़ नई लिपि, शब्दावली और व्याकरण सीखना पड़ता है बल्कि नए सिरे से दुनिया देखना भी होता है। कभी-कभी ऐसी बातें आती हैं जिनके लिए अंग्रेज़ी में शब्द भी नहीं है। जब 'चाची', 'मामी' दोनों का मतलब 'आंटी' है तब असंख्य रिश्तेदारों के रिश्तों का नाम समझना पड़ता है। मुझे भी इस तरह की समस्या का सामना करना पड़ा। मुझे याद है कि एक बार मैंने काशी में रहनेवाले अपने हिंदी गुरु, कृष्ण मोहन सिंह से पूछा कि 'कर्म भोगना' का मतलब क्या है? तो ज़रा सोचकर उन्होंने कहा कि, ''जब आप यही समझना चाहते हैं तो आपको पूरी तरह से भारतीय संस्कृति और दर्शन सीखना चाहिए क्योंकि इसका मतलब इसमें है कि पूर्वजन्म के कर्म इस जन्म में सुख या दुख के अनुभव से उसका कर्म विपाक के द्वारा पूरा करना यानी बिना विस्तार से भारतीय दर्शनशास्त्र सीखकर हम वह छोटे से शब्द 'भोगना' नहीं समझ सकते हैं।''

फिर आजकल सभी हिंदी शिक्षक गण के सामने 2 खास समस्याएँ हैं। एक कि हमारी कक्षाओं में भारतीय मूल और अभारतीय छात्र दोनों हैं और हम कैसे उन दोनों वर्गों को साथ-साथ सिखाएँ जब दोनों की माँगें भिन्न हैं। फिर इस तकनीकी ज़माने में प्रौद्योगिकीकरण के साथ अपनी रफ़्तार कैसे मिलाया जाए। वेब, स्मार्टफ़ोन, फ़ेसबुक, ट्विटर, स्नैपचैट वग़ैरह के साथ हर समय अपने कदम मिला सकते हैं?

एक बार मैंने किसी से सुना कि 50 के दशक में जब डॉट पैन स्कूलों में पहली बार आया तो उस पर प्रतिबंध लगाया गया क्योंकि अध्यापक सोचते थे कि उसके इस्तेमाल से अच्छी लिखावट की परंपरा मिट जाएगी। आजकल यह कितना हास्यास्पद लगता है। हमें ध्यान में रखना चाहिए कि हम भी इस तरह न बनें और कक्षाओं में नई प्रद्योगिकी का स्वागत करें। इसलिए ऑस्ट्रेलिया में अध्यापकगण हर तरह की प्रौद्योगिकी अपनाने की कोशिश करते हैं और जहाँ तक हो सके उसका इस्तेमाल करते हैं।

अब आखिरी सवाल है कि हिंदी में क्या-क्या सिखाया जाए? पिछले साल जब स्कूलों के लिए राष्ट्रीय कार्यक्रम की तैयारी पर काम किया जा रहा था तो बहस का सबसे बड़ा विषय था शब्दावली। कुछ लोग चाहते थे कि सिर्फ़ शुद्ध हिंदी हो, कुछ लोग हिंदुस्तानी युक्त हिंदी और कुछ लोग हिंग्लिश की तरह हिंदी पर बल देना चाहते थे। लेकिन मेरे विचार में सिर्फ़ एक ही तरह की हिंदी नहीं सिखानी चाहिए क्योंकि बच्चों के लिए ज़रूरी है कि वे समझें कि हिंदी परिस्थिति के अनुसार बोली जाती है।

मेरे विचार में जैसे शायद मैं घर पर बोलूँ कि, 'मुझे किसी बात को लेकर फ़िक्र है' लेकिन स्कूल में जाकर कहूँ कि 'मुझे किसी विषय के बारे में चिंता है' और शायद पत्नी से कहूँ कि 'आजकल मुझे बहुत टेंशन है' यानी सब का अर्थ लगभग एक-सा है लेकिन प्रसंग के अनुसार हम उपयुक्त शब्दों का चयन करते हैं और इसलिए तीनों शब्दों को सिखाना ज़रूरी है, 'फ़िक्र', 'चिंता' और 'टेंशन'।

अंत में मैं कहना चाहता हूँ कि हिंदी सीखने और सिखानेवालों में शायद आपस में कभी-कभी कुछ बहस हो रही है कि हमें हिंदी सिखाने में क्या करना चाहिए लेकिन आखिर में हम सब इसमें एक साथ हैं कि हिंदी अपनानी चाहिए।

क्यों? असल में क्योंकि सिर्फ़ एक भारतीय भाषा के द्वारा हम गहराई से भारतीय संस्कृति समझने की कोशिश कर सकते हैं। मैं लगभग 40 सालों से इस रास्ते पर यात्रा कर रहा हूँ कि मैं हिंदी के द्वारा भारतीय संस्कृति समझूँ और मैंने बहुत कुछ देखा जो सिर्फ़ अंग्रेज़ी भाषा के द्वारा नहीं देख पाता। मुझे उम्मीद है कि आगे चलकर हम सब हिंदी की राह न छोड़कर इस पर लगातार आगे बढ़ेंगे और हम सब हिंदी प्रेमियों की संगत में भारत की असलियत की खोज में रहेंगे।

कैनबेरा, ऑस्ट्रेलिया

हिंदी के विविध आयाम : कुछ टिप्पणियाँ, अनुभव व विचार बिंदु

30

गूगल अनुवाद और मानव अनुवाद की सहभागिता–एक अनुभव

—डॉ. काजल पांडे

मैं यह नहीं कहती कि गूगल 100% सही अनुवाद प्रदान करता है लेकिन गूगल द्वारा किए गए अनुवाद में अगर मानव की सहभागिता डाल दी जाए तो यकीनन हम एक उत्कृष्ट कोटि का अनुवाद प्राप्त कर सकते हैं और यह मैं अपने व्यक्तिगत अनुभव से कह रही हूँ। मैंने गूगल द्वारा अंग्रेज़ी भाषा से हिंदी भाषा में प्राप्त कई अनुवाद में वर्तनी संबंधी या शब्द संबंधी या वाक्य संरचना संबंधित संशोधन करके एक योग्य अनुवाद प्राप्त किया है। अर्थात गूगल अनुवाद में मानव अनुवाद की सहभागिता सार्थक है। गूगल अनुवाद एक ऐसी उत्तम सेवा है जो मानव को बिना कागज़, कलम और शब्दकोश के कंप्यूटर पर अनुवाद करने में बहुत सहायक है।

आज के दौर में मानव को अनुवाद करने के लिए कागज़, कलम और शब्दकोश की आवश्यकता नहीं है क्योंकि यह कंप्यूटर और इंटरनेट का दौर है। आजकल अनुवाद कंप्यूटर पर इंटरनेट के माध्यम से संभव है और एक ऐसी ही सुविधा गूगल ने हमें प्रदान की है – गूगल अनुवाद। गूगल से अनुवाद प्राप्त करके, इंटरनेट पर उपलब्ध शब्दकोशों की मदद से मानव, गूगल अनुवाद में थोड़ा सा संशोधन करके, फिर वो वाक्य स्तर पर हो या फिर शब्द स्तर पर, एक उत्कृष्ट अनुवाद प्राप्त कर सकता है। बस आवश्यकता है तो मानव की थोड़ी सी सहभागिता की।

गूगल से प्राप्त अनुवाद में वही व्यक्ति संशोधन कर सकता है जिसमें निम्नलिखित गुण हों:

1. स्रोत और लक्ष्य भाषा पर समान रूप से अच्छा अधिकार।
2. विषय का पर्याप्त ज्ञान।
3. संदर्भानुकूल अर्थ-निश्चयन की योग्यता।

मैंने अभी तक गूगल से अंग्रेज़ी भाषा से हिंदी भाषा में ही अनुवाद की सुविधा प्राप्त की है। इसके टेक्स्ट-बॉक्स में अंग्रेज़ी में लिखी सामग्री चिपकाकर या टाइप करके हिंदी में अनुवाद प्राप्त किया जा सकता है। इस पर और भी भाषाओं में अनुवाद करने की सुविधा उपलब्ध है।

गूगल अनुवाद से प्राप्त अनुवाद में मेरा जो अनुभव रहा है उसको मैं यहाँ पर बता रही हूँ:

- **तीव्र अनुवाद**– गूगल अनुवाद की सबसे पहली और बड़ी विशेषता है कि यह बहुत जल्द अनुवाद प्रदान करता है। कुछ संकडों में ही यह स्रोत भाषा से लक्ष्य भाषा में अनुवाद प्रदान कर देता है जिसके लिए न तो अनुवादक या व्यक्ति विशेष को इंतज़ार करना पड़ता है और न ही शब्दकोशों को टटोलना पड़ता है।
- **समय की बचत**– यह एक ऐसा अनुवाद है जिसमें मानव अनुवाद में लगनेवाले समय की अपेक्षा समय की बचत होती है।
- **शब्दकोशों की कम से कम आवश्यकता** – गूगल से अनुवाद प्राप्त करने के लिए मानव को शब्दकोश की आवश्यकता नहीं होती है लेकिन यदि उसमें कहीं वर्तनी

जन्म : 27 नवंबर, 1977, दिल्ली।
शिक्षा : हिंदी में पीएचडी, एमफ़िल, एम.ए., बी.ए., अनुवाद में एकवर्षीय स्नातकोत्तर डिप्लोमा, कंप्यूटर अनुप्रयोग में एक वर्षीय पाठ्यक्रम, पुस्तकालय विज्ञान में एक वर्षीय डिग्री (इग्नू), मीडिया में एक वर्षीय स्नातकोत्तर डिप्लोमा, जर्मन विदेशी भाषा में एक वर्षीय सर्टिफ़िकेट पाठ्यक्रम।
उपलब्धियाँ : अनुवाद कार्यशाला का प्रमाण पत्र (दिल्ली), मानव सेवा प्रेरणा पुरस्कार (दिल्ली), मंत्र-राजभाषा परियोजना के विकास में योगदान के लिए प्रमाण पत्र (राजभाषा विभाग), सीडैक, पुणे की प्रतियोगिता में प्रमाण पत्र (दूसरा स्थान)।
प्रकाशन : 2 पुस्तक (दिल्ली प्रकाशक), कई आलेख (विभिन्न पत्रिकाओं और जर्नल में)
सदस्य : भारतीय अनुवाद परिषद, नई दिल्ली। संस्थान : सीडैक, पुणे में 12 वर्षों से कार्यरत। कई कार्यशालाओं और सम्मेलनों में भाग लिया।
संप्रति : वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी। कार्य : अंग्रेज़ी-हिंदी-अंग्रेज़ी अनुवाद और मशीन अनुवाद प्रणाली के लिए काम।

संबंधित या शब्द संबंधित या वाक्य संरचना संबंधित अनुवाद में संशोधन करना हो तो ऑनलाइन उपलब्ध शब्दकोशों की मदद ली जा सकती है।

- **कॉपी और पेस्ट करने की सुविधा** – गूगल अनुवाद प्राप्त करने के लिए टेक्स्ट को कॉपी करके टेक्स्ट बॉक्स में पेस्ट किया जा सकता है और अनुवाद होने के बाद अनुवादित सामग्री को कॉपी करके डॉक्यूमेंट में पेस्ट किया जा सकता है।
- **टाइप करने की कम से कम आवश्यकता** – गूगल अनुवाद प्राप्त करने के लिए टेक्स्ट बॉक्स में टाइप किया जा सकता है लेकिन कॉपी पेस्ट के माध्यम से भी टाइप करने से बचा जा सकता है परंतु यदि उसमें कहीं वर्तनी संबंधित या शब्द संबंधित या वाक्य संरचना संबंधित लक्ष्य या स्रोत भाषा में संशोधन करना हो तो टाइप करना पड़ सकता है।
- **संशोधन करने की सुविधा** – गूगल अनुवाद प्राप्त करने के बाद यदि उसमें कहीं वर्तनी संबंधित या शब्द संबंधित या वाक्य संरचना संबंधित संशोधन करना हो तो टाइप करके संशोधन भी किया जा सकता है।
- **नि:शुल्क अनुवाद** – गूगल अनुवाद पूरी तरह से एक नि:शुल्क अनुवाद सेवा है जिसके माध्यम से उपयुक्त अनुवाद प्राप्त किया जा सकता है।
- **सुविधाजनक अनुवाद** – गूगल अनुवाद सामान्य अनुवाद की अपेक्षा सुविधाजनक अनुवाद है, इसमें समय की बचत तो होती ही है साथ ही कागज़, कलम और शब्दकोश की भी आवश्यकता नहीं होती है।
- **काफ़ी हद तक सटीक अनुवाद** – गूगल अनुवाद काफ़ी हद तक सटीक अनुवाद प्रदान करता है, उसमें बस मानव द्वारा थोड़ा सा संशोधन करने की आवश्यकता है।
- **हस्तलिखित इनपुट** – गूगल अनुवाद प्राप्त करने के लिए टेक्स्ट बॉक्स में हस्तलिखित इनपुट भी दिया जा सकता है।
- **समानार्थी शब्द सुविधा** – गूगल से प्राप्त अनुवाद में शब्दों के लिए समानार्थी शब्दों की सुविधा भी उपलब्ध है। विषयानुसार समानार्थी शब्द/शब्दों का चयन करके अनुवाद को उपयुक्त बनाया जा सकता है।
- **उपयुक्त फ़ॉन्ट** – गूगल अनुवाद में हिंदी फ़ॉन्ट भी उपयुक्त दिखता है क्योंकि यह यूनिकोड में होता है।

गूगल अनुवाद की अन्य विशेषताएँ भी हैं:

1. सीधे ध्वन्यात्मक रोमन में टाइप करने पर सामग्री स्वत: देवनागरी में बदल जाती है जिसे 'अनुवाद करो' (ट्रांसलेट) बटन दबाकर अनुवाद कर सकते हैं। गूगल ने किसी ब्लॉग को बहुभाषी अनुवाद के लिए गूगल अनुवाद को ब्लॉग विजेट के रूप में मुफ़्त में प्रदान किया है।

2. गूगल अब एंड्रॉयड उपकरणों के लिए अपने गूगल अनुवाद अनुप्रयोग का अद्यतन संस्करण विमोचित करने के लिए तैयार है। लगभग एक महीने पहले ही माइक्रोसॉफ़्ट की सेवा स्काइप ने स्पीच के रियल टाइम अनुवाद के लिए एक प्रोग्राम का विमोचन किया था। इसमें यह भी सुविधा है कि यह हिंदी टेक्स्ट को ध्वनि (स्पीच) में बदलकर सुनाता है।

3. गूगल अपने उपयोगकर्ताओं के लिए एक ऐसी सेवा प्रारंभ करने की योजना भी बना रहा है जिससे गूगल उपयोगकर्ता एक विदेशी भाषा के अनुवाद होने तक अपने फ़ोन को होल्ड कर सकेंगे और इसके बाद उनकी मोबाइल स्क्रीन पर ऑटोमैटिक अनुवाद उपलब्ध हो जाएगा।

4. गूगल अनुवाद का उपयोग आप अक्सर करते होंगे लेकिन क्या आपको मालूम है कि गूगल का अनुवाद अनुप्रयोग अब तस्वीर देखकर अंग्रेज़ी से हिंदी अनुवाद करने में भी सक्षम है? कंपनी ने गूगल अनुवाद अनुप्रयोग का नया संस्करण प्रस्तुत किया है जिसमें फ़ोटो टू टेक्स्ट फ़ीचर के माध्यम से अंग्रेज़ी से हिंदी अनुवाद को जोड़ा गया है।

अंतत: मैं यही कहना चाहूँगी कि गूगल से प्राप्त अनुवाद काफ़ी हद तक सटीक होता है लेकिन यदि उसमें कहीं संशोधन की आवश्यकता है तो मानव अपने अनुभव और ज्ञान के आधार पर उसमें संशोधन करके उत्कृष्ट अनुवाद प्राप्त कर सकता है और यही मेरा अनुभव रहा है और यही अनुभव मेरे लिए सबसे बड़ा संदर्भ है।

संदर्भ:

1. https://translate.google.co.in/
2. https://hi.wikipedia.org/wiki/%E0%A4%97%E0%A5%82%E0%A4%97%E0%A4%B2_%E0%A4%85%E0%A4%A8%E0%A5%81%E0%A4%B5%E0%A4%BE%E0%A4%A6

पुणे, भारत

kajaldelhi2001@gmail.com

31

हिंदी पत्रकारिता में भाषा की शुद्धता

—श्री रोहित कुमार 'हैप्पी'

पत्रकारिता में भाषा की पकड़, शब्दों का चयन व प्रस्तुति बहुत महत्वपूर्ण हैं। पत्रकारिता में निस्संदेह समाचार की समझ, भाषा की शुद्धता व वाक्य विन्यास आवश्यक तत्व हैं।

यदि समाचार पत्रों की चर्चा करें तो भारत में सबसे बड़ा पाठक वर्ग हिंदी के समाचार पत्रों का है। हिंदी मीडिया अपने विभिन्न माध्यमों के साथ बड़ी तेज़ी से आगे बढ़ रहा है।

समाचार पत्र, दूरदर्शन व रेडियो के अतिरिक्त अब इंटरनेट पर न्यू मीडिया की भी अहम भूमिका है। आज हिंदी के समाचार पत्रों सहित अन्य हिंदी मीडिया में जिस भाषा का प्रयोग हो रहा है वह भाषा की पकड़, शब्दों के चयन व उनकी प्रस्तुति पर प्रश्न चिह्न लगाते दिखाई देती है।

भाषा की शुद्धता की बात करें तो दैनिक हिंदी समाचार पत्रों के शीर्षकों में अंग्रेज़ी शब्दों की भरमार क्या सहज स्वीकार्य है? देखिए कुछ शीर्षक:

'मुलायम पर धमकाने का आरोप लगानेवाले IPS को यूपी सरकार ने किया सस्पेंड'

[दैनिक भास्कर, 14 जुलाई 2015]

'IIT रुड़की से निकाले गए छात्रों को एक मौका और'

[नवभारत टाइम्स, 15 जुलाई 2015]

क्या किसी अंग्रेज़ी दैनिक पत्र के शीर्षक में भी कोई हिंदी का शब्द प्रकाशित किया जा सकता है? फिर यह खिचड़ी भाषा हिंदी मीडिया में ही क्यों?

अधिकतर पत्रों की भाषा प्रदूषित हो चुकी है लेकिन हिंदी पत्रकारिता में 'जनसत्ता' अपनी स्तरीय भाषा के लिए अब भी जाना जाता है। श्री प्रभाष जोशी ने भाषा के प्रति चेतना जागृत करके जो परंपरा स्थापित की थी उसका निर्वाह 'जनसत्ता' लगातार करता आ रहा है।

जब डॉ. विद्यानिवास मिश्र 'नवभारत टाइम्स', दिल्ली के संपादक थे, उस समय के किसी पत्र को उठाकर उसकी तुलना यदि आज के 'नवभारत टाइम्स' की भाषा, शैली व स्तर से की जाए तो सहज ही अंतर स्पष्ट हो जाएगा। मिश्र जी अंग्रेज़ी के भी विद्वान थे परंतु वे हिंदी में अंग्रेज़ी शब्दों का प्रयोग बिल्कुल नहीं करते थे।

आइए हिंदी मीडिया के कुछ अन्य उदाहरण देखें:

रोहित कुमार 'हैप्पी' न्यू ज़ीलैंड में 'हिंदी न्यू मीडिया' के माध्यम से हिंदी भाषा, लेखन व साहित्य के प्रचार-प्रसार हेतु प्रयासरत हैं। रोहित मैस्सी यूनिवर्सिटी, न्यू ज़ीलैंड से पत्रकारिता में प्रशिक्षित हैं व इसके अतिरिक्त वे न्यू ज़ीलैंड में इंवेस्टिगेटिव सर्विसेज़, ग्राफ़िक्स व वेब डिवेलपमेंट में भी प्रशिक्षित हैं।

आप मूलतः कैथल (हरियाणा) से संबंध रखते हैं और आप कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय से स्नातकोत्तर हैं। हिंदी में कविता, ग़ज़ल, कहानी और लघु-कथा विधाओं पर लेखन करते हैं। आपकी रचनाएँ 'ऑउटलुक', 'नई दुनिया', 'पाञ्चजन्य', 'ज़ी न्यूज़', 'वेब दुनिया', 'पंजाब केसरी', 'वीर प्रताप', 'हरिगंधा', 'शांति दूत', 'सृजन-गाथा', 'प्रभा साक्षी', 'अभिव्यक्ति' के अतिरिक्त न्यू ज़ीलैंड की 'स्कूप', 'वायकाटो टाइम्स', 'संडे स्टार', 'इंडियन टाइम्स', 'एशियन मैग्ज़ीन' में प्रकाशित हुई हैं। रोहित कुमार 'वॉयस ऑव अमेरिका', 'डायचे वेले' पर वार्ताओं में सक्रिय रहे हैं और 90 के दशक में न्यू ज़ीलैंड में 'कम्युनिटी' रेडियो (सर्वश्रेष्ठ कार्यक्रम से सम्मानित), 'रेडियो देस-प्रदेस, 'रेडियो तराना' पर समाचार वाचक रहे हैं।

रोहित न्यू ज़ीलैंड से प्रकाशित इंटरनेट पर विश्व की पहली हिंदी पत्रिका, 'भारत-दर्शन' का संपादन व प्रकाशन करते हैं व निरंतर हिंदी-कर्म में अग्रसर हैं। यह पत्रिका 1996-97 से इंटरनेट पर प्रकाशित हो रही है।

'दूरदर्शन' के कार्यक्रम में प्राय: सुनने को मिलता है—'बड़ा खौफ़नाक नज़ारा था।'

एक रेल दुर्घटना, जिसमें कई लोग मारे गए व बहुत से घायल हुए, उस समय एक संवाददाता कह रहा था—'बहुत दर्दनाक नज़ारा है।'

क्या कोई खौफ़नाक दुर्घटना नज़ारा हो सकती है? क्या यहाँ 'नज़ारा' शब्द उपयुक्त है?

कई बार सुनने को मिलता है—'यहाँ एक स्थानीय बंदे ने कहा···' इत्यादि।

अनौपचारिक भाषा में 'बंदे' शब्द का उपयोग प्राय: होता है परंतु 'दूरदर्शन' के प्रस्तुतकर्ता द्वारा 'व्यक्ति' के स्थान पर 'बंदा' कहा जाना भाषा की गरिमा को धूमिल करता है।

भाषा के 'लचीले' होने और 'फूहड़' होने में बहुत बड़ा अंतर है। भाषा जितनी लचीली होगी उतनी समृद्ध होगी, उतना उसका विस्तार होगा। आज हमारी भाषा 'लचीलेपन' के नाम पर किस दिशा की ओर बढ़ रही है, यह विचारणीय व चर्चा का विषय है।

अधिकतर लोग कहते हैं कि न तो शुद्ध हिंदी होनी चाहिए और ना ही बहुत कठिन। यहाँ पर उनका तात्पर्य प्राय: 'क्लिष्ट' से होता है। उदाहरणतया यदि एक समाचार हो—

'प्रधान मंत्री ने नई लोहपथगामिनी को हरी झंडी दी।' यहाँ 'रेलगाड़ी' लिखने से किसी को परहेज़ करने की आवश्यकता नहीं क्योंकि ऐसे कई शब्द हिंदी में समाहित हो चुके हैं।

जहाँ तक हिंदी भाषा में कठिन शब्दों की बात है तो आज तक किसी को किसी अंग्रेज़ी-भाषी से यह कहते नहीं सुना कि 'आप बहुत कठिन अंग्रेज़ी बोलते/लिखते हैं' बल्कि उसकी सराहना की जाती है कि उसका स्तर ऊँचा है। फिर हिंदी के साथ इससे विपरीत व्यवहार क्यों? आज कई हिंदी समाचार पत्रों/चैनलों की भाषा हिंदी नहीं बल्कि हिंग्लिश है।

हमारी यह हीन भावना कि हिंदी में अंग्रेज़ी मिलाने से स्तर ऊँचा हो जाता है पूर्णतया निराधार है। अमिताभ बच्चन के 'कौन बनेगा करोड़पति' की सफलता से तो सभी परिचित हैं। उनकी हिंदी कितनी धाराप्रवाह और प्रभावी होती है। क्या आपने अमिताभ बच्चन को कभी खिचड़ी भाषा का प्रयोग करते सुना? उनकी अंग्रेज़ी पर अच्छी पकड़ है लेकिन कभी उन्हें हिंदी में अंग्रेज़ी की घुसपैठ करते देखा-सुना नहीं। फिर हिंदी मीडिया को ऐसी कौन सी समस्या है कि अकारण अंग्रेज़ी का उपयोग उनके लिए अनिवार्य है?

हिंग्लिश ['हिंदी' तथा 'इंग्लिश' का मिश्रण] की बात करें तो यह भाषा कर्णप्रिय नहीं अर्थात सुनने में अच्छी नहीं लगती। अब किसी को अंग्रेज़ी पढ़ना-सुनना है तो उसके पास अंग्रेज़ी समाचार पत्र पढ़ने या अंग्रेज़ी चैनल देखने के विकल्प खुले हैं। हिंदी कहकर अंग्रेज़ी परोसने की क्या आवश्यकता है?

अंग्रेज़ी के जो शब्द आम बोलचाल की भाषा में समाहित हो चुके हैं उनके उपयोग से परहेज़ की आवश्यकता नहीं। कुछ अंग्रेज़ी के शब्द हमारी दिनचर्या में पूर्णतया सम्मिलित हो चुके हैं जैसे 'स्कूल', 'बस-स्टैंड', 'रेलवे स्टेशन', 'यूनिवर्सिटी', 'ट्रेन', 'मोबाइल', 'इंटरनेट' इत्यादि। यदि आप दिल्ली में कोई तिपहिया पकड़कर उसके चालक को 'दिल्ली विश्वविद्यालय' जाने के लिए कहें तो शायद उसे समझ ही न आए परंतु 'दिल्ली यूनिवर्सिटी' कहते ही समझ जाएगा। यद्यपि 'यूनिवर्सिटी' अंग्रेज़ी शब्द है लेकिन यह सहज भाव से समय के साथ हमारी भाषा में समाहित हो गया है। यह भी हमारी कमी ही कही जा सकती है कि हम अपने कुछ हिंदी शब्दों को उतना लोकप्रिय नहीं बना सके जितने वे ही शब्द अंग्रेज़ी में लोकप्रिय हैं। सहजता से आए शब्द भाषा की समृद्धि ही कर रहे हैं लेकिन समाचार पत्रों व हिंदी सिनेमा में अंग्रेज़ी शब्दों की ज़बरन घुसपैठ तो भाषा-प्रदूषण ही कही जा सकती है।

हमारे हिंदी सिनेमा ने हिंदी के प्रचार-प्रसार में भरपूर योगदान दिया है। देश-विदेश में बहुत से ग़ैर-भारतीय लोगों ने हिंदी सिनेमा के माध्यम से ही बोलचाल की हिंदी सीखी है। वर्तमान में हिंदी सिनेमा जगत अंग्रेज़ी नाम से फ़िल्में बनाने में बहुत दिलचस्पी ले रहा है— 'जब वी मैट', 'माई नेम इज़ ख़ान', '3 इडियट्स', 'काइट्स', 'बॉडीगार्ड' इत्यादि जैसे कुछ नाम उल्लेखनीय हैं। हिंदी फ़िल्मों को अंग्रेज़ी नाम देने का औचित्य समझ से परे है। क्या हमारी भाषा दिवालिया हो गई है? हिंदी सिनेमा में ये अंग्रेज़ी नाम सहज भाव से नहीं आए बल्कि इन्हें थोपा गया है। किसी अन्य भाषा में ऐसी घुसपैठ देखने को नहीं मिलती।

'दिवस' शब्द शब्दकोश से लुप्तप्राय हो चला है। अब 'दिवस' के स्थान पर 'डे' मनने लगा है, जैसे 'हिंदी डे', 'इंडिपेंडेंस डे', 'रिपब्लिक डे', 'बर्थ डे' इत्यादि। अब यदि इन्हें 'हिंदी दिवस', 'स्वतंत्रता दिवस', 'गणतंत्र दिवस', 'जन्म दिवस' कहा/लिखा जाए तो इसमें किस प्रकार की दुविधा है?

जहाँ तक हिंग्लिश का प्रश्न है, यदि प्रकाशन समूह को लगता है कि 'हिंग्लिश' इतनी लोकप्रिय है कि इसका उपयोग एक आवश्यकता बन गया है तो वे इसे 'हिंग्लिश' पत्र के रूप में ही प्रस्तुत करें, इसे हिंदी कहने की क्या आवश्यकता है? वैसे भी जब समाचार पत्र का पंजीकरण करवाते हैं तो नाम के साथ घोषणा पत्र में इस बात की भी जानकारी देते हैं कि यह पत्र किस भाषा में निकलेगा। वहाँ भाषा 'हिंदी' घोषित करने के पश्चात प्रकाशन 'हिंग्लिश' में करना अनुचित ही कहा जाएगा। सरल भाषा का प्रयोग करते हुए भी निस्संदेह प्रकाशन/प्रसारण का स्तर, शैली व प्रस्तुति पठनीय/रोचक/कर्णप्रिय रखी जा सकती है।

भाषा के विकास व वैभव के लिए हमारे प्रकाशन समूहों, संपादकों, पत्रकारों व सरकार को आगे आने की आवश्यकता है। हमें आत्म-निरीक्षण और आत्म-विश्लेषण के अतिरिक्त अपना उत्तरदायित्व भली-भांति समझना होगा। यदि मीडिया समूह अपने निजी हितों के लिए भाषा को प्रदूषित करके थोपने पर आमादा है तो उनका विरोध अनिवार्य है।

साभार : भारत-दर्शन,
07 नवंबर, 2016
न्यू ज़ीलैंड
info@bharatdarshan.co.nz

32

हिंदी के सच की तलाश में

—प्रो. कृष्ण कुमार रत्तू

21वीं शताब्दी के इन गैर-मामूली दिनों में एक अफ़वाह यह भी उड़ रही है कि इस शताब्दी में विश्व भर में भाषाओं एवं साहित्य का अंत होनेवाला है। साहित्य का अंत यानी अक्षर का अंत! एक संस्कृति का अंत। इस गैर-मामूली इरादतन झूठ बोलने की प्रवृत्ति का सच पाश्चात्य जगत के कहवा घरों एवं शोध संस्थानों, विश्वविद्यालयों में तो कहीं-कहीं सच जैसा लगता है परंतु इस सारे प्रकरण का एक दिलचस्प पहलू यह भी है कि जिन एशियाई एवं अफ्रीकी देशों में असल में भाषा, साहित्य तथा साहित्य चिंतन के नष्ट होने एवं लोप होने का डर है, वहाँ पर इसकी ज़रा भी परवाह नहीं है।

भाषा एवं साहित्य के प्रति जो एक नया संचार एवं व्यवहार तथा सूचना प्रसारण के तेज़ तर्रार सम्प्रेषण से तकनीकी परिदृश्य इन देशों में पिछले 2 दशकों में उभरा है, वह किसी भी राजनीतिक एवं सामाजिक एजेंडे का मानवीय बिंदु नहीं है। हिंदी के संदर्भ में यह एक अलग किस्म की बहस का विषय है क्योंकि भारत के नवधनाढ्य वर्ग यानी एलीट क्लास में हिंदी वर्जित हो गई है, गोया हिंदी अपने घर में सूचना क्रांति के बाद अजनबी हो गई क्योंकि इस वर्ग की नई पीढ़ी सूचना तकनीक के चलते इंटरनेट की पीढ़ी अर्थात ट्वीटर, फ़ेसबुक, वाट्सऐप एवं अन्य माध्यमों से जिस भाषा में सम्प्रेषण कर रही है वह मूलत: न तो हिंदी है और ना ही अंग्रेज़ी है।

21वीं सदी के इन दिनों में भाषा एवं साहित्य चिंतन के प्रति यह स्थिति इसलिए भी है कि एशियाई एवं अफ्रीकी देशों में आज जो कुछ सूचना प्रसारण एवं तकनीक के द्वारा टी.वी. प्रसारणों के अतिक्रमण के कारण हो रहा है, वह सब पश्चिमी संस्कृति, अंग्रेज़ी व अन्य पाश्चात्य भाषाओं के साथ-साथ बढ़ते वैश्वीकरण तथा उपभोक्तावाद की एक ऐसी तस्वीर को हमारे सामने प्रस्तुत करता है जिसमें ग्लोबल होते विश्व के खतरे एवं आंचलिक पहचान के अस्तित्व का संकट पैदा हो गया है। इन देशों की राजनीतिक परिस्थितियाँ और भाषा एवं साहित्य के प्रति सजग न होना इनके अस्तित्व के लिए खतरे की घंटी बन गया है।

शिक्षा : हिंदी, पंजाबी, संस्कृत में एम.ए. तथा नीदरलैंड के इंटरकल्चरल ओपन विश्वविद्यालय से डी. लिट. की उपाधि प्राप्त है।

प्रकाशन : अब तक हिंदी भाषा में मीडिया समेत 60 से ज़्यादा मौलिक पुस्तकें प्रकाशित एवं 20 से अधिक पुस्तकों का अनुवाद किया है। इसके अलावा राष्ट्रीय व अंतरराष्ट्रीय पत्र-पत्रिकाओं में समसामयिक तथा विभिन्न विषयों पर आलेख प्रकाशित हैं।

पुरस्कार : 'हिंदी साहित्य शिरोमणि पुरस्कार 2011', 'पीपल्स लिटरेरी अवार्ड 1985', 'आई.बी. लंदन इंटरनेशनल मैन ऑव द ईयर', 'भारतेंदु हरिश्चंद्र पुरस्कार', 'राजभाषा इंदिरा गांधी पुरस्कार', 'अंतरराष्ट्रीय भारत माता मीडिया पुरस्कार', 'सहस्त्राब्दी 2000 हिंदी सम्मान', 'राष्ट्रीय हारमनी इंडिया अवार्ड' सहित ठाकुर वेद राम राष्ट्रीय मीडिया तथा राजस्थान साहित्य अकादमी के भाषा समीक्षा देवराज उपाध्याय पुरस्कार, हरियाणा साहित्य अकादमी व उर्दू साहित्य अकादमी द्वारा सम्मानित।

प्रो. रत्तु देश के जाने पहचाने लेखक, चिंतक, भाषाविद व मीडिया विशेषज्ञ हैं। भारतीय प्रसारण सेवा के वरिष्ठ अधिकारी तथा भारतीय टेलीविज़न 'दूरदर्शन' के लिए कई चर्चित वृत्तचित्रों एवं टेली फ़िल्मों के निर्माता व निर्देशक भी रह चुके हैं।

संप्रति : निदेशक, मीडिया व जनसंचार, पत्रकारिता व जनसंचार विभाग, डी.ए.वी. विश्वविद्यालय, जालंधर।

मीडिया के चर्चित शब्द 'ग्लोबल गाँव' की कल्पना का यह कैसा परिदृश्य है आज!

विश्व भाषा का सपना संजोए कुछ भाषाएँ विश्व की दूसरी भाषाओं की क्षेत्रीय, आंचलिक विशिष्ट पहचान के नामोनक्शों को खत्म कर रही हैं। यह बहुत सहज स्वरूप में धीमे ज़हर की तरह इन देशों की सामाजिक संरचना को विभाजित एवं खत्म कर रहा है। इस समय विश्व की मुख्यत: बोली जानेवाली 624 भाषाओं में

से लगभग 70 ही ऐसी भाषाएँ क्रियाशील हैं जिनमें भाषाई एवं साहित्यिक कार्य संपन्न हो रहे हैं। अन्य बोलियाँ उन समुदायों का प्रतिनिधित्व करती हैं जो आंचलिक क्षेत्रों की छोटी-छोटी विरासतों के अवशेषों को अनजाने छोड़ते चले जा रहे हैं। हिंदी इन दिनों अंग्रेज़ी और चीनी के मुकाबले तीसरी सब से प्रचलित भाषा है।

भारत जैसे उपमहाद्वीप में हिंदी एवं अन्य क्षेत्रीय भाषाओं की स्थिति भी उपरोक्त स्थितियों से ज़्यादा भिन्न नहीं है। 20वीं शताब्दी के अंतिम दशक के अंतिम दिनों में सूचना, प्रचार-प्रसार एवं प्रौद्योगिकी के तकनीकी पहलुओं के कारण जिस तरह से मीडिया सूचना का विस्फोट हुआ है, वह अपने आप में एक नए मीडिया संचार क्रांति की तस्वीर को परिलक्षित करता है। हिंदी की यह स्थिति और भयावह होती जा रही है क्योंकि एक तरफ़ अंग्रेज़ी का चलन बढ़ रहा है तो दूसरी तरफ़ हिंदी भी वैश्विक भाषा बन गई है, हालाँकि उपरोक्त कथन में विरोधाभास एवं बहस की गुंजाइश बराबर बनी हुई है।

वैश्विक मीडिया बाज़ार

इन दिनों सूचना तकनीक से आई मीडिया क्रांति ने भारतीय समाज, उसकी मौलिक परंपराओं और सांस्कृतिक विरासती मूल्यों को तोड़कर एक नया सामाजिक आधार स्थापित किया है। इस परिप्रेक्ष्य में देखें तो ज्ञात होता है कि मीडिया पर बाज़ारवाद हावी हो गया है। यह बात साफ़ हो गई है कि भाषा एवं साहित्य को मीडिया क्रांति से उतना खतरा नहीं है जितना प्रचारित किया जा रहा है। सच्चाई तो यह है कि पिछले एक दशक में हिंदी पाठकों की संख्या में 92 प्रतिशत की वृद्धि आंकी गई है तथा पूरे विश्व में टेलीविज़न की दर्शक संख्या में हर क्षण वृद्धि हो रही है। परंतु अब इंटरनेट के ज़रिए यूट्यूब एवं वेब चैनल इसके लिए खतरे की सूचना बन रहे हैं।

हिंदी भाषा की इस बाज़ार वृद्धि में सबसे ज़्यादा खतरा इसका टूटता हुआ भाषाई मानकीकरण है। आज हिंदी के इस विस्तृत ग्लोबल बाज़ार में देखें तो कह सकते हैं कि हिंदी की पहचान उस अंतरराष्ट्रीय हिंदी भाषा की पहचान है, जिसमें विश्व के समस्त देशों की बोलियों के शब्द समाहित हो रहे हैं। आज इसी हिंदी को 'खिचड़ी भाषा' अथवा 'अंग्रेज़ी मिश्रित' अर्थात 'अंग्रेज़ीदाँ हिंदी' का नाम दिया जा सकता है।

भारतीय हिंदी भाषाई बाज़ार परिवेश को ज़रा संजीदगी से देखें तो पता चलता है कि आज मीडिया प्रसारण, टेलीविज़न, एफ़.एम. रेडियो, इंटरनेट एवं मोबाइल फ़ोन के ज़रिये की जानेवाली अजीबोग़रीब हिंदी-अंग्रेज़ी एसएमएस की भाषा का प्रचलन इसके मानकीकरण को तोड़ने के लिए इतना शक्तिशाली संप्रेषण माध्यम हो गए हैं जिससे हिंदी भाषा की मूल मानक अभिव्यक्ति की पहचान का चेहरा ही बदल गया है। आनेवाले दिनों में यह किस तरह से बदली हुई भाषा होगी? इस पर देशव्यापी एक खुली चर्चा होनी ही चाहिए।

हिंदी भाषाई इस प्रचार-प्रसार में अभिव्यक्ति की गति तीखी एवं हिंग्लिश जैसी हो गई है, यह उस पाश्चात्य जीवन शैली एवं टेलीविज़न प्रसारण के अतिक्रमण का नतीजा है जिससे अश्लीलता, सामाजिक ढाँचे में मूलभूत बदलाव एवं रिश्तों की संजीदगी को भी पाश्चात्य अंदाज में नज़रअंदाज किया जाने लगा है।

हिंदी भाषा के इस तरह के प्रचलन एवं विश्वव्यापी प्रचार-प्रसार से आज हिंदी का एक ग्लोबल बाज़ार तो दिखाई देता है परंतु हिंदी में भाषा की मीठी खुशबू एवं माँ की लोरी का आंचलिक पुट कहीं छूट गया है। आज यह हिंदी तकनीक तथा संचार की भाषा तक सीमित होती जा रही है। इसमें अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का चेहरा कितना और कैसा है, यह तो आनेवाला समय ही बताएगा। परंतु यह एक ज़मीनी सच्चाई है कि आज हिंदी गाँव की हिंदी की तुलना में पूर्णतः बदल चुकी है। उसका व्याकरणिक मुहावरा एवं आंचलिक भाषायी या यूँ कहिए कि भारतीय पहचान का संदर्भ समाप्त होता जा रहा है। यह हिंदी आज मीडिया बाज़ार की वैश्विक हिंदी है। रेणु एवं प्रेमचंद की हिंदी तो कतई नहीं है।

मीडिया तकनीकी शब्दावली

फ़िलहाल हिंदी की इस स्थिति का एक दुखद पहलू यह भी है कि जिस बाज़ार तथा माहौल में हम जिस हिंदी को बना रहे हैं अर्थात जिसमें वार्तालाप कर रहे हैं, सोचना होगा कि वह हिंदी किस समाज का प्रतिनिधित्व करती है? आज मीडिया तकनीक संचार-प्रसारण के महानायक हिंदी का जो रूप अंग्रेज़ी के चेहरे से समूचे विश्व में प्रतिपादित अथवा हिंदी की दशा एवं दिशा के बहाने परिभाषित एवं पर्दे से दिखा रहे हैं, वह किस भारतीय सौंदर्यबोध का प्रतिनिधित्व करती है? यह हिंदी आज किस समाज की भाषा है?

अब बात मीडिया की उस भाषा की है जिसे समूचे एशियाई उपमहाद्वीप में विश्व का सबसे बड़ा तबका बोलता है। भाषा का

निष्क्रिय होना इस बात पर निर्भर है कि आदमी उस भाषा में अपना संप्रेषण किस तरह से अथवा किन संसाधनों से करता है। यह सच है कि संसार उम्मीद से भरा हुआ है तथा चल रहा है। ठीक इसी तरह जब तक आदमी एवं समाज के अंदर भाषा एवं शब्द का मर्म शेष रहेगा तब तक भाषा खत्म नहीं हो सकती। आधुनिक सूचनातंत्र एवं मीडिया क्रांति तो इस शब्द संसार का विस्तृत रूप हैं जिनके द्वारा भाषा का संचार इस उम्मीद में चल रहा है कि भाषा एवं साहित्य जीवंत और ब्रह्मतुल्य होकर आनेवाली पीढ़ियों के लिए एक नई संरचना प्रदान कर सके।

मूल तकनीकी शब्दावली के विषय पर बात करते हुए यह कहा जा सकता है कि हिंदी के मीडिया बाज़ार में यह शायद इसीलिए भी इतनी तेज़ी से संभव हुआ है कि हमारे यहाँ अभी तक उस तरह का हिंदी मीडिया तकनीकी शब्दावली प्रयोजन सामने नहीं आया है जिससे भाषाई संकट से बचा जा सकता तथा हिंदी भाषा की मूल पहचान को बनाए रखा जा सकता हो क्योंकि यह सच है कि जब-जब समय के इस कालचक्र में राजनीतिक, सामाजिक तथा आर्थिक बदलाव घटित हुए हैं तब-तब समाज एवं भाषाएँ इसी तरह के संक्रमण काल से गुज़रती रही हैं।

हिंदी भाषा के इस तरह के प्रचलन एवं विश्वव्यापी प्रचार-प्रसार से आज हिंदी का एक ग्लोबल बाज़ार तो दिखाई देता है परंतु हिंदी में भाषा की मीठी खुशबू एवं माँ की लोरी का आंचलिक पुट कहीं छूट गया है। आज यह हिंदी तकनीक तथा संचार की भाषा तक सीमित होती जा रही है।

वर्तमान बदलते परिदृश्य में हिंदी भाषा के लिए तकनीकी शब्दावली उतनी ही ज़रूरी है जितनी भाषा को बचाने के लिए अन्य कोशिशें। आज हिंदी के इस सूचना बाज़ार में रेडियो, टी.वी., इंटरनेट, मोबाईल, फ़ेसबुक, ट्वीटर, वाट्सऐप, यूट्यूब, इंस्टाग्राम इत्यादि की चुनौतियों से जिस मीडिया भाषा का प्रचार-प्रसार हो रहा है, वह आधुनिक व्यक्ति की अभिव्यक्ति तो करती है, इसके साथ-साथ उस पर छाई हुई अंग्रेज़ीयत उसके बदले हुए रूप को असली रूप में दिखाती है।

मीडिया तकनीकी शब्दावली अभी तक उस तरह से भाषा का संप्रेषण नहीं कर सकी जिस तरह की होनी चाहिए थी। यह भी सच है कि आज भाषा इलेक्ट्रॉनिक सूचना प्रसार माध्यमों के द्वारा ग्लैमर के परिदृश्य में शामिल हो चुकी है। परंतु शुद्ध तकनीकी शब्द उपलब्ध न होने के कारण वह अंग्रेज़ी के सैकड़ों शब्दों को हू-ब-हू हिंदी की तरह ही प्रचार एवं प्रसारण के लिए ले रही है। इसका सीधा अर्थ यह हुआ कि हमने भाषाई स्तर पर इतनी छूट दे दी है कि वह जिस तरह चाहे, जैसे भी चाहे अंग्रेज़ी तथा अन्य भाषाओं के शब्दों को अपने यहाँ समाहित कर ले।

हिंदी को यदि विस्तृत एवं भावपूर्ण व्यावहारिक तकनीकी शब्दावली उपलब्ध हो जाए तो उन शब्दों से बचा जा सकता है जिनके कारण हिंदी के संप्रेषण एवं प्रसारण में अंग्रेज़ी का आधे से ज़्यादा व्यावहारिक चेहरा देखने को मिलता है। यहाँ पर मैं उस विषयवस्तु का भी उल्लेख करना चाहूँगा जो तकनीकी शब्दावली आयोग के दायरे में आता है। यदि हिंदी की मीडिया तकनीकी शब्दावली बनाई जाए अथवा कुछ मूल शब्दों को मुहावरे में परिभाषित किया जाए तो पहला सात्विक कार्य यह होना चाहिए कि हिंदी के मूल शब्द का मूल आधार गुम न हो तथा शब्द, लोकशब्द संसार से आम प्रचलित भाषा का होना चाहिए। तभी ये सुदूर भारत में रहनेवाले दर्शकों एवं श्रोताओं तक अपनी सीधी पकड़ बना सकेंगे क्योंकि ये उनकी अपनी भाषा एवं उनके द्वारा बोले जानेवाले रोज़मर्रा के शब्दों में से ही होंगे।

हिंदी के इस बाज़ार में मानक हिंदी का लोप होना इस बात का परिणाम है कि हमने हिंदी की इस दशा को स्वीकार कर लिया है क्योंकि एक सच यह भी है कि राजभाषा के नाम पर एवं सरकारी स्तर पर जो हाल हिंदी का है वह संचार की इस भाषा से भी कोई ज़्यादा अलग नहीं है। जहाँ स्थिति उस खानापूर्ति से भी खराब है जहाँ सितंबर का एक दिन 'राजभाषा' के लिए आरक्षित किया गया है।

बदलते सामाजिक परिदृश्य में यह तो साफ़ है कि जिस मध्यवर्गीय पाठक, श्रोता एवं दर्शक की बैसाखी के सहारे हिंदी विश्व बाज़ार की भाषा बनी है, उस मध्यवर्गीय भारतीय जनता एवं पाश्चात्य संस्कृति में उलझी हुई भीड़ को हिंदी में कैसे समझाया जाएगा जो 'ज़ूम', 'हंगामा', 'पोगो' एवं 'देहदर्शन' से लेकर योगा तक आध्यात्मिक टोटकों के मंत्र देते हुए बाबाओं के प्रवचनों पर एक नए भारतीय समाज की संरचना का सपना संजोए हुए हैं? यह वह एक बिंदु है यहाँ पर मीडिया तकनीकी शब्दावली की ताकत पर उसके द्वारा प्रचलित शब्द प्रचारित एवं प्रसारित कर सकता है जिनमें से भारतीयता की खुशबू आए।

तकनीकी शब्दावली आयोग ने भाषा की तकनीकी शब्दावली विकास के लिए जो वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाया है उसे मीडिया के भाषा, व्यवहार एवं आचार के लिए और खुलकर सामने आना चाहिए। इसमें सबसे महत्वपूर्ण बिंदु मीडिया तकनीकी शब्दावली के लिए फ़ीडबैक अथवा उस सर्वेक्षण का है जिसके द्वारा मीडिया की इस नई भाषा एवं एक मानक हिंदी शब्दावली पर कार्य हो जिससे हिंदी में प्रचलित शब्दों के बदलते स्वरूप के साथ उन परंपरागत आंचलिक शब्दों को भी समाहित किया जाए ताकि सुदूर आंचलिक शहरों में बसे हुए दर्शकों एवं श्रोताओं तक भाषा के इस परिवर्तन में सुखद, सहज शब्दों का संप्रेषण हो सके। यह भारत के उस अंतिम व्यक्ति तक पहुँचने की कोशिश भी होगी जो अभी भी रोज़ी-रोटी, शिक्षा एवं भाषा की मुख्यधारा से बाहर है।

मीडिया की तकनीकी शब्दावली का कार्य कठिन है क्योंकि पाश्चात्य प्रभाव के चलते सैकड़ों ऐसे शब्द हैं जिन्हें अंग्रेज़ी से वैसे का वैसे लिया गया है। उदाहरण के तौर पर 'रेडियो', 'फ़िल्म', 'टेलीविज़न'। ये मुख्य तीनों शब्द भी अंग्रेज़ी से आते हैं। इनके साथ-साथ 'स्क्रीन', 'मोबाइल', 'सेंसर', 'पायलट', 'शूटिंग', 'वीटीआर', 'समाचार बुलेटिन' के अलावा अब तो आधा हिंदी, आधा अंग्रेज़ी नामक फ़ैशन धड़ल्ले से चल रहा है। तो फिर प्रश्न यह है कि तकनीकी शब्दावली आयोग किस भाषाई हिंदी की तह तक जाकर मीडिया शब्दों का मानकीकरण करे?

उपरोक्त संदर्भों में मीडिया भाषा के प्रति मीडिया विशेषज्ञों का बाज़ारू भाषाई पाखंड भी सामने आता है। असल में यह भाषा के समसामयिक सौंदर्यबोध के विघटन का समय है जिसमें समाचार पत्रों एवं चैनलों (रेडियो, टी.वी., फ़िल्म, यूट्यूब, वेब टीवी इत्यादि) के बहुत सारे नाम अंग्रेज़ी-हिंदी के मिश्रित रूप हैं। उदाहरण के तौर पर 'इंडिया टुडे', 'एनडीटीवी इंडिया', 'डी.डी. न्यूज़', 'डीडी इंडिया', 'एपिक चैनल', 'ए-वन चैनल', 'न्यूज़ इंडिया' आदि अथवा फ़िल्मों के अंग्रेज़ी नामकरण इत्यादि।

तकनीकी शब्दावली आयोग को हिंदी भाषा की मीडिया शब्दावली के लिए शब्द तैयार करते समय इस संचार क्रांति से संबद्ध आदमी की विचाराभिव्यक्ति को संप्रेषित करते हुए शब्द की तह तक जाना होगा जिसमें सूचना प्रसारण का समाजशास्त्र भी शामिल है तथा यह बदलता हुआ समाजशास्त्र हमारी बदलती हुई ज़िंदगी की सामाजिक व्यवस्था का भी अहम भाग है।

आज़ादी के इतने वर्षों बाद 21वीं सदी के इन दिनों में जब मीडिया एक शक्तिशाली माध्यम का स्वरूप धारण कर चुका है, ज़रूरत इस बात की है कि तकनीकी शब्दावली आयोग मीडिया शब्दावली के लिए उन शब्दों का चुनाव करे जो सहज, सरल, लोकभाषाई अभिव्यक्ति की तर्जमानी कर सके।

तकनीकी शब्दावली द्वारा निर्मित मीडिया के सहज शब्दों से शायद आनेवाले दिनों में हिंदी-भाषी दर्शक एवं मध्यवर्ग उस दोगले व्यवहार से बच सकेंगे जो पिछले एक दशक से हमारे यहाँ मीडिया माफ़िया द्वारा निर्मित किया गया है तथा राजभाषा हिंदी को एक साज़िश के तहत अभी भी उस भाषा की श्रेणी में रखा जाता है जो शायद भारत का बड़ा शहरी वर्ग घर में बोलना अब पसंद नहीं करता है। यह किस बदलती हुई संस्कृति का प्रतीक है?

अब समय आ गया है कि इस दोगली पाश्चात्य राजनीतिक तथा सामाजिक नीति को त्यागकर भाषा के प्रति एक ऐसा रवैया अपनाया जाए जो भाषा के मर्म के लिए आवश्यक है क्योंकि जिन राष्ट्रों की भाषा खत्म हो जाती है उनका नाम इतिहास में नहीं रहता।

हिंदी भाषा का प्रचार-प्रसार तेज़ी से हो परंतु इसके साथ हिंदी भारतीयता का अपना मानक स्वरूप साबित कर सके जिसमें माँ की लोरी, बापू की झिड़क, प्रेम के खतों से मोहब्बत की रिमझिम तथा उस संसद की भाषा भी उस आखिरी छोर पर खड़े आदमी की समझ में आए, उसे लगे कि कोई उसकी अपनी भाषा में उसके दुख-दर्द, पीड़ा की अभिव्यक्ति कर रहा है।

अपनी बात मैं धूमिल की इन पंक्तियों के साथ खत्म करता हूँ—

''तुम चुप रहोगे
निर्लज्जता के असंग
गूंगेपन से सहोगे,
यह जानकर भी
कि तुम्हारी मातृ भाषा
उस महरी के समान है
जो एक साड़ी पर
किसी महाजन के साथ
रात भर सोने के लिए राज़ी है''

पंजाब, भारत
kkrattu@gmail.com

33

मीडिया की हिंदी और हिंदी का मीडिया

—श्री संजय द्विवेदी

मीडिया की दुनिया में इन दिनों भाषा का सवाल काफ़ी प्रासंगिक हो गया है। मीडिया में जिस तरह की भाषा का इस्तेमाल हो रहा है उसे लेकर शुद्धता के आग्रही लोगों में काफ़ी हाहाकार मचा हुआ है। चिंता हिंदी की है और उस हिंदी की जिसका हमारा समाज उपयोग करता है। बार-बार यह बात कही जाती है कि 'हिंदी में अंग्रेज़ी की मिलावट से हिंदी अपना रूप-रंग और गंध खो रही है। सो हिंदी को बचाने के लिए एक हो जाएँ।'

हिंदी हमारी भाषा के नाते ही नहीं, अपनी उपयोगिता के नाते भी आज बाज़ार की सबसे प्रिय भाषा है। आप लाख अंग्रेज़ी के आतंक का विलाप करें। काम तो आपको हिंदी में ही करना है, यह मरज़ी आपकी है कि आप अपनी स्क्रिप्ट देवनागरी में लिखें या रोमन में। यह हिंदी की ही ताकत है कि वह श्रीमती सोनिया गांधी से लेकर कैटरीना कैफ़ तक से हिंदी बुलवा ही लेती है।

उड़िया न जानने के आरोप झेलनेवाले उड़ीसा के नेता भी हिंदी में बोलकर ही अपनी अंग्रेज़ी न जाननेवाली जनता को संबोधित करते हैं। इतना ही नहीं राष्ट्रपति, माननीय श्री प्रणब मुखर्जी को सुन लीजिए। वे कहते हैं कि वे प्रधान मंत्री नहीं बन सकते क्योंकि उन्हें ठीक से हिंदी बोलनी नहीं आती। कुल मिलाकर हिंदी आज मीडिया, राजनीति, मनोरंजन और विज्ञापन की प्रमुख भाषा है।

हिंदुस्तान जैसे देश को एक भाषा के सहारे संबोधित करना हो तो वह सिर्फ़ हिंदी के माध्यम से ही संभव है। यह हिंदी का अहंकार नहीं, उसकी सहजता और ताकत है। मीडिया में जिस तरह हिंदी का उपयोग हो रहा है उसे लेकर चिंताएँ बहुत जायज़ हैं किंतु विस्तार के दौर में ऐसी लापरवाहियाँ हर जगह देखी जाती हैं।

कुछ अखबार प्रयासपूर्वक अपनी श्रेष्ठता दिखाने अथवा युवा पाठकों का ख्याल रखने के नाम पर हिंग्लिश परोस रहे हैं जिसकी कई स्तरों पर आलोचना भी हो रही है। हिंग्लिश का उपयोग चलन में आने से एक नई किस्म की भाषा का विस्तार हो रहा है किंतु यदि आप देखें तो वह विषयगत ही ज़्यादा है।

लाइफ़ स्टाइल, फ़िल्म के पन्नों तथा सिटी कवरेज में भी लाइट खबरों पर ही इस तरह की भाषा का प्रभाव दिखता है। चिंता हिंदी समाज के स्वभाव पर भी होनी चाहिए कि वह अपनी भाषा के प्रति बहुत सम्मान भाव नहीं रखता, उसके साथ हो रहे खिलवाड़ पर उसे बहुत आपत्ति नहीं है।

हिंदी को लेकर किसी तरह का भावात्मक आधार भी नहीं बनता, न वह अपना कोई ऐसा वृत्त बनाती है जिससे उसकी अपील बने। हिंदी की बोलियाँ इस मामले में ज़्यादा समर्थ हैं क्योंकि उन्हें क्षेत्रीय अस्मिता एक आधार प्रदान करती है। हिंदी की सही मायने में अपनी कोई ज़मीन नहीं है। जिस तरह भोजपुरी, अवधी, छत्तीसगढ़ी, बुंदेली, बघेली, गढ़वाली, मैथिली, ब्रजभाषा जैसी तमाम बोलियों ने अपनी ज़मीन बनाई है। हिंदी अपने व्यापक विस्तार के बावजूद किसी तरह का भावात्मक आधार नहीं बनाती। सो इसके साथ किसी भी तरह की छेड़छाड़ किसी का दिल भी नहीं दुखाती!

मीडिया और मनोरंजन की पूरी दुनिया हिंदी के इसी विस्तारवाद का फ़ायदा उठा रही है किंतु जब हिंदी को देने की बारी आती है तो ये भी उससे दोयम दर्जे का ही व्यवहार करते हैं। यह समझना बहुत मुश्किल है कि विज्ञापन, मनोरंजन या मीडिया की दुनिया में हिंदी की कमाई खानेवाले अपनी स्क्रिप्ट इंग्लिश में क्यों लिखते हैं?

देवनागरी में किसी स्क्रिप्ट को लिखने से क्या प्रस्तोता के प्रभाव में कमी आ जाएगी, फ़िल्म फ़्लॉप हो जाएगी या मीडिया समूहों द्वारा अपने दैनिक कामों में हिंदी के उपयोग से उनके दर्शक या पाठक भाग जाएँगे? यह क्यों ज़रूरी है कि हिंदी के अखबारों में अंग्रेज़ी के स्वनामधन्य लेखक, पत्रकार एवं स्तंभकारों के तो लेख अनूदित कर छापे जाएँ, उन्हें मोटा पारिश्रमिक भी दिया जाए किंतु हिंदी में मूल काम करनेवाले पत्रकारों को मौका ही न दिया जाए?

हिंदी के अखबार क्या वैचारिक रूप से इतने दरिद्र हैं कि अखबारों में गंभीरता तभी आएगी जब कुछ स्वनामधन्य अंग्रेज़ी पत्रकार उनमें अपना योगदान दें? यह उदारता क्यों? क्या अंग्रेज़ी के अखबार भी इतनी ही सदाशयता से हिंदी के पत्रकारों के लेख छापते हैं?

पूरा विज्ञापन बाज़ार हिंदी क्षेत्र को ही दृष्टि में रखकर विज्ञापन अभियानों को प्रारंभ करता है किंतु उसकी पूरी कार्यवाही देवनागरी के बजाय ये रोमन लिपि में होती है, जबकि अंत में फ़ाइनल प्रोडक्ट देवनागरी में ही तैयार होना है। गुलामी के ये भूत हमारे मीडिया को लंबे समय से सता रहे हैं। इसके चलते एक चिंता चौतरफ़ा व्याप्त है।

यह खतरा एक संकेत है कि क्या कहीं देवनागरी के बजाय रोमन में ही तो हिंदी न लिखी जाएगी! कई बड़े अखबार भाषा की इस भ्रष्टता को अपना आदर्श बना रहे हैं जिसके चलते हिंदी शर्माई और सकुचाई हुई सी दिखती है। शीर्षकों में कई बार पूरा शब्द अंग्रेज़ी में ही लिख दिया जा रहा है। जैसे— 'मल्लिका का बोल्ड स्टैप' या इसी तरह 'कौन बनेगा पी.एम.' जैसे शीर्षक लगातार आप क्या करना चाहते हैं।

यदि आप देखें तो पंजीयन हिंदी के अखबार का है और उसमें 2 या 4 पेज अंग्रेज़ी के लगे हैं। हिंदी के साथ ही आप ऐसा कर सकते हैं। संभव हो तो आप हिंग्लिश में भी एक अखबार निकालने का प्रयोग कर लें। संभव है वह प्रयोग सफल भी हो जाए किंतु इससे भाषाई अराजकता तो नहीं मचेगी।

हिंदी में जिस तरह की शब्द सामर्थ्य और ज्ञान-विज्ञान के हर अनुशासन पर अपनी बात कहने की ताकत है उसे समझे बिना इस तरह मनमानी के मायने क्या हैं? मीडिया की बढ़ी ताकत ने उसे एक ज़िम्मेदारी भी दी है। सही भाषा के इस्तेमाल से नई पीढ़ी को भाषा के संस्कार मिलेंगे। बाज़ार में हर भाषा का अखबार मौजूद हैं, मुझे अंग्रेज़ी पढ़नी है तो मैं अंग्रेज़ी का अखबार ले लूँगा, वह अखबार नहीं जिसमें 10 हिंदी के और 4 पन्ने अंग्रेज़ी के भी लगे हैं।

इसी तरह मैं अखबार के साथ एक रिश्ता बना पाता हूँ क्योंकि वह मेरी भाषा का अखबार है। अगर उसमें भाषा के साथ खिलवाड़ हो रहा है तो क्या ज़रूरी है कि मैं आपके इस खिलवाड़ का हिस्सा बनूँ? यह दर्द हर संवेदनशील हिंदी प्रेमी का है। हिंदी किसी जातीय अस्मिता की भाषा भले न हो, यह आम जन को संबोधित करनेवाली सबसे समर्थ भाषा है। इस सच्चाई को जानकर ही देश का मीडिया, बाज़ार और उसके उपादान अपने लक्ष्य पा सकते हैं क्योंकि हिंदी की ताकत को कमतर आँककर आप ऐसे सच से मुँह चुरा रहे हैं जो सबको पता है।

साभार : वेबदुनिया
10 नवंबर, 2016

विश्व हिंदी दिवस 2016
के उपलक्ष्य में आयोजित
अंतरराष्ट्रीय हिंदी निबंध
प्रतियोगिता में प्रथम स्थान
प्राप्त विजेताओं तथा
अन्य प्रतिभागियों के
चुने हुए निबंध

विश्व हिंदी दिवस 2016 के उपलक्ष्य में विश्व हिंदी सचिवालय द्वारा एक 'अंतरराष्ट्रीय हिंदी निबंध प्रतियोगिता' का आयोजन किया गया था जिसका विषय 'मेरे देश का हिंदी प्रचारक' या 'मेरे देश की हिंदी संस्था' था। प्रतियोगिता के परिणामों की घोषणा विश्व हिंदी दिवस समारोह 2016 के दौरान की गई थी। 'विश्व हिंदी पत्रिका' के प्रस्तुत अंक में प्रथम तथा द्वितीय स्थान प्राप्त विजेताओं की प्रविष्टियाँ सहित अन्य प्रतिभागियों के चयनित निबंध आप सुधी पाठकों के समक्ष प्रस्तुत हैं।

34

मेरे देश की हिंदी संस्था–विश्व हिंदी सचिवालय

—श्री सोमदत्त काशीनाथ

मॉरीशस में हिंदी

मॉरीशस एक ऐसा देश है जो विश्व के कई देशों के आप्रवासियों के आपसी सहयोग और परस्पर मैत्री भाव से बना है। इसी भावना से मॉरीशस की पहचान बनी है और इस पहचान के पीछे यहाँ के लोगों की धर्मगत, सांस्कृतिक एवं भाषागत विविधता है। देश में हमारे पूर्वजों की इसी धरोहर को बनाए रखने में हिंदी भाषा एक अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। इस संदर्भ में डॉ. मुनीश्वरलाल चिंतामणि ने 'मॉरीशसीय हिंदी साहित्य की पृष्ठभूमि' (2001, पृ.1) में लिखा है, ''भारतीय परिवेश और सीमा के बाहर द्वीपों और देशों में हिंदी-भोजपुरी क्षेत्र के भारतीय प्रवासी होकर गए और वहाँ रह गए। मॉरीशस द्वीप में भी ऐसा ही हुआ...भारत के अन्य भूखंडों से आए प्रवासियों के साथ उनका दूध-पानी की तरह घुल-मिल जाना भोजपुरी और हिंदी के लिए भी इस देश में वरदान सिद्ध हुआ।''

हमारे पूर्वजों ने अंग्रेज़ों की यातनाओं को सहते हुए 'रामायण', 'हनुमान चालीसा' आदि के पद दोहराए और इसका परिणाम यह हुआ कि वे जहाँ एक ओर अपनी भाषा एवं संस्कृति को जीवित रखने में सक्षम रहे तो दूसरी ओर उनकी संतानों ने नए परिवेश, नए संघर्ष, नवीन स्वाधीनता, नए उन्मेष तथा नई संस्कृति की टकराहटों के बीच साहित्य-सृजन पर ध्यान दिया। अत: हिंदी को ऐसी ऊँची भावभूमि पर प्रतिपादित करने के पीछे कई हिंदी प्रेमियों का अथक प्रयास रहा है तथा कई धार्मिक तथा सांस्कृतिक संस्थाओं ने भी हिंदी को लोकप्रिय एवं प्रासंगिक बनाए रखने के लिए अपना उल्लेखनीय योगदान दिया है।

ऐसे हिंदी प्रेमियों में जहाँ पंडित आत्माराम विश्वनाथ, पंडित काशीनाथ किश्तो, श्री सूर्यप्रसाद मंगर 'भगत', मोहनलाल मोहित तथा प्रो. राम प्रकाश (Hindi Literature Mauritius and other Writings available online) आदि अनन्य हिंदी भाषा की सेवा करनेवाले विद्वानों के नाम गिनाए जा सकते हैं जिनका भार सँभालनेवाले आगे चलकर श्री रामदेव धुरंधर, डॉ. बीरसेन जगासिंह, श्री अभिमन्यु अनत, श्री प्रहलाद रामशरण, श्री अजामिल माताबदल, डॉ. उदयनारायण गंगू, डॉ. ब्रजेंद्र कुमार भगत 'मधुकर' आदि (Hindi Literature Mauritius and other Writings available online) कई ऐसे देदीप्यमान नक्षत्र बने जिन्होंने अपने-अपने क्षेत्र में कार्य करते हुए हिंदी भाषा एवं साहित्य को वैश्विक स्तर पर प्रतिष्ठित करने में अभूतपूर्व भूमिका निभाई है।

इसी प्रकार हिंदी भाषा को उसके ध्येय तक पहुँचाने के लिए हिंदी प्रचारिणी सभा, आर्य सभा तथा मॉरीशसीय सरकार के साथ-साथ कई संस्थाएँ हिंदी के उत्थान एवं विकास की दिशा में वर्षों से काम कर रही हैं। एक ओर जहाँ हिंदी शिक्षण के क्षेत्र में शिक्षा मंत्रालय, मॉरीशस विश्वविद्यालय, महात्मा गांधी संस्थान, रवींद्रनाथ ठाकुर संस्थान तथा आर्य सभा, मॉरीशस द्वारा संचालित ऋषि दयानंद संस्थान आदि शैक्षणिक संस्थाएँ हिंदी के पठन-पाठन को जीवंतता प्रदान करने में सक्षम रही हैं तो दूसरी ओर एम.बी.सी. तथा अन्य रेडियो चैनल भी हिंदी की गरिमा को बढ़ाने में कार्यरत हैं।

निस्संदेह आधुनिक संदर्भ में इन संस्थाओं एवं महापुरुषों के अतिरिक्त एक ऐसी संस्था की आवश्यकता पड़ी जो हिंदी भाषा को मॉरीशस की आवाज़ बनाकर अंतरराष्ट्रीय मंच तक पहुँचाने में पूर्णतया सक्षम बनी। वह है विश्व हिंदी सचिवालय। अत: आधुनिक संदर्भ में विश्व हिंदी सचिवालय एक अत्यंत प्रासंगिक संस्था है जो अनेक स्तरों पर हिंदी भाषा को एक नया जीवन देने में अपनी भूमिका निभा रही है।

विश्व हिंदी सचिवालय की भूमिका

विश्व हिंदी सचिवालय एक ऐसी संस्था है जो भारत सरकार और मॉरीशस सरकार की साझेदारी से संचालित है। स्वतंत्र रूप से काम करते हुए भी इस संस्था की अधिकांश गतिविधियाँ दोनों सरकारों के सहयोग से आयोजित की जाती हैं। वास्तव में विश्व हिंदी सचिवालय की संकल्पना हमारे देश के प्रथम प्रधान मंत्री सर शिवसागर रामगुलाम द्वारा गठित उस प्रतिनिधि मंडल ने की थी

जो सन् 1975 ई. में नागपुर, भारत में हुए विश्व हिंदी सम्मेलन में भाग लेने गया था। उस सम्मेलन में सर शिवसागर रामगुलाम ने यह प्रस्ताव रखा था कि मॉरीशस में विश्व हिंदी सचिवालय की स्थापना की जाए।

इसके बाद मॉरीशस सरकार की ओर से 4-8 अप्रैल, 1996 में त्रिनिदाद व टोबैगो में आयोजित पंचम विश्व हिंदी सम्मेलन में डॉ. सरिता बुधु की शिक्षा व वैज्ञानिक अनुसंधान मंत्रालय में विश्व हिंदी सचिवालय के भवन-निर्माण के लिए सलाहकार के रूप में नियुक्ति की घोषणा हुई। तत्पश्चात जून 1996 में ही मॉरीशस में स्थित भारतीय उच्चायोग के माध्यम से भारतीय सरकार ने मॉरीशस के शिक्षा व वैज्ञानिक अनुसंधान मंत्रालय के कार्यालय में ही विश्व हिंदी सचिवालय की एक इकाई का गठन किया।

इसके पश्चात 20 अगस्त, 1999 में मॉरीशस सरकार और भारत सरकार के बीच एक समझौता हुआ जिसके अंतर्गत निश्चय किया गया कि विश्व हिंदी सचिवालय को संचालित करने के लिए अर्थ-व्यवस्था कैसे होगी, उसका उद्देश्य क्या होगा एवं वह कैसे कार्य करेगा। इस समझौते में यह भी निश्चय किया गया कि मॉरीशस सरकार द्वारा प्रदत्त भूमि पर भारतीय सरकार विश्व हिंदी सचिवालय के भवन की स्थापना का खर्च उठाएगी। अत: 17 सितंबर, 2001 से फ़ॉरेस्ट साइड, मॉरीशस में विश्व हिंदी सचिवालय का संचालन शुरू हुआ।

इस नवस्थापित कार्यालय का कार्यभार सँभालने के लिए श्री अजामिल माताबदल की नियुक्ति हुई जो उस समय शिक्षा मंत्रालय में निरीक्षक के पद से अवकाश ले चुके थे। फिर सन् 2005 के सितंबर महीने में शिक्षा मंत्रालय में नियुक्त श्री एस. जानकी को सचिव के रूप में मनोनीत किया गया जो वरिष्ठ निरीक्षक के रूप में कार्यरत थे। आगे चलकर 17 जनवरी, 2007 से 16 जनवरी, 2010 तक डॉ. श्रीमती विनोद बाला अरूण ने इस पद को सँभाला। इसके बाद 18 जनवरी, 2010 से 10 फरवरी, 2011 तक डॉ. राजेंद्र प्रसाद मिश्र तथा 29 अगस्त, 2011 से 27 फरवरी, 2013 तक श्रीमती पूनम जुनेजा महासचिव के पद पर आसीन रहीं। 26 नवंबर, 2013 से श्री गंगाधरसिंह सुखलाल विश्व हिंदी सचिवालय में कार्यवाहक महासचिव की भूमिका निभाते हुए हिंदी को मॉरीशस व अंतरराष्ट्रीय मंच पर गौरांवित करने में अथक प्रयास कर रहे हैं।

सन् 2001 में जब तत्कालीन भारत सरकार के मानव संसाधन एवं विकास मंत्री, माननीय श्री मुरली मनोहर जोशी मॉरीशस पधारे थे तब उन्होंने फ़ेनिक्स में विश्व हिंदी सचिवालय का शिलान्यास किया। संभवत: निकट भविष्य में भारत सरकार तथा मॉरीशस सरकार के प्रणेताओं ने विश्व हिंदी सचिवालय का जो सपना देखा था, वह पूर्ण रूप से साकार हो।

विश्व हिंदी सचिवालय का उद्देश्य

12 नवंबर, 2002 में मॉरीशस सरकार ने यह अधिनियम पारित किया था कि विश्व हिंदी सचिवालय का मूल उद्देश्य— हिंदी को एक अंतरराष्ट्रीय भाषा के रूप में प्रतिष्ठित करना तथा संयुक्त राष्ट्र संघ में हिंदी भाषा को एक आधिकारिक भाषा के रूप में मान्यता दिलाना रहेगा। इस बात की पुष्टि करते हुए विश्व हिंदी सचिवालय की पूर्व महासचिव, डॉ. श्रीमती विनोद बाला अरुण ने मॉरीशस में आयोजित प्रथम हिंदी दिवस के अवसर पर कहा था, ''हिंदी का अंतरराष्ट्रीय भाषा के रूप में प्रचार-प्रसार करना और हिंदी को संयुक्त राष्ट्र संघ की आधिकारिक भाषा के रूप में मान्यता दिलाने के कार्य को आगे बढ़ाना। इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए चिंतन-मनन करना और बराबर कार्यरत रहना हर हिंदी-भाषी का परम कर्तव्य है।''

डॉ. श्रीमती विनोद बाला अरुण ने मॉरीशस में आयोजित प्रथम हिंदी दिवस के अवसर पर कहा था, ''हिंदी का अंतरराष्ट्रीय भाषा के रूप में प्रचार-प्रसार करना और हिंदी को संयुक्त राष्ट्र संघ की आधिकारिक भाषा के रूप में मान्यता दिलाने के कार्य को आगे बढ़ाना। इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए चिंतन-मनन करना और बराबर कार्यरत रहना हर हिंदी-भाषी का परम कर्तव्य है।

आज यह संस्था मॉरीशस में विश्व हिंदी दिवस के आयोजन में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। 17 जनवरी, 2009 में विश्व हिंदी सचिवालय ने मॉरीशस में प्रथम बार हिंदी दिवस का आयोजन किया तथा इसके पश्चात प्रतिवर्ष मॉरीशस में विश्व हिंदी दिवस को महिमा-मंडित करने के लिए समारोहों का आयोजन होता है। इसका उद्देश्य केवल हिंदी प्रेमियों को एक साथ एकत्रित करके विचारों का आदान-प्रदान न रहकर हिंदी भाषा के भविष्य पर चिंतन करने के साथ-साथ इसके सुचारु एवं व्यापक प्रचार-प्रसार पर भी ध्यान देना है।

दूसरी ओर यह मॉरीशस में ही स्थानीय हिंदी प्रेमियों के लिए एक अंतरराष्ट्रीय मंच का द्वार खोलने में एक सफल भूमिका निभा रहा है। 10 जनवरी, 2012 में मॉरीशस में आयोजित चौथे विश्व हिंदी दिवस के अवसर पर मॉरीशस के तत्कालीन शिक्षा एवं मानव संसाधन मंत्री, माननीय डॉ. वसंत कुमार बनवारी ने मॉरीशस में हिंदी की स्थिति का पुनरावलोकन करते हुए कहा था, ''हिंदी भाषा के प्रचार-प्रसार में मॉरीशस हमेशा आगे रहा है। इस बात को दोहराते हुए मुझे हमेशा लगता है कि भारत के बाहर हिंदी शिक्षण के लिए जितनी अच्छी व्यवस्था मॉरीशस में है, वह दुनिया में बहुत कम देशों में है।''

मॉरीशस में विश्व हिंदी दिवस का आयोजन करने के अतिरिक्त विश्व हिंदी सचिवालय ने अनेक सम्मेलनों व कार्यसत्रों का आयोजन किया है। वह मॉरीशस में हिंदी शिक्षण के लिए आधुनिक टेकनोलॉजी को अपनाने के लिए व हिंदी लेखन तथा प्रसारण में कंप्यूटर प्रयोग आदि की जानकारियों का आवंटन करने में स्थानीय शिक्षा मंत्रालय की सहायता कर रहा है।

हाल ही में इस संस्था ने हिंदी शिक्षकों को कक्षा में कंप्यूटर प्रयुक्त किए जाने के लिए एक 3 दिवसीय कार्यसत्र का आयोजन भी किया। इससे न केवल शिक्षक लाभान्वित हुए बल्कि देश के प्राथमिक स्कूलों के छात्र भी 'सांकोरे' एवं कंप्यूटर के प्रयोग से प्रेरित हुए।

सम्मेलनों का आयोजन तथा उनकी आवश्यकता

वास्तव में विश्व हिंदी सचिवालय की स्थापना के पीछे एक और लक्ष्य है—हिंदी सम्मेलनों का आयोजन। सन् 2008 में औपचारिक रूप से कार्य आरंभ करने से पूर्व ही जुलाई, सन् 2007 में अमेरिका के न्यू यॉर्क शहर में हुए विश्व हिंदी सम्मेलन में तत्कालीन महासचिव, डॉ. श्रीमती विनोद बाला अरुण ने विश्व हिंदी सचिवालय का प्रतिनिधित्व करते हुए भाग लिया। अब तक विश्व हिंदी सचिवालय के कई अधिकारी अनेक राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय सम्मेलनों में भाग ले चुके हैं तथा भविष्य में भी मॉरीशस की आवाज़ बनकर लोगों तक पहुँचने के लिए सक्रिय है।

विश्व हिंदी सचिवालय द्वारा आयोजित सम्मेलनों में समय-समय पर विशेषज्ञों को आमंत्रित किया गया है जिनके सुझाव तथा मार्गदर्शन आधुनिक हिंदी को प्रौद्योगिकी के साथ जोड़ने में महत्वपूर्ण सिद्ध हुए। हाल ही में भारत से 3 सूचना प्रौद्योगिकी विशेषज्ञ—श्री बालेंदु शर्मा दाधीच, श्रीमती पूर्णिमा वर्मन और श्री ललित कुमार, विश्व हिंदी सचिवालय द्वारा आमंत्रित किए जाने पर मॉरीशस आए थे। इन्होंने प्राथमिक हिंदी अध्यापकों के लिए एक सम्मेलन में हिंदी शिक्षण को आधुनिक बनाने के लिए उपयोगी सुझाव दिए।

इन्हीं सुझावों व जानकारियों के परिणामस्वरूप आज बहुत से हिंदी अध्यापक स्वयं अपनी कक्षा में प्रयुक्त करने के लिए कंप्यूटर पर सहायक सामग्री तैयार करने में सक्षम हैं। वे स्वयं प्रक्षेपित करने योग्य पाठ एवं कार्य तैयार कर सकते हैं जो कि पूर्व में हिंदी अध्यापकों के लिए टेढ़ी खीर लगती थी। इस तरह विश्व हिंदी सचिवालय हिंदी भाषा और आधुनिक तकनीकी उपलब्धियों के साथ हिंदी पाठकों को जोड़ने में पूर्णरूपेण सक्षम रहा है।

इस तरह विविध विषयों पर सम्मेलनों, सेमिनारों तथा कार्यशालाओं के आयोजन द्वारा विश्व हिंदी सचिवालय भारत सरकार तथा मॉरीशस सरकार के द्विपक्षीय सहयोग से मॉरीशस में हिंदी भाषा के विकास को सुदृढ नींव प्रदान करने में सक्षम रहा है तथा वह अन्य दिशाओं की तलाश भी कर रहा है जहाँ हिंदी के उत्थान एवं विकास के लिए अनुकूल हवा बहे।

मॉरीशसीय तथा अंतरराष्ट्रीय हिंदी प्रेमियों को एक ही मंच पर लाना

एक ओर जहाँ विश्व हिंदी सचिवालय ने पूर्व से ही स्थापित विद्वानों को मॉरीशस में आकर मॉरीशसीय हिंदी प्रेमियों का दिशा-निर्देश देना तथा उन्हें प्रेरणा प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है, वहीं इस संस्था ने स्थानीय हिंदी विद्वानों को अंतरराष्ट्रीय मंच पर ले जाने में सफलता प्राप्त की है। विश्व हिंदी दिवस, विश्व हिंदी सम्मेलनों तथा सेमिनारों अथवा कार्यशालाओं में न केवल विदेश से आए हुए विद्वानों के विचार सुनने को मिलते हैं बल्कि मॉरीशस के अनुभवी लोग भी अपने अनुभव एवं विचार बाँटते हैं। इससे नई पीढ़ी को आगे आने की प्रेरणा तो मिलती ही है, इसके साथ-साथ शोधकर्ताओं व विद्यार्थियों को हिंदी को लेकर खोज करने की प्रेरणा मिलती है तथा उनमें उत्सुकता भी जागती है।

भाषणों तथा कार्यशालाओं के आयोजन के साथ-साथ विश्व हिंदी सचिवालय अपने त्रैमासिक 'विश्व हिंदी समाचार' और वार्षिक 'विश्व हिंदी पत्रिका' का भी प्रकाशन कर रहा है जिसमें देश-विदेश के विद्वानों के लेख, विविध विषयों पर आलेख तथा

हिंदी भाषा तथा साहित्य के क्षेत्र में हो रहे परिवर्तनों पर आधारित लेख प्रकाशित किए जाते हैं।

विश्व हिंदी समाचार एक ऐसी पत्रिका है जो हर तीन महीने में निकलती है। इस त्रैमासिक पत्रिका में हिंदी से जुड़ीं भाषाई तथा साहित्यिक गतिविधियों के विषय में जानकारियाँ प्रकाशित की जाती हैं। इस समाचार पत्र में सूचनाओं के साथ-साथ विचारोत्तेजक आलेख भी मिलते हैं जो पाठकों को वर्तमान स्थिति पर चिंतन तथा भविष्य की चिंता करने के लिए बाध्य करते हैं। इस पत्र में न केवल मॉरीशस एवं भारत की घटनाओं का उल्लेख मिलता है बल्कि पूरे विश्व की खबरें रहती हैं, विशेषकर उन देशों में जहाँ हिंदी भाषा का शिक्षण एवं व्यवहार होता है।

निष्कर्ष : विश्व हिंदी सचिवालय से स्थानीय हिंदी प्रेमियों की अपेक्षा

निस्संदेह मॉरीशस में हिंदी भाषा के प्रचार-प्रसार के लिए विश्व हिंदी सचिवालय अपने परिमानों को क्रमशः विस्तृत करता जा रहा है और हिंदी को अंतरराष्ट्रीय मंच पर सम्मान दिलाने के लिए यथासंभव प्रयास कर रहा है। अतः मॉरीशस की भूमि पर हिंदी प्रचारिणी सभा, आर्य सभा, हिंदी स्पीकिंग यूनियन आदि संस्थाओं के कार्यों को आगे ले जाने में विश्व हिंदी सचिवालय ही सबसे महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। हिंदी भाषा को संयुक्त राष्ट्र संघ में मान्यता दिलाने के लिए जो कोशिश हो रही है, उसमें विश्व हिंदी सचिवालय की एक सार्थक भूमिका है।

स्थानीय तथा विदेशी हिंदी-भाषियों को एक सूत्र में बाँधकर उन्हें एक माला में पिरोकर दुनिया के सामने लाने के साथ-साथ आज नई पीढ़ी में भी हिंदी के प्रति प्रेम एवं विश्वास की भावना जगाने की आवश्यकता पड़ गई है। लोग सोचते हैं कि हिंदी पढ़कर हमें क्या मिलेगा? उनकी इस निराशा भरी भावना को दूर करने में विश्व हिंदी सचिवालय एक उल्लेखनीय भूमिका निभा सकता है।

वह हिंदी-भाषी देशों के बीच सूचनाओं के आदान-प्रदान के लिए तथा हिंदी-भाषियों को दूसरे देशों में नौकरियाँ दिलाने के लिए एक ऐसा द्वार खुलवा सकता है जो हिंदी-भाषियों को भी हिंदी सीखने के लिए प्रेरित कर सके। हिंदी भाषा को विश्व में व्याप्त उसके प्रति संकीर्णता के दायरे से निकालकर बाहर लाने के साथ-साथ इस संस्था को अपने-आपको प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से भी हमारे बच्चों व युवकों के साथ जुड़ना होगा।

आज देश में बहुत सी संस्थाएँ हैं जो बच्चों एवं युवकों से दूर रहकर काम करती हैं। धीरे-धीरे समाज में वे अपनी प्रासंगिकता खोती जा रही हैं। ऐसे में यदि विश्व हिंदी सचिवालय के विचार तथा उद्देश्यों में हमारे बच्चों व युवा वर्ग से दूर रहकर कामचलाऊ तरीके से काम करने की भावना रहेगी तो धीरे-धीरे यह भी अपनी प्रासंगिकता खो देगा।

यदि हिंदी प्रेमी ही नहीं रहेंगे तो विश्व हिंदी सचिवालय की क्या भूमिका रहेगी? लोगों की दृष्टि में उसकी उपस्थिति केवल उस मिट्टी के माधव के रूप में होगी जो सब कुछ देखता है, सब कुछ समझता है, सब कुछ जानता है किंतु प्रतिक्रियाहीन बना रहता है। आज के युवक केवल भावुक होकर हिंदी सीखने अथवा सिखाने से रहे, उन्हें प्रेरणा के साथ-साथ समाज में मान्यता भी चाहिए। बच्चों को पुस्तकीय ज्ञान के साथ-साथ गतिविधियाँ भी चाहिए।

वास्तव में जो संस्थाएँ पूर्व में इस दिशा में कार्य करती थीं, वे धीरे-धीरे आर्थिक कठिनाइयों के कारण अपने हाथ पीछे हटा रही हैं। ऐसे में हिंदी भाषा के बुझते प्राणों को फिर से जीवित करने के लिए विश्व हिंदी सचिवालय को स्वयं एक श्रेष्ठ विकल्प का रूप धारण करके आधुनिक मॉरीशस के सामने आना पड़ेगा, तभी हिंदी की रेलगाड़ी से कटते हुए डिब्बे फिर से जुड़ने लगेंगे।

जानकारियों के स्रोत

मॉरीशसीय हिंदी साहित्य
डॉ. मुनीश्वरलाल चिंतामणि
संशोधित संस्करण, 2001
हिंदी बुक सेंटर
4/5-बी, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-110002
Hindi Literature of Mauritius and other Writings
http://pages.intnet.mu/hindiliterature/
available online
accessed on 28/11/2015
http://vishwahindi.com/en/background.html
available online
accessed on 28/11/2015
http://indiahighcom-mauritius.org/pages.php?id=68
available online
accessed on 28/11/2015
http://dict.hinkhoj.com/hindi-dictionary.php?scode=dict home&word
available online
accessed on 28/11/2015

मॉरीशस

35

मेरे देश की हिंदी प्रचारक–डॉ. सुधा ओम ढींगरा

—श्री दीपक कुमार चौरसिया

''भारत को समझना तो जानिए इसको।
दुनिया भर में पा रही विस्तार है हिंदी॥
सब दिलों को जोड़ने का काम कर रही।
देश का स्वाभिमान है, आधार है हिंदी॥''

रामेश्वर दयाल काम्बोज 'हिमांशु' जी द्वारा रचित ये पंक्तियाँ हिंदी के बारे में बहुत कुछ कह जाती हैं। भाषा सामाजिक होने की ज़रूरी शर्तों में से एक है और संपर्क की बुनियादी आवश्यकता भी। मानव के सभ्य होने की दिशा में भाषा का जो योगदान है वह किसी से छुपा नहीं है। दुनिया के अलग-अलग हिस्सों में जन्मीं और पलीं-बढ़ीं मानव जातियों ने अपनी अलग-अलग भाषाएँ विकसित कीं और विश्व के उत्थान के साथ जैसे-जैसे उस समूह के सदस्यों की संख्या बढ़ती गई वैसे-वैसे उनके बोलनेवालों की संख्या भी। व्यक्ति के माध्यम से जब एक भाषा का बीज अपने मूल उद्‌गम स्थान से निकलकर किसी अन्य भाषा के गढ़ में प्रवेश करता है या एक पराई ज़मीन में पहुँचता है तो नवीन वातावरण में अंकुरित, पल्लवित, पोषित और फलित होना उसके लिए चुनौतीपूर्ण होता है लेकिन यदि माली के मन में चाह हो तो राह बनने में देर भले लगे पर अँधेर नहीं होता।

अपनी हिंदी भाषा के लिए समर्पित एक ऐसी ही हिंदी सेवी डॉ. सुधा ओम ढींगरा ने बिल्कुल यही स्वप्न और लक्ष्य लेकर भारत वर्ष से हज़ारों मील दूर, सात समंदर पार, संभावनाओं के देश संयुक्त राज्य अमेरिका की धरती पर जब 1983 में पहला कदम रखा था तब वह सिर्फ़ एक व्यक्ति का कदम नहीं बल्कि विदेशी भूमि पर देशी भाषा को अंगद के पैर सी मज़बूती देने को तत्पर कदम भी था। डॉ. सुधा ओम ढींगरा संयुक्त राज्य अमेरिका के उत्तरी केरोलिना राज्य में स्थित मोरिसविल स्थान से अपने प्रयासों को परिणाम देने में लगीं। वे न सिर्फ़ भारत और अमेरिका बल्कि संपूर्ण विश्व में फैले हिंदी-भाषियों और हिंदी प्रेमियों के लिए एक सम्मानित नाम हैं।

7 सितंबर, 1959 को पंजाब के जालंधर शहर में जन्मीं सुधा जी ने हिंदी में बी.ए., एम.ए.,पीएचडी एवं पत्रकारिता में डिप्लोमा करने के बाद हिंदी सेवा का आरंभ देश के एक शीर्ष हिंदी समाचार पत्र के लिए काम करते हुए किया। उन्होंने न सिर्फ़ कविता, कहानी, उपन्यास, साक्षात्कार, लेख एवं रिपोर्ताज जैसी विधाओं में खुद की लेखनी चलाई बल्कि कई विधाओं में संभावनाशील लेखकों की खोज की और उन्हें वह मंच दिया जहाँ से वे भी हिंदी की सेवा में शामिल हो सकें। इस प्रकार अकेले राही से शुरू हुआ यह कारवाँ हर गुज़रते दिन के साथ बढ़ता गया और आज के स्वरूप में पहुँचा। उनके प्रयासों के चलते ही आज भारत से कई हिंदी सेवी कुछ इस तरह अमेरिका से जुड़े हुए हैं कि हिंदी के प्रचार-प्रसार के लिए हर परिस्थिति में और हर समय उपलब्ध रहते हैं।

विगत कुछ सालों से संयुक्त राज्य अमेरिका के उत्तरी केरोलिना के हिंदी विकास मंडल एवं हिंदू सोसाइटी द्वारा मोरिसविल (उत्तरी केरोलिना) के हिंदू भवन के खुले मैदान में भी दशहरा उत्सव धूमधाम से मनाया जा रहा है। यहाँ भी दशहरा मेले से पहले स्थानीय मंच पर हिंदी में रामलीला का मंचन किया जाता है। मेले में 38-40 फ़ीट के रावण का पुतला आकर्षण का केंद्र होता है जो आकार की दृष्टि से अमेरिका में सबसे बड़ा होता है। भारत से अलहदा रामलीला और दशहरे के पात्रों से लेकर रावण का पुतला तैयार करनेवाले सभी सहयोगी या तो इंजीनियर होते हैं या डॉक्टर, वैज्ञानिक या फिर चार्टर्ड अकाउंटेंट इत्यादि। इसका डिज़ाइन और ढाँचा इन्हीं स्वयं-सेवकों की टीम थोड़ा-थोड़ा समय निकालकर 3-4 महीनों की मेहनत और लगन से तैयार करती है। स्थानीय और भारतीय लोगों के सहयोग से हिंदी में बातचीत करते हुए जब ये सारी तैयारियाँ हो रही होती हैं तब नहीं लगता कि हम अपने देश से कहीं दूर बैठे हुए हैं। इन सब के पीछे प्रमुख प्रेरणास्रोत सुधा जी हैं। रावण दहन से पहले मंच पर राम और रावण के द्वंद्वयुद्ध का मंचन किया जाता है। ध्वनि और प्रकाश की तकनीकों का प्रयोग कर इसे बहुत प्रभावशाली बनाया जाता है। उत्तरी केरोलिना में मेले एवं रामलीला की इस परंपरा की स्थापना, पटकथा, संवाद लेखन, प्रस्तुतीकरण और संरक्षण में डॉ. सुधा ओम ढींगरा का सराहनीय योगदान है।

अमेरिका में हिंदी से जुड़ीं गतिविधियों में सुधा जी का सक्रिय योगदान हिंदी प्रेमियों से छुपा नहीं है। वे विभौम एंटर्प्राइज़र्ज़ की अध्यक्षा तथा हिंदी विकास मंडल (नॉर्थ केरोलिना) की ट्रस्टी हैं। एक तरफ़ जहाँ वे अंतरराष्ट्रीय हिंदी समिति (अमेरिका) के कवि सम्मेलनों की राष्ट्रीय संयोजिका और 'प्रथम' शिक्षण संस्थान की कार्यकारिणी सदस्या हैं तो वहीं दूसरी ओर उत्पीड़ित नारियों की सहायक संस्था 'विभूति' की सलाहकार भी। वे अमेरिका से भारत के बहुत से पत्र-पत्रिकाओं एवं वेब पत्रिकाओं के लिए लिखती हैं। हिंदी पाठशालाएँ खोलने से लेकर यूनिवर्सिटी में हिंदी पढाने तक वे हमेशा अग्रसर रहीं। इंडिया आर्ट्स ग्रूप की स्थापना कर तथा हिंदी के बहुत से नाटकों का मंचन कर एवं लोगों को हिंदी भाषा के प्रति प्रोत्साहित करके अमेरिका में हिंदी भाषा की गरिमा को बढ़ाया है। सुधा जी ने न सिर्फ़ अमेरिका भर में होनेवाले अनगिनत कवि सम्मेलनों का सफल संयोजन एवं संचालन किया है बल्कि वे डेनमार्क से प्रसारित 'रेडियो सबरंग' की संयोजिका भी हैं। चाहे टी.वी. या रेडियो हो या फिर चाहे रंगमंच और लेखन, उनका माध्यम हिंदी ही रहा। कभी प्रस्तोता, अभिनेता के रूप में तो कभी कवयित्री या लेखिका के रूप में। उन्होंने किसी न किसी तरह हिंदी का ही रूप सँवारा है।

भारत में ही एक हिंदी पत्रिका को चलाने के लिए क्या-क्या प्रयास करने पड़ते हैं और किन-किन चुनौतियों का सामना करना पड़ता है यह लगभग हर हिंदी लेखक को पता है। इसके आधार पर यह कल्पना करना मुश्किल नहीं कि भारत से बाहर एक अर्थवादी मानसिकता के सिरमौर देश में एक ऐसी भाषा के साहित्य की पत्रिका निकालना जहाँ वह अल्पसंख्यकों की भाषा जो कितना दुष्कर कार्य है परंतु 'हिंदी चेतना' के संपादक के रूप में सुधा जी ने यह भूमिका भी बखूबी निभाई और न सिर्फ़ पत्रिका को औपचारिकता के रूप में चलाया बल्कि इसे हिंदी साहित्य की प्रमुख पत्रिकाओं में भी स्थान दिलाया।

कुछ समय पहले ही 'हिंदी चेतना' और सुधा जी के 'ढींगरा फैमिली फाउंडेशन' ने मिलकर हिंदी साहित्य को अंतरराष्ट्रीय पटल पर अधिक दैदीप्यमान करने के उद्देश्य से साहित्यकारों को विश्वमंच पर सम्मानित करने का फ़ैसला किया है जिसके अंतर्गत अब तक महेश कटोर, चित्रा मुद्गल, ज्ञान चतुर्वेदी और उषा प्रियंवदा को उनकी साहित्यिक उपलब्धियों के लिए सम्मानित किया जा चुका है।

रचनाकर्म के द्वारा हिंदी साहित्य संवर्द्धन करना भी हिंदी की सेवा का एक रूप है और सुधा जी न सिर्फ़ हिंदी साहित्य के अंतरराष्ट्रीय स्तर की पत्रिका 'हिंदी चेतना' के संपादन से जुड़ी रहीं बल्कि अमेरिका के कवियों की कविताओं का संग्रह 'मेरा दावा है' का संपादन भी किया। 'तलाश पहचान की' (काव्य-संग्रह), 'परिक्रमा' (पंजाबी से अनूदित हिंदी उपन्यास), 'वसूली' (कथा- संग्रह हिंदी एवं पंजाबी), 'सफ़र यादों का' (काव्य-संग्रह हिंदी एवं पंजाबी), 'माँ ने कहा था' (काव्य सी.डी.), 'सरकती परछाइयाँ' (कविता-संग्रह), 'कमरा नं. 103' (कहानी-संग्रह), 'कौन सी ज़मीन अपनी' (कहानी-संग्रह) 'दस प्रतिनिधि कहानियाँ' (कहानी-संग्रह) आदि रचनाओं से उन्होंने हिंदी साहित्य को समृद्ध किया। शीघ्र ही उनका उपन्यास भी इस कड़ी को आगे बढ़ाएगा।

समय-समय पर उनको हिंदी सेवा के लिए जो पुरस्कार और सम्मान मिले हैं, उन्होंने हिंदी की इस चितेरी के लिए हिंदी को विश्व भाषा बनाने की दिशा और राह में आनेवाली बाधाओं से जूझने हेतु च्यावनप्राश का कार्य ही किया है। दूसरा यह कार्य किया कि सुधा जी को और अधिक सरल, विनम्र एवं ज़िम्मेदार बनाया। हर नए सम्मान और पुरस्कार को एक नई चुनौती की तरह स्वीकार कर वे पहले से भी अधिक तत्परता से हिंदी सेवा के ध्येय को पूरा करने में जुट जाती हैं और निश्चित रूप से यह युवा लेखकों के लिए प्रेरणा स्रोत है। जिन पुरस्कारों और सम्मानों ने उनका उत्साहवर्द्धन किया उनमें से अमेरिका में हिंदी के प्रचार-प्रसार एवं सामाजिक कार्यों के लिए वाशिंगटन डी.सी. में तत्कालीन राजदूत

भारत में ही एक हिंदी पत्रिका को चलाने के लिए क्या-क्या प्रयास करने पड़ते हैं और किन-किन चुनौतियों का सामना करना पड़ता है यह लगभग हर हिंदी लेखक को पता है। इसके आधार पर यह कल्पना करना मुश्किल नहीं कि भारत से बाहर एक अर्थवादी मानसिकता के सिरमौर देश में एक ऐसी भाषा के साहित्य की पत्रिका निकालना जहाँ वह अल्पसंख्यकों की भाषा जो कितना दुष्कर कार्य है परंतु 'हिंदी चेतना' के संपादक के रूप में सुधा जी ने यह भूमिका भी बखूबी निभाई और न सिर्फ़ पत्रिका को औपचारिकता के रूप में चलाया बल्कि इसे हिंदी साहित्य की प्रमुख पत्रिकाओं में भी स्थान दिलाया।

श्री नरेश चंदर द्वारा सम्मान, चतुर्थ प्रवासी हिंदी उत्सव 2006 में 'अक्षरम प्रवासी मीडिया सम्मान', हैरिटेज सोसाइटी नॉर्थ केरोलिना (अमेरिका) द्वारा 'सर्वोत्तम कवयित्रि 2006' का सम्मान, ट्रीएंगल इंडियन कम्युनिटी, नॉर्थ केरोलिना (अमेरिका) द्वारा '2003 नागरिक अभिनंदन', हिंदी विकास मंडल, नॉर्थ केरोलिना (अमेरिका), हिंदू-सोसाइटी, नॉर्थ केरोलिना (अमेरिका), अंतरराष्ट्रीय हिंदी समिति (अमेरिका) द्वारा हिंदी के प्रचार-प्रसार एवं सामाजिक कार्यों के लिए सम्मान आदि प्रमुख हैं। हाल ही में भारत के उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान द्वारा उनका सम्मान एवं भारत से बाहर अपनी मातृ भाषा हिंदी के प्रचार-प्रसार के लिए भारत के राष्ट्रपति द्वारा प्रदत्त पद्मभूषण 'डॉ. मोटूरि सत्यानारायण सम्मान' उनके उल्लेखनीय योगदान को रेखांकित करता है और उनके हिंदी की बेटी होने की कहानी आप ही कहता है।

उनके द्वारा अमेरिका में रहकर हिंदी के प्रचार-प्रसार और हिंदुस्तान की सेवा में किए गए कार्यों की सूची इतनी लंबी है कि चंद शब्दों में उनका विस्तृत उल्लेख करना आसान कार्य नहीं। बातों ही बातों में एक बार उन्होंने कविवर रामावतार त्यागी की प्रसिद्ध पंक्तियों—

''तन समर्पित मन समर्पित
और यह जीवन समर्पित
चाहता हूँ मातृ-भू, तुझे कुछ और भी दूँ
माँ तुम्हारा ऋण बहुत है, मैं अकिंचन...''

का उल्लेख करते हुए कहा भी था कि, ''मेरा जीवन मातृभूमि और मातृ भाषा को ही समर्पित है और काश मैं कुछ ऐसा कर पाती कि इस ऋण को कुछ तो उतार सकती।''

उनके लेखकीय अवदानों को चौधरी चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ और दयाल बाग एजुकेशनल इंस्टीट्यूट, आगरा आदि के विद्यार्थियों द्वारा एमफ़िल और पीएचडी के योग्य समझा गया तो शायद इसीलिए कि ये अमेरिका को हिंदी-हिंदुस्तान और हिंदुस्तान को अमेरिकी रहन-सहन, आचार-विचार को समझने के लिए एक सेतु का कार्य भी करता है।

जीवन में कठिनाइयाँ आना आम बात है, मूलतः दुख को सघनता और संपूर्णता में समेटे रखना जीवन का चरित्र है किंतु यह सत्य जानकर भी अधिकांश मनुष्य कभी ईश्वर, कभी किसी व्यक्ति तो कभी परिस्थितियों को खलनायकी जामा पहनाते रहते हैं लेकिन प्रेम, प्रार्थना और धैर्य, 3 शब्दों से प्रेरणा लेनेवाली सुधा जी ने शायद ही कभी इन शब्दों रूपी मूल मंत्रों से मुँह फेरा हो। राष्ट्र कवि मैथिलीशरण गुप्त द्वारा लिखी कविता की पंक्तियाँ इन हिंदी सेवियों पर बिल्कुल सटीक बैठती हैं—

''नर हो न निराश करो मन को
कुछ काम करो, कुछ काम करो...''

सुधा जी से यही उम्मीद है कि आनेवाले समय में वे न सिर्फ़ हिंदी साहित्य और कला को बल्कि विज्ञान में भी हिंदी के दखल को महत्व देंगी और बाल साहित्य को भी अपने कार्यक्षेत्र के दायरे में लाते हुए इसके लेखकों-प्रकाशकों को प्रोत्साहित और अन्य हिंदी सेवियों के साथ हिंदी के प्रचार-प्रसार में इसी तरह प्रयासरत रहेंगी जिससे कि नज़दीकी समय में संयुक्त राष्ट्र संघ को हिंदी को 7वीं विश्व भाषा स्वीकार करने में कोई हिचकिचाहट न हो। प्रोफ़ेसर हरिशंकर आदेश द्वारा हिंदी के प्रसार का यह आह्वान हमारा भी उद्देश्य हो कि—

''तम-जाला हर लेगी हिंदी, नया उजाला देगी हिंदी।
विश्व-ग्राम में सबल सूत्र बन, सौख्य निराला देगी हिंदी।
द्वीप-द्वीप हर महाद्वीप में, हम हिंदी के दीप जलाएँ।
जीवन को सक्षम कर देगी, वर्तमान को मधुरिम कर देगी।
एक सुखद अतीत दे हमको, भविष्य भी स्वर्णिम कर देगी।
नगर-नगर घर ग्राम-ग्राम में, हम हिंदी का अलख जगाएँ॥''

संदर्भ–

1. http://hindi.webdunia.com/media-khabar/sudha-dheengra-115042800068_1.html
2. http://hindi-chetna.blogspot.com/2013/06/blog-post_10.html
3. https://plus.google.com/114723285383618177103/ posts/9oNd5uUWE3e
4. http://www.shabdsudha.blogspot.in/
5. http://subeerindia.blogspot.com/2014/08/blog-post.html
6. http://hindi-chetna.blogspot.com/

यू.एस.ए.
mashal.com@gmail.com

36

मेरे देश की हिंदी संस्था–हिंदी संस्थान, श्रीलंका

—सुश्री रिद्मा निशादिनी लंसकार

भाषा हर किसी प्राणी को एक सूत्र में पिरो देनेवाले धागे जैसी है, साथ ही साथ भाषा किसी भी समाज में विभिन्न जीवन शैलियों की जननी भी होती है। बोलनेवाले समुदाय की सतत निर्झरिणी भी भाषा ही है। पूरे संसार में लगभग लाखों भाषाएँ बोली जाती हैं परंतु उन भाषाओं में से कुछ समृद्ध तथा प्रभावशाली भाषाएँ भी हैं जो मातृ भाषा न होते हुए भी विदेशियों को अपनी ओर आकृष्ट कर लेती हैं। हिंदी संसार की उन समृद्ध व प्रभावशाली भाषाओं में से एक है जो विश्व भर के अधिकतर व्यक्तियों को अपनी ओर रिझा ले गई है।

यह तथ्य सर्वविदित है कि हिंदी भारत की राजभाषा है परंतु हिंदी अब केवल भारत की ही नहीं रही है, वह अंतरराष्ट्रीय स्वरूप ग्रहण करते हुए इस भूमंडल की एक महत्वपूर्ण संपर्क भाषा बन रही है। दिल्ली से लेकर दुबई तक तथा सूरत से लेकर सूरीनाम तक हिंदी का चलन है। वर्तमान में हिंदी संसार में व्यापकतम स्तर पर बोली जानेवाली भाषाओं में तीसरे स्तर पर है। वह आधुनिक ज्ञान की एक ऐसी भाषा के रूप में तेज़ी से उभर रही है जो अपने अंदर विज्ञान, प्रौद्योगिकी और अर्थव्यवस्था सहित विभिन्न क्षेत्रों को समेटे हुए है। संख्याबल और भू-विस्तार की दृष्टि से भी हिंदी संसार की मुख्य भाषाओं में से एक बन गई है। इसलिए इसमें कोई संदेह नहीं है कि हिंदी का विस्तार हुआ है।

वास्तव में हिंदी ने किस प्रकार सदियों के अंतराल में विश्व में कोने-कोने तक की यात्रा की, यह विचारणीय है। आज संसार 'विश्व गाँव' (ग्लोबल विलेज) के रूप में चर्चित हो रहा है पर सैकड़ों वर्ष पहले जब न संचार क्रांति हुई थी, न यातायात की सुविधाएँ उपलब्ध थीं तब भारत के पुरखों ने हिंदी को संसार के कोने-कोने में फैलाया। मूलत: 150 वर्ष पहले ब्रिटिश उपनिवेश के शासन के कारण भारत से अनेक श्रमिक फ़िजी, त्रिनिदाद, मॉरीशस और सूरीनाम आदि देशों में ले जाए गए थे। वे भारतवंशी यों ही खाली हाथ उन देशों में नहीं गए, वे अपने साथ हिंदी एवं अपने धर्म ग्रंथ भी ले गए तथा पीढ़ी-दर-पीढ़ी अपने भारतीय मूल के होने का अभिमान अन्यों को दिखाते-सुनाते रहे जिससे हिंदी व भारतीय संस्कृति को विश्वव्यापी पहचान मिली। समय के साथ-साथ भारतीय मूल के लोग व्यवसाय, शिक्षा एवं अन्य कारणवश पूरे विश्व में फैलने लगे तथा इस भाँति आज भी भारत के प्रवासी-जन हिंदी के चलन को विश्वव्यापी बना रहे हैं। 7वें विश्व हिंदी सम्मेलन, 2003 के उपलक्ष्य में भारत के तत्कालीन प्रधान मंत्री माननीय श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने संसार में हिंदी की व्याप्ति के संबंध में ऐसा उल्लेख किया था, ''यह बड़े गर्व की बात है कि आज हिंदी विश्व के कोने-कोने तक पहुँच गई है। विदेशों में रह रहे हमारे भारतीय भाई-बहनों, हिंदी विद्वानों एवं मनीषियों ने हिंदी भाषा का प्रचार-प्रसार करने में उल्लेखनीय योगदान दिया है।'' अत: अब यह तथ्य सुस्पष्ट है कि विश्व में हिंदी के प्रचलन के कार्य में भारत के प्रवासी-जन का बहुत बड़ा हाथ है। वर्तमान में भी वे लोग अपनी भाषाई व सांस्कृतिक विरासत को सुरक्षित रखते हुए आ रहे हैं।

वैश्वीकरण की वर्तमान स्थिति में हिंदी के प्रचार-प्रसार के लिए और भी प्रयत्न करने की आवश्यकता है। वह इसलिए है क्योंकि हिंदी एक ऐसी समृद्ध भाषिक, साहित्यिक और सांस्कृतिक परंपरा की वाहिनी है जो हर पहलू से भारत की एकता और अखंडता की पृष्ठभूमि को पुख़्ता करने के साथ-साथ 'वसुधैव कुटुंबकम्' की भावना को प्रेरित कर रही है। विद्वान गणेश शंकर विद्यार्थी ने एक बार ऐसा कहा, ''एक दिन हिंदी एशिया ही नहीं, विश्व में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करेगी। संसार की कोई भी भाषा मनुष्य जाति को उतना ऊँचा उठाने, मनुष्य को यथार्थ में मनुष्य बनाने तथा संसार को सभ्य बनाने में उतनी सफल नहीं हुई जितनी आगे चलकर हिंदी होगी।'' अत: हिंदी भाषा से प्रभावित अन्य देशों के व्यक्तियों व संस्थाओं द्वारा विश्व भर के विभिन्न देशों में हिंदी भाषा और साहित्य के प्रचार-प्रसार, प्रोत्साहन, संवर्धन एवं संरक्षण हेतु शिक्षण पद्धतियों को विकसित करने का प्रयास किया जा रहा है। आज संसार के अनेक विश्वविद्यालयों में हिंदी की पढ़ाई हो रही है। संस्थानगत और निजी प्रयासों से हिंदी के प्रचार-प्रसार और प्रशिक्षण के क्षेत्र में बड़ी तादाद

में लोग लगे हुए हैं। इस प्रकार पाकिस्तान, बांग्लादेश, श्रीलंका, नेपाल, भूटान, म्यान्मा, चीन, जापान, दक्षिण कोरिया, मंगोलिया, थाईलैंड आदि एशियाई देशों में ही नहीं बल्कि अमेरिका, कनाडा, रूस, इंग्लैंड, जर्मनी, फ्रांस, इटली आदि पश्चिमी देशों में भी हिंदी की व्याप्ति की ओर अनेक प्रयास हो रहे हैं। अत: हिंदी को भारतीय उपमहाद्वीप की हिंदी-भाषी आबादी की सीमा को लाँघकर विश्व भर में फैलाने में अन्य देशों का भी पर्याप्त योगदान है।

भारत के पड़ोसी देशों में से श्रीलंका भी एक ऐसा देश है जहाँ सामाजिक, सांस्कृतिक और साहित्यिक स्तर पर हिंदी एक जीवंत भाषा के रूप में अपना अस्तित्व बनाए हुए है। संसार में भारत से इतर हिंदी बोले जानेवाले तथा हिंदी का अध्ययन-अध्यापन करनेवाले देशों में श्रीलंका का एक प्रमुख स्थान है। श्रीलंका में हिंदी भाषा तथा भारतीय संस्कृति को एक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। पुराने ज़माने से ही भारत व श्रीलंका का साथ चला आ रहा है। श्रीलंका के इतिहास के संदर्भ में इस बात का उल्लेख मिलता है कि ईसा पू. छठी शताब्दी भारत से आए 'विजय' नामक राजा तथा उनके साथ 100 साथियों से ही प्राचीन श्रीलंका का व्यवहार व जीवन शैली सुसंस्कृत बनी है। इस तरह भारत तथा श्रीलंका के संबंध का एक सुंदर अतीत है। अगर यहाँ के निवासियों में हिंदी के प्रति कोई विशेष रुचि जागृत न हुई तो यही आश्चर्य की बात हो सकती है।

भारत के पड़ोसी देशों में से श्रीलंका भी एक ऐसा देश है जहाँ सामाजिक, सांस्कृतिक और साहित्यिक स्तर पर हिंदी एक जीवंत भाषा के रूप में अपना अस्तित्व बनाए हुए है। संसार में भारत से इतर हिंदी बोले जानेवाले तथा हिंदी का अध्ययन-अध्यापन होनेवाले देश में श्रीलंका का एक प्रमुख स्थान है।

श्रीलंका में लगभग 25 सालों से हिंदी का अध्ययन तथा अध्यापन-कार्य हो रहा है। बॉलीवुड फ़िल्मों तथा गीतों के कारण एक भाषा के रूप में जनता में हिंदी के प्रचलित होने का इतिहास इससे भी पुराना है। सरकारी संस्थाओं के रूप में यहाँ 3 प्रमुख विश्वविद्यालयों में हिंदी पढ़ाई जाती है तथा उनके अतिरिक्त कई स्वैच्छिक संस्थाओं में भी हिंदी से संबंधित अध्ययन व अध्यापन कार्य हो रहा है। हिंदी संस्थान, श्रीलंका उन स्वैच्छिक संस्थाओं में से एक है जो आज से 15 वर्ष पूर्व हिंदी को विश्वव्यापी बनाने की यात्रा में शामिल हो गई थीं। हिंदी द्वारा संसार को एकबद्ध करने की ओर किए गए और एक सफल प्रयास के रूप में भी हिंदी संस्थान, श्रीलंका की पहचान है। इस संस्था के साथ हिंदी संसार और श्रीलंका का ऐतिहासिक, सांस्कृतिक तथा सामाजिक संदर्भ जुड़ा है। इसे श्रीलंका के थके-माँदे पथिकरूपी हिंदी प्रेमियों को आरामदायक छायारूपी हिंदी ज्ञान को प्रदान करनेवाला एक विशाल वट वृक्ष कहा जाए तो यह अतिशयोक्ति न होगी।

हिंदी संस्थान, श्रीलंका की संस्थापना से उसकी वर्षों पुरानी पद यात्रा की गाथा का आरंभ करना समुचित होगा। यथार्थ तो यह है कि हिंदी संस्थान, श्रीलंका की शुरूआत सुगम नहीं थी। श्रीमती अतिला कॉतलावल जी इस संस्थान की वे महान संस्थापक हैं जिन्होंने आज से 15 वर्ष पहले अल्प सुविधाओं व असंख्य बाधाओं का सामना करते हुए श्रीलंका में कोलंबो (राजधानी) से भी सुदूर स्थित कुरुनैगल नामक छोटे से कस्बे में हिंदी का प्रचार-प्रसार करने का बीड़ा उठाया। श्रीमती अतिला कॉतलावल जी को भी हिंदी पढ़ने के लिए अपने बचपन से ही कई बाधाओं का सामना करना पड़ा। कहा जाता है कि 'जहाँ चाह, वहाँ राह'। उसी के अनुसार उनको अपने मन की इच्छा पूरी करने अथवा हिंदी की शिक्षा प्राप्त करने के लिए अपनी उम्र के 17वें वर्ष में घर को छोड़कर, सैकड़ों मील दूर देश की राजधानी, कोलंबो के लिए रवाना होना पड़ा। हिंदी के प्रति उनकी यह असीम लगन अंत में उनको भारत तक ले गई। केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा से उन्होंने हिंदी की उच्च शिक्षा प्राप्त की तथा केलनिया विश्वविद्यालय से बी.ए. हिंदी उपाधि एवं दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा द्वारा आयोजित प्रवीण पाठ्यक्रम भी पूरा करने के उपरांत सन् 2000 में हिंदी शिक्षण का दान करते हुए उसे विश्वव्यापी बनाने का अनल किरीट पहन लिया। यही हिंदी संस्थान, श्रीलंका, की शुरूआत थी। श्रीमती अतिला के शब्दों में, ''असलियत तो यह है कि हिंदी संस्थान, श्रीलंका की शुरूआत सुगम नहीं थी। अनेक बाधाओं का सामना करते हुए, अनेक कष्टों से जूझते हुए, यहाँ तक का सफ़र पूरा हुआ। पहले विद्यार्थियों को एक जगह से दूसरी जगह पर, फिर दूसरी से तीसरी जगह पर बार-बार स्थान को बदलना पड़ा। दूसरे की जगह पर भाड़ा देकर कब तक हिंदी का वातावरण बनाए रखूँ...यह समस्या बार-बार मेरे समक्ष खड़ी होती रही। बहुत प्रयत्नों के बाद हिंदी संस्थान के लिए अलग-से एक

स्थान किराये पर मिल गया लेकिन केवल खाली जगह मिली। न कोई कुरसी, न कोई मेज़...पहले विद्यार्थियों को हिंदी चटाइयों पर बैठकर सीखनी पड़ी।''

'चिराग तले अँधेरा है', उक्त विवरण से यह कहावत सच निकलती है। श्रीमती अतिला जी के विवरणानुसार 12 वर्षों के अनवरत प्रयत्नों के बाद भारत-श्रीलंका प्रतिष्ठान द्वारा इस संस्थान को बुनियादी सुविधाओं के लिए आवश्यक अनुदान दिया गया है जो अल्प सुविधाओं में संचालित हिंदी संस्थान, श्रीलंका के लिए अमूल्य निधि बना। वर्तमान में यह संस्था कुरुनैगल शहर की टाउन सेंटर बिल्डिंग में किराए पर लिए गए एक कमरे में स्थापित है। सर्वप्रथम A/L परीक्षा 2-4 बच्चियों से ही प्रारंभ हुई। हिंदी संस्थान, श्रीलंका में संप्रति लगभग 200 छात्र-छात्राएँ हिंदी सीख रहे हैं जो केंद्रीय हिंदी संस्थान आगरा, दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, मद्रास आदि भारत की संस्थाओं द्वारा आयोजित परीक्षाओं के लिए तथा श्रीलंका के शिक्षा मंत्रालय द्वारा आयोजित हिंदी परीक्षाओं से उत्तीर्ण होने के लिए आवश्यक हिंदी ज्ञान प्राप्त कर रहे हैं। इस संस्थान से दी जानेवाली शिक्षा से संबंधित उल्लेखनीय बात यह है कि यहाँ से शिक्षित विद्यार्थी प्रतिवर्ष उक्त परीक्षाओं से अव्वल श्रेणी में उत्तीर्ण होते आ रहे हैं। हिंदी संस्थान, श्रीलंका द्वारा प्रशिक्षित विद्यार्थी, श्रीलंका के अनेक विश्वविद्यालयों में प्रवेश लेने तथा वहाँ से हिंदी भाषा की उच्च शिक्षा प्राप्त करके अपने को योग्य साबित करने में भी सफल हुए हैं। साथ ही साथ पूर्ण स्नातक-स्नातिकाएँ बने उनमें से बहुतों को हिंदी के स्नातकोत्तर पाठ्यक्रमों का अध्ययन करने का भी सुअवसर प्राप्त हुआ। इस प्रकार विगत 15 वर्षों में हिंदी संस्थान, श्रीलंका ने लगभग 1000 विद्यार्थियों को हिंदी की शिक्षा से लाभान्वित किया है। उनमें से कतिपय लोग श्रीलंका के प्रमुख विश्वविद्यालयों में प्राध्यापकों के रूप में तथा सरकारी पाठशालाओं में शिक्षकों के पद पर विराजमान हैं जो हिंदी का प्रचार-प्रसार करते हुए इस संस्थान को यशस्वी बना रहे हैं। हिंदी संस्थान, श्रीलंका अपने विद्यार्थियों को केवल श्रीलंका में ही नहीं बल्कि भारत में भी हिंदी की शिक्षा प्राप्त कर लेने का अमूल्य अवसर प्राप्त करा देता है। वर्तमान तक 50 से अधिक विद्यार्थी श्रीमती अतिला कॉतलावल जी की सिफ़ारिश से भारत में शिक्षा प्राप्त करके श्रीलंका लौटे हैं तथा वे हिंदी परिवार के सदस्य बनकर उसे विस्तृत करने की प्रक्रिया में लगे हुए हैं।

विदेशों में हिंदी की स्थिति को बेहतर बनाने के लिए परस्पर आदान-प्रदान के माध्यमों के रूप में भाषिक, साहित्यिक एवं भावनात्मक, तीनों स्तरों पर काम करना आवश्यक है जिन पर हिंदी संस्थान, श्रीलंका की अध्यापन-प्रक्रिया में नित ध्यान दिया जाता है। वास्तव में किसी भी व्यक्ति को किसी भी भाषा के ज्ञान से परिपूर्ण बनना हो तो उसे उस भाषा में लिखित साहित्य का पाठ करना चाहिए। अत: हिंदी संस्थान श्रीलंका, में भी अपने विद्यार्थियों को हिंदी साहित्य से विमुख न होने देने के लिए एक व्यवस्थित कार्य प्रणाली का आयोजन किया गया है जिसके पीछे इसकी संस्थापक श्रीमती अतिला कॉतलावल जी की समर्पण, त्याग व प्रतिबद्धता छिपी हुई है। हिंदी संस्थान, श्रीलंका का सर्वप्रथम सार्वजनिक हिंदी पुस्तकालय है जिसमें हिंदी की सेवा में समर्पित व्यक्तियों एवं संस्थाओं द्वारा हिंदी भाषा तथा साहित्य के उन्नयन, संवर्धन व संरक्षण हेतु किए गए कार्यों का अच्छा-खासा संग्रह है। इस पुस्तकालय की स्थापना 2 जुलाई, 2014 को श्रीलंका के तत्कालीन उत्तर-पश्चिम प्रदेश के मुख्य मंत्री, श्री दयासिरि जयसेकर महोदय की प्रधानता में हुई थी। तुलसीदास, कबीरदास, मीराबाई तथा आधुनिक युग के रचनाकारों में भारतेंदु हरिश्चंद्र, अज्ञेय, निराला, महादेवी वर्मा से लेकर आज के रचनाकार, असगर वजाहत तक हिंदी के महान साहित्य सेवियों की रचनाओं की संगति में रहने का अवसर यहाँ के विद्यार्थियों को प्राप्त है। केवल इतना ही नहीं श्रीलंका के किसी भी कोने से आनेवाले हिंदी प्रेमी पर इस पुस्तकालय में कोई पाबंदी नहीं है तथा यहाँ के अनेक विश्वविद्यालयों में पढ़नेवाले विद्यार्थी अपने अनुसंधान कार्य के लिए भी इस पुस्तकालय का लाभ उठा रहे हैं।

कोई भी भाषा उसकी संस्कृति की संवाहिका है न कि विध्वंसक। विदेशियों में भारतीय संस्कृति के प्रति अनुराग होना हिंदी सीखने का प्रमुख कारण बनता है। उसी प्रकार आज की श्रीलंका में हिंदी इसलिए ग्राह्य है क्योंकि वह भारतीय संस्कृति की पहचान बन गई है। अत: हिंदी संस्थान, श्रीलंका में पढ़नेवाले विद्यार्थियों को इस संस्थान से खाली हिंदी का ज्ञान ही नहीं मिलता बल्कि इस तथ्य का भी बोध कराने के लिए कई कार्यक्रमों का आयोजन प्रतिवर्ष हो रहा है कि विश्व के किसी भी व्यक्ति को हिंदी से संबंधित समग्र ज्ञान प्राप्त करना है तो उसे अपरिहार्य रूप से भारतीय संस्कृति के मूल में जाना होगा। इसलिए प्रतिवर्ष इस संस्था द्वारा मुख्यत: दीपावली, होली, गणतंत्र दिवस, स्वतंत्रता दिवस, विश्व हिंदी दिवस आदि

विशेष अवसरों पर भिन्न-भिन्न सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है, जिनके कारण विद्यार्थियों में हिंदी के प्रति सुरुचिपूर्ण उत्साह उत्पन्न होता है।

वास्तव में श्रीलंका में हिंदी का भविष्य उज्ज्वल है। हिंदी संस्थान, श्रीलंका जैसे संस्थानों के होते हुए श्रीलंका में हिंदी की स्थिति निराशाजनक होने की कोई संभावना नहीं रहेगी। आनेवाले समय में श्रीलंका में हिंदी और विस्तार पाएगी। उपरोक्त विवरण से यह विदित होता है कि यह संस्थान श्रीलंका में हिंदी के प्रचलन कार्य में अग्रगामी है। अनेक कठिनाइयों से जूझते हुए वह हिंदी प्रचार-प्रसार के कँटीले रास्ते पर आगे बढ़ता जा रहा है। हिंदी भाषा को अंतरराष्ट्रीय अभिव्यक्ति एवं संप्रेषण के माध्यम के रूप में पूरे विश्व समुदाय के बीच स्थापित करने की सामर्थ्य प्रदान करने के लिए भविष्य में भी हिंदी संस्थान, श्रीलंका बड़े उत्साह से अपना कर्तव्य निभाएगा। इस संस्था से होनेवाली सेवा द्वारा अंतरराष्ट्रीय भाषा के रूप में हिंदी की भूमिका को उजागर किया जाएगा तथा मेरा यह विश्वास है कि विश्व हिंदी के समक्ष उत्पन्न चुनौतियों के लिए उससे भावी कार्यक्रम भी प्रस्तुत किए जाएँगे। हिंदी संस्थान, श्रीलंका की एक मात्र अभिलाषा यह है कि वह श्रीलंका तथा भारत के 1000 वर्षों से चले आ रहे अटूट संबंध को सुदृढ़ बनाने की एक कड़ी हो। अपने लिए एक अलग भवन का निर्माण कर लेने के उपरांत वहाँ पर हिंदी के साथ-साथ भारतीय संस्कृति से जुड़ी शेष विद्याओं का भी ज्ञान लंकावासियों को देते हुए इस छोटे से संस्थान को एक वट वृक्ष की तरह और भी विकसित करना इसका भावी उद्देश्य है जिसे कार्य रूप मिलने से भारत में सुशिक्षित विद्यार्थियों को शिक्षकों के रूप में इसके साथ जुड़ने का अवसर मिलेगा। भारत से समय-समय पर हिंदी विद्वानों का आना-जाना बना रहेगा तथा श्रीलंका में हिंदी लघु भारत का वातावरण हिंदी संस्थान, श्रीलंका के परिसर में निर्मित होगा।

विश्व में हिंदी के प्रचार-प्रसार में स्वैच्छिक संस्थाओं का योगदान सर्वाधिक महत्वपूर्ण माना जाता है। इसलिए विश्व में हिंदी की व्याप्ति के लिए उत्तरदायी संस्थाओं से यह विनम्र अनुरोध है कि हिंदी के प्रचार-प्रसार कार्य के लिए समर्पित ऐसी स्वैच्छिक संस्थाओं से संपर्क स्थापित कर हिंदी के शिक्षण को व्यापक तथा उपयोगी बनाने हेतु आवश्यक कार्रवाई करें। ऐसी संस्थाओं के माध्यम से ही अंतरराष्ट्रीय स्तर पर हिंदी और भारतवर्ष की कीर्ति फैल जाती है तथा भारत के विश्व बंधुत्व की भावना संसार के कोने-कोने में पहुँचती है।

संदर्भ सूची :

ग्रंथ :

- कॉतलावल, अतिला (2010) अभिनंदन, अनुर प्रिंटर्स, कुरुनैगल।
- नादान, मुकेश (2007) सूक्ति सरोवर आकाशदीप पब्लिकेशंस, नई दिल्ली।
- शर्मा, वशिनी (1999) विश्व भाषा हिंदी, केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा।

पत्रिका :

- चक्रधर, अशोक (2003) 'भारतवंशीबहुल देशों में हिंदी की स्थिति', सम्मेलन समाचार समग्र, पृ.-07

कोश ग्रंथ :

- बाहरी, हरदेव (2005) राजपाल हिंदी शब्दकोश, राजपाल एंड संस, दिल्ली।
- McGregor, R.S. (1993) The Oxford Hindi-English Dictionary, Oxford University Press, Oxford.
- Sahai, R.N.: Verma, S.K. (2005) The Oxford English-Hindi Dictionary. Oxford University Press, Oxford.
- अंतर्जाल की सूचना के भंडार-स्थल
- 'British Colonialism in India'. Encyclopedia.com, COPYRIGHT 2004 The Gale Group Inc. viewed 10 December 2015, http://www.encyclopedia.com/doc/1G2-3402800075.html
- 'History of Sri Lanka', Wikipedia-the free encyclopedia, last edited 4 December, 2015, viewed 10 December, 2015, http://www.en.m.wikipedia.org/wiki/History_of_Sri_Lanka
- 'World Language', Wikipedia-the free encyclopedia, last edited 12 December, 2015, viewed 13 December, 2015 http://www.en.m.wikipedia.org/wiki/World_Language

साक्षात्कार :

- कॉतलावल, अतिला: संस्थापक- हिंदी संस्थान, श्रीलंका (2015) 'हिंदी संस्थान, श्रीलंका का हिंदी प्रचार-प्रसार कार्य', रिद्मा लंसकार द्वारा, दिनांक 25 नवंबर
- वेंकटरामन, राधा : सहायक उच्चायुक्त—भारत के सहायक उच्चायोग, श्रीलंका (2015), 'हिंदी संस्थान, श्रीलंका का हिंदी प्रचार-प्रसार कार्य', रिद्मा लंसकार द्वारा दिनांक 28 नवंबर।
- सिंह, प्रज्ञा : सचिव, भारत के सहायक उच्चायोग, श्रीलंका (2015) 'हिंदी संस्थान, श्रीलंका का हिंदी प्रचार-प्रसार कार्य', रिद्मा लंसकार द्वारा, दिनांक 28 नवंबर।

—श्रीलंका

37

मेरे देश का हिंदी प्रचारक - श्री तेजेंद्र शर्मा

श्रीमती नीना पॉल

अपना घर-बार छोड़कर विदेश में आकर बसने का दुख वही जानता है जिसने इसे भुगता हो। 60 का दशक ऐसा समय था जब बहुत से भारतीयों ने अपना बसेरा ब्रिटेन में बनाया। उनमें बहुत से शिक्षक थे जो कुछ कहानियाँ और कविताएँ भी लिखते थे। देश छूटने की कसक वे अपने लेखन द्वारा अभिव्यक्त करने लगे। कहानियाँ अधिकतर नॉस्टैल्जिया पर आधारित होतीं जो उन्हीं लेखकों तक ही सीमित रह जातीं। बरसों यहाँ रहते हुए और इतना सब लिखते हुए भी किसी का एक भी कहानी-संग्रह सामने नहीं आया था।

समय एक जैसा नहीं रहता। 90 के दशक में भारत के प्रसिद्ध कहानीकार, श्री तेजेंद्र शर्मा ब्रिटेन में आए। वे दूसरे लोगों के समान किसी मजबूरी में यहाँ नहीं आए थे। भारत में उन्होंने बहुत अच्छे दिन देखे थे। किन्हीं निजी कारणों से भारत में अपनी एयरलाइन की नौकरी छोड़कर वे ब्रिटेन में बसने आ गए। हिंदी लेखन जगत श्री तेजेंद्र शर्मा के नाम से भली-भाँति परिचित है। ब्रिटेन में आते ही उनकी साहित्यिक गतिविधियाँ सक्रिय हो उठीं। एक सामाजिक प्राणी अपने समाज से, उसकी कठिनाइयों से अनभिज्ञ कैसे रह सकता है ? फिर श्री तेजेंद्र शर्मा जैसे भावुक लेखक की कलम कैसे जागरूक न रहती ?

श्री तेजेंद्र शर्मा हिंदी के ऐसे प्रथम लेखक हैं जिनका ब्रिटेन की भूमि पर सन् 1998 में कहानी-संग्रह सामने आया। श्री तेजेंद्र शर्मा ने इसकी शुरूआत करके और लेखकों का भी हौसला बढ़ाया।

अच्छा लेखक किसी परिचय का मोहताज नहीं होता। एक साहित्यकार की रचनाएँ स्वयं अपना परिचय देती हैं। उसका लेखन उसकी गुणवत्ता का प्रमाण होता है। कलम ही एक लेखक की सबसे बड़ी पूँजी होती है। कोई भी लेखक बड़ा या छोटा नहीं होता। उसका लेखन उसे अच्छे लेखक का दर्ज़ा दिलाता है। उसका काम, उसका परिश्रम स्वयं बोलता है। इसी परिश्रम के फलस्वरूप वह विभिन्न सम्मान व ख़िताबों का हकदार साबित होता है। यहाँ उस इंसान का चाम नहीं, उसका काम देखा जाता है जो उसके स्वभाव, उसके अन्य लेखकों से संबंध व कार्य करने के तरीके से परिलक्षित होता है।

इन्हीं गुणों के धनी, श्री तेजेंद्र शर्मा एक बहुत ही मिलनसार व्यक्तित्व हैं जो साथी साहित्यकारों की सहायता करने को सदैव तत्पर दिखाई देते हैं। ब्रिटेन के लेखक अभी भी नॉस्टैल्जिया से बाहर नहीं आए थे। अपना घर-बार छूटने का ग़म किसे नहीं होता किंतु उससे बाहर भी एक जहाँ है। उसमें भ्रमण करने से बहुत कुछ हासिल हो सकता है। श्री तेजेंद्र शर्मा ने लेखकों को यह एहसास दिलाया कि जिस देश में हम रहते हैं, उसके प्रति भी हमारे कुछ कर्तव्य हैं। अपने चारों ओर घटती घटनाओं पर ध्यान केंद्रित कर उस पर लिखने की ज़रूरत है।

श्री तेजेंद्र शर्मा कर्मशील व्यक्ति हैं। यह हिंदी में एक अलग दुनिया के लेखक हैं जो किसी भी नए विषय पर लिखने से नहीं घबराते। उन्होंने अपनी लेखन शैली में विभिन्न प्रयोग किए हैं, चाहे वह किस्सागोई हो या नए विषय।

यही चीज़ वे ब्रिटेन के साहित्कारों में देखना चाहते थे। श्री तेजेंद्र शर्मा एक ऐसे लेखक हैं जो केवल नाम कमाने के पीछे नहीं भागते। वे अपने साथ अन्य साथी लेखकों को लेकर चलते हैं। जहाँ कहीं भी आवश्यकता हो वे उनकी सहायता करने से नहीं चूकते।

श्री अजय नावरिया ने अपने एक लेख में इस बात की पुष्टि की है, ''यूँ तो प्रवासी साहित्यकारों में बहुत से सितारे हैं मगर ध्रुवतारे सा चमकता नाम श्री तेजेंद्र शर्मा है।''

कोई किसी के विचार, किसी की सोच नहीं ले सकता। हर कोई अपने अनुभव, अपने सामर्थ्य के अनुसार ही काम करता है। श्री तेजेंद्र शर्मा के अनुभवों की दुनिया विशाल है। उनके अनुभव उनकी कहानियों में साफ़ दिखाई देते हैं। वे अपनी बात कहते हुए डरते नहीं। किसी भी नए विषय को छूने से पहले वे उस पर पूरी रिसर्च करते हैं। हाँ कोई भी कहानी काल्पनिक पुट के बिना नहीं बन सकती। यही काल्पनिकता की उड़ान उस कहानी को सफल बनाती है। लेखक को इस बात का हक है कि वह उस काल की सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक गतिविधियों के विषय पर अपनी

लेखनी चलाकर पाठकों को उनसे अवगत कराए।

साहित्य एक ऐसा ही तो आईना है जिसमें कुछ छुप नहीं सकता। एक बार जो लेखक की कलम से निकलकर सामने आ गया, वह फिर पाठकों की पूँजी हो जाता है। एक लेखक को अपने समय और समाज में हस्तक्षेप करने की पूरी आज़ादी होती है। इसका प्रमाण वह अपनी सोच द्वारा अपने अनुभवों को शब्द देकर कहानियों के रूप में अपने पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करता रहता है।

श्री तेजेंद्र शर्मा की एयरलाइन की लंबी नौकरी तथा उसके पश्चात ब्रिटेन में रेलवे की नौकरी उनका परिचय कुछ ऐसी स्थितियों से कराती हैं जो हिंदी लेखन और पाठक के लिए एक तिलिस्म का दरवाज़ा खोलती हैं। एक ऐसी दुनिया जिसमें अनुभवों के साथ उनके जीवन संघर्ष की गाथा जुड़कर उनकी कहानियों में एक अलग ही रंग भर देती है।

श्रीमती कृष्णा सोबती का कहना है, ''श्री तेजेंद्र शर्मा की कहानियों से गुज़रते हुए हम यह शिद्दत से महसूस करते हैं कि लेखक अपने वजूद का टेक्स्ट है। उसके पात्र ज़िंदगी की मुश्किलों से गुज़रते हैं और अपने लिए नया रास्ता तलाश करते हैं। वे बाहरी दुनिया की कहानी लिखते हैं जिसमें चरित्र होते हैं और डायलॉग का ख़ूबसूरत प्रयोग किया जाता है।''

इन्हीं गुणों के धनी, श्री तेजेंद्र शर्मा बहुत ही मिलनसार व्यक्तित्व हैं जो साथी साहित्यकारों की सहायता करने को सदैव तत्पर दिखाई देते हैं। ब्रिटेन के लेखक अभी भी नॉस्टैल्जिया से बाहर नहीं आए थे। अपना घर-बार छूटने का ग़म किसे नहीं होता किंतु उससे बाहर भी एक जहाँ है। उसमें भ्रमण करने से बहुत कुछ हासिल हो सकता है। श्री तेजेंद्र शर्मा ने लेखकों को यह एहसास दिलाया कि जिस देश में हम रहते हैं उसके प्रति भी हमारे कुछ कर्त्तव्य हैं।

डायलॉग की ख़ूबसूरती ही कहानी की असली जान होती है। इसे आप जब चाहें कहीं भी थोप नहीं सकते। यही कहानी में ट्विस्ट लाता है और कहानी को कुशलता से आगे बढ़ता है।

श्री तेजेंद्र शर्मा ने देखा कि ब्रिटेन में कथा गोष्ठियों की आवश्यकता है जहाँ लेखक आकर अपनी कहानियाँ अपने मुख से लोगों तक पहुँचा सकें। उन्होंने कथा गोष्ठियों की मुहिम चलाई। लंदन ही नहीं, ब्रिटेन के अन्य शहरों में बैठे ख़ामोश लेखकों को भी उन गोष्ठियों में आमंत्रित किया। युवा लेखकों को प्रोत्साहित करने के लिए लंदन ही नहीं, बर्मिंघम और लेस्टर में भी कहानी पर कार्यशालाएँ लगाईं। घर से टाइप करके नोट्स लाते और उनके बीच बाँटते। कहानी लिखने की नई विधियाँ बताते। इनके प्रशंसकों की संख्या बढ़ने लगी। यह नहीं कि हर कोई इनकी साहित्यिक गतिविधियों से प्रभावित व प्रसन्न हुआ हो। जो पहले से इस क्षेत्र में अपनी धाक जमाए बैठे थे, उनका अप्रसन्न होना स्वाभाविक था। कहीं पर भी एक छोटा सा परिवर्तन हो तो लोग आवाज़ तो उठाएँगे ही।

श्री तेजेंद्र शर्मा एक परिश्रमी व्यक्ति हैं जिन्होंने अपने साहित्य व साहित्यिक सरगर्मियों द्वारा एक बहुत बड़ा मुकाम हासिल किया है। श्री राजेंद्र यादव ने एक स्थान पर श्री तेजेंद्र शर्मा की कहानियों पर चर्चा करते हुए कहा है, ''तेजेंद्र को आर्ट ऑव नैरेशन की गहरी समझ है। वे बख़ूबी जानते हैं कि स्थितियों को, व्यक्ति के अंतर्द्वंद्वों, संबंधों की जटिलताओं को कैसे कहानी में रूपांतरित किया जाता है। तेजेंद्र की कहानियाँ परिपक्व दिमाग की कहानियाँ हैं।''

श्री तेजेंद्र शर्मा एक ऐसे साहित्यकार हैं जो ख़ामोशी से अपना कार्य करते रहते हैं। श्री तेजेंद्र शर्मा की यह ख़ासियत है कि वे एक ही विषय पर 2-3 कहानियाँ लिख सकते हैं जैसे कैंसर पर आधारित बहुत ही मार्मिक कहानी 'कैंसर'। अभी हाल ही में उनके द्वारा रचित एक चर्चित कहानी 'मौत एक मध्यांतर' सामने आई है। विषय कैंसर होते हुए भी दोनों कहानियाँ एक-दूसरे से बिल्कुल भिन्न हैं। एक पाठक ही असली आलोचक होता है जो बिना किसी पक्ष के किसी लेखक के लेखन की सही आलोचना करता है।

श्री तेजेंद्र शर्मा कहीं पर भी बैठे ख़ामोश लेखक को खोज निकालते हैं। इनके सामने लेखक नहीं, उसके लेखन की अहमियत है। तभी तो लंदन में रहते हुए लंदन से दूर दूसरे शहरों के लेखकों को उन्होंने आगे बढ़ने का रास्ता दिखाया, जैसे बर्मिंघम से शैल अग्रवाल, यॉर्क से उषा वर्मा, लेस्टर से श्रीमती नीना पॉल आदि का नाम सामने आया।

इनके जीवन में कितने ही उतार-चढ़ाव क्यों न आए हों किंतु इन्होंने स्वयं को टूटने नहीं दिया। दूसरों के सामने खिलखिलाकर हँसनेवाला इंसान अंदर से कितना पीड़ित है, यह कोई नहीं जानता।

श्री तेजेंद्र शर्मा बहुत छोटी आयु में ही विधुर हो गए थे। 1995 में इनकी कैंसरग्रस्त प्रिय पत्नी श्रीमती इंदु शर्मा 2 छोटे बच्चों को छोड़कर हमेशा के लिए इनसे दूर हो गईं। श्रीमती इंदु शर्मा भी एक लेखिका थीं। तभी से वे पिछले 20 वर्षों से अपनी दिवंगत पत्नी को श्रद्धांजलि के रूप में प्रत्येक वर्ष भारत के किसी साहित्यकार की कृति को 'इंदु शर्मा सम्मान' से सम्मानित करते आ रहे हैं।

ब्रिटेन आकर भी श्री तेजेंद्र शर्मा ने इस मुहिम को जारी रखा। यहाँ इन्होंने 'कथा यू.के.' के नाम से एक संस्था स्थापित की जिसमें 'इंदु शर्मा साहित्य सम्मान' के साथ-साथ ये 'पद्मानंद साहित्य सम्मान' से ब्रिटेन के किसी साहित्यकार को 'हाउस ऑव कॉमर्स' में सम्मानित करने लगे। इस सम्मान की भारत व ब्रिटेन में बहुत गरिमा व मान्यता है। कोई भी साहित्यकार इस सम्मान को पाकर स्वयं को गौरवान्वित महसूस करता है।

श्री तेजेंद्र शर्मा एक परिश्रमी व्यक्ति हैं जिन्होंने अपने साहित्य व साहित्यिक सरगर्मियों द्वारा एक बहुत बड़ा मुकाम हासिल किया है। श्री राजेंद्र यादव ने एक स्थान पर श्री तेजेंद्र शर्मा की कहानियों पर चर्चा करते हुए कहा है, ''श्री तेजेंद्र को आर्ट ऑव नैरेशन की गहरी समझ है। वह बख़ूबी जानते हैं कि स्थितियों को, व्यक्ति के अंतर्द्वंद्वों, संबंधों की जटिलताओं को कैसे कहानी में रूपांतरित किया जाता है। तेजेंद्र की कहानियाँ परिपक्व दिमाग की कहानियाँ हैं।''

ब्रिटेन में कुछ लेखक काफ़ी अच्छा लिख रहे हैं। उनकी कहानियाँ भारत की बड़ी पत्रिकाओं में छप रही हैं। पाठक उन्हें पसंद कर रहे हैं। भारत से उन्हें उनकी कहानियों के लिए सम्मानित भी किया जा रहा है। फिर भी उनके लेखन को प्रवासी साहित्य का नाम दिया जाता है, उन्हें प्रवासी के नाम से पुकारा जाता है।

श्री तेजेंद्र शर्मा पहले कहानीकार हैं जिन्होंने इस 'प्रवासी' नाम के विपक्ष में अपनी आवाज़ उठाई। एक लेखक प्रवासी हो सकता है, उसका लेखन नहीं। प्रवासियों की कहानियाँ छापने के लिए भारत की पत्रिकाएँ प्रवासी संस्करण निकालती हैं जिसमें केवल बाहर के देशों की कहानियाँ ही ली जाती हैं।

श्री तेजेंद्र शर्मा ने इस बात पर आवाज़ उठाई कि यहाँ की रचनाओं को पढ़कर उनकी आलोचना करने के पश्चात ही उन्हें किसी ढाँचे में रखा जाए। यहाँ बर्मिंघम से डॉ. कृष्ण कुमार भी उनके पक्ष में लिखते हैं, ''जटिल प्रवासी तेजेंद्र का मानना है कि प्रवासी साहित्य वह है जिसमें उस जगह के सरोकार हों, जहाँ रचनाकार रह रहा हो। इस बात को लेकर तेजेंद्र ने एक मुहिम सी छेड़ रखी है जो अच्छे परिवर्तन लाती नज़र आ रही है और प्रवासी साहित्य को भारत के प्रकाशक अब गंभीरता से लेने लगे हैं।''

कहानी जगत के एक बहुत ही अनुभवी लेखक, श्री तेजेंद्र शर्मा की यह विशेषता है कि ये जिस विषय को हाथ लगाते हैं, उसमें जान डाल देते हैं। उनके अनुभवों के आधार पर जो कहानी इनकी कलम से सृजित होती है, वह अपने आप में बेजोड़ होती है। ये हर चीज़ को बड़ी बारीकी से लेते हैं। पात्र स्वयं सामने आकर अपनी कहानी सुनाने को बाध्य हो जाते हैं। किस्सागोई तो ऐसी कि एक बार जो पाठक इनकी कहानी के मकड़जाल में फँस जाए, वह बिना पूरी कहानी पढ़े बाहर नहीं निकल सकता। श्री तेजेंद्र शर्मा अपनी कहानी को एक ऐसा मोड़ देकर छोड़ देते हैं कि पाठक छटपटाता रह जाता है कि ''यह क्या हुआ...''

भावसिंह हिरवानी ने श्री तेजेंद्र शर्मा की कहानियों के विषय में बिल्कुल सही कहा है, ''तेजेंद्र शर्मा की कहानियाँ शहरी जीवन की उस बदसूरत तस्वीर को बड़ी सफ़ाई के साथ हमारे सामने प्रस्तुत करती हैं जहाँ हर पहलू को आर्थिक दृष्टि से देखना लोगों की आदत बन गई है। रिश्ते-नाते सब कुछ दायरे में सिमटकर अर्थहीन हो गए हैं। इनकी कहानियों को पढ़ते वक्त हमारे अंतस में जमी काई उसी तरह साफ़-साफ़ दिखाई देने लगती है जैसे किसी नदी या तालाब के स्थिर जल में उसके तल में फैली गंदगी दिखाई देती है।''

श्री तेजेंद्र शर्मा के पास अनुभवों का भंडार है। इन अनुभवों के साथ इनके जीवन संघर्ष की गाथा जुड़कर इनकी कहानियों में एक विचित्र किस्म का रस पैदा करती है। इसी रस में पाठक गोते लगाते हुए लेखक के साथ ही कभी हँसते हैं तो कभी पलकें छलकाते हैं। इनकी कहानियों में यदि भारत की महानगरीय महिलाओं की स्थिति दिखाई देती है तो ब्रिटेन की संघर्षग्रस्त नारी की भी है। एक ओर जहाँ इनकी कहानियों में समुद्र की गहराई है वहीं दूसरी ओर नदी

के पानी की मिठास भी है।

श्री हरियश राय के शब्दों में, ''तेजेंद्र शर्मा अपनी कहानियों में अपने समय के परिवेश को सघनता से व्यक्त करते हैं। इनकी कहानियों में फैले परिवेश का विस्तार देशी और विदेशी पृष्ठभूमि पर आधारित है।'' वहीं भारत भारद्वाज का कहना है, ''तेजेंद्र की कहानियों में अनुभवों का ताप ही नहीं, सामाजिक संबंधों का दंश भी है। अधिकांश कहानियों में उनका अपना अनुभव है और इस अनुभव में हमारे समय के यथार्थ, विद्रूपताएँ और विसंगतियाँ हैं तो साथ ही अपने मित्र लेखक-लेखिकाओं के कठोर अनुभव भी हैं।''

इनकी कहानियों के विषय अधिकतर भोगे हुए यथार्थ पर आधारित होते हैं। उनका मानना है कि यथार्थ में अपनी कल्पना और उद्देश्य का पुट मिलाकर ही कहानी बनती है। ये कहानी की हर घटना को पहले स्वयं महसूस करते हैं, फिर पाठकों को उसका अनुभव कराते हैं। कहानियों की घटनाएँ काल्पनिक नहीं, हमारे आसपास घूमती हुई मिलती हैं। प्रोफ़ेसर फ्रांचेस्का ऑर्सीनी का कहना है कि ''तेजेंद्र शर्मा की कहानियाँ सपना देखनेवाले बेचैन लोगों की कहानियाँ हैं...''

श्री तेजेंद्र शर्मा जिस गहराई से किसी पुरुष की पीड़ा का वर्णन करते हैं, उसी शिद्दत से महिलाओं की भावनाओं के महीन-से-महीन कणों को परखने में भी इनकी दृष्टि नहीं चूकतीं। यदि 'अभिशप्त' में पुरुष की व्यथा है, पीड़ा है तो 'सपने मरते नहीं' में पति की नज़र में पत्नी के दर्द को बड़ी बारीकी से उकेरा गया है। एक पुरुष लेखक का किसी नारी के अंतर्मन में झाँककर इतनी कुशलता से उसकी पीड़ा का वर्णन करना आसान बात नहीं है।

यह विशेषता श्री तेजेंद्र शर्मा की कहानियों में साफ़ दिखाई देती है जो इन्हें दूसरे लेखकों से अलग करती है। श्री प्रमोद कुमार गोविल का कहना है, ''तेजेंद्र की कहानियों को पढ़ते हुए एक और दिलचस्प तथ्य सामने आता है। जिस तरह हिंदी में महिला लेखन पर बात करते हुए कुछ महिला कथाकारों के बारे में समय-समय पर कहा जाता रहा है कि वे पुरुष मनोभावों के चित्रीकरण में सिद्धहस्त हैं, ठीक उसी तरह तेजेंद्र की कहानियों को पढ़ते समय लगता है कि तेजेंद्र महिला पात्रों के भीतर से भी बड़ी स्वाभाविकता से बोलते हैं। निश्चय ही यह एक उपलब्धि है।''

श्री तेजेंद्र शर्मा न केवल 'कथा यू.के.' और 'प्रवासी लेखन सम्मेलन' आदि बहुत से उपक्रमों में संलग्न दिखाई देते हैं बल्कि कथेतर साहित्य लेखन में भी उनकी टहल बराबर बनी हुई है। रंगकर्म और सिने अभिनय से जुड़े रह चुके श्री तेजेंद्र शर्मा के बहुविध सक्रियता भरे जीवन में एक गतिशीलता दिखाई देती है। पावर पोइंट पर ये भारतीय सिने जगत के प्रसिद्ध संगीतकार व गीतकार, उनके गाने व जीवन के विषय में बहुत ही दिलचस्प जानकारी देते हैं जो अपने आप में एक अद्भुत प्रोग्राम होता है।

श्री तेजेंद्र शर्मा बहुमुखी प्रतिभाओं के मालिक हैं। इनकी नज़रों में स्त्री का एक बहुत ऊँचा स्थान है। ये संबंधों की कद्र करते हैं।

श्री जगदम्बा प्रसाद दीक्षित का श्री तेजेंद्र शर्मा के लेखन के विषय में कहना है, ''तेजेंद्र के लेखन के संबंध में सबसे ज़्यादा महत्वपूर्ण बात है—जीवन के कटु और भयावह सत्यों का सामना करने की लेखक की प्रवृत्ति और क्षमता। निश्चय ही तेजेंद्र के पास ऐसा अनुभव संसार है जो दूसरे लेखकों को सहज उपलब्ध नहीं है। अपने अनुभव संसार से उन्होंने ऐसे प्रसंगों को चुना है जो कहीं न कहीं पाठक को झकझोर जाते हैं।''

यू.के.

38

मेरे देश की हिंदी संस्था–दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा

—डॉ. सी. जय शंकर बाबू

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

स्वाधीनता आंदोलन के दिनों में भावात्मक एकता स्थापित करने में हिंदी को सशक्त माध्यम मानकर हिंदीतर प्रदेशों में इसके प्रचार के लिए कई प्रयास किए गए। दक्षिण भारत में तमिल के सुख्यात राष्ट्र कवि सुब्रह्मण्यम् भारती ने अपने संपादन में प्रकाशित तमिल पत्रिका 'इंडिया' के माध्यम से 1906 में ही जनता से हिंदी सीखने की अपील की थी एवं अपनी पत्रिका में हिंदी में सामग्री प्रकाशित करने हेतु कुछ पृष्ठ सुरक्षित रखने की घोषणा की थी। आगे भारती के ही नेतृत्व में 1907-1908 के बीच मद्रास के ट्रिप्लिकेन में जनसंघ के तत्वावधान में हिंदी कक्षाओं का संचालन आरंभ हुआ था जिसकी सूचना भारती ने लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक को प्रेषित अपने पत्र (29 मई, 1908) में दी थी। मद्रास (वर्तमान चेन्नई) में तमिल के महाकवि सुब्रह्मण्यम् भारती ने हिंदी के प्रति जो स्नेहभाव दिखाया वह परंपरा आगे भी चलती रही और दक्षिण भारत के तमिल, मलयालम एवं तेलुगू के अख़बारों में भी हिंदी के प्रति लगाव से भाषा सीखने के लिए विशेष स्तंभों का लगातार प्रकाशन किया जाता रहा है।

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने अपने रचनात्मक कार्यक्रमों में 'राष्ट्रभाषा' शीर्षक से हिंदी प्रचार को भी 12वें अंश के रूप में जोड़ लिया था। दक्षिण अफ्रीका में प्रवासी भारतीयों के बीच कार्य करते हुए महात्मा गांधी ने यह महसूस किया था कि भिन्न-भिन्न भाषाएँ बोलनेवाले भारतीयों के बीच व्यवहार की भाषा के रूप में हिंदी सर्वोपयुक्त भाषा है। दक्षिण अफ्रीका में बसे हुए प्रवासी भारतीयों में एकता स्थापित करने के लिए हिंदी को एक सफल माध्यम के रूप में पाकर 1909 में गांधी जी ने अपने अनुभव अपनी पत्रिका 'हिंद स्वराज' में व्यक्त करते हुए लिखा था, ''सारे हिंदुस्तान के लिए तो हिंदी ही होनी चाहिए।'' दक्षिण अफ्रीका से लौटने के बाद आज़ादी के आंदोलन में सक्रिय भूमिका अदा करते हुए उन्होंने न केवल हिंदी भाषा का समर्थन किया बल्कि हिंदी को राष्ट्रवाणी होने की अधिकारिणी बनाने हेतु हिंदी के व्यापक प्रचार-प्रसार के लिए प्रभावी कदम भी उठाए थे। गांधी जी ने लिखा था, ''मेरी अपील के जवाब में इस सम्मेलन ने मद्रास प्रांत में 5 सालों तक हिंदी-प्रचार का काम करने लिए रु. 50,000 का चंदा करवा दिया है।'' दक्षिण में हिंदी प्रचार के व्यवस्थित आंदोलन की रूपरेखा बनाने और उसे कार्यान्वित करने में गांधी जी की तत्परता और निष्ठा का विस्मरण हम भारतवासी कभी नहीं कर सकेंगे। हिंदी गंगोत्री की धारा को दक्षिण के गाँवों तक ले आने में गांधी जी के भगीरथ प्रयासों से संबंधित ऐतिहासिक तथ्य आज दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा के रूप में साकार हैं। सभा की स्थापना से पूर्व का घटनाक्रम भी काफ़ी महत्वपूर्ण है।

हिंदी साहित्य सम्मेलन के इंदौर अधिवेशन (मार्च, सन् 1918) के सभापति महात्मा गांधी चुने गए। इंदौरवाले सम्मेलन का भाषण तैयार करने से पूर्व गांधी जी ने रवींद्रनाथ ठाकुर, एनी बेसेंट, मदनमोहन मालवीय, बाल गंगाधर तिलक आदि देश के कुछ बड़े नेताओं से इस बारे में पत्र-व्यवहार द्वारा राय-मश्वरा किया था कि :

1. क्या हिंदी (भाषा या उर्दू) अंततः प्रांतीय व्यवहार तथा अन्य राष्ट्रीय कार्यवाहियों के लिए उपयुक्त एकमात्र राष्ट्रीय भाषा नहीं है?
2. क्या हिंदी कांग्रेस के आगामी अधिवेशनों में मुख्यतः उपयोग में लाई जानेवाली भाषा नहीं होनी चाहिए?
3. क्या हमारे विद्यालयों, महाविद्यालयों में उच्च शिक्षा देशी भाषाओं के माध्यम से देना वांछनीय और संभव नहीं है?
4. और क्या हमें प्रारंभिक शिक्षा के बाद हिंदी को अपने विद्यालयों में अनिवार्य द्वितीय भाषा नहीं बना देना चाहिए?

गांधी जी ने कहा था, ''मैं महसूस करता हूँ कि यदि हमें जनसाधारण तक पहुँचना है और यदि राष्ट्रीय सेवकों को सारे भारतवर्ष के जनसाधारण से संपर्क करना है तो उपर्युक्त प्रश्न तुरंत हल किए जाने चाहिए।''

लगभग सभी नेताओं ने गांधी जी को अनुकूल उत्तर भेजे। इसके परिणामस्वरूप दक्षिण में हिंदी प्रचार के व्यवस्थित व योजनाबद्ध

आंदोलन का सूत्रपात महात्मा गांधी के प्रयासों से हुआ था। महात्मा गांधी ने अपने कनिष्ठ पुत्र देवदास गांधी को प्रथम हिंदी प्रचारक के रूप में हिंदी प्रचार कार्य के लिए मद्रास भेजा था। मद्रास नगर के गोखले हॉल में दि. 16 जून, 1918 को डॉ. सी.पी. रामास्वामी अय्यर की अध्यक्षता में डॉ. एनी बेसेंट ने कार्यक्रम का उद्घाटन किया था। गांधी जी के आदेश पर स्वामी सत्यदेव परिव्राजक, पंडित हरिहर शर्मा, का.मा. शिवराम शर्मा, मल्लादि वेंकट सीतारामांजनेयुलु आदि हिंदी प्रचार के कार्य में जुड़ गए थे। इनके अलावा प्रताप नारायण वाजपेयी, क्षेमानंद राहत, हृषिकेश शर्मा, रघुवर दयालु मिश्र, रामभरोसे श्रीवास्तव बिहार, अवधनंदन, देवदूत विद्यार्थी आदि हिंदी प्रचार कार्य में जुड़ गए।

हिंदी प्रचार की उपादेयता केवल हिंदी भाषा के प्रचलन में नहीं है, उसके माध्यम से लोगों में आपसी सद्भाव, मैत्री और एकता की भावना पनपने की भी अपेक्षा है। भावात्मक एकता की ज़रूरत को भारत के राष्ट्रीय आंदोलन के कर्णधारों ने महसूस किया था, आज़ादी की लड़ाई में सफलता के लिए अपेक्षित कदमों में हिंदी प्रचार कार्य को भी एक महत्वपूर्ण कदम के रूप में अपनाया था। इस दृष्टि से स्थापित एक बड़ी संस्था है- दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा। दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा का अत्यंत गरिमामय इतिहास रहा है।

दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा जिसकी नींव गांधी जी द्वारा डाली गई थी, कालांतर में दक्षिण भारत के चारों राज्यों में अपनी जड़ें जमा चुकी थीं। सन् 1918 से 1927 तक हिंदी साहित्य सम्मेलन की एक शाखा के रूप में कार्य करनेवाली यह संस्था 1927 से अलग से एक स्वतंत्र संस्था के रूप में परिवर्तित होकर आगे राज्य-शाखाओं की स्थापना एवं विस्तार के साथ ही दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा के रूप में गठित हुई है। 1927 में गांधी जी की अध्यक्षता में बेंगलुरू में संपन्न हिंदी प्रचार सम्मेलन के बाद एक स्वतंत्र संस्था के रूप में इस संस्था का रूप गठन हुआ था। दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा के संस्थापक अध्यक्ष स्वयं महात्मा गांधी थे। इस संस्था ने दक्षिण में हिंदी प्रचार के व्यापक आंदोलन में पुरोगामी भूमिका निभाई थी। सभा की राज्य शाखाएँ चारों राज्यों में स्थापित हुईं। इसके अलावा इनके कई बड़े-छोटे शहरों में शाखा कार्यालयों, हिंदी प्रेमी मंडलियों की स्थापना भी कालक्रम में होती गई। हज़ारों कार्यकर्ता हिंदी प्रचारकों के रूप में दीक्षित होकर हिंदी प्रचार कार्य करने लगे। इससे हिंदी प्रचार को व्यापक आधार भूमि मिली। इसी संस्था में दीक्षित कई कार्यकर्ता आगे दक्षिण के चारों राज्यों में स्वतंत्र रूप से भी कई संस्थाएँ स्थापित करके स्वतंत्र रूप से हिंदी प्रचार में योगदान देने का प्रयास करने लगे। दक्षिण के चारों राज्यों में हिंदी प्रचार-प्रसार में सक्रिय भूमिका निभानेवाली इस संस्था की रजत जयंती 1946 में संपन्न हुई थी और उस अवसर पर स्वयं गांधी जी हिंदी प्रचार सभा में उपस्थित हुए थे।

दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा जिसकी नींव गांधी जी द्वारा डाली गई थी, कालांतर में दक्षिण भारत के चारों राज्यों में अपनी जड़ें जमा चुकी थीं। सन् 1918 से 1927 तक हिंदी साहित्य सम्मेलन की एक शाखा के रूप में कार्य करनेवाली यह संस्था 1927 से अलग से एक स्वतंत्र संस्था के रूप में परिवर्तित होकर आगे राज्य-शाखाओं की स्थापना एवं विस्तार के साथ ही दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा के रूप में गठित हुई है। 1927 में गांधी जी की अध्यक्षता में बेंगलुरु में संपन्न हिंदी प्रचार सम्मेलन के बाद एक स्वतंत्र संस्था के रूप में इस संस्था का रूप गठन हुआ था।

सभा की गतिविधियाँ

सभा का आदर्श वाक्य है—'एक राष्ट्रभाषा हिंदी हो, एक हृदय हो भारत जननी।' अपने इस आदर्श वाक्य के अनुरूप सभा कई गतिविधियाँ सक्रिय भूमिका निभाती रहती है। सभा का प्रबंधन व शासकीय व्यवस्था एवं गतिविधियाँ सुनिश्चित करने के लिए कार्यकारिणी समिति, शिक्षा परिषद, निधिपालक मंडल तथा शासी परिषद सक्रिय भूमिका अदा करते हैं। इनके सदस्यों का चुनाव लोकतांत्रिक ढंग से होता है। सभा की सेवाओं के अंतर्गत मुख्यत: निम्नसूचित कार्य शामिल हैं—

1. प्रारंभिक एवं उच्च परीक्षाएँ (प्राथमिक से राष्ट्रभाषा प्रवीण उपाधि परीक्षा तक)
2. पाठ्य-पुस्तकों का निर्माण, प्रकाशन एवं बिक्री
3. विभिन्न प्रशिक्षण पाठ्यक्रम
4. अनुवाद के क्षेत्र में दक्षता प्रदान करने के लिए स्नातकोत्तर डिप्लोमा पाठ्यक्रम तथा अनुवाद कार्य के लिए सुविधाएँ
5. मानक शब्दकोशों का निर्माण
6. बोलचाल हिंदी वर्ग
7. जन-साधारण के लिए सार्वजनिक पुस्तकालय

8. अनुसंधान कार्य के लिए राष्ट्रीय हिंदी अनुसंधान ग्रंथालय
9. उच्च शिक्षा एवं शोध संस्था का संचालन (बी.ए., बी.एड., एम.ए., एमफ़िल., पीएचडी, डीलिट की उपाधि पाठ्यक्रमों, शोधकार्यों का संचालन)
10. राष्ट्रीय स्तर की संगोष्ठियों, कार्यशालाओं, गोष्ठियों, भाषण-मालाओं आदि का आयोजन।

हिंदी प्रचार कार्यक्रम के अंतर्गत हिंदी परीक्षाओं का आयोजन और प्रमाण पत्र प्रदान करने का सिलसिला 1922 में आरंभ हुआ। क्रमश: 3 प्रारंभिक परीक्षाएँ 'प्राथमिक', 'मध्यमा' और 'राष्ट्रभाषा' के नाम से संपन्न होती थीं और राष्ट्रभाषा में उत्तीर्ण छात्रों को हिंदी प्रचारक विद्यालय में प्रवेश देकर उन्हें हिंदी प्रचार का विशेष प्रशिक्षण दिया जाता था। कालक्रम में इनसे उच्चस्तरीय अन्य परीक्षाओं का आयोजन भी हुआ। हिंदी प्रचार के कार्यों में हिंदी अध्यापकों की बड़ी संख्या में ज़रूरत पड़ने लगी थी, इसी माँग की पूर्ति हेतु सर्वप्रथम 1922 में ईरोड में और 1924 में मद्रास में हिंदी प्रचारक विद्यालय खोले गए। कालांतर में अन्य प्रदेशों में भी ऐसे विद्यालय खोले गए। 1922-1932 के बीच हिंदी प्रचार कार्य को सुचारु रूप से विस्तार देने हेतु दक्षिण के चारों राज्यों में सभा के कार्यालय कार्य करने लगे। सभा की गतिविधियों को विस्तार देने और हिंदी प्रचार के कार्य में तेज़ी लाने के उद्देश्य से 1936 में प्रांतीय सभाओं की स्थापना हुई। आंध्र सभा विजयवाड़ा में (बाद में हैदराबाद स्थानांतरित), तमिल नाडु सभा तिरुची में, केरल सभा एरणाकुलम में और कर्नाटक सभा शुरू में बेंगलुरू में और कुछ समय बाद धारवाड़ में कार्य करने लगीं। इन सभाओं की गतिविधियों का विश्लेषण भी इसी विवेचन के अंतर्गत प्रस्तुत किया जा रहा है।

1922-1932 के बीच हिंदी प्रचार कार्य को सुचारु रूप से विस्तार देने हेतु दक्षिण के चारों राज्यों में सभा के कार्यालय कार्य करने लगे। सभा की गतिविधियों को विस्तार देने और हिंदी प्रचार के कार्य में तेज़ी लाने के उद्देश्य से 1936 में प्रांतीय सभाओं की स्थापना हुई। आंध्र सभा विजयवाड़ा में (बाद में हैदराबाद स्थानांतरित), तमिल नाडु सभा तिरुची में, केरल सभा एरणाकुलम में और कर्नाटक सभा शुरू में बेंगलुरू में और कुछ समय बाद धारवाड़ में कार्य करने लगीं। इन सभाओं की गतिविधियों का विश्लेषण भी इसी विवेचन के अंतर्गत प्रस्तुत किया जा रहा है।

प्रचारकों की निष्ठा एवं समर्पण भावना

बड़ी संख्या में हिंदी प्रचारक और अन्य कार्यकर्ता सभा के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए कार्य करने लगे थे। आरंभिक समय के हिंदी प्रचारकों में बड़ी निष्ठा थी और हिंदी प्रचार को देशभक्ति पूर्ण कार्य मानते हुए वे घर-घर जाकर बच्चों, बड़े-बूढ़ों, सब को हिंदी सिखाते थे। गोरे शासक कभी हिंदी प्रचारकों को गिरफ़्तार भी करवाते थे किंतु ये प्रचारक बेहिचक, निडर होकर जेल से छूटते ही पुन: हिंदी प्रचार की गतिविधियों से जुड़ जाते थे, यहाँ तक कि जेलों में भी कैदियों को हिंदी पढ़ाते हुए हिंदी प्रचार अनुष्ठान को जारी रखा गया था। इसकी पुष्टि हमें सभा के वरिष्ठ प्रचारक, केरल के श्री पी. नारायण के एक संस्मरणात्मक लेख से मिल जाती है। उन्होंने लिखा है, ''सभा द्वारा प्रशिक्षित प्रचारकों को गाँव-गाँव में पुलिस की यातनाएँ भी सहनी पड़ीं, कारावास भी भोगना पड़ा था मगर इतिहास बताता है कि आज़ादी के ये आरक्षित योद्धा-गण किंचित भी विचलित नहीं हुए। दक्षिण के चारों राज्यों के पुलिस थानों में हिंदी प्रचारकों की वीरगाथा की लंबी रिपोर्ट संचित की जा सकती है जो सभा के इतिहास के लेखन में सहायक बन सकती है।

आंध्र के एक पुलिस थाने में एक हिंदी वीर योद्धा से थानेदार की पूछताछ का एक नमूना यहाँ पेश है—

थानेदार—''तुम्हारा नाम क्या है?''
जवाब—''मेरा नाम सुब्बाराव।''
थानेदार—''तुम्हारे घर का नाम?''
जवाब—''हिंदी घर।''
थानेदार—''गली का नाम?''
जबाव—''हिंदी गली।''
थानेदार—''पोस्ट ऑफ़िस का नाम?''
जवाब—''हिंदी पोस्ट ऑफ़िस।''

सरकार हिंदी प्रचार को अपराध मानकर जेल की सज़ा देती है, मगर जेल के भीतर भी हिंदी योद्धा अन्य कैदियों को हिंदी सिखाना अपना फ़र्ज मानता है। जेल के अधिकारी अब चिंतित होते हैं कि जेल से कहाँ भेजें। यह थी स्वतंत्रता संग्राम के दौर में दुश्मन को भी निरस्त्र करनेवाले दक्षिण के हिंदी प्रचारकों की राष्ट्र भारती के प्रति

आत्मनिष्ठा की अद्‌भुत झाँकी।''

उक्त विवेचन से यह बात स्पष्ट होती है कि सभा के प्रचारकों में बड़ी निष्ठा की भावना रहती थी, वे अपने व्यक्तिगत जीवन को भी पवित्र रखते थे। सभा के कार्यकर्ताओं द्वारा उन दिनों प्रतिज्ञाएँ करवाई जाती थीं। इस संबंध में श्री एस. महालिंगम ने लिखा है, ''उन दिनों सभा में आजीवन कार्यकर्ताओं की श्रेणी थी। उन कार्यकर्ताओं को निम्नलिखित प्रतिज्ञाएँ करनी पड़ती थीं—

1. मेरा दृढ़ विश्वास है कि देश के लिए राष्ट्रभाषा का प्रश्न अत्यंत महत्वपूर्ण है।
2. मैंने अपना पूरा समय राष्ट्रभाषा हिंदी के प्रचार में व्यतीत करने का निश्चय किया है।
3. मेरे तथा मेरे कुटुंब के निर्वाह के लिए सभा जो प्रबंध करेगी उससे मैं संतुष्ट रहूँगा। मैं अपने समय और शक्ति को अपने कुटुंब के लिए धनोपार्जन करने में न बिताकर सभा के उद्‌देश्य की पूर्ति में पूर्ण रूप से योग दूँगा।
4. मैं सदा सभा के उद्‌देश्यों को ही अपने सामने रखूँगा और उसकी वृद्धि और उन्नति के लिए पूर्ण उत्साह के साथ चेष्टा करूँगा।
5. मैं किसी जाति-पांति, पंथ, धर्म आदि का भेदभाव न रखकर समान भाव से हिंदी सिखाने को सर्वदा तैयार रहूँगा।
6. मैं अपने व्यक्तिगत जीवन को सादा और पवित्र रखूँगा।''

सभा प्रांगण में अपने आगमन पर गांधी जी ने स्वयं कार्यकर्ताओं द्वारा जीवन को शुद्ध और पवित्र रखने की प्रतिज्ञा करवाई थी। इस प्रकार सभा का विस्तृत एवं गरिमामय इतिहास है जिसे लिखने के लिए पन्ने कम पड़ जाएँगे। सभा की स्थापना से लेकर उसे विकास के पथ पर आगे बढ़ाने तक महात्मा गांधी ने योगदान दिया था। सभा के इतिहास की इस विराटता को ध्यान में रखते हुए सभा को सन् 1964 में संसद में पारित अधिनियम सं. 14 के अनुसार भारत सरकार ने राष्ट्रीय महत्व की संस्था के रूप में घोषित किया है। यह सभा के इतिहास में मील का पत्थर साबित हुआ।

राष्ट्रीय महत्व की संस्था घोषित

राष्ट्रीय महत्व की संस्था घोषित होने के बाद 1 जून, 1964 से लागू अधिनियम की धारा 4 के अधीन दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा को विश्वविद्यालय स्तर की उपाधियाँ देने का अधिकार प्राप्त हुआ। इसके परिणामस्वरूप उच्च शिक्षा और शोध संस्थान का गठन हुआ। आज चेन्नई के अलावा चारों राज्यसभाओं के अधीन उच्च शिक्षा और शोध संस्थान की शाखाएँ भी संचालित हो रही हैं। संस्थान द्वारा एम.ए., एमफ़िल, पीएचडी, डीलिट, बी.एड., एम.एड. आदि उपाधियाँ प्रदान की जा रही हैं। इनके अलावा स्नातकोत्तर अनुवाद डिप्लोमा तथा पत्रकारिता डिप्लोमा पाठ्यक्रमों का संचालन भी हो रहा है। विगत एकाध दशकों से पत्राचार द्वारा हिंदी में एम.ए. तथा स्नातकोत्तर अनुवाद डिप्लोमा पाठ्यक्रमों का संचालन भी हो रहा है।

दक्षिण के चारों राज्यों में राज्य शाखाएँ

दक्षिण के चारों राज्यों में दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा की राज्य शाखाएँ कार्यरत हैं। आम तौर पर संबद्ध राज्य में हिंदी प्रचार की गतिविधियों में अग्रणी भूमिका निभाने के उद्‌देश्य से इन राज्य शाखाओं का गठन हुआ। इनका विवरण अग्रांकित है—

राज्य शाखा	वर्तमान मुख्यालय
दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा—आंध्र	हैदराबाद
दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा—कर्नाटक	धारवाड़
दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा—तमिल नाडु	तिरुचिरापल्ली
दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा—केरल	एरणाकुलम

सभा का केंद्रीय कार्यालय चेन्नई में है। सभा की वेबसाइट का पता—dpbpcentral.org. है। सभा की इन शाखाओं के कार्यों में प्रारंभिक परीक्षाओं का संचालन तथा प्रमाण पत्रों का वितरण, हिंदी प्रचार कार्यों के संगठन आदि शामिल हैं। तमिल नाडु राज्य शाखा को छोड़कर अन्य तीनों सभाओं के अधीन उच्च शिक्षा और शोध संस्थान की शाखाएँ कार्यरत हैं।

सभा की उपलब्धियाँ

तमिल नाडु में सभा के केंद्रीय कार्यालय के अधीन उच्च शिक्षा और शोध संस्थान का मुख्य केंद्र है। इस संस्थान द्वारा वर्ष 2013 तक सभी केंद्रों से कुल 1748 छात्रों को एम.ए., 1202 छात्रों को एमफ़िल, 244 छात्रों को पीएचडी तथा 8 विद्वानों को डीलिट की उपाधियाँ प्रदान की गई हैं। संस्थान के अधीन स्नातकोत्तर अनुवाद डिप्लोमा संचालन के 7 केंद्र हैं। इन केंद्रों से अब तक 3940

डिप्लोमा प्रदान किए जा चुके हैं। वर्ष 2013 तक 274 पत्रकारिता डिप्लोमा, 100 से अधिक एम.एड. और 40118 बी.एड. की उपाधियाँ प्रदान की गई हैं। सभा द्वारा संचालित बी.एड. कॉलेजों की संख्या 10 है। सभा द्वारा संचालित शिक्षा स्नातक व हिंदी प्रचारक प्रशिक्षण महाविद्यालयों को राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद की मान्यता प्राप्त है। उपाधियाँ प्रदान करने हेतु सभा द्वारा हर वर्ष दीक्षांत समारोह का आयोजन किया जाता है। आज तक ऐसे समारोहों में दीक्षांत भाषण देनेवाले प्रमुखों में राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के अलावा राष्ट्रीय स्तर के नेता, मंत्री, गण्यमान्य हिंदी साहित्यकार आदि के नाम शामिल हैं। कुछ प्रमुख हस्ताक्षर हैं—काका कालेलकर (1931), पं. रामनरेश त्रिपाठी (1933), मुंशी प्रेमचंद (1934), बाबू पुरुषोत्तमदास टंडन (1936), सरोजिनी नायडु (1938), बालगंगाधर खरे (1939), आचार्य विनोबा भावे (1941 तथा 1946), ज़ाकिर हुसैन (1945, 1960), बाबू राजेंद्र प्रसाद (1951), लाल बहादुर शास्त्री (1957), रामधारी सिंह दिनकर (1959), पी.वी. नरसिंह राव (1966), मोटूरिसत्यनारायण (1993) आदि।

दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा की 'प्रमाणित प्रचारक योजना' के अंतर्गत प्रमाणित प्रचारकों की संख्या लगभग एक लाख पार हो चुकी है। करीब 3 लाख से अधिक छात्रों को प्रवीण की उपाधियाँ प्रदान की जा चुकी हैं।

पुस्तक प्रकाशन

सभा द्वारा करीब 450 पुस्तकों का प्रकाशन भी हो चुका है। सभा द्वारा प्रकाशित कृतियों में प्रचार पाठ्यक्रमों से संबंधित पाठ्य-पुस्तकों के अलावा दक्षिण के चारों राज्यों की संस्कृति तथा साहित्य संबंधी कृतियाँ, द्विभाषी, त्रिभाषी कोश, तुलनात्मक व्याकरण की कृतियाँ आदि प्रकाशित हुई हैं।

स्वाधीनतापूर्व युग में दक्षिण भारत से लगभग डेढ़ दर्जन पत्र-पत्रिकाएँ हिंदी में प्रकाशित हुई थीं। आधे दर्जन अन्य भाषा (तमिल एवं मलयालम) के समाचार पत्रों ने कुछ समय तक हिंदी की सामग्री को स्थान देकर भाषाई सद्भावना का उदाहरण पेश किया था। तमिल नाडु से प्रकाशित हिंदी पत्रिकाओं की मूल चेतना की ओर यदि हम दृष्टिपात करेंगे तो यह बात स्पष्ट हो जाती है कि तमिल नाडु में राष्ट्रीय भावनाओं के पोषणार्थ हिंदी पत्रकारिता ने कार्य किया। तमिल की पत्र-पत्रिकाओं ने भी हिंदी की सामग्री के प्रकाशन के साथ भाषाई सद्भावना दर्शाई थी। समाचार प्रकाशनार्थ प्रकाशित पत्रों के माध्यम से राजनीतिक चेतना जगाने की कोशिशें की गई थीं। हिंदी प्रचार आंदोलन को गति देने के उद्देश्य से 2-4 पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन हुआ जिनकी मूल चेतना भावात्मक एकता की प्राप्ति की दिशा में योग देने में सहायक थी।

सभा की पत्रिकाएँ

सभा की गतिविधियों के समाचार प्रकाशनार्थ मुख पत्रिकाओं के रूप में केंद्रीय सभा के अलावा चारों राज्य शाखाओं की ओर से पत्रिकाओं का नियमित प्रकाशन हो रहा है। केंद्र सभा, चेन्नई से 'हिंदी प्रचार समाचार' मासिक और साहित्यिक त्रैमासिकी 'दक्षिण भारत', तमिल नाडु शाखा, तिरुचिरापल्ली की ओर से 'हिंदी पत्रिका' हिंदी-तमिल मासिक, केरल शाखा, एरणाकुलम की ओर से 'केरल भारती' हिंदी-मलयालम मासिक, कर्नाटक शाखा, धारवाड़ की ओर से 'भारतवाणी', हिंदी-कन्नड़ मासिक तथा आंध्र शाखा, हैदराबाद की ओर से 'पूर्णकुंभ हिंदी', 'श्रवंतीतेलुगू' मासिक प्रकाशन हो रहा है। सभा का विश्वविद्यालयी शिक्षा प्रभाग उच्च शिक्षा और शोध संस्थान की ओर से 'बहुब्रीहि' शीर्षक से भाषाविज्ञान, हिंदी भाषा और साहित्य पर नई सोच की अर्धवार्षिक पत्रिका का प्रवेशांक 2013 में प्रकाशित हुआ। इसका दूसरा और अंतिम अंक जनवरी 2014 में आया।

दक्षिण भारत में स्वातंत्र्यपूर्व हिंदी पत्रकारिता की चेतना में सभा की भूमिका

दक्षिण भारत में हिंदी पत्रकारिता के उदय से संबंधित अध्ययन से यह बात स्पष्ट हो चुकी है कि राष्ट्रीयता के भावबोध एवं राष्ट्रीय आंदोलन के अंग के रूप में हिंदी पत्रकारिता का उदय हुआ था तथापि इसमें सभा के कई दीक्षित कार्यकर्ता भी शामिल थे। हिंदी पत्रकारिता की मूल चेतना राष्ट्रीयता की भावना ही रही है। स्वाधीनतापूर्व युग में हिंदी पत्रकारिता के उदय के दिनों से लेकर स्वाधीनता की प्राप्ति तक प्रकाशित पत्र-पत्रिकाओं के उद्देश्य, उनमें प्रकाशित सामग्री तथा उन पत्र-पत्रिकाओं की देन को ध्यान में रखते हुए दक्षिण भारत की स्वतंत्रतापूर्व हिंदी पत्रकारिता की मूलचेतना को आँकने का प्रयास अगले अनुच्छेदों में किया जा रहा है।

यदि हम 1921 से 1947 तक भारत के विभिन्न केंद्रों से प्रकाशित हिंदी पत्र-पत्रिकाओं की स्वाधीनतापूर्व हिंदी पत्रकारिता के रूप में मूल्यांकित करें तो यह बात स्पष्ट हो जाती है कि दक्षिण भारत की स्वाधीनतापूर्व हिंदी पत्रकारिता की चेतना के मूल में किस प्रकार की भावनाएँ थीं।

स्वाधीनतापूर्व युग में दक्षिण भारत से लगभग डेढ़ दर्जन पत्र-पत्रिकाएँ हिंदी में प्रकाशित हुई थीं। आधे दर्जन अन्य भाषा (तमिल एवं मलयालम) के समाचार पत्रों ने कुछ समय तक हिंदी की सामग्री को स्थान देकर भाषाई सद्भावना का उदाहरण पेश किया था। तमिल नाडु से प्रकाशित हिंदी पत्रिकाओं की मूल चेतना की ओर यदि हम दृष्टिपात करेंगे तो यह बात स्पष्ट हो जाती है कि तमिल नाडु में राष्ट्रीय भावनाओं के पोषणार्थ हिंदी पत्रकारिता ने कार्य किया। तमिल की पत्र-पत्रिकाओं ने भी हिंदी की सामग्री के प्रकाशन के साथ भाषाई सद्भावना दर्शाई थी। समाचार प्रकाशनार्थ प्रकाशित पत्रों के माध्यम से राजनीतिक चेतना जगाने की कोशिशें की गई थीं। हिंदी प्रचार आंदोलन को गति देने के उद्देश्य से 2-4 पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन हुआ जिनकी मूल चेतना भावात्मक एकता की प्राप्ति की दिशा में योग देने में सहायक थी। साहित्यिक एवं सांस्कृतिक गरिमा को रेखांकित करने की दृष्टि से जहाँ एक ओर साहित्यिक पत्रकारिता का योग रहा वहीं सांप्रदायिक सिद्धांतों के प्रचारार्थ धार्मिक चेतना को जगाने की दृष्टि से भी 2 पत्रिकाएँ प्रकाशित हुई थीं। इस विश्लेषण से यह तथ्य उद्घाटित होता है कि स्वाधीनतापूर्व युग में तमिल नाडु से प्रकाशित पत्र-पत्रिकाओं की समग्र चेतना से राष्ट्रीय आंदोलन को बल मिला था। स्वाधीनता के परम लक्ष्य की ओर अग्रसर होने की प्रेरणा एवं निष्ठा भरने में इन पत्र-पत्रिकाओं ने अवश्य ही तत्परता दर्शाई थी।

सर्वप्रथम मद्रास से प्रकाशित 'भारत तिलक' ने वास्तव में एक समाचार पत्र का रूप लिया हुआ था और इसमें स्थानीय समाचार प्रकाशित होते थे। हिंदी प्रचार आंदोलन के सक्रिय कार्यकर्ता द्वारा संपादित होने के कारण हिंदी प्रचार-प्रसार भी इस पत्र का अभिन्न उद्देश्य बन गया था। हिंदी प्रचार आंदोलन को गति देने के उद्देश्य से हिंदी प्रचार कार्य में संलग्न संस्थाओं की ओर से प्रकाशित मुख्य-पत्रिकाओं में हिंदी प्रचार आंदोलन की गतिविधियों की खबरें, अन्य महत्वपूर्ण सूचनाएँ, लेख आदि प्रकाशित होते थे। ऐसी पत्रिकाओं में 'हिंदी प्रचारक' प्रथम पत्र है जो कालांतर में 'हिंदी प्रचार समाचार' के नाम से प्रकाशित होने लगा था और आज भी उसी नाम से प्रकाशित हो रहा है। 'हिंदी पत्रिका' के नाम से एक पत्रिका भी तमिल नाडु के तिरुचिरापल्ली से प्रकाशित हुई थी जो अब भी प्रकाशित हो रही है। इन पत्रिकाओं की प्रमुख प्रवृत्तियाँ हिंदी प्रचार आंदोलन के कार्यकर्ताओं के लिए प्रेरक एवं उपयोगी लेख, हिंदी प्रचार की गतिविधियों से संबंधित खबरें व अन्य सामग्री प्रकाशित करने की रही है।

सभा के लिए विगत कई वर्षों से भारत सरकार के मानव संसाधन विकास मंत्रालय के अधीन संस्था केंद्रीय हिंदी निदेशालय से अनुदान प्राप्त हो रहे हैं। आज कई संदर्भों में यह आलोचना सुनाई पड़ती है कि सभा की गतिविधियों में एक प्रकार की यांत्रिकता नज़र आती है। स्वाधीनतापूर्व हिंदी प्रचार अनुष्ठान की जो चेतना थी वह आज इन संस्थाओं की गतिविधियों में कहीं नज़र नहीं आती। ऐसी कई टिप्पणियाँ विद्वान वर्ग के व्याख्यानों में सुनाई पड़ती हैं।

दक्षिण भारत में संपर्क भाषा के रूप में हिंदी के विकास तथा भारत में भावात्मक एकता की जड़ें सुदृढ़ करने में दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा का योगदान अविस्मरणीय है। सैकड़ों हिंदी लेखक, हज़ारों हिंदी प्राध्यापक सभा की सेवाओं की वजह से विकसित हुए हैं। इनकी सर्जना ने हिंदी साहित्य को सुसमृद्ध बनाया है। कई अनुवादक तैयार हो गए हैं जिनकी वजह से उत्तर-दक्षिण की भाषाओं में साहित्य का आदान-प्रदान हुआ है। सभा में केवल हिंदीतर-भाषी ही नहीं, बड़ी संख्या में हिंदी-भाषी भी अध्ययनरत हैं। अगले 2 वर्षों में सभा की एक सदी पूरी होने जा रही है। शताब्दी उत्सव की तैयारियाँ ज़ोरों पर हैं। गांधी जी द्वारा बीजारोपित इस संस्था के पीछे जो दर्शन है जो संकल्पनाएँ हैं, उनकी ओर निष्ठापूर्वक ध्यान देते हुए, उन्हें पुनः समालोचितकर सभा की गतिविधियों को पूरी निष्ठा, पारदर्शिता व पवित्रता के साथ संचालित करने की आवश्यकता है। आशा है इस दिशा में सभा को अवश्य स्फूर्ति मिलेगी। इस सभा का इतिहास, सभा के दीक्षित कार्यकर्ताओं का समर्पण व निष्ठा दुनिया के किसी भी देश में भाषा प्रचार के लिए अवलोकनीय व अनुकरणीय है, इसमें संदेह नहीं है।

''अगर स्वराज्य करोड़ों भूखे मरनेवालों, करोड़ों निरक्षरों, निरक्षर बहनों और दलितों व अंत्यजों का हो और इन सब के लिए होनेवाला हो तो हिंदी ही एकमात्र राष्ट्रभाषा हो सकती है।''

—पुदुचेरी, भारत
professorbabuji@gmail.com

39

भारत के हिंदी-प्रचारक बाबू श्यामसुंदर दास : एक सर्वेक्षण

—डॉ. राकेश कुमार दुबे

हिंदी भाषा के प्रचार-प्रसार एवं उसके साहित्य के उन्नयन, श्रीवृद्धि एवं विस्तार में भारत के जिन हिंदी सेवियों का महत्वपूर्ण योगदान था उनमें बाबू श्यामसुंदर दास का अति विशिष्ट स्थान रहा है। 19वीं सदी जो कि हिंदी के पुनरुत्थान की सदी कही जाती है, के उत्तरार्ध में भारतेंदु हरिश्चंद्र का उदय हुआ और उन्होंने अपने भाषण, लेखन एवं प्रकाशन द्वारा हिंदी की जो सेवा की एवं हिंदी के लिए जिस प्रकार अपना सर्वस्व न्योछावर कर दिया उसके फलस्वरूप वे 'आधुनिक खड़ी बोली हिंदी के जन्मदाता' कहे गए। भारतेंदु हरिश्चंद्र के बाद हिंदी भाषा एवं साहित्य के क्षेत्र में यदि कोई अग्रणी नाम आता है तो वह है—बाबू श्यामसुंदर दास का। बाबू श्यामसुंदर दास ने हिंदी को दफ़्तरों, अदालतों एवं विश्वविद्यालयों में स्थान दिलाने के लिए आंदोलन तो चलाया ही, साथ ही भारतीय एवं विदेशी विद्वानों में हिंदी को सम्मानपूर्ण स्थान दिलाने एवं हिंदी आंदोलन से इतर हिंदी भाषा और उसके साहित्य के विविध विधाओं को भी सब प्रकार से परिपूर्ण कर आधुनिक हिंदी के निर्माण का भी सराहनीय प्रयास किया था।

बाबू श्यामसुंदर दास (1875-1945 ई.) का जन्म आषाढ़ शुक्ल 11 संवत् 1932 वि. (14 जुलाई, 1875 ई.) को काशी में हुआ था।[1] इनके पूर्वज सप्त सैंधव प्रदेश (लाहौर) के रहनेवाले थे जो व्यापार करने के उद्देश्य से काशी आकर बस गए थे। इनके पिता का नाम देवीदास एवं माता देवकी देवी थीं। इनकी प्रारंभिक शिक्षा हनुमान-सेमिनरी स्कूल, बनारस में हुई। इनका विवाह अल्पायु में ही 1885 ई. में हो गया पर यह उनकी शिक्षा के लिए बाधक नहीं हुआ और बनारस के क्वींस कॉलेज से उन्होंने 1892 ई. में इंट्रेंस एवं 1897 ई. में बी.ए. पास किया।[2]

जब बाबू श्यामसुंदर दास इंटरमीडिएट में सेकंड ईयर के छात्र थे, तभी ठाकुर शिवकुमार सिंह, पं. रामनारायण मिश्र, बाबू गोपालप्रसाद खत्री इत्यादि छात्रों के साथ मिलकर उन्होंने 16 जुलाई, 1893 ई. को काशी नागरी प्रचारिणी सभा की स्थापना की[3] जो कि हिंदी के लिए वरदान और उनके जीवन के लिए युगांतकारी सिद्ध हुई। जिस समय सभा की स्थापना हुई उस समय हिंदी पट्टी में घोर निराशा व्याप्त थी, जैसा कि 'सरस्वती' पत्रिका ने अपना मत प्रकाशित किया था कि, ''यद्यपि अनेक बार के उद्योग-मार्ग में नैराश्य का घोर अंधकार पूर्णरूप से फैल रहा था और इस पथ के पथिक जन एक प्रकार से थक और आगे के मार्ग को अंधकाराच्छन्न देखकर उत्साहहीन हो मौन साधकर बीच ही में बैठ रहे थे कि अपने नए उत्साह और नए उद्योग-रूपी विद्युत-प्रकाश से उस तिमिर को क्रमशः छिन्न-भिन्न कर बिचारे उत्साहहीन पथिकों के भविष्यत मार्ग को प्रदर्शित करने की आकांक्षा से काशी धाम में एक सभा का जन्म हुआ।''[4] सभा की पहली बैठक में कुल 12 छात्र उपस्थित थे (जैसा कि चित्र में प्रदर्शित है) और इस संदर्भ में एक बात बहुत ही महत्वपूर्ण है कि इन छात्रों में से कई ने आजीवन हिंदी की सेवा की। बाबू गोपालप्रसाद, बाबू शिवकुमार सिंह, पं. रामनारायण मिश्र, श्यामसुंदर दास, उमराव सिंह, गंडा सिंह इत्यादि ने तो केवल भारत में ही हिंदी का प्रचार किया पर शंकरनाथ जो बाद में शंकरानंद नाम से आर्यसमाजी प्रचारक हुए, कितने ही उपनिवेशों में प्रवासी भारतीयों में हिंदी भाषा एवं भारतीय संस्कृति का प्रचार किया। जिस दिन सभा की स्थापना हुई उसी दिन बाबू श्यामसुंदर दास को सभा का मंत्री (सचिव) चुना गया और सभा के आरंभिक वर्षों का इतिहास एक प्रकार से बाबू श्यामसुंदर दास के कार्यों का इतिहास है। उनके नेतृत्व में सभा के जो उद्देश्य निर्धारित किए गए वे इस प्रकार थे[5]—

1. इस सभा के सभासदों का मुख्य कर्तव्य यह है कि नागरी

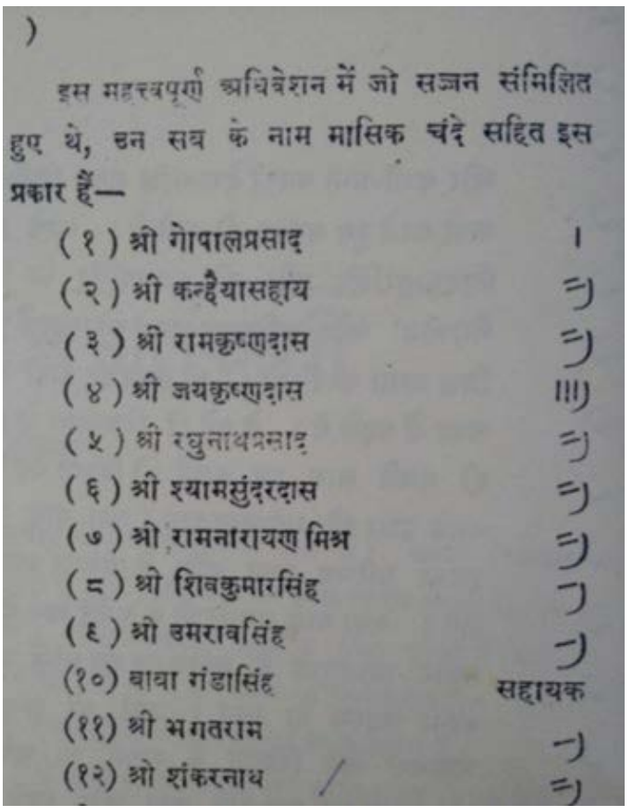

)

इस महत्त्वपूर्ण अधिवेशन में जो सज्जन संमिलित हुए थे, उन सब के नाम मासिक चंदे सहित इस प्रकार हैं—

(१) श्री गोपालप्रसाद ।
(२) श्री कन्हैयासहाय =)
(३) श्री रामकृष्णदास =)
(४) श्री जयकृष्णदास ।।।)
(५) श्री रघुनाथप्रसाद =)
(६) श्री श्यामसुंदरदास =)
(७) श्री रामनारायण मिश्र =)
(८) श्री शिवकुमारसिंह ।)
(९) श्री उमरावसिंह ।)
(१०) बाबा गंडासिंह सहायक
(११) श्री भगतराम ।)
(१२) श्री शंकरनाथ =)

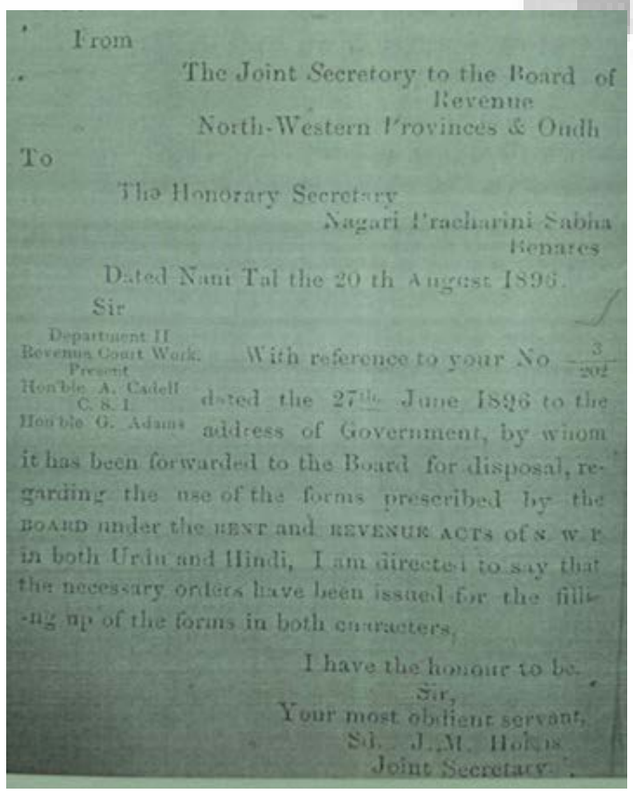

From
The Joint Secretory to the Board of Revenue
North-Western Provinces & Oudh
To
The Honorary Secretary
Nagari Pracharini Sabha
Benares
Dated Nani Tal the 20 th August 1896.
Sir
Department II
Revenue Court Work.
Present
Hon'ble A. Cadell C. S. I.
Hon'ble G. Adams
With reference to your No. 3/201 dated the 27th June 1896 to the address of Government, by whom it has been forwarded to the Board for disposal, regarding the use of the forms prescribed by the BOARD under the RENT and REVENUE ACTS of N. W. P. in both Urdu and Hindi, I am directed to say that the necessary orders have been issued for the filling up of the forms in both characters.
I have the honour to be,
Sir,
Your most obedient servant,
Sd. J. M. Holms
Joint Secretary.

भाषा से अपनी उन्नति करें। नागरी जाननेवाले इष्ट मित्रों से नागरी अक्षर और भाषा में पत्र-व्यवहार करें। लोगों की रुचि इस ओर आकर्षित करें।

2. नागरी लेख लिखने का अभ्यास करें और उन्हें सामयिक पत्रों में प्रकाशित करवाएँ।
3. इसके सभासद अन्य स्थानीय ना.प्र. सभाओं से पत्र-व्यवहार द्वारा एकता और मित्रता करें।
4. यथामाध्य दूसरे स्थानों में ऐसी सभा स्थापित करने का प्रयत्न करें।
5. दूसरी भाषा के उत्तम एवं उपयोगी ग्रंथों को हिंदी में अनुवाद करें।
6. परस्पर मित्रता और ऐक्य बढ़ाएँ।

जिस समय सभा की स्थापना हुई उस समय हिंदी की बिल्कुल भी पूछ नहीं थी। इस समय हिंदी में न तो कोई अच्छा व्याकरण, न कोई शब्दकोश और न ही हिंदी साहित्य का इतिहास था। हिंदी की लेख-प्रणाली और लिपि-प्रणाली भी अत्यंत दोषपूर्ण थी। हिंदी में वैज्ञानिक ग्रंथों एवं शब्दकोशों की बात सोचना कल्पना से परे था। अतएव बाबू श्यामसुंदर दास की अगुवाई में सभा ने प्रथम वर्ष में ही जिन कार्यों को अपने हाथ में लेने का निश्चय किया, उनमें हिंदी के प्राचीन हस्तलिखित ग्रंथों की खोज कराना, हिंदी के एक बड़े कोश का निर्माण, हिंदी भाषा के इतिहास का निर्माण, हिंदी उपन्यासों का निर्माण, भारतवर्ष का इतिहास तैयार कराना, यात्राओं के वर्णन तैयार कराना, हिंदी भाषा के सामयिक पत्रों का इतिहास लिखवाना, विज्ञान-मस्तिष्क विषयों के ग्रंथ लिखवाना एवं हिंदी के प्राचीन पद्य-ग्रंथों को प्रकाशित कराना इत्यादि बातें शामिल थीं।[6]

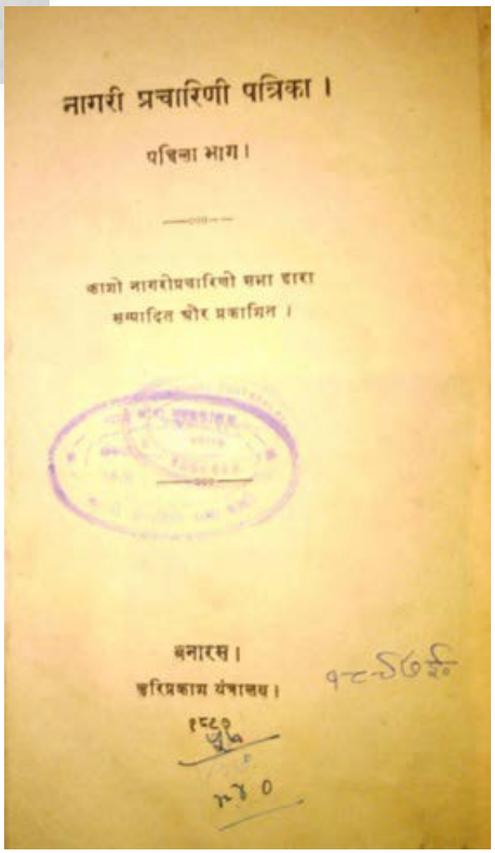
नागरी प्रचारिणी पत्रिका।

पहिला भाग।

काशी नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा
सम्पादित और प्रकाशित।

बनारस।
हरिप्रकाश यंत्रालय।

अपनी स्थापना के दूसरे वर्ष सभा ने सरकारी दफ़्तरों और कचहरियों में नागरी के प्रवेश के लिए आंदोलन आरंभ किया और प्रांतीय बोर्ड ऑव रेवेन्यू का ध्यान इस बात की ओर आकृष्ट किया कि सन् 1875 और 1881 के विधानों के अनुसार 'समन' आदि हिंदी और उर्दू दोनों में भरे जाने चाहिए[7] परंतु इस नियम का पालन नहीं होता। सभा ने इसके लिए एक आंदोलन आरंभ किया और बाबू श्यामसुंदर दास ने 'द नागरी कैरेक्टर' नामक एक पुस्तिका अंग्रेज़ी में छपवाकर जनता एवं सरकारी अधिकारियों में बँटवाई। इस आंदोलन का फल यह हुआ कि 20 अगस्त, 1896 के पत्र में प्रांतीय सरकार ने सभा को बताया कि सब ज़िलों के हाकिमों को सूचना दे दी गई है कि 'समन' आदि सब कागज़ हिंदी में भी जारी किए जाएँ।[8] इस प्रकार सभा माल विभाग में नागरी को प्रवेश दिलाने में सफल हो गई।

सभा के माध्यम से बाबू श्यामसुंदर दास का एक महत्वपूर्ण कार्य हिंदी को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर प्रचारित करना था। इससे पूर्व भारतेंदु हरिश्चंद्र ने हिंदी को पहली बार देश के बाहर पहचान दिलवाई थी।[9] जब 5 सितंबर, 1896 ई. को 'इंटरनेशनल कांग्रेस ऑव ओरिएंटलिस्ट' का 11वाँ अधिवेशन पेरिस में हुआ तो सभा ने विद्वानों का ध्यान हिंदी की ओर आकर्षित करने के उद्देश्य से एक पत्र और उसके साथ ही अंग्रेज़ी में एक लेख बाबू श्यामसुंदर दास से तैयार करवाकर भेजा जिसमें संक्षेप में हिंदी का इतिहास, हिंदी की उत्तमता, हिंदी में अत्यंत उपयोगी ग्रंथों का वर्तमान होते हुए भी अंधकार में पड़े रहना तथा एशियाटिक सोसाइटी के थोड़े से प्रयास से उत्तम ग्रंथों का पता चलना इत्यादि वर्णन लिख भेजा।[10] इस बात से अत्यधिक उत्साहित हो इसके थोड़े दिन बाद ही प्रो. सिल्वान लेवी जो प्राच्य-विभाग के अध्यक्ष थे, 1897 ई. में सभा में आए और उसके कार्यों को देखकर उसकी भूरि-भूरि प्रशंसा की।[11]

1896 ई. से 'नागरी प्रचारिणी' पत्रिका का प्रकाशन सभा ने आरंभ किया जिसका हिंदी के प्रचार से घनिष्ठ संबंध था और इस पत्रिका का संपादन व्यक्ति विशेष द्वारा नहीं वरन सुयोग्य संपादक मंडल द्वारा किया जाना आरंभ हुआ पर फिर भी पत्रिका के प्रधान संपादक, बाबू श्यामसुंदर दास ही थे। प्रथम अंक में ही बाबू श्यामसुंदर दास का 'भारतवर्षीय आर्य देश भाषाओं का प्रादेशिक विभाग और परस्पर संबंध' शीर्षक आलेख प्रकाशित हुआ जो कि एक लेख का अनुवाद था।[12] इसी प्रकार द्वितीय अंक में 'नागर जाति और नागरी लिपि की उत्पत्ति' तथा 'पश्चिमोत्तर प्रदेश तथा अवध में अदालती अक्षर और प्राइमरी शिक्षा'; तृतीय अंक में 'भारतवर्षीय भाषाओं की जाँच'; 5वें अंक में 'बीसलदेव रासो' (The Bisaldeo Raso) और 'हिंदी का आदि कवि' जैसे उनके उत्कृष्ट एवं शोधपरक लेख इसी पत्रिका में प्रकाशित हुए।[13] 4 वर्ष तक पत्रिका का संपादन इसी तर्ज़ पर हुआ। 5वें वर्ष पत्रिका का संपादन बाबू श्यामसुंदर दास ने परीक्षक-समिति के निरीक्षण में किया और 6ठे वर्ष संपादन स्वतंत्र रूप से किया। 8वें वर्ष उन्होंने ही पुन: संपादन किया।[14] 25वें वर्ष जब पत्रिका को विशुद्ध शोध-पत्रिका का रूप दिया गया तो उसके लिए जो संपादन मंडल नियत किया गया उसमें भी पं. गौरीशंकर हीराचंद ओझा, चंद्रधर शर्मा गुलेरी और मुंशी देवीप्रसाद के साथ बाबू श्यामसुंदर दास भी थे।[15] विद्वानों का मत है कि इस पत्रिका में ही सर्वप्रथम ऐतिहासिक, विश्लेषणात्मक एवं शोधपूर्ण लेखों का प्रकाशन किया गया। भाषा और साहित्य के साथ ही ज्ञान-विज्ञान को भी विशेष महत्व प्रदान कर हिंदी भाषा और साहित्य के उन्नयन

में यह पत्रिका मील का पत्थर सिद्ध हुई।

2 मार्च, 1898 ई. को सभा द्वारा इलाहाबाद में लेफ़्टिनेंट गवर्नर एंटनी मैकडॉनल को पश्चिमोत्तर प्रदेश तथा अवधवासी प्रजा की ओर से 60,000 हस्ताक्षरों की 16 ज़िल्दों तथा मालवीय जी की पुस्तक 'कोर्ट कैरेक्टर एंड प्राइमरी एजुकेशन इन नॉर्थ वेस्ट प्राविंसेस एंड अवध' की एक प्रति के साथ निवेदन पत्र अर्पण किया गया[16] जिसमें मुख्य रूप से यह बात कही गई कि अदालतों में नागरी-अक्षरों का प्रचार न होने से प्रजा विशेष कर ग्रामीण प्रजा को बड़ी असुविधा और कष्ट होता है तथा आरंभिक शिक्षा के प्रचार में बाधा उपस्थित होती है। इस विषय पर 2 वर्षों तक व्यापक आंदोलन होता रहा। इस विषय में सभा को आंशिक सफलता तब मिली जब लेफ़्टिनेंट गवर्नर ने 18 अप्रैल, 1900 ई. को अपने आज्ञा पत्र नं. 585/3-343सी-68, 1900 द्वारा कचहरियों और दफ़्तरों में नागरी के प्रयोग की अनुमति प्रदान कर दी।[17] इस संपूर्ण आयोजन में यदि किसी व्यक्ति का सर्वाधिक महत्वपूर्ण योगदान था तो वह था—बाबू श्यामसुंदर दास का। इस स्थान पर एक अति महत्वपूर्ण बात का उल्लेख कर देना समीचीन होगा। मालवीय जी ने जिस 'कोर्ट कैरेक्टर एंड प्राइमरी एजुकेशन इन नॉर्थ-वेस्ट प्राविंसेस एंड अवध' को लिखा था और जो इंडियन प्रेस, प्रयाग से 1897 ई. में प्रकाशित हुई थी, उसके महत्वपूर्ण अंशों को बाबू श्यामसुंदर दास ने 'पश्चिमोत्तर प्रदेश तथा अवध के न्यायालयों और सरकारी दफ़्तरों में नागरी अक्षरों का प्रचार और प्राइमरी शिक्षा' नाम से सार रूप में हिंदी में अनुवादित किया था जो हरिप्रकाश यंत्रालय, बनारस, से 1898 ई. में छपी थी। आज मालवीय जी की पुस्तक तो एक प्रकार से अप्राप्य है पर बाबू श्यामसुंदर दास का अनुवाद शोधकर्ताओं के लिए उपलब्ध है।

सन् 1900 ई. से इंडियन प्रेस, प्रयाग से 'सरस्वती' नाम की सचित्र हिंदी मासिक पत्रिका का प्रकाशन आरंभ हुआ और इसे प्रतिष्ठित करने का श्रेय नागरी प्रचारिणी सभा को ही है। सभा के अनुमोदन से 5 लोगों के संपादकत्व में जिसमें प्रधान संपादक बाबू श्यामसुंदर दास थे, यह पत्रिका निकली। भाषा एवं लिपि के परिष्कार एवं संवर्धन के साथ ही देशभाषा द्वारा देशवासियों को जागृत करना एवं उन्हें राष्ट्र-निर्माण हेतु प्रेरित करना इस पत्रिका के मूल में था। 3 वर्षों तक बाबू श्यामसुंदर दास ही इस पत्रिका के प्रधान संपादक रहे और उसके बाद जब महावीरप्रसाद द्विवेदी ने 'सरस्वती' पत्रिका के संपादक का पदभार ग्रहण किया तो बाबू श्यामसुंदर दास की हिंदी सेवा के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करते हुए लिखा था कि[18]—

''मातृ भाषा के प्रचारक, बिमल बी.ए. पास।
सौम्य शील निधान, बाबू श्यामसुंदर दास॥''

हिंदी के मानकीकरण में भी बाबू श्यामसुंदर दास का महत्वपूर्ण योगदान था। उस समय हिंदी की लेख प्रणाली के लिए कोई निश्चित नियम न था, साथ ही विभक्ति एवं प्रत्यय का झगड़ा भी हमेशा उपस्थित होता रहता था। इस कार्य के लिए सभा ने 1898 ई. में आठ प्रश्न भाषातत्ववेत्ताओं के पास भेजे और इन पर सम्मति संग्रह करने और विचार करने के लिए 11 चुने हुए विद्वानों की एक उप-समिति जिसमें बाबू श्यामसुंदर दास भी थे, गठित कर दी।[19] 2 वर्षों तक कठिन मेहनत और मत-संग्रह के बाद भाषा संबंधी सब-कमेटी की रिपोर्ट प्रकाशित हुई। इस रिपोर्ट में लेख एवं लिपि-प्रणाली कैसी होनी चाहिए, विभक्ति, प्रत्यय, बिंदु, चंद्रबिंदु इत्यादि का प्रयोग कैसे होना चाहिए के साथ ही साथ साधारण साहित्य एवं उच्च कोटि के साहित्य की भाषा कैसी होनी चाहिए; इन बातों का विस्तृत वर्णन था। इस रिपोर्ट में कुल 24 पृष्ठ हैं जिनमें पृष्ठ 1-17 तक रिपोर्ट, 18-19 तक परिशिष्ट है जिसमें 8 प्रश्न हैं और पृष्ठ 20-22 तक उत्तरदाताओं की नामावली है। उत्तरदाताओं की सूची में जहाँ भारत भर के प्रसिद्ध हिंदी विद्वान शामिल थे, वहीं विदेशी विद्वानों में जी.ए. ग्रियर्सन, मि. आर.ई. ग्रीब्ज, मि. जे.जी. ड्यान और डॉ. डबल्यू. हूपर सदृश लोग शामिल थे। इस रिपोर्ट की सर्वत्र प्रशंसा हुई और भारत के समस्त प्रांतों की शिक्षा-विभाग ने इसे हिंदी की लेख तथा लिपि-प्रणाली के मानक के रूप में स्वीकार कर लिया। यहाँ तक कि उर्दू की निवास-भूमि, पंजाब की टेक्स्ट बुक कमेटी ने भी सभा की भाषा संबंधी रिपोर्ट को स्वीकार कर लिया[20] और जो कि आज भी सर्वाधिक शुद्ध और परिष्कृत रूप में व्यवहार में प्रचलित है।

सन् 1900 ई. से सभा ने हिंदी की प्राचीन हस्तलिखित ग्रंथों की खोज आरंभ की। सभा की स्थापना के प्रथम वर्ष में ही इसके संचालकों का ध्यान इस विषय की ओर आकर्षित हुआ था पर उस समय सभा यह कार्य न कर सकी थी।[21] 1900 ई. में सभा ने अपने प्रधान स्तंभ बाबू श्यामसुंदर दास के निरीक्षण में खोज विभाग की स्थापना की और पहले ही वर्ष बनारस, रीवाँ, जयपुर, लखनऊ, कालपी, आगरा और मथुरा में खोज कार्य किए गए, जिनमें 169

ग्रंथों की रिपोर्ट की गई जो कि 12वीं सदी से लेकर 19वीं सदी तक के थे।[22]

1901 ई. में भी खोज कार्य बाबू श्यामसुंदर दास के निरीक्षण में ही हुआ जिसमें 250 पुस्तकों का पता चला। जब इन पुस्तकों की खोज का विवरण जो बाबू श्यामसुंदर दास द्वारा तैयार किया गया था, सरकार ने प्रकाशित कर इसकी प्रतियाँ देश-विदेश के विद्वानों के पास भेजा तो डॉ. रुडाल्फ हार्नली, डॉ. ग्रियर्सन, श्री ग्रिफिथ, श्री बार्थ, डॉ. पिशेल आदि विद्वानों ने बाबू श्यामसुंदर दास को व्यक्तिगत रूप से पत्र लिखकर इन रिपोर्टों की बहुत प्रशंसा की।[23] बाबू श्यामसुंदर दास ने 1900 एवं 1901 के अलावा 1902-1905 ई. की वार्षिक और 1906-08 की त्रैवार्षिक खोज-रिपोर्ट भी तैयार की थी।[24] सभा ने हिंदी हस्तलिखित ग्रंथों की खोज का जो कार्य किया उसके फलस्वरूप प्रभूत ग्रंथ प्रकाश में आए। इस प्रकार सभा के माध्यम से बाबू श्यामसुंदर दास ने उद्योग कर प्राचीन अलभ्य, दुष्प्राप्य भाषा पुस्तकें जो लुप्तप्राय हो मुमूर्षादशा को प्राप्त हो रही थीं, अनुसंधान कर जनसाधारण के सम्मुख उपस्थित कर उन्हें अमरत्व पदवी प्रदान की।

बाबू श्यामसुंदर दास द्वारा हिंदी में शब्दकोशों के अभाव की पूर्ति का प्रयास भी सराहनीय था। हिंदी में विज्ञान के पारिभाषिक शब्दों के अभाव की पूर्ति के लिए सभा ने 1898 ई. में जिस 'हिंदी वैज्ञानिक कोश' को बनाने का उद्योग आरंभ किया उसके प्रधानकर्ता बाबू श्यामसुंदर दास ही थे। भिन्न-भिन्न विद्वानों से परामर्श करने और उसकी सम्मति एवं सहानुभूति प्राप्त करने के उद्देश्य से ही बाबू श्यामसुंदर दास कोलकाता भेजे गए थे जहाँ उन्होंने जगदीशचंद्र बोस, प्रफुल्लचंद्र राय और रामेंद्रसुंदर त्रिवेदी से मिलकर परामर्श किया था।[25] 30 जून, 1906 ई. को 8 वर्षों के निरंतर उद्योग और अनेक विद्वानों के सहयोग से यह कार्य पूर्ण हुआ। इस शब्दकोश के लिए चयनित 6 विषयों में से भूगोल विद्या के शब्दों को बाबू श्यामसुंदर दास ने ही तैयार किया था और इसके लिए जो 'रिविजन कमेटी' एवं 'एडिटोरियल कमेटी' बनी थी उन सभी में ये शामिल तो थे ही, अंत में उसका संपादन भी उन्हें ही करना पड़ा और उसकी भूमिका भी उन्होंने ही लिखी जो कि बहुत ही ज्ञानवर्धक एवं अपने आपमें बेजोड़ है। इस कोश के प्रकाशित होने पर देश भर के विद्वानों और सभा समाजों से सभा को बधाई पत्र प्राप्त हुए। यहाँ तक कि इंग्लैंड के वैज्ञानिक पत्रों में भी इस कृति की सुंदर समालोचना हुई।[26] भारतीय भाषाओं में वैज्ञानिक कोश होने का सर्वप्रथम सौभाग्य नागरी प्रचारिणी सभा के उद्योग से हिंदी को ही प्राप्त है। इस कोश का एक संस्करण कन्नड़ में प्रकाशित हुआ, गुजराती और मराठी के कोशों में इसके शब्द सम्मिलित होने लगे और मद्रास की भाषाओं में जो विज्ञान विषयक ग्रंथ उस समय लिखे गए उनमें इसी कोश से सहायता ली गई। इस कोश को बनाने में यदि प्रमुख योगदान किसी व्यक्ति का था तो वे थे बाबू श्यामसुंदर दास।

1907 ई. में सभा ने 'हिंदी-शब्दसागर' नामक विशाल शब्दकोश बनाने का कार्य आरंभ किया। 9 सितंबर, 1907 ई. को रेवरेंड ई. ग्रीब्ज द्वारा सभा की प्रबंध कारिणी समिति में यह विचार उपस्थित किया गया कि 'सभा हिंदी के एक बड़े और पूर्ण कोश बनाने का भार अपने ऊपर ले और साथ ही उसकी कार्य-प्रणाली के विषय में भी अपने विचार प्रकट किए।[27] इस कार्य के लिए एक उपसमिति बनी और उसी के आधार पर कोश-निर्माण का कार्य किया गया। इस कार्य में हिंदी के भारतीय एवं विदेशी सभी विद्वानों का सहयोग लिया गया। 22 वर्षों के निरंतर प्रयास एवं 108720 रु. की लागत से 1929 ई. में जब यह प्रकाशित हुआ तो इसका भी कुशल संपादन बाबू श्यामसुंदर दास ने ही किया।[28] यह शब्दकोश अत्यंत प्रामाणिक और ब्रिटिश, अमेरिकी एवं रूसी शब्दकोशों की समकक्षता रखता और इसके समान कोई हिंदी शब्दकोश आज तक प्रकाशित नहीं हुआ। हिंदी शब्दसागर के निर्माण में बाबू श्यामसुंदर दास के योगदान का महत्व इसी बात से हो जाता है कि जब 1909 ई. में उनकी नियुक्ति कश्मीर राज्य में हो गई तो एक से बढ़कर एक हिंदी विद्वानों के काशी में रहते हुए भी 15 मार्च, 1910 ई. को काशी में कोश-कार्यालय बंद कर दिया गया तथा उसे कश्मीर भेजा गया और उनके सहायतार्थ सहायक संपादक के रूप में पं. रामचंद्र शुक्ल, पं. बालकृष्ण भट्ट और बाबू अमीरसिंह कश्मीर भेजे गए थे।[29]

बाबू श्यामसुंदर दास का 'हिंदी साहित्य सम्मेलन' के प्रथम अधिवेशन से ही घनिष्ठ संबंध था क्योंकि उन्हीं के प्रस्ताव पर प्रथम सम्मेलन का आयोजन अक्टूबर 1910 ई. में नागरी प्रचारिणी सभा, काशी में हुआ था।[30]सम्मेलन के दूसरे दिन 11 अक्टूबर को सम्मेलन का 6ठा प्रस्ताव उन्होंने ही उपस्थित किया था, जिसमें 'प्रांतों की टेक्स्ट बुक कमेटियों में हिंदी की प्रधान सभाओं को अपना प्रतिनिधि भेजने का प्रस्ताव था' और इस पर एक लंबी वक्तृता दी थी।[31] इतना ही नहीं, अनेक विद्वानों एवं लब्धप्रतिष्ठ व्यक्तियों के

होते हुए भी समापन सत्र के धन्यवाद ज्ञापन का कार्य भी उन्हीं को सौंपा गया था जिसमें उन्होंने सभापति को धन्यवाद देते हुए कहा था, ''सज्जनो, आज 3 दिन से हम लोग इस हिंदी साहित्य सम्मेलन की नींव डालने और हिंदी की उन्नति के उपायों पर विचार करने में लगे हुए हैं। इसमें संदेह नहीं है कि हिंदी के सौभाग्य में यह पहला अवसर है कि उसके प्रेमियों का सम्मेलन हो और मित्र भाव से मिलकर अपनी मातृ भाषा की उन्नति में दत्तचित्त हों। यद्यपि सम्मेलन होने के कुछ काल पूर्व कहीं-कहीं यह आशंका उठी थी कि यह सम्मेलन सफलतापूर्वक न हो सकेगा पर हमारे लिए यह अत्यंत आनंद और अभिमान की बात है कि आप महानुभावों ने यहाँ आकर इस आशंका को समूल नष्ट कर दिया है।''[32]

बाबू श्यामसुंदर दास को 1915 ई. में प्रयाग में आयोजित 6ठे हिंदी साहित्य सम्मेलन का सभापति चुना गया। 22 दिसंबर को उन्हें इस बात की सूचना दी गई कि 29 दिसंबर को आयोजित सम्मेलन की उन्हें अध्यक्षता करनी है।[33] केवल 6 दिनों में उन्होंने जो भाषण तैयार किया था उसे सुनकर लोग चकित रह गये थे। अपने डेढ़ घंटे के अध्यक्षीय भाषण में उन्होंने कहा था कि, ''प्रिय सज्जनो, मैं उस आनंद को जो हिंदी की हितकामना के प्रवाह में निमग्न इस समाज को देख मेरे हृदय में उमड़ रहा है, अपने असमर्थ शब्दों में व्यंजित करने का निष्फल प्रयास छोड़, आप महानुभावों से उसका पूर्ण आभास अपने ही अंत:करण में देखने का अनुरोध करता हूँ क्योंकि आज का यह अवसर ही ऐसा है कि जो भाव एक का है वहीं दूसरे का है जो उद्देश्य एक का है वहीं दूसरे का है।''[34] अपने भाषण के अंत में उन्होंने जो अत्यंत ही मर्मस्पर्शी अपील हिंदी के लिए की थी वह बहुत ही महत्वपूर्ण थी जिसमें उन्होंने कहा था कि, ''क्या आप लोगों ने कभी शुद्ध हृदय से इस बात पर विचार किया है कि माता, मातृभूमि और मातृ भाषा का आप पर कुछ ऋण है भी या नहीं? एक जननी आपको जन्म देती है, एक की गोद में खेलकूद और खा पीकर आप पुष्ट होते हैं और एक आपको अपने भावों को प्रकट करने की शक्ति दे आपके सांसारिक जीवन को सुखमय बनाती है। जिनका आप पर इतना उपकार है, क्या उनके लिए कुछ करना आपका परम कर्तव्य नहीं है? प्यारे भाइयो, उठो, आलस्य को छोड़ो, कमर कसो और अपनी मातृ भाषा की सेवा में तत्पर हो जाओ। अपने को मातृ-ऋण से मुक्त करो। संसार में सपूत कहलाओ और मातृ-सेवकों में अपनी छाप छोड़ जाओ। ...और मातृ भाषा की सेवा कर आप उससे उऋण हो सकते हैं।''[35] अपने भाषण के उपरांत उन्होंने 8 प्रस्ताव उपस्थित किए और उनपर भी लंबी वक्तृताएँ दी थीं। वे 36वें सम्मेलन से सदैव जुड़े रहे और उसके अधिकांश अधिवेशनों में उन्होंने सक्रिय सहभागिता भी की।

1921 ई. में बाबू श्यामसुंदर दास की नियुक्ति काशी हिंदू विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग में हुई। विभाग में पद ग्रहण करते ही उनके सामने 2 प्रमुख समस्याएँ उपस्थित हुईं—एक तो अध्ययन-अध्यापन एवं परीक्षा का माध्यम अंग्रेज़ी होती थी और दूसरी, पढ़ाने के लिए उपयुक्त पाठ्य-पुस्तकों का अभाव था। इस समय हिंदी में भाषाविज्ञान, हिंदी साहित्य का इतिहास एवं आलोचनाशास्त्र का नितांत अभाव था।[37] अतएव इस कमी को पूरा करने के लिए उन्होंने 'साहित्यालोचना', 'भाषाविज्ञान', 'हिंदी भाषा का विकास', 'गद्यकुसुमावली' इत्यादि ग्रंथ लिखे। बाबू श्यामसुंदर दास ने इन ग्रंथों के अलावा अपने जीवन काल में 'भारतेंदु हरिश्चंद्र', 'भाषा रहस्य', 'हिंदी भाषा', 'गोस्वामी तुलसीदास', 'रूपक रहस्य' और 'मेरी आत्मकहानी' सदृश कितनी ही पुस्तकें लिखीं और साथ ही हिंदी शब्दसागर, हिंदी वैज्ञानिक कोश, हिंदी हस्तलिखित ग्रंथों की खोज के अलावा कितनी ही ग्रंथमालाओं का कुशल संपादन कर हिंदी के भंडार को सब प्रकार से परिपूर्ण किया।

बाबू श्यामसुंदर दास आजीवन हिंदी से जुड़े रहे। काशी की नागरी प्रचारिणी सभा के वे संस्थापक और प्रमुख स्तंभ थे। सभा के सभी प्रमुख आयोजनों में उनका महत्वपूर्ण योगदान था। वे सभा को अपनी पुत्री मानते थे और इस कारण सभा का कभी पानी तक नहीं पीते थे। सभा के प्रति उनका समर्पण इसी बात से स्पष्ट हो जाता है कि यद्यपि उनका जन्मदिन 14 जुलाई का था पर वे अपना जन्मदिन सभा के जन्मदिन अर्थात 16 जुलाई को मनाने लगे थे। उनकी हिंदी सेवा से प्रभावित होकर भारत की अंग्रेज़ी सरकार ने उन्हें 1921 ई. में 'रायसाहब' एवं 1933 ई. में 'रायबहादुर' की पदवी प्रदान की। हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग ने 1938 ई. में उन्हें 'साहित्य वाचस्पति' की पदवी से तथा काशी हिंदू विश्वविद्यालय ने डीलिट की उपाधि से विभूषित किया।[38] राष्ट्र कवि मैथिलीशरण गुप्तजी ने डॉ. श्यामसुंदर दास के हिंदी के लिए किए गए कार्यों की समालोचना करते हुए लिखा कि—

''मातृ भाषा के हुए जो विगत वर्ष पचास।
नाम उनका एक ही है—श्यामसुंदर दास।''

बाबू श्यामसुंदर दास ने 50 वर्षों से अधिक समय तक हिंदी की सेवा की थी जिस प्रकार आयरलैंड के डी. वेलेरा ने 50 वर्षों से अधिक समय तक आयरिश भाषा की सेवा की थी। वे हिंदी के लिए जिए और उसका हितसाधन ही आजीवन उनका लक्ष्य रहा। उनकी हिंदी सेवा के कारण ही विद्वानों ने उन्हें 'साहित्यकारों के नेता'; 'आधुनिक हिंदी के उन्नायक'; 'आधुनिक हिंदी के निर्माता'; 'भाषाविज्ञान के पुरोधा' इत्यादि कितनी ही उपमाएँ प्रदान कीं। अत: इस बात में कोई संदेह नहीं कि यदि भारतेंदु हरिश्चंद्र आधुनिक हिंदी के जन्मदाता थे तो बाबू श्यामसुंदर दास निस्संदेह आधुनिक हिंदी के निर्माता थे और आजीवन उन्होंने उसका प्रचार किया।

संदर्भ सूची–

1. दास, श्यामसुंदर सं. मेरी आत्मकहानी, इंडियन प्रेस, प्रयाग, 1941 ई., पृ-10
2. वही, पृ-14
3. शास्त्री, वेदव्रत, नागरी प्रचारिणी सभा का अर्ध-शताब्दी का इतिहास, ना.प्र. सभा, काशी, सं. 2000 वि., पृ-5, 7
4. सरस्वती पत्रिका, भाग-1, अंक-4, 1900 ई., इंडियन प्रेस, इलाहाबाद, पृ-3
5. नागरी प्रचारिणी सभा, काशी का प्रथम वार्षिक विवरण 1893-94 ई., पृ-16; भारत जीवन पत्र (साप्ताहिक), 14 अगस्त, 1893 ई., भारत जीवन कार्यालय, बनारस सिटी, पृ-7
6. नागरी प्रचारिणी सभा, काशी का प्रथम वार्षिक विवरण 1893-94 ई., पृ-9-10
7. काशी नागरी प्रचारिणी सभा का द्वितीय वार्षिक विवरण 1894-95 ई., दि चंद्रप्रभा प्रेस कं.लि., 1895, पृ-5
8. काशी नागरी प्रचारिणी सभा का चतुर्थ वार्षिक विवरण 1896-97 ई., हरिप्रकाश प्रेस, बनारस, 1897, पृ-4
9. गोपाल, मदन, भारतेंदु हरिश्चंद्र, राजपाल एंड संस दिल्ली, 1976 ई., पृ-34
10. काशी नागरी प्रचारिणी सभा का चतुर्थ वार्षिक विवरण 1896-97 ई., पृ-8
11. काशी नागरी प्रचारिणी सभा का पंचम वार्षिक विवरण 1897-98 ई., हरिप्रकाश प्रेस, बनारस, 1898, पृ-2
12. पांडे, पद्माकर, पत्रकारिता और सभा, नागरी प्रचारिणी सभा, 2053 वि., पृ-31
13. द रिपोर्ट ऑव द नागरी प्रचारिणी सभा ऑव बनारस फ्रॉम 1893-1902, नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस, 1902, पृ-21-23
14. शास्त्री, वेदव्रत, नागरी प्रचारिणी सभा का अर्ध-शताब्दी का इतिहास, पृ-177
15. पांडे, पद्माकर, पत्रकारिता और सभा, पृ-51
16. भारत जीवन (साप्ताहिक) 5 मार्च, 1898 ई., पृ-2-3
17. 'सरस्वती' पत्रिका, भाग-1, संख्या-4, 1900 ई., पृ-127-126; अर्ध-शताब्दी का इतिहास, पृ-130; ग्रीब्ज, आर.ई., हिंदी एंड द नागरी प्रचारिणी सभा, इंडियन प्रेस, इलाहाबाद, 1907, पृ-5
18. 'सरस्वती' पत्रिका, भाग-4, अंक-1, 1903 ई., विविध विषय शीर्षक प्रथम संपादकीय अग्रलेख
19. नागरी प्रचारिणी सभा का पंचम वार्षिक विवरण 1897-98 ई., पृ-7, मेरी आत्मकहानी, पृ-63, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी की भाषा संबंधी सब-कमेटी की रिपोर्ट, 1900 ई., प्रकाशन ज्ञात नहीं, पृ-2
20. भारत जीवन, 30 सितंबर, 1901 ई., पृ-6
21. नागरी प्रचारिणी सभा काशी का प्रथम वार्षिक विवरण 1893-94 ई., पृ-9
22. दास, श्यामसुंदर एडि. एनुअल रिपोर्ट ऑन द सर्च फ़ॉर हिंदी मैनुस्क्रीप्ट फ़ॉर द इयर 1900, युनाइटेड प्राविंस, गवर्नमेंट प्रेस, इलाहाबाद,1901, पृ-1
23. दास, श्यामसुंदर सं. मेरी आत्मकहानी, पृ-94-107; नागरी प्रचारिणी सभा का अर्ध-शताब्दी का इतिहास, पृ-92
24. नागरी प्रचारिणी सभा का अर्ध-शताब्दी का इतिहास, पृ-108-109
25. दास, श्यामसुंदर एडि. द हिंदी साइंटिफिक ग्लॉसरी, मेडिकल हॉल प्रेस बनारस, 1906, प्रीफ़ेस, पेज 13-14; दास, श्यामसुंदर सं. मेरी आत्मकहानी, पृ-54
26. दास, श्यामसुंदर सं. मेरी आत्मकहानी, पृ-62
27. शास्त्री, वेदव्रत, नागरी प्रचारिणी सभा का अर्ध-शताब्दी का इतिहास, पृ-183
28. वही, पृ-188
29. दास, श्यामसुंदर सं. हिंदी शब्दसागर, नवीन संस्करण, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, सं. 2042 वि., भूमिका पृ-4
30. शास्त्री, वेदव्रत, नागरी प्रचारिणी सभा का अर्ध-शताब्दी का इतिहास, पृ-194
31. प्रथम हिंदी साहित्य सम्मेलन काशी का कार्य विवरण-पहला भाग, हितचिंतक प्रेस, बनारस सिटी, 1911 ई., पृ-41
32. वहीं, पृ-76
33. षष्ठ हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग का कार्य विवरण पहला भाग, स्टैंडर्ड प्रेस, इलाहाबाद, सं. 1974 वि., पृ-15; वाजपेयी, किशोरीदास, राष्ट्रभाषा का इतिहास, जनवाणी प्रकाशन, कलकत्ता, 2007 वि., पृ-20
34. षष्ठ हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग का कार्य विवरण पहला भाग, पृ-13
35. वहीं, पृ-34
36. वहीं, पृ-35-41
37. दास, श्यामसुंदर सं. मेरी आत्मकहानी, पृ-139;
38. सम्मेलन पत्रिका, भाग-61, संख्या 2, 3, 4, शक 1897, हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, पृ-69

वाराणसी, भारत

इ-मेल : rkdhistory@gmail.com

40

मेरे देश की हिंदी संस्था : हिंदी शिक्षा संघ, दक्षिण अफ्रीका

—श्रीमती मालती रामबली

बीज से फल तक

हर नदी सागर की तरफ़ बहती है और उसी में जाकर मिल जाती है। बूँदों को अलग नहीं किया जा सकता है। भाषा की मिठास पवित्र पानी से कम नहीं है। शायद यही सोचकर भारत में पैदा हुए पंडित नरदेव वेदालंकार ने दो विचार के लोगों को समेटकर हिंदी शिक्षा संघ की स्थापना की। ये दो विचार थे, श्री सनातन धर्म सभा और आर्य प्रतिनिधि सभा जिनके सदस्य हिंदी-भाषी थे। एक समय दक्षिण अफ्रीका में हिंदी बोली जाती थी। भाषा को बचाने के लिए, उसकी रक्षा के लिए 1948 में हिंदी शिक्षा संघ स्थापित किया गया।

अब, यानी वर्तमान में हिंदी जीवित है। अफ़सोस की बात यह है कि शहर-शहर में हिंदी नहीं बोली जाती है लेकिन इस साल 587 विद्यार्थियों ने परीक्षा दी। यहाँ तो रोज़ी-रोटी के लिए लोग अंग्रेज़ी बोलते हैं। सांस्कृतिक बाधा (Cultural Embargo) के कारण हम सांस्कृतिक तौर से भारत से बिछड़ गए लेकिन हमारे लोगों में जो मार्गदर्शक थे, हम उन्हें कैसे धन्यवाद दे सकेंगे? उनके प्रयास और परिश्रम से हिंदी आज जीवित है।

पंडित जी और उनके साथियों ने एक बीज बोया। यह बीज सालों के परिश्रम से सींचा गया। कभी बाढ़ आई तो कभी सूखापन। इन हालातों को झेलकर लोगों ने हिंदी बचाई और अब यह पेड़ बढ़ गया है और हमें इसकी देख-भाल करनी है, इसकी रक्षा करनी है।

पेड़ है, जड़ है तो टहनियाँ भी होंगी। हिंदी शिक्षा संघ की कई पाठशालाएँ हैं—जोहांसबर्ग से डरबन तक, ईस्ट लंदन से न्यूकैसल तक। हमारी पाठशालाएँ शहर-शहर में हैं। लोग सोचते हैं कि फूल भंगुर हैं, पेड़ से गिर जाने से मुरझा जाएँगे मगर ये हिंदी के योद्धा मुरझा जानेवालों में से नहीं हैं, ये मज़बूत हैं क्योंकि ये जानते हैं कि इनके बिना हिंदी नहीं रह पाएगी। हमारे अध्यापक तथा अध्यापिकाएँ पाठशालाएँ चलाते हैं ताकि पंडित जी का बोया हुआ पेड़ हर तूफ़ान का मज़बूती से सामना कर सके।

अब आते हैं फूल वाह! और किस तरह के फूल। हर रंग के, हर स्वभाव के, अलग भी हैं और एक भी हैं। ये हमारे विद्यार्थी हैं। माँ और बेटा एक ही कक्षा में पढ़ते हैं। कारण 2 हैं। एक है कि माँ को हिंदी सीखने का मौका नहीं मिला और दूसरी वजह है कि माँ को ऐसा लगता है कि उनके बच्चों को हिंदी सीखनी चाहिए ताकि वे अपनी संस्कृति कभी न भूलें। हाँ यह सच है कि संख्या और हो सकती है, मगर यह देश-देश में हो रहा है। हमें गर्व है कि हालाँकि हिंदी-शिक्षण के मार्ग में बाधाएँ थीं फिर भी वे दूसरी पीढ़ी के लिए मार्गदर्शक बने ताकि हिंदी की अस्मिता बनी रहे। फल तो हर विद्यार्थी, हर अध्यापक तथा हर अध्यापिका का परिश्रम है। सब्र का फल तो मीठा होता है। जब लोग 'रामचरितमानस' को देवनागरी लिपि में पढ़ते हैं तब उन्हें पता चलता है कि सब्र का और परिश्रम का फल कितना मीठा होता है।

हम हिंदी को कैसे बचाएँ? हिंदी का झंडा लहराता है और हिंदी को वही पद देना है जिसका वह हकदार है। यह तभी हो सकता है जब हम हिंदी को जीवित रखेंगे। हिंदी को सिर्फ़ जीवित नहीं रखना है बल्कि हिंदी के साथ-साथ हमें अपनी संस्कृति को भी जीवित रखना है। 'भाषा गई तो संस्कृति गई, संस्कृति गई तो पहचान गई।'

जैसे साल बीतते गए हिंदी शिक्षा संघ में कुछ बदलाव आए। पहले हम वर्धा की परीक्षा देते थे। अब सारी परीक्षाएँ यहीं ली जाती हैं। यह हमारे शिक्षक दल का काम है। यह दल पाठ्यक्रम तैयार करता है। हर पाठशाला के विद्यार्थियों को इसी पाठ्यक्रम के हिसाब से सिखाया जाता है और एक साथ ही परीक्षा दी जाती है। इस दल के सदस्य कार्यशालाएँ आयोजित करते हैं ताकि अन्य अध्यापकों तथा अध्यापिकाओं को प्रोत्साहन मिल सके और मदद भी। वे वर्कशॉप के लिए जोहांसबर्ग भी जाते हैं। महीने में एक शनिवार को ट्यूटोरियल्स रखे जाते हैं। इस दल को संघ का यंत्र (Engine) कहा जाता है क्योंकि उनके बिना हिंदी फैलाई नहीं जा सकती। इनकी मेहनत और परिश्रम से लोग हिंदी सीखते हैं।

दूसरे दल हैं हमारे सांस्कृतिक दल। हिंदी शिक्षा संघ के 2 लक्ष्य हैं—एक हिंदी का प्रचार और दूसरा है संस्कृति-संरक्षण। हर साल हम प्रतियोगिता आयोजित करते हैं जहाँ बच्चों से वयस्क व्यक्ति तक भाग लेते हैं। यहाँ कविता, पद्य, नाटक, गाना और नृत्य पेश किए जाते हैं। साथ-साथ लोग रामायण पाठ, गीता पाठ और वेद मंत्र पाठ करते हैं। कई अध्यापक तथा अध्यापिकाएँ खुद अपने नाटक लिखते हैं। प्रतियोगिता के दिन मंच पर हिंदी गूँज उठती है। प्रतियोगिता के अलावा मौका मिलते ही यह दल अन्य लोगों को भी

हमारी संस्कृति के बारे में जानकारी देता है।

1998 में जब डॉ. हेमराज प्रधान थे तब उन्होंने और उनके साथियों ने सोचा कि हम एक रेडियो स्टेशन क्यों नहीं चलाएँ और जन्म हुआ, रेडियो 'हिंदवाणी' का। 'हिंदवाणी' एक सामाजिक रेडियो स्टेशन है जो हिंदी शिक्षा संघ का एक अंग है। सामाजिक स्टेशन का मतलब है कि उसे विज्ञापन से ही चलाया जाता है। उसके प्रस्तुतिकार स्वयंसेवक और स्वयंसेविकाएँ हैं। हमारे कार्यक्रम अर्चना से लेकर सैरवाणी तक, नारी वाणी से लेकर चटनी और भंगड़ा तक, हरेक आयु के लिए, हर हिंदी प्रेमी के लिए होते हैं। हालाँकि यह स्टेशन सिर्फ़ डरबन और पीटरमैरिट्सबर्ग तक प्रसारित है फिर भी 'ऑडियो स्ट्रीमिंग' के ज़रिए सारी दुनिया में लोग 'हिंदवाणी' सुन सकते हैं। लोग धार्मिक कार्यक्रमों से कुछ लाभ उठाते हैं और रेडियो से मनोरंजन भी पाते हैं।

हम भाग्यशाली हैं कि कई बड़े गायक तथा गायिकाएँ, कवि तथा कवयित्री एवं आई.टी. के महापुरुषों ने यहाँ आकर हमें प्रोत्साहित किया।

हमें पता है कि और बहुत कुछ करना है मगर ईश्वर से यही प्रार्थना है कि वे हमें शक्ति दें और हिंदी शिक्षा संघ ऐसे हाथों में सौंप दिया जाए जहाँ हिंदी सुरक्षित रहे।

जो हमारे बस की बात है, हम कर सकते हैं लेकिन दक्षिण अफ्रीका में कुछ चुनौतियाँ हैं जो हमारे काम को और अधिक बढ़ा देती हैं।

पहली है दक्षिण अफ्रिका में हिंदी का स्थान। यहाँ चार वंश हैं। इन वंशों में अलग-अलग धर्म एवं भाषाएँ हैं। कुल मिलाकर भारतीय लोगों की जनसंख्या सिर्फ़ दो प्रतिशत है। भारतीयों में हिंदी, तमिल, तेलुगू, उर्दू और गुजराती भाषाओं के सदस्य हैं। जब हम मिलते हैं तब सभी अंग्रेज़ी बोलते हैं क्योंकि सब अंग्रेज़ी जानते हैं। कौन किस भाषा में बोले? हमारी सरकारी पाठशालाओं में सभी वंश के बच्चे जाते हैं। हिंदी शिक्षा संघ द्वारा हम स्कूल के बाद सब को पढ़ाते हैं। इसीलिए दादा-दादी, पोता-पोती, एक ही कक्षा में पढ़ते हैं। हमारी अभिलाषा यही है कि लोग बाहर कोई भी भाषा बोलें मगर घर में हिंदी बोलें। यह भी एक बड़ी समस्या है क्योंकि बच्चों के स्कूल का काम बढ़ गया है और हिंदी सीखने के लिए समय कम है।

दूसरी बात है कि लोग धर्म और भाषा को अलग दृष्टि से नहीं देखते हैं। अगर आप किसी से बोलें कि हिंदी सीखो तो तुरंत उसके मन में यही विचार आता है कि उसे हिंदू बनाया जा रहा है। हमारी संख्या इतनी कम है कि सब अपनी भाषा को सुरक्षित रखना चाहते हैं लेकिन जोहांसबर्ग में कुछ लोग हैं जो भारतीय नहीं हैं लेकिन वे हिंदी सीखते हैं।

तीसरी बात है कि लोग हिंदी में लिखते हैं, हिंदी पढ़ते हैं लेकिन कम बोलते हैं। इस समस्या को कैसे टाला जाए? जब हम हिंदी में बोलते हैं तब हम हिचकिचाते हैं, यही सोचकर कि कौन हमारे प्रयास पर हँसेगा मगर बहुत लोग हिंदी समझते हैं। वे हिंदी फ़िल्म देखते हैं, भजन और फ़िल्मी गाने गाते हैं। हिंदी को न समझने और पढ़ने से कभी कुछ गलतियाँ होती हैं। उच्चारण कभी गलत होता है। यहाँ मन में दो विचार आते हैं। एक है कि ये लोग अपने आपको क्या समझते हैं, ये नहीं जानते हैं कि ये क्या बोल रहे हैं और दूसरा है कि लोग कोशिश तो कर रहे हैं। अगर वे हिंदी में गाने की कोशिश करेंगे तो मान लो कि वे हिंदी के प्रति रुचि रखेंगे। गलतियों को ज़रूर सुधारना है। मेरे मन में यही विचार है कि अगर वे गलत गाते भी तो वे भविष्य में कभी-न-कभी समझ जाएँगे और इस तरह से अपने-आप को सुधार सकेंगे।

चौथी बात यह है कि हम अंग्रेज़ी को श्रेष्ठ समझते हैं, इसीलिए अंग्रेज़ी में ज़्यादा बात करते हैं। मैं तो अंग्रेज़ी को सौतेली माँ की नज़र से देखती हूँ। हमारी मातृ भाषा हिंदी होनी चाहिए साथ-साथ हमें अंग्रेज़ी भी सीखनी है, हमारी आर्थिक परिस्थिति के लिए। हम क्यों नहीं दोनों माताओं को मान-सम्मान दें, क्या यह हो सकता है? बिल्कुल। हमें अपने मन से यह विचार निकालना है कि हिंदी, अंग्रेज़ी से तुच्छ है। हमें गर्व होना चाहिए कि हम दोनों भाषाओं में बोल सकते हैं। यह हर्ष की बात है कि 153 सालों के बाद दक्षिण अफ्रीका में हिंदी सुनाई दे रही है। हमारे बाप-दादा यहाँ आए थे दास बनकर, मडोबा जी की कोशिशों से हमें आज़ादी मिली, अब हमें अपने मन को आज़ाद करना है। अब हम कह सकते हैं कि दक्षिण अफ्रीका में हिंदी-भाषी हैं।

2012 में हिंदी शिक्षा संघ ने भारत सरकार के साथ विश्व हिंदी सम्मेलन को प्रस्तुत किया था। प्रोफ़ेसर सीताराम को पुरस्कार मिला था। इसके बाद सारा जग जान गया कि दक्षिण अफ्रीका में हिंदी जीवित है। 2014 में डॉ. एम.एल. गुप्ता ने हमें आमंत्रित किया और हमें वैश्विक परिणाम मिला। 2014 में भी हमें मॉरीशस से अंतरराष्ट्रीय हिंदी सम्मेलन में भाग लेने का निमंत्रण मिला। 2015 में हमारी उप-प्रधान, प्रोफ़ेसर उषा शुक्ल को सम्मान मिला।

हिंदी शिक्षा संघ को हार्दिक नमन। जो भी इस महान संस्था के लिए काम करता है, भगवान उसे धैर्य दे ताकि वह हार कभी न मानें और हमेशा दम लगाकर हिंदी के प्रचार-प्रसार में लगन और प्रेम से लगा रहे।

डरबन, दक्षिण अफ्रिका
mramballi@yahoo.com

41

मेरे देश की हिंदी संस्था-इन्लान्सो

—सुश्री बेआत्रिस स्तेइंवल

मेरे देश स्वीडन में सिर्फ़ एक विश्वविद्यालय में हिंदी की पढ़ाई होती है। इसका नाम उप्साला विश्वविद्यालय है। चौथे सिमेस्टर में उप्साला विश्वविद्यालय के छात्र एक चुनाव कर सकते हैं कि वे एक सिमेस्टर के लिए हिंदी की पढ़ाई के लिए भारत जा सकते हैं। इस सिमेस्टर में छात्र भारत के 'इन्लान्सो' नामक हिंदी भाषा संस्थान में पढ़ने जाते हैं।

इन्लान्सो में हिंदी कार्यक्रम उप्साला विश्वविद्यालय की आवश्यकताओं के अनुसार बनाए जाते हैं। इन्लान्सो में हिंदी का अध्ययन 3 अलग स्तरों पर होता है। एक शुरूआती स्तर नौसिखुओं के लिए है। दूसरा मध्यवर्ती स्तर है और तीसरा अग्रवर्ती स्तर है। सब स्तरों पर छात्र हिंदी के व्याकरण, उच्चारण और संचार सीखते हैं। मध्यवर्ती स्तरों और अग्रवर्ती स्तरों में छात्र मुहावरेदार अभिव्यक्तियाँ और ज़्यादा धाराप्रवाह बोलचाल का अभ्यास करते हैं। इन स्तरों पर छात्र हर हफ़्ते लिखने का काम करते हैं और हिंदी अखबार पढ़ते हैं। अग्रवर्ती स्तर पर छात्र हिंदी उपन्यास और कहानियाँ पढ़ते हैं। इन्लान्सो हिंदी संस्थान वाराणसी में है। इन्लान्सो का अनन्य विचार है कि कक्षा की शिक्षा और अभ्यास घर के बाहर जोड़ा जाए। इसलिए छात्रों को हर हफ़्ते 20 घंटे कक्षा में शिक्षा ग्रहण और अभ्यास घर के बाहर करना पड़ता है।

इन्लान्सो की अकादमिक नेता, डॉ. मीरिया मलिक (पूर्व युन्तुनेन) हैं। मीरिया मलिक पहले भारत में नॉर्डिक केंद्र की निदेशिका थीं। वे पहले स्टॉकहोम, उप्साला और आरहूस विश्वविद्यालय में हिंदी पढ़ा चुकी हैं पर सन् 2011 में उन्होंने भारत में सेंटर फ़ॉर स्टडी ऑव इंडियन लैंग्वेजज़ एंड सोसाइटी (इन्लान्सो) की स्थापना की।

इन्लान्सो एक बढ़िया संस्थान है क्योंकि उसका बुनियादी विचार 'अनेकता में एकता' है और वहाँ भारतीय समाज के बारे में अध्ययन होता है। इन्लान्सो में छात्र अलग-अलग विषयों का अध्ययन करते हैं जो बहुत सारे भारतीय विश्वविद्यालय नहीं कर सकते हैं। भारतीय समाज में बहुत अच्छी बातें हैं जिनको समझने के लिए सक्रिय होना पड़ता है। भारतीय समाज में जाति, वर्ग, धर्म की विविधता, विकलांगता की समस्या और राजनैतिक शक्ति महत्वपूर्ण पहलू हैं। इन्लान्सो बहुसंस्कृतिवाद, विविधता और सर्वधर्म-समभाव के पक्ष में है। संस्थान सभी धर्मों के बारे में बिना पक्षपात के शिक्षा देता है।

इन्लान्सो में जो अध्यापक काम करते हैं वे अलग-अलग धार्मिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और जाति समूहों की पृष्ठभूमि से हैं। शिक्षा में ये विविधता लाने के लिए नियुक्त हैं। उनकी योग्यता उनके काम पर आधारित होती है जाति, वर्ग आदि पर नहीं।

इन्लान्सो 'सर्वधर्म समभाव' और विविधता से परिचित कराने के लिए अलग-अलग प्राध्यापक आमंत्रित करता है। व्याख्यान भारतीय दर्शन, इतिहास, नारीवाद, जाति के मुद्दों, भेदभाव, राजनीति आदि पर दिए जाते हैं। कभी-कभी महिलाएँ, दलित और अलग-अलग अल्पसंख्यक धर्मों और समूहों के लोग व्याख्यान देते हैं। यह नया प्रयोग है।

इन्लान्सो में न केवल 'सर्वधर्म समभाव' महत्वपूर्ण है बल्कि भारतीय समाज का अध्ययन करने के लिए भाषा एक आवश्यक माध्यम है। इसलिए हर हफ़्ते एक ख़ास विषय दिया जाता है। इन्लान्सो में छात्र भाषाओं के ज़रिए भारतीय समाज के बारे में सीखते हैं और इसके लिए साक्षात्कार भी आवश्यक हैं। एक संस्कृति या समाज को समझने के लिए छात्रों को उस समाज की भाषा सीखनी चाहिए। औपनिवेशिक दृष्टिकोण से भारतीय समाज का अध्ययन करना बंद कर देना चाहिए और छात्रों को भारतीय भाषा सीखनी चाहिए। इन्लान्सो में साक्षात्कार हिंदी के अध्ययन का आधार है और विषय को कक्षा में पढ़ाया जाता है। कक्षा के बाहर बातचीत में हिंदी का प्रयोग किया जाता है। इन्लान्सो में कुछ विषयों के उदाहरण हैं—रिक्शा चालकों के साथ बातचीत, बाज़ार के लोगों से साक्षात्कार। संस्थान अपने विद्यार्थियों के साथ सभी धर्मों के उत्सव में शामिल होता है। दिवाली, दुर्गा पूजा, महाशिवरात्रि आदि

त्योहार तथा विश्व प्रसिद्ध रामनगर की रामलीला से छात्रों को परिचित कराया जाता है। साथ ही साथ ईद, मुहर्रम, गुरु नानक का प्रकाश उत्सव, क्रिसमस, बुद्ध जयंती भी मनाई जाती है। उसके अलावा 15 अगस्त तथा 26 जनवरी को भारत के राष्ट्रीय समारोह के साथ-साथ महात्मा गांधी जयंती भी मनाई जाती है। साधारण लोगों से बात करना महत्वपूर्ण है क्योंकि वे लोग एक अलग तरीके से समाज का वर्णन करते हैं जो पुस्तकों में नहीं मिलता है।

वाराणसी जो हिंदू धर्म के लिए एक महत्वपूर्ण जगह है, बहुत दिलचस्प है लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि हिंदी की पढ़ाई केवल हिंदू धर्म पर ही आधारित रहे बल्कि अन्य सभी धर्मों पर। ख़ास कर इस्लाम पर भी होनी चाहिए क्योंकि उत्तर प्रदेश में मुसलमान समुदाय वाराणसी की आबादी का एक बड़ा हिस्सा है।

इन्लान्सो एक बढ़िया संस्थान है क्योंकि उसका बुनियादी विचार 'अनेकता में एकता' है और वहाँ भारतीय समाज के बारे में अध्ययन होता है। इन्लान्सो में छात्र अलग-अलग विषयों का अध्ययन करते हैं जो बहुत सारे भारतीय विश्वविद्यालय नहीं कर सकते हैं। भारतीय समाज में बहुत अच्छी बातें हैं, जिनको समझने के लिए सक्रिय होना पड़ता है।

लचीलेपन से फ़ील्ड वर्क अलग-अलग सामाजिक मुद्दों के बारे में कर सकते हैं। छात्र साक्षात्कार के लिए अलग-अलग जातीय समुदायों में जाते हैं। छात्र ग्रामीण जीवन से परिचित होने के लिए गाँवों में भी जाते हैं।

शुरूआत में इस कार्यक्रम के तहत कार्य करना आसान होता है लेकिन जब कार्यक्रम आगे बढ़ता है, कार्य और अधिक कठिन होता है। इसका मतलब नहीं है कि शुरूआत में विषय कम महत्वपूर्ण है या छात्रों का भाषिक विकास कम महत्वपूर्ण है। इस संस्थान ने भारतीय संस्कृति और भाषाओं के बारे में समझने के लिए तथा स्वीडन में हिंदी की पढ़ाई के लिए अद्भुत योगदान दिया है। उप्साला विश्वविद्यालय और इन्लान्सो के बीच में एक समझौता है जो स्वीडन के लोगों को हिंदी का अध्ययन करने का अवसर देता है। स्वीडन में कोई संस्थान इन्लान्सो जैसा नहीं है और उप्साला हिंदी का अध्ययन करने के लिए पर्याप्त नहीं है। भारतीय समाज और समकालीन भारत में हिंदी भाषा के महत्व को समझने के लिए भारत जाना चाहिए।

आज छात्र स्वीडन, नॉर्वे, डेनमार्क और जर्मनी से इन्लान्सो में पढ़ते हैं। इन्लान्सो के पास दूसरे कार्यक्रम भी हैं, लखनऊ और पुद्दूचेरी में। लखनऊ में इन्लान्सो उर्दू की पढ़ाई करवाता है और पुद्दूचेरी में इन्लान्सो तमिल पढ़ाता है। भविष्य में नेपाली, गुजराती और बांग्ला की पढ़ाई के लिए इन्लान्सो के कार्यक्रम बंगाल, गुजरात और नेपाल में खुल जाएँगे। इन्लान्सो ने योजना बनाई है कि एक प्रमुख संस्थान भारतीय भाषाओं और संस्कृतियों के अध्ययन के लिए होना चाहिए। यह बहुत अच्छी बात है क्योंकि भारत एक बहुत ही विविधतापूर्ण देश है और हर प्रदेश में महत्वपूर्ण भाषा है। भारत को समझने के लिए लोगों को उसकी भाषाएँ सीखनी चाहिए। भूमंडलीकरण के युग में व्यापार की दुनिया में हिंदी एक महत्वपूर्ण भाषा बनेगी। इसलिए उसे जानना ज़रूरी है।

स्वीडन

42

मेरे देश की हिंदी संस्था–महात्मा गांधी संस्थान (एम.जी.आई. की कहानी उसकी जुबानी)

—डॉ. अलका धनपत

अपनी अस्मिता, एक स्वतंत्र-व्यक्तित्व तथा अपने अस्तित्व के विकास की सबको आवश्यकता है। बिना इसके कोई देश अथवा मनुष्य अपनी अभीप्सा तथा संकल्पशक्ति को अपना कहकर प्रमाणित नहीं कर सकता और ना ही कार्य या योजना को अपने निर्णय की विवेक-तुला पर तोल सकता है।

देश, काल, संस्था तथा व्यक्ति की सफलता का रहस्य अतीत से शिक्षा लेकर और अपने आपको नवीन वातावरण के अनुसार ढाल कर, तात्कालिक समस्याओं के समाधान में है। भावी सपनों को साकार रूप देने के लिए नवीन-योजनाओं की श्रृंखला को खड़ा करना, उन्हें क्रियान्वित करने का साहस रखना,यही काल धर्म है।

मैं, महात्मा गांधी संस्थान वर्ष 2017 में अपनी 47वीं वर्षगाँठ मनाने जा रहा हूँ। इन लंबे वर्षों की यात्रा में आज मैं केवल मॉरीशस में ही नहीं वरन समस्त हिंदी जगत में अपने स्वतंत्र अस्तित्व की पहचान बना पाया हूँ। मेरे आँगन में 2 विश्व हिंदी सम्मेलन (1976, 1993) भारत तथा मॉरीशस सरकार के सहयोग से संपन्न हुए तथा प्रवासी देशों के 'क्षेत्रीय अंतरराष्ट्रीय हिंदी सम्मेलन' (2014) का विश्व हिंदी सचिवालय, भारतीय उच्चायोग तथा शिक्षा मंत्रालय के सहयोग से सफल आयोजन हुआ। सन् 2018 में 11वें विश्व हिंदी सम्मेलन के कार्यक्रम में मैं पूर्ण सहयोग देने को तत्पर हूँ। यह सम्मेलन मॉरीशस की धरती पर होगा। आज मॉरीशस की मिट्टी पर, हिंदी की रक्षा तथा संवर्धन के लिए दिए गए बलिदानों को मेरे बढ़ते रूप ने चार चाँद लगाए हैं। आज मैं मॉरीशस विश्वविद्यालय के सहयोग से अपने बच्चों को पीएचडी (हिंदी) की डिग्री प्राप्त करने की सुविधा प्रदान कर रहा हूँ। देश में हिंदी की यात्रा बैठकाओं से शुरू हुई थी, आज मेरे यहाँ मेरे छात्र बी.ए. तथा एम.ए. में शिक्षा वातानुकूलित कक्षाओं में प्राप्त करते हैं।

मेरी इस यात्रा के साक्षी ये 46 वर्ष हैं जो अपने इतिहास के भीतर अनेक उतार-चढ़ाव तथा योजनाओं को समेटे हैं। रात के सघन अँधेरे से सूर्य नहीं, दीपक संघर्ष करता है! सूर्य तो अपना कार्यभार उस नन्हे दीपक को सौंप जाता है ताकि अगली सुबह तक अंधकार में जलती लौ पथ प्रदर्शक बनी रहे। मैं वही दीपक हूँ जो संघर्ष करता हुआ, आज हिंदी को नए विहान की ओर अग्रसर कर रहा हूँ। अब तो मेरी नई योजनाओं में केवल मॉरीशस ही नहीं वरन देश के आसपास के अन्य टापू, जैसे रियून्यन (Reunion) तथा अफ्रीकी देशों में भी हिंदी का प्रचार-प्रसार एवं शिक्षण-प्रशिक्षण कार्य करना है।

मॉरीशस के विश्व प्रसिद्ध आप्रवासी लेखक श्री अभिमन्यु अनत मेरे ही रचनात्मक एवं प्रकाशन विभाग में वर्षों अध्यक्ष रहे। सन् 1978 में उन्होंने ही संस्थान से 'वसंत' पत्रिका का प्रकाशन प्रारंभ किया जो आज भी देश-विदेश के हिंदी प्रेमियों से जुड़ी हुई है। सन् 1992 में बच्चों की एक अन्य पत्रिका 'रिमझिम' भी मेरे इसी विभाग के प्रयासों से प्रकाशित हुई। आज ये दोनों पत्रिकाएँ मेरा गौरव हैं जो हिंदी में अनवरत छप रही हैं।

मेरा जन्म भारतीय भाषाओं, संस्कृति, संगीत तथा कला को मॉरीशस की धरती पर बढ़ाने और प्रोन्नत करने के लिए हुआ। सन् 1968 में मॉरीशस देश को स्वतंत्रता मिली। स्वतंत्र देश के स्वतंत्र सपने। अपने पूर्वजों की संस्कृति तथा भाषा के संवर्धन के सपने। तो बस 23 सितंबर, 1970 में संसद में मेरी स्थापना के लिए एक 'एक्ट' (कानून) पास हो गया। सपना रूप लेने लगा। 3 जून, 1970 को मॉरीशस के प्रथम प्रधान मंत्री, सर शिवसागर रामगुलाम तथा तत्कालीन भारतीय प्रधान मंत्री, श्रीमती इंदिरा गांधी ने मेरी आधारशिला रखी और फिर 9 अक्टूबर, सन् 1976 भवन के रूप में मेरा उद्घाटन भी हो गया। मैं बहुत उत्साहित था। मैं ही क्यों पूरा देश अति प्रसन्न था। मुझे रामविलास शर्मा की उक्तियाँ याद आ गईं— ''जब-जब शोषित वर्गों ने अपने अधिकारों के लिए, अपनी स्थिति सुधारने के लिए संघर्ष किया, तब-तब उनका यह संघर्ष, उनके उत्तराधिकारी नए समाज के विधायकों के लिए महत्वपूर्ण रहा है। इसके साथ उन्होंने अपने वर्ग हितों के अनुकूल अपनी संस्कृति, अपने साहित्य की रचना की है।''

सन् 2002 में एम.जी.आई. एक्ट में एक सुधार करके मेरा विस्तार हुआ। अब मैं रवींद्रनाथ टैगोर संस्थान को भी अपने साथ

लेकर चल रहा हूँ। आज मेरे नाम के साथ 5 स्कूल कार्य कर रहे हैं जिनमें सबसे बड़ा 'स्कूल ऑव इंडियन स्टडीज़' है। इस स्कूल में सबसे बड़ा हिंदी विभाग है। यहाँ छात्रों की संख्या सर्वाधिक है। यह संख्या आम तौर पर 100-125 तक रहती है पर अध्यापक प्रशिक्षण कोर्स चलने पर संख्या 150-200 तक भी पहुँच जाती है।

स्कूलों के नाम इस प्रकार हैं:

1. स्कूल ऑव इंडियन स्टडीज़
2. स्कूल ऑव पर्फ़ोर्मिंग आर्ट्स
3. स्कूल ऑव फ़ाइन आर्ट्स
4. मॉरीशस एंड एरिया स्टडीज़
5. स्कूल ऑव इंडोलॉजिकल स्टडीज़

मेरा मुख्य क्षेत्र उच्च शिक्षा, संस्कृति तथा माध्यमिक शिक्षा को प्रोन्नत करना है। आज मेरे साथ 6 माध्यमिक कॉलेज भी जुड़े हुए हैं। सभी माध्यमिक कॉलेजों में हिंदी विषय का भी पठन-पाठन उत्साह से होता है तथा हिंदी अध्यापकों के लिए कार्यशालाएँ भी लगती हैं। आज विषय चयन के समय मैं भी छात्रों को बड़ी कक्षाओं में हिंदी नहीं दे पाता हूँ। दुख तो होता है पर छात्र अपनी नौकरी तथा भविष्य को लेकर चिंतित होते हैं। इसलिए एच.एस.सी. में हिंदी विषय होने के बावजूद छात्रों की संख्या अंगुलियों पर गिनी जा सकती हैं।

सन् 2002 में एम.जी.आई. एक्ट में एक सुधार करके मेरा विस्तार हुआ। अब मैं रवींद्रनाथ टैगोर संस्थान को भी अपने साथ लेकर चल रहा हूँ। आज मेरे नाम के साथ 5 स्कूल कार्य कर रहे हैं जिनमें सबसे बड़ा स्कूल ऑव इंडियन स्टडीज़ है। इस स्कूल में सबसे बड़ा हिंदी विभाग है। यहाँ छात्रों की संख्या सर्वाधिक है। यह संख्या आम तौर पर 100-125 तक रहती है पर अध्यापक प्रशिक्षण कोर्स चलने पर संख्या 150-200 तक भी पहुँच जाती है।

मेरे 'स्कूल ऑव इंडियन स्टडिज़' में हिंदी सहित उर्दू, तमिल, तेलुगू, मराठी, मंदारिन और भोजपुरी भाषाओं की शिक्षा तो दी ही जा रही है, साथ ही देश में होनेवाले सांस्कृतिक, धार्मिक तथा राष्ट्रीय पर्वों में भी मेरी उपस्थिति सक्रिय रहती है। आज मैं गौरवान्वित हूँ कि मेरे कितने ही छात्र रेडियो तथा टेलीविज़न पर भारतीय भाषाओं में कार्यक्रमों के साथ-साथ समाचारों की भी प्रस्तुतियाँ दे रहे हैं।

रामविलास शर्मा के अनुसार 'भाषा संस्कृति के निर्माण में सहायक होती है, भाषा द्वारा हम अपनी संस्कृति व्यक्त करते हैं, भाषा स्वयं भी संस्कृति का महत्वपूर्ण अंग हैं।' इसीलिए मेरे एक्ट में भाषा तथा संस्कृति के विकास की सीमाएँ निश्चित हैं। मैंने देश को भारतीय भाषाओं तथा संस्कृति का एक विशेष वातावरण दिया। आज मॉरीशस देश में जब आप किसी से हिंदी में बात करते हैं तो लगभग सभी (क्रिश्चियन को छोड़कर) हिंदी समझते हैं और टूटी-फूटी हिंदी में उत्तर भी दे पाते हैं। मेरे एक्ट के अनुसार संस्थान केवल एशियाई भाषाओं तथा भारतीय संस्कृति के प्रचार-प्रसार तथा उन्नति का कार्य ही करेगा।

सन् 1975-1976 का वर्ष मेरे कार्य की नींव का वर्ष था। मैं एक संस्था हूँ। संस्था की यात्रा में अनेक व्यक्ति, मील के पत्थर सिद्ध होते हैं। आज मेरा अतीत संघर्ष, प्रयास, परिश्रम तथा उपलब्धियों से भरा है, उसे ही मैं आपके समक्ष प्रस्तुत कर पाऊँगा। व्यक्तियों के प्रयास से संस्थाएँ खड़ी होती हैं और संस्थाओं के नाम से व्यक्ति तथा समाज पहचाने जाते हैं। संस्थाएँ अपने निकषों को जब पूरा करती हैं तो वे एक देश की पहचान भी बनती हैं। मैंने भी अनेक निकष तय किए तथा वर्ष दर वर्ष बढ़ता ही गया। आज मेरा बाह्य रूप जब कोई 'अकादमिक' देखता है तो प्रशंसा किए बिना नहीं रहता। प्रकृति का सुरम्य वातावरण, एक संग्रहालय जिसमें आप्रवासियों के अमूल्य रिकॉर्ड के साथ-साथ उनके द्वारा लाई गई बहुत सी धार्मिक पुस्तकें यथा- कैथी लिपि में 'रामायण', देवनागरी में 'कोकशास्त्र', 'प्रेमसागर', आयुर्वेद की पुस्तक 'पंचाग', आदि भी मिलती हैं। उन पुस्तकों को देखकर यह निश्चित हो जाता है कि सभी गिरमिटिया निरक्षर नहीं थे। कुछ तो सरकंडे से भी लिखी हुई हैं, अर्थात साधनों के अभाव में भी प्रतियाँ बनाई गई थीं। ये प्रतियाँ आपस में बाँटी भी गई थीं।

मेरे परिसर में एक पुस्तकालय है जिसमें लगभग 30,000 हिंदी पुस्तकें हैं। एक 'सुब्रह्मण्य भारती लैक्चर थियेटर' है जो संगोष्ठी के लिए लगभग 100 लोगों को समायोजित कर सकता है। एक बड़ा ऑडीटोरियम भी मेरी शान है। संस्थान का अपना एक प्रिंटिंग प्रेस है तथा एक अतिथियान भी है जहाँ बाह्य निरीक्षक अथवा शोधकर्ता ठहरते हैं। मेरे आँगन में एक गांधीयन-बेसिक स्कूल भी है।

सन् 1975-1976 से ही मैं अपनी टीम के साथ अपने लक्ष्य की ओर बढ़ने लगा। मेरा लक्ष्य पूर्वीय भाषाओं तथा संस्कृति शिक्षण का प्रचार-प्रसार है। मैंने इसे सर्वप्रथम संगीत तथा कला शिक्षण के

विषय के रूप में शुरू किया गया। भारत सरकार की सदाशयता को मैं नहीं भुला सकता। उसने मेरी स्थापना तथा कार्यों में मदद की जहाँ भी ज़रूरत पड़ी, भारत सरकार से सदैव सहायता मिली। इसका उदाहरण प्रिंटिंग-प्रेस है। अब मेरा कार्यक्षेत्र विस्तृत होने लगा। मेरे सभी सदस्यों के मन में उत्साह था। भाषा का देश के चिंतन और भावात्मक वृत्ति से घनिष्ठ संबंध होता है। अब अध्यापक-शिक्षण, पाठ्य-पुस्तक निर्माण, पाठ्यक्रम तैयार करना, कार्य का निरीक्षण तथा रिपोर्ट मंत्रालय तक भेजने का काम मेरे हिंदी अधिकारियों द्वारा शुरू किया गया। सेमिनार के दौरान भारत से विशेष अतिथि आमंत्रित किए जाते थे जिनके विशेष भाषण से मेरे अधिकारी नई राहों पर चलने का प्रशिक्षण पा सकें। मेरे अर्थात संस्थान के निवेदन पर पूर्वी भाषाओं, विशेष रूप से हिंदी तथा उर्दू को अब एच.एस.सी. स्तर पर 'प्रिंसिपल विषय' के रूप में कैम्ब्रिज सिंडिकेट ने स्वीकार किया है। एक योजना बनाई गई जिसमें शनिवार को हिंदी की विशेष कक्षाएँ लगीं। उन कक्षाओं में उत्तमा की परीक्षा देनेवाले छात्रों से अतिरिक्त परिश्रम करवाया गया ताकि ये छात्र आगे डिप्लोमा में प्रवेश ले सकें। इसके साथ-साथ एच.एस.सी. में हिंदी विषय लेनेवाले छात्रों पर भी विशेष ध्यान दिया गया। औपचारिक रूप से हिंदी का स्तर बढ़ाने के लिए मेरे हिंदी अध्यापकों ने उसकी जड़ों को अपने परिश्रम के जल से सींचा। भाषा-प्रयोगशाला में छात्रों के उच्चारण को शुद्ध करने हेतु कई-कक्षाएँ लगीं।

सन् 1975-1976 का वर्ष मेरे कार्य की नींव का वर्ष था। मैं एक संस्था हूँ। संस्था की यात्रा में अनेक व्यक्ति, मील के पत्थर सिद्ध होते हैं। आज मेरा अतीत संघर्ष, प्रयास, परिश्रम तथा उपलब्धियों से भरा है, उसे ही मैं आपके समक्ष प्रस्तुत कर पाऊँगा। व्यक्तियों के प्रयास से संस्थाएँ खड़ी होती हैं और संस्थाओं के नाम से व्यक्ति तथा समाज पहचाने जाते हैं। संस्थाएँ अपने निकषों को जब पूरा करती हैं तो वे एक देश की पहचान भी बनती है। मैंने भी अनेक निकष तय किए तथा वर्ष दर वर्ष बढ़ता ही गया।

अगस्त 1976 में मुझे एक बड़ा गौरव प्राप्त हुआ। मुझे इस योग्य समझा गया कि मैं विश्व हिंदी सम्मेलन का कार्यभार सँभाल पाऊँगा। यह मेरे लिए हिंदी के क्षेत्र में कुछ नया करने का सुनहरा अवसर था! भारत सरकार से प्रिंटिंग प्रेस तो मिल ही गई थी, श्री अभिमन्यु अनत ने 12 हिंदी के श्रेष्ठ कवियों का संकलन तैयार कर एक पुस्तक का संपादन किया। डॉ. मुनीश्वरलाल चिंतामणि ने अनुवाद के पेपर के लिए फ़ॉर्म 1 तथा 2 के लिए पुस्तक लिखी। मॉरीशसीय कहानियों का एक संग्रह भी छपा। मेरी हिंदी की यात्रा ने मॉरीशसीय लेखकों को अपनी रचनाएँ छपवाने की प्रेरणा दी। हिंदी में स्तरीय रचनाएँ सामने आने लगीं।

अप्रैल, 1976 में 2 सप्ताह के पाठ्य पुस्तक-लेखन का कोर्स रखा गया जिसका उद्देश्य था अपने शिक्षकों में परावलंबन को कम करना। मैं चाहता था कि हम स्वयं मिलकर अपने छात्रों की ज़रूरत तथा देश काल की आवश्यकतानुसार पाठ्य-पुस्तकें छापें। आज (संस्थान में) भावी 9 वर्षीय शिक्षण-प्रणाली के लिए हिंदी के साथ-साथ अन्य एशियाई भाषाओं की पुस्तकें शिक्षा-मंत्रालय के सहयोग से तैयार हो रही हैं।

सन् 1977 की वार्षिक रिपोर्ट में संस्थान के निदेशक ने घोषणा की कि अगले वर्ष से हम तृतीय स्तर की शिक्षा के क्षेत्र में कदम रखेंगे। तैयारी ने गति पकड़ी। हाथ थामने, दिशा-निर्देश तथा प्रशिक्षण के लिए 1977 में लगभग एक माह के लिए भारत से प्राध्यापकों का एक दल आया। उसमें भारत सरकार का सहयोग था। उस टीम के साथ संस्थान के अधिकारियों ने विशेष कार्य किए जिससे हिंदी पढ़ने-पढानेवालों को 'टेक्निकल' रास्ता मिला। निष्कर्ष निकले :

- पूर्व प्रशिक्षण कोर्स चलाए जाएँ
- प्रवेश परीक्षा का स्तर बढ़ाया जाए
- श्रवण कौशल को समृद्ध करने हेतु छात्रों को कैसेट्स सुनाए जाएँ

अब छात्रों के साथ विशेष योजना तथा प्रविधि अपनाकर हिंदी का कार्य आगे बढ़ने लगा। छात्रों की संख्या भी बढ़ने लगी। उस वर्ष उत्तमा में 89 छात्रों ने परीक्षा दी। संस्थान ने रेडियो, टेलीविज़न पर भी हिंदी शिक्षण के कार्यक्रम शुरू किए। भारतीय साहित्य तथा साहित्यकारों पर भी 1977 में कई कार्यक्रम प्रस्तुत किए गए।

सन् 1978 में संस्थान से अनेक छात्रों ने 'हिंदी टीचर ट्रेनिंग' की परीक्षा में भाग लिया। यह राष्ट्र के करवट लेने का वक्त था। अब राष्ट्र ऐसे अध्यापकों की भर्ती करना चाहता था जो प्रशिक्षित

हों ताकि प्रशिक्षित अध्यापक की यह नई पीढ़ी नवीन प्रविधि से पढ़ा पाए।

1980 तक भारतीय भाषा अध्ययन विभाग कार्यों की गुणवत्ता की दृष्टि से पहले स्थान पर दिखने लगा। यह विभाग, जिसमें हिंदी का कार्य अनेक स्तरों पर हो रहा था, मेरे नाम को रोशन करने लगा। अब भाषाई कौशलों को मज़बूत करने के लिए वार्तालाप पर आधारित मौखिक वाचन का 2 वर्ष का सर्टिफ़िकेट कोर्स शुरू किया गया। ग्लेशियर से जलधार निकल चली थी। ऊबड़-खाबड़ रास्तों को पार करते-करते उसका पाट चौड़ा होने लगा था। एक लाख शब्दों का शब्दकोश तैयार किया गया जो हिंदी-फ्रेंच तथा फ्रेंच-हिंदी में था।

1980 तक भारतीय भाषा अध्ययन विभाग कार्यों की गुणवत्ता की दृष्टि से पहले स्थान पर दिखने लगा। यह विभाग, जिसमें हिंदी का कार्य अनेक स्तरों पर हो रहा था, मेरे नाम को रोशन करने लगा। अब भाषाई कौशलों को मज़बूत करने के लिए वार्तालाप पर आधारित मौखिक वाचन का 2 वर्ष का सर्टिफ़िकेट कोर्स शुरू किया गया। ग्लेशियर से जलधार निकल चली थी। ऊबड़-खाबड़ रास्तों को पार करते-करते उसका पाट चौड़ा होने लगा था। एक लाख शब्दों का शब्दकोश तैयार किया गया जो हिंदी-फ्रेंच तथा फ्रेंच-हिंदी में था।

सन् 1981 में वयस्कों के लिए 'एडल्ट बिगिनर्स कोर्स' भी शुरू किया गया ताकि जो हिंदी की यात्रा में अपने समय में पीछे छूट गए हैं वे भी हिंदी पढ़ सकें और मुख्यधारा में शामिल हो सकें। अब और अधिक अध्यापकों की आवश्यकता महसूस होने लगी। पार्ट-टाइम /अंशकालिक अध्यापकों की भर्ती की गई। कारवाँ बढ़ने लगा।

डैप्यूटी हैड टीचर्ज़ में से सहायक निरीक्षकों का चयन होना था। अत: संस्थान में उनके लिए कोर्स का प्रावधान रखा गया। मेरी जड़ें और मज़बूत हो सकें इसके लिए मैंने अन्य संस्थानों के साथ मिलकर काम करने का निश्चय किया।

मॉरीशस इंस्टिट्यूट ऑव एजुकेशन (Mauritius Institute of Education/MIE) के साथ मिलकर पोस्ट ग्रेजुएट सर्टिफ़िकेट इन एजुकेशन (Post Graduate Certificate in Education), वैकेशन कोर्स तथा टी.सी.पी. जो अब टी.दी.पी. (Diploma Programme for Primary Teachers) है, कोर्स चलाए गए। ये सब कोर्स अध्यापकों को सक्षम बनाने तथा नए अध्यापकों को तैयार करने के लिए थे।

1987 में 3 वर्षीय डिप्लोमा इन हिंदी स्टडीज़ का अंशकालीन कोर्स शुरू हुआ। इसके बाद छात्र 2 वर्षों में बी.ए. पूरा कर पाते हैं। आज मैं यूनिवर्सिटी ऑव मॉरीशस (UOM) के सहयोग से हिंदी में बी.ए., एम.ए., एमफ़िल तथा पीएचडी के कोर्स प्रदान करता हूँ। जब छात्रों को डिग्री मिलती है तो एक पल के लिए मैं ठहर कर उनके सम्मान में हो रहे समारोह की झलक ज़रूर पाता हूँ।

27 अक्टूबर, 1987 को हिंदी साहित्य तथा हिंदी लेखन पर एक संगोष्ठी संपन्न हुई। मॉरीशस के लेखक, प्रेमचंद को अपने नज़दीक पाते थे। जून 1988 में प्रेमचंद पर एक संगोष्ठी का आयोजन किया गया।

सन् 1988 में एडल्ट बिगिनर्स कोर्स (ABC) में 56 छात्रों ने प्रवेश लिया तो 1989 में 48 छात्रों ने। इधर 'डिप्लोमा इन हिंदी' में 1988 में 23 छात्र आए तथा 1989 में 14 छात्रों ने यह कोर्स प्रारंभ किया। हिंदी का कार्य मेरे प्रयासों से तेज़ी से बढ़ने लगा था।

अब डिग्री कोर्स या स्नातक के लिए मैं सपने देखने लगा था। मेरी प्रतीक्षा को रूप लेने में काफ़ी परिश्रम करना पड़ा। इन सबके लिए सिलेबस तैयार करना था। हिंदी तथा फ्रेंच के विद्यार्थियों के लिए जॉइंट बी.ए का कोर्स चलाना था। यह डिग्री-कोर्स मॉरीशस यूनिवर्सिटी के सहयोग से पूर्ण हुआ। जो छात्र अपनी उच्च शिक्षा में भाषा का चयन करना चाहते हैं उनके लिए खुले आसमान में बढ़ने के दरवाज़े खुलने लगे।

हिंदी के छात्रों तथा अध्यापकों के मूल्यांकन हेतु बाह्य निरीक्षक बुलाने की योजना बनी। दिल्ली विश्वविद्यालय से डॉ. टी.एन बाली महात्मा गांधी संस्थान के तृतीय वर्ष के छात्रों तथा उनके अध्यापकों के कार्य का निरीक्षण करने के लिए मॉरीशस पहुँचे। प्रत्येक वर्ष एक प्रोफ़ेसर भारत से बाह्य निरीक्षक के रूप में हिंदी विभाग के कार्य का निरीक्षण करने आते हैं। डॉ. सुरेश ऋतुपर्ण मॉरीशस में 'नेहरू चेयर' पर पदासीन रहे तथा संस्थान में एम.ए. के पाठ्यक्रम की तैयारी तथा उसका प्रारंभ करने में आपका योगदान स्मरणीय है।

सन् 1995 में 2 छात्र जॉइंट हिंदी ऑनर्ज़ में उत्तीर्ण हुए। छात्रों के कार्य के मूल्यांकन के लिए अंतरराष्ट्रीय मानकों को आधार बनाया गया। इस यूनिवर्सिटी कोर्स के लिए मोड्यूल्स, क्रेडिट तथा निरंतर

दत्त कार्य-प्रणाली का प्रयोग किया गया। आज सेमेस्टर प्रणाली की अपेक्षा वार्षिक परीक्षा प्रारंभ हो चुकी है। हिंदी के छात्रों की बढ़ती संख्या को देखते हुए इस वर्ष दूरस्थ शिक्षण प्रणाली को भी शुरू किया गया। सन् 2000 में हिंदी में एम.ए. का पाठ्यक्रम भी तैयार किया गया। प्रथम बार सन् 2001 में एम.ए. में 20 छात्रों को लिया गया। देश में हिंदी से संबंधित कोई कार्य हो, वह संस्थागत हो या व्यक्ति का प्रयास, सहयोग हेतु मैं सदैव तत्पर रहता हूँ। भारत से जितने भी अकादमिक दल मॉरीशस आते हैं वे सभी मेरे दर्शन के लिए ज़रूर आते हैं। हिंदी का खोजी, हिंदी का पिपासु, हिंदी-सेवी अथवा मॉरीशसीय आप्रवासी हिंदी साहित्य पर अनुसंधान करनेवाला, बिना मेरे यहाँ आए कहाँ अपने कार्य को पूरा कर पाता है? संस्थान विश्व हिंदी सचिवालय को भी पूरा सहयोग देता हूँ तथा विश्व हिंदी सचिवालय भी हिंदी के छात्रों को प्रोत्साहित करने में हर वर्ष प्रतियोगिताओं तथा हिंदी सप्ताह के दौरान अतिरिक्त पुरस्कार प्रदान करता है।

मैं उन देशों को अपनी सेवाएँ दे रहा हूँ जो भारतीय या फिर विदेशी भाषा के रूप में हिंदी सीखने के इच्छुक हैं। फ्रांस के छात्र कभी-कभी अपना हिंदी का मोडयूल पूरा करने के लिए मेरे हिंदी विभाग की कक्षाओं में बैठते हैं। रियून्यन टापू पर भी हिंदी सीखने की इच्छा को देखते हुए मैंने अपने हिंदी के प्राध्यापक को वहाँ भेजा। इस वर्ष (2016) ऑनलाइन (online) कोर्स भी शुरू किया गया है:

मैं हिंदी के बढ़ते फ़लक को नई दिशा देने के लिए ओपन यूनिवर्सिटी और यूनिवर्सिटी ऑव टेक्नोलॉजी के साथ मिलकर भी कार्य-योजना बना रहा हूँ तथा संस्थान का भाषा संसाधन केंद्र मल्टीमीडिया सामग्री तैयार कर रहा हूँ। मैं मल्टीमीडिया के क्षेत्र में भारत की सक्षम संस्थाओं से भी सहयोग लेता रहता हूँ। भारतीय भाषा केंद्रीय संस्थान, मैसूर का मेरे भाषा संसाधन केंद्र को आगे बढ़ाने में बड़ा योगदान है।

आज मेरे पास इंडियन काउंसिल फ़ॉर कल्चरल रिलेशंस (ICCR) द्वारा भेजे गए एक हिंदी चेयर (2016) भी हैं। यदि मैं इन बड़ी संस्थाओं से जुड़कर कार्य करूँ तो अफ्रीका महाद्वीप में हिंदी को एक नए रूप में बढ़ाया जा सकता है। मेरे स्थानीय हिंदी प्राध्यापक अंग्रेज़ी, हिंदी तथा फ्रेंच त्रिभाषाओं के जानकार हैं। अफ्रीका के भाषा बाज़ार में यह विशेषता हिंदी को आगे ले जा सकती है। इन सबके लिए वित्त की आवश्यकता है। मुझे खुद को एक प्रयोगशाला के रूप में तैयार करना होगा। मैं साडैक (साउदर्न अफ्रीकन डिवलप्मेंट) देशों में हिंदी के प्रचार-प्रसार, परीक्षा आदि का केंद्र बन सकता हूँ। अनुवाद केंद्र की आवश्यकता है। हिंदी का स्थानीय साहित्य फ्रेंच आदि यूरोपियन भाषाओं में अनूदित हो सके, यह ज़रूरी है। मैं, महात्मा गांधी संस्थान आज देश में वटवृक्ष की तरह भाषाओं के शिक्षण-प्रशिक्षण का केंद्र बना हुआ हूँ। मेरी परिधि का विस्तार होता जा रहा है। हाँ मेरी शाखाओं के साथ-साथ मेरी जड़ें भी फैलती जा रही हैं जिन्हें अब निकालना कठिन है। हिंदी की शाखा में से कितनी ही और नवीन शाखाएँ पुष्पित-पल्लवित हो चुकी हैं।

References:

- mgi/rti.org
- परंपरा का मूल्यांकन, रामविलास शर्मा राजमहल प्रकाशन : 1981
- Library : MGI, IGCIC
- MGI : संग्रहालय
- भाषा और समाज : रामविलास शर्मा राजमहल प्रकाशन : 2000
- MGI – Mahatma Gandhi Institute
- MIE – Mauritius Institute of Education
- TCP – Teacher Certificate in Primary
- TDP – Teacher Diploma in Primary
- PGCE – Post Graduate Certificate in Education
- ABC - Adult Beginner's Course
- DHT – Deputy Head Teacher
- B.A. (Hons) with joint – English/French with Hindi

मॉरीशस
alkadunputh@yahoo.co.in
drdunputh@gmail.com

43

मेरे देश का हिंदी प्रचारक : श्री अरुण प्रकाश

—श्रीमती राजवंत कौर

यूँ तो हुए कई सितारे पर जो चमका,
ध्रुव सा पश्चिम के क्षितिज पर।
लाई हूँ समेट कर उसकी उज्ज्वलता को अपनी लेखनी में।
श्रद्धा के अनगिनत सुमनों की बनाई एक क़लम,
और अब उस पावन क़लम से,
उस व्यक्तित्व का गुणगान करती हूँ।

भारत भूमि से लाखों मील दूर अमेरिका में बैठ कर जब हिंदी भाषा की सेवा में नि:स्वार्थ भाव से लगे किसी एक व्यक्ति का स्मरण करती हूँ तो एक ही नाम मस्तिष्क में कौंधता है—श्री अरुण प्रकाश। सरल और सम्मोहक व्यक्तित्व के अरुण जी के चेहरे से नन्हे शिशु जैसी हँसी कभी मलिन नहीं होती। बनारस की तंग गलियों में, वेदों और मंत्रों के पावन उच्चारणों को कंठस्थ करते, हिंदी भाषा की छत्रछाया में पला यह युवक जब 1984 में अमेरिका को अपनी कर्मभूमि बना कर अपनी पत्नी श्रीमती पुष्पा के साथ अमेरिका के सबसे बड़े राज्य टेक्सस के ह्यूसटन शहर में पहुँचा तो शायद कभी ख़ुद भी उसने कल्पना नहीं की थी कि वह सब कुछ छोड़-छाड़ कर अपना समस्त जीवन हिंदी भाषा की सेवा में समर्पित कर देगा। प्रबंध शास्त्र के स्नातक, एक व्यावसायिक प्रवृत्ति रखनेवाले श्री अरुण प्रकाश कवि हृदय की भावुकता अपने में समेटे हुए हैं। वे एक उच्च कोटि के कवि हैं। अमेरिका में उनका नाम हिंदी के प्रचार-प्रसार एवं विकास के पर्याय के रूप में लिया जाता है। 30 वर्षों से हिंदी सेवा में लगे इस कर्मयोगी ने अवकाश प्राप्त करने के बाद पल भर भी विश्राम नहीं किया। वे ह्यूसटन के इंडिया हाउस में हिंदी का औपचारिक कार्यक्रम चला रहे हैं जिसमें 10 साल से लेकर 50 साल तक की उम्र के 30 छात्र हिंदी सीख रहे हैं। ऐसी अन्य कक्षाओं को टेक्सस राज्य के अन्य क्षेत्रों में भी प्रारंभ करने के लिए वे कार्यरत हैं। सेन एंटोनियो शहर में अगले मास से इनकी छत्रछाया में हिंदी की पाठशाला आरंभ हो रही है जिसमें क़रीब 50 छात्र 2 स्तरों पर हिंदी सीखेंगे। साथ ही वे शिक्षण के लिए 7 शिक्षकों को प्रशिक्षण भी दे रहे हैं।

काशी के अरुण जी, वहाँ के एक प्रतिष्ठित परिवार से हैं। उनके 6 भाई व 3 बहनें हैं। उनके ताऊ जी श्री सुमंगल प्रकाश और पिता श्री प्रकाश एक स्वतंत्रता सेनानी थे और वे भूतपूर्व भारत के प्रधान मंत्री स्वर्गीय श्री लाल बहादुर शास्त्री के काशी विद्यापीठ में उनके सहपाठी थे। श्री सुमंगल प्रकाश ने स्वर्गीय लाल बहादुर शास्त्री की जीवनी लिखी जो उस समय के प्रसिद्ध साप्ताहिक 'धर्मयुग' में धारावाहिक रूप में प्रकाशित हुई थी। उनके ताऊ जी हिंदी के जाने-माने लेखक थे और उनके हिंदी प्रेम ने बालक अरुण के हृदय में हिंदी के लिए गहरा अनुराग पैदा किया। काशी में होनेवाले संगीत समारोह और कवि सम्मेलनों में उनकी हाज़िरी अनिवार्य हो गई। वे उन चंद भाग्यशाली लोगों में से हैं जिन्होंने सुमित्रानदंन पंत, महादेवी वर्मा, हरिवंशराय बच्चन, बालकवि बैरागी और भैयाजी बनारसी जैसे महान कवियों को काशी में सुना। इलाहाबाद में रहने के दौरान ही उनकी मित्रता आकाशवाणी के तत्कालीन डायरेक्टर केशव चंद्र वर्मा और उनकी पत्नी श्रीमती सरोजिनी वर्मा से हुई जो लेखिका एवं अनुवादक थी। सरोजिनी जी ने मराठी के प्रसिद्ध उपन्यासकार एवं नाटककार विजय तेंदुलकर की सभी रचनाओं का हिंदी में अनुवाद किया है। सरोजिनी जी की कृपा से उन्हें हिंदी के ढेर सारे उत्कृष्ट उपन्यास, कहानी-संग्रह, नाटक व कविता संकलन पढ़ने को मिले इससे उनके हृदय में हिंदी साहित्य के लिए और भी गहरी अभिरुचि पैदा हुई। अरुण जी का कहना है कि उनका सर्वप्रिय उपन्यास आचार्य हज़ारी प्रसाद द्विवेदी का 'बाणभट्ट की आत्मकथा' है।

अरुण जी की उपलब्धियों के विषय में अखबारों, पत्रिकाओं और इंटरनेट पर काफ़ी लिखा-पढ़ा गया है। मेरे यह पूछने पर कि वे अमेरिका में हिंदी कार्यक्रम से कैसे जुड़े वे बोले, ''मुझे अमेरिका में दोस्त भी बनाने थे तो टेक्सस के शहर ह्यूसटन में आने के बाद हिंदू मंदिर में जाना आरंभ किया। वहाँ मुझे काशी हिंदू विश्वविद्यालय से पढ़े कई परिवार मिले और बस फिर उस मेल-जोल को बनाए रखने के लिए हर रविवार को मैंने मंदिर जाना आरंभ कर दिया।

ह्यूसटन में भाषा का रसिक मन यहाँ हिंदी बोलने-सुनने के लिए छटपटाता था, हृदय की यही टीस पहली बार 1984 में हिंदू मंदिर में बच्चों की साप्ताहिक हिंदी कक्षा लेने का कारण बनी। बड़ी संख्या में बच्चे आए पर अमेरिका में हिंदी की सामग्री का अभाव था तो भारत से शिक्षण सामग्री का प्रबंध किया। उस समय अमेरिका में हिंदी की इस प्रकार की कक्षाएँ नहीं थीं, केवल कुछ विश्वविद्यालयों में ही हिंदी शिक्षण उपलब्ध था। उनके शिक्षण के इस प्रयास को प्रसिद्धि मिली तो कई अन्य स्थानों पर स्वयंसेवकों द्वारा भी हिंदी का साप्ताहिक शिक्षण कार्यक्रम आरंभ हुआ और फलस्वरूप आज पूरे अमेरिका के मंदिरों तथा सामाजिक संस्थानों में हर स्तर पर हिंदी सिखाई जा रही है और उसके प्रचार व प्रसार का काम हो रहा है।

यह श्री अरुण प्रकाश के अथक परिश्रम का ही परिणाम था कि अमेरिका में पहला हाई स्कूल हिंदी पाठ्यक्रम आरंभ करने के साथ-साथ उन्होंने देश की जानी-मानी राइस यूनिवर्सिटी और यूनिवर्सिटी ऑव ह्यूसटन में भी हिंदी के औपचारिक कार्यक्रम शुरू किए। 1988 में जब पहली बार ह्यूसटन में बेलेअर हाई स्कूल में हिंदी भाषा लाई गई तो शिक्षण का कार्य उनके अनुभवी कंधों पर डाला गया। यह कैसे शुरू हुआ, इसके बारे में बात करते हुए उन्होंने बताया कि एक सुबह फ़ोन आया और उधर से आवाज़ आई, ''अरुण जी हम हाकू इस्लामी बोल रहे हैं। आपसे एक विशेष अनुरोध करना है, आपसे एक बड़ी सहायता चाहिए, मना मत कीजिएगा।'' मैंने कहा, ''बताइए तो सही ऐसी क्या आवश्यकता पड़ गई?'' वे बोले, ''अरुण जी, बेलेअर हाई स्कूल में हिंदी की कक्षा आरंभ करने की अनुमति मिल गई है और मुझसे शिक्षक की व्यवस्था करने को कहा गया है। मुझे आप से अधिक हिंदी सेवा में लगा व्यक्ति नहीं मिलेगा तो वहाँ पढ़ाने का कार्य आपको ही करना पड़ेगा क्योंकि न तो पैसे मिलेंगे और ना ही आपसे अधिक कोई यहाँ हिंदी भाषा को अच्छी तरह से जाननेवाला मिलेगा। यह देश का पहला और औपचारिक हिंदी कार्यक्रम होगा और हम यह अवसर हाथ से जाने नहीं दे सकते।'' स्कूल 4-5 दिन में खुलनेवाला था और अगर हिंदी कार्यक्रम की कक्षा पहले दिन न होती तो यह हिंदी की कक्षा इसी साल आरंभ नहीं हो सकती थी। ज़्यादा सोच विचार का समय नहीं था। तो बस फिर क्या था फ़ौरन मैंने पढ़ाना स्वीकार कर लिया। इस तरह देश का यह पहला औपचारिक हिंदी कार्यक्रम था जिसमें उन्होंने सहर्ष नि:शुल्क पढ़ाना शुरू किया। वेतन के नाम पर उन्होंने यातायात खर्च के लिए कुल 15 डालर प्रतिदिन के हिसाब से स्वीकार किए। वहाँ पढ़ाने के लिए इस नौसिखिए शिक्षिक ने स्वयं पाठ्यक्रम तैयार किया। अपने हाथों के लिखे पाठों की फ़ोटोकॉपी बना-बनाकर छात्रों को वितरित की और यह सिलसिला तब तक चलता रहा जब तक कि उन्होंने हिंदी फ़ॉन्ट से युक्त कंप्यूटर हासिल नहीं कर लिया। वहाँ उन्होंने हिंदी के इस कार्यक्रम को 7 स्तरों तक पहुँचाया और 27 वर्षों तक हिंदी भाषा के साथ-साथ भारतीय संस्कृति-सभ्यता और हिंदू धर्म की शिक्षा भी दी। यहीं उन्होंने हिंदू स्टूडेंट्स काउंसिल और योग क्लब बनाया जिनके अंतर्गत आज भी बड़े स्तर पर होली-दिवाली एवं अन्य त्योहार मनाए जाते हैं। इसी तरह 1993 में भारतीय मूल के राइस छात्रों के आग्रह पर विश्वविद्यालय के प्रोवोस्ट ने भी अनुरोध किया कि अगर वे सप्ताह में 3 दिन अवैतनिक रूप से शाम को प्रारंभिक हिंदी पढ़ाएँ तो वे अनुगृहीत होंगे और उन्होंने राइस यूनिवर्सिटी में अवैतनिक रूप से 4 साल पढ़ाया और हिंदी को 3 स्तरों तक पहुँचा दिया। उनके शिक्षण काल में वहाँ हर वर्ग के 60 से भी अधिक विद्यार्थी प्रतिवर्ष हिंदी सीख रहे थे। इसी तरह अवैतनिक रूप से यूनिवर्सिटी ऑव ह्यूसटन में उन्होंने हिंदी का कार्यक्रम प्रारंभ किया और इसके संचालन को अब 10 साल से भी अधिक समय हो चला है। श्री अरुण प्रकाश ने यूनिवर्सिटी ऑव ह्यूसटन में 'इंडिया

मेरे यह पूछने पर कि वे अमेरिका में हिंदी कार्यक्रम से कैसे जुड़े वे बोले, ''मुझे अमेरिका में दोस्त भी बनाने थे तो टेक्सस के शहर ह्यूसटन में आने के बाद हिंदू मंदिर में जाना आरंभ किया। वहाँ मुझे काशी हिंदू विश्वविद्यालय से पढ़े कई परिवार मिले और बस फिर उस मेल-जोल को बनाए रखने के लिए हर रविवार को मैंने मंदिर जाना आरंभ कर दिया। ह्यूसटन में भाषा का रसिक मन यहाँ हिंदी बोलने-सुनने के लिए छटपटाता था, हृदय की यही टीस पहली बार 1984 में हिंदू मंदिर में बच्चों की साप्ताहिक हिंदी कक्षा लेने का कारण बनी। बड़ी संख्या में बच्चे आए पर अमेरिका में हिंदी की सामग्री का अभाव था तो भारत से शिक्षण सामग्री का प्रबंध किया।

स्टडीज़' कार्यक्रम स्थापित करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। आज इस कार्यक्रम के अंतर्गत भारत संबंधित 6 विषय पढ़ाए जाते हैं। इनमें हिंदी, भारत का इतिहास और हिंदू धर्म प्रमुख हैं।

उच्च कोटि की शिक्षण सामग्री न उपलब्ध होने से शिक्षण में आनेवाली कठिनाइयों को दूर करने के लिए उन्होंने अथक परिश्रम किया और 8 वर्षों की मेहनत के बाद हिंदी भाषा को लेकर पुस्तक लिखी। हिंदू स्टूडेंट्स काउंसिल की शाखाएँ आज पूरे देश में हैं। उन्होंने कई संस्थानों के कर्मचारियों को शिक्षित किया। बहुत से स्कूल-कॉलेजों में प्रशिक्षण दिया। उन्होंने अमेरिकी काउंसिल फ़ॉर द टीचिंग ऑव फ़ॉरेन लैंग्वेजज़ के अंतर्गत देश के लिए मानक पाठ्यक्रम को बनाने में सहायता की। टेक्सस एजुकेशन एजेंसी के '21वीं शताब्दी में भाषा ज्ञान और उसकी दिशा' कार्यशाला में विशेषज्ञ के रूप में भाग लिया। यूनिवर्सिटी ऑव टेक्सस के 'हिंदी फ़ॉर मेडिकल प्रोफ़ेशन' कार्यक्रम को तैयार करने में विशिष्ट सलाहकार के रूप में कार्य किया। अमेरिकन काउंसिल फ़ॉर द टीचिंग ऑव फ़ॉरेन लैंग्वेजज़ के अंतर्गत 'स्टारटॉक' नामक कार्यशाला में हिंदी शिक्षकों को प्रशिक्षित करने के लिए प्रधान शिक्षक एवं प्रशिक्षक का कार्य किया। बड़ी संख्या में सरकारी और ग़ैर सरकारी संस्थानों जैसे पुलिस विभाग, ह्यूसटन कैंसर एवेयरनेस नेटवर्क आदि के लिए हिंदी में अनुवाद जैसा महत्वपूर्ण कार्य किया। डिस्कवरी एशिया प्रोफ़ेशनल डेवलपमेंट वर्कशॉप में शिक्षकों को प्रशिक्षण दिया। यह वर्कशॉप स्टारटॉक अनुदान से वित्तपोषित हुआ। यह भूतपूर्व राष्ट्रपति जार्ज डब्ल्यू. बुश की नैशनल सिक्योरिटी लैंग्वेज पहल का हिस्सा है।

एक बातचीत के दौरान वे बोले—''शिक्षण के क्षेत्र में कौन-कौन से कार्य किए, यह तो सब आपने यहाँ के अखबारों एवं पत्रिकाओं में पढ़ा ही है पर मैं आपको वह बताता हूँ जो छपा नहीं है। मुझे यह बताते हुए परम प्रसन्नता होती है कि आज मेरे पढ़ाए हुए छात्र अमेरिकी दूतावास के उच्च अधिकारी, डॉक्टर, इंजीनियर और अमेरिकी समाज के अन्य सम्माननीय पदों पर सुशोभित हैं। समाज ने मुझे अत्यधिक स्नेह और सम्मान दिया है। मेरी हर प्रकार की बीमारी ने मेरी देख-रेख करनेवाले मेरे हर प्रकार के डॉक्टर मेरे छात्र ही हैं जो मेरा बहुत आदर करते हैं और कई छात्र अमेरिकी सरकार के खर्च पर उच्चतम स्तर की हिंदी भाषा की शिक्षा के लिए भारत भी गए। मेरे लिए यह मेरी सबसे संतोषजनक एवं सबसे बड़ी उपलब्धि है। मैंने हिंदी के प्रचार-प्रसार के लिए प्रतिवर्ष कवि सम्मेलन, गोष्ठियाँ एवं कार्यशालाएँ कीं और अब तक 40 से भी अधिक गोष्ठियाँ और अधिवेशनों में भारत के 60 से भी अधिक हिंदी के कवियों और विद्वानों को अपना अतिथि बनाया। इन सभी कार्यक्रमों से जो भी पैसा इकट्ठा होता है, उनसे हिंदी सीखनेवाले छात्रों को छात्रवृत्तियाँ प्रदान की जाती हैं और इन कार्यक्रमों में भोजन और पुरस्कार वितरित किए जाते हैं।''

इनके प्रयासों की वजह से आज ह्यूसटन के सार्वजनिक पुस्तकालयों में हिंदी पुस्तकों का संग्रह है। उन्होंने न केवल पुस्तकों की सूची बनाई अपितु पुस्तकों को भारत से कम पैसों में मँगवाने में भी सहायता की। वे अमेरिका के अंतरराष्ट्रीय हिंदी संस्थान की ह्यूसटन शाखा के अध्यक्ष रह चुके हैं और उसके आजीवन सदस्य हैं। उच्च कोटि की शिक्षण सामग्री न उपलब्ध होने से हिंदी शिक्षा में आनेवाली कठिनाइयों को दूर करने के लिए उन्होंने अथक परिश्रम किया और 8 वर्षों की मेहनत के बाद सन् 2008 में भाषा को लेकर हिंदी की प्रथम मानक सामग्री से पूर्ण पुरस्कृत पुस्तक 'नमस्ते जी' को अमेरिका में हिंदी सीखनेवालों के लिए प्रस्तुत किया जोकि 480 पन्नों की रंग-बिरंगे चित्रों से युक्त है। इस समय वे माध्यमिक एवं उच्च स्तर की कक्षाओं की हिंदी पुस्तकों को अंतिम साज-सज्जा देने में व्यस्त हैं। ये पुस्तकें शीघ्र ही अमेरिका में प्रकाशित होंगी।

श्री अरुण प्रकाश की इतने वर्षों की निस्स्वार्थ मेहनत, लगन और प्रेमभाव को अमेरिका ने स्वीकारा है और भूरि-भूरि प्रशंसा की है। इन्हें ह्यूसटन स्कूल का 'श्रेष्ठतम शिक्षक पुरस्कार', सोनी एंटरटेनमेंट टेलीविज़न का 'अमेरिकन साउथ एशियन पर्सनालिटी ऑव द इयर पुरस्कार' एवं अनेक संस्थाओं द्वारा उच्च सम्मान प्रदान किए गए हैं।

अंत में यही कहूँगी कि अमेरिका का समाज बहुसांस्कृतिक है। आज जहाँ दूसरी नस्लों के प्रवासी अपनी संस्कृति के प्रचार-प्रसार में लगे हुए हैं और अपने उल्लेखनीय कार्यों के लिए वे विदेशी भूमि के साथ-साथ अपने देश में भी सम्मानित किए जा रहे हैं ऐसे में मेरी हार्दिक इच्छा है कि इस प्रवासी भारतीय द्वारा विदेशी भूमि पर हिंदी सेवा की निरंतर साधना को भारत में भी जाना और सराहा जाए।

यू.एस.ए.
preetivalues@yahoo.com

2016 में हिंदी जगत की चयनित खबरें

'विश्व हिंदी समाचार' में प्रकाशित वर्ष 2016 की चयनित खबरें

विश्व हिंदी सचिवालय के त्रैमासिक सूचना पत्र 'विश्व हिंदी समाचार' में वर्ष 2016 में प्रकाशित विशेष सूचनाओं की झलक विश्व हिंदी पाठकों के समक्ष प्रस्तुत की जा रही है।

'विश्व हिंदी समाचार', अंक: 33, मार्च 2016

विश्व हिंदी दिवस 2016 : विश्व हिंदी सचिवालय, मॉरीशस

14 जनवरी, 2016 को विश्व हिंदी सचिवालय ने शिक्षा व मानव संसाधन, तृतीयक शिक्षा व वैज्ञानिक अनुसंधान मंत्रालय तथा भारतीय उच्चायोग के तत्वावधान में फ़ेनिक्स स्थित इंदिरा गांधी भारतीय सांस्कृतिक केंद्र में विश्व हिंदी दिवस समारोह का विशिष्ट आयोजन किया। समारोह के मुख्य अतिथि, मॉरीशस गणराज्य की राष्ट्रपति, महामहिम श्रीमती आमीना ग़रीब-फ़ाकिम, जी.सी.एस.के., सी.एस.के., पीएचडी, डी.एस.सी. रहीं। इस वर्ष सचिवालय ने मॉरीशसीय हिंदी समाज के समक्ष ऑस्ट्रेलियन नेशनल यूनिवर्सिटी, कैनबेरा के एशिया व प्रशांत महासागरीय अध्ययन कॉलेज के वरिष्ठ प्राध्यापक, डॉ. पीटर फ्रीडलैंडर को आमंत्रित किया था जिन्होंने **'21 वीं शताब्दी में हिंदी शिक्षण : ऑस्ट्रेलिया और एशियाई-पेसिफ़िक संदर्भ में'** विषय पर वक्तव्य दिया। इस अवसर पर पूर्व भारतीय उच्चायुक्त, श्री अनूप कुमार मुद्गल ने हिंदी भाषा की सरलता तथा सौंदर्य को रेखांकित किया। साथ-साथ विश्व हिंदी दिवस 2016 के उपलक्ष्य में सचिवालय ने वर्ष 2015 में आयोजित 'अंतरराष्ट्रीय हिंदी निबंध प्रतियोगिता' के मॉरीशसीय विजेताओं को पुरस्कार राशि तथा प्रमाण पत्र प्रदान किया। सचिवालय के वार्षिक प्रकाशन 'विश्व हिंदी पत्रिका' के 7वें अंक (मुद्रित व वेब प्रारूप) तथा वर्ष 2014 के अंतरराष्ट्रीय (क्षेत्रीय) हिंदी सम्मेलन के अंतर्गत प्रस्तुत दस्तावेज़ों व आलेखों के संकलन 'सम्मेलन स्मारिका' का लोकार्पण किया गया।

विश्व हिंदी दिवस : विश्व भर में

हर वर्ष के समान इस वर्ष भी अधिक से अधिक देशों में हिंदी के वैश्विक प्रचार के उद्देश्य से विश्व हिंदी दिवस का भव्य आयोजन किया गया। भारत के अतिरिक्त अस्ताना, कज़ाकिस्तान, फ्रांस, जमैका, नेपाल, मास्को, दक्षिण अफ्रीका, त्रिनिदाद, टोबैगो, वाशिंग्टन, अमेरिका इत्यादि देशों में विश्व हिंदी दिवस भव्य रूप से मनाया गया।

विश्व हिंदी सचिवालय का 8वाँ आधिकारिक कार्यारंभ दिवस

फरवरी, 2016 को विश्व हिंदी सचिवालय ने शिक्षा व मानव संसाधन, तृतीयक शिक्षा एवं वैज्ञानिक अनुसंधान मंत्रालय तथा भारतीय उच्चायोग मॉरीशस के सौजन्य से मोका में महात्मा गांधी संस्थान के सुब्रह्मण्य भारती सभागार में अपने आधिकारिक कार्यारंभ दिवस का आयोजन किया। इस अवसर पर मॉरीशस की शिक्षा व मानव संसाधन, तृतीयक शिक्षा एवं वैज्ञानिक अनुसंधान मंत्री, माननीया श्रीमती लीला देवी दुकन-लछुमन मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित थीं तथा पूर्व भारतीय उच्चायुक्त, श्री अनूप कुमार मुद्गल, महात्मा गांधी संस्थान की कार्यवाहक महानिदेशिका डॉ. विद्योत्मा कुंजल, संस्थान के अध्यक्ष, श्री जयनारायण मीतू व अन्य गणमान्य अतिथियों ने भी समारोह की शोभा बढ़ाई। अतिथि वक्ता के रूप में इस वर्ष केरल, भारत से हिंदी प्रोफ़ेसर, डॉ. विजयकुमारन सी.पी.वी. को आमंत्रित किया गया जिन्होंने 'दक्षिण भारत में हिंदी की विकास-यात्रा' विषय पर वक्तव्य दिया। इस अवसर पर प्रसिद्ध लेखक श्री हीरालाल लीलाधर कृत 'एहसास', 'मेरे अपने' व 'व्याकरण विमर्श' तथा श्रीमती कल्पना लालजी कृत 'आईना ज़िंदगी का' पुस्तकों का लोकार्पण भी किया गया।

तृतीय भोजपुरी नाट्य उत्सव

13 से 17 मार्च, 2016 को जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली के स्कूल ऑव सोशल साइंसेज़ सभागार में 'रंगश्री'

संस्था द्वारा संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार के सहयोग से 5 दिवसीय तृतीय भोजपुरी नाट्य उत्सव का आयोजन किया गया। कार्यक्रम का उद्घाटन मुख्य अतिथि प्रो. मणींद्रनाथ ठाकुर व विशिष्ट अतिथि फ़ारसी के विद्वान, प्रो. अख़्लाक अहमद आहन, इतिहासकार डॉ. रश्मि चौधरी, नाट्य निर्देशक, श्री महेंद्र प्रसाद सिंह, लेखक व जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय के प्रो. देवेंद्र चौबे आदि ने दीप प्रज्वलन से किया। 5 दिवसीय उत्सव के अंतर्गत प्रो. देवेंद्र चौबे कृत 'सुराज' नाटक के साथ-साथ श्री महेंद्र प्रसाद सिंह के 'ढोंढ़ा मंगरु एवं लाचारी ब्रह्मचारी', श्री हृषिकेश सुलभ के 'अमली', श्री शिवमूर्ति के 'भरतनाट्यम' व श्री महेंद्र प्रसाद सिंह के 'बबुआ गोबरधन' भोजपुरी नाटकों का भी मंचन हुआ। उत्सव में अनेक रंगकर्मियों की भागीदारी रही।

फरवरी, 2016 को विश्व हिंदी सचिवालय ने शिक्षा व मानव संसाधन, तृतीयक शिक्षा एवं वैज्ञानिक अनुसंधान मंत्रालय तथा भारतीय उच्चायोग मॉरीशस के सौजन्य से मोका में महात्मा गांधी संस्थान के सुब्रह्मण्य भारती सभागार में अपने आधिकारिक कार्यारंभ दिवस का आयोजन किया। इस अवसर पर मॉरीशस की शिक्षा व मानव संसाधन, तृतीयक शिक्षा एवं वैज्ञानिक अनुसंधान मंत्री, माननीया श्रीमती लीला देवी दुकन-लछुमन मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित थीं तथा पूर्व भारतीय उच्चायुक्त, श्री अनूप कुमार मुद्गल, महात्मा गांधी संस्थान की कार्यवाहक महानिदेशिका डॉ. विद्योत्मा कुंजल, संस्थान के अध्यक्ष, श्री जयनारायण मीतू व अन्य गण्यमान्य अतिथियों ने भी समारोह की शोभा बढ़ाई।

विश्व पुस्तक मेला, नई दिल्ली

9 से 17 जनवरी, 2016 तक नई दिल्ली के प्रगति मैदान में राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत और इंडिया ट्रेड प्रमोशन ऑर्गानाइज़ेशन द्वारा 'विश्व पुस्तक मेला 2016' का आयोजन किया गया जिसका विषय 'भारत की सांस्कृतिक धरोहर' रखा गया था। मेले का उद्घाटन भारत की तत्कालीन मानव संसाधन विकास मंत्री, माननीया श्रीमती स्मृति ईरानी द्वारा किया गया। मेले में चीन को अतिथि देश बनाया गया। मेले में अंग्रेज़ी, चीनी तथा हिंदी भाषा में 5000 से अधिक पुस्तकें प्रदर्शित की गईं जहाँ कई प्रकाशकों ने भाग लिया। मेले के दौरान कई लेखकों की पुस्तकों का लोकार्पण, बच्चों के लिए कार्यशालाएँ, फ़ोटो प्रदर्शनियाँ तथा सांस्कृतिक कार्यक्रमों की व्यवस्था की गई थी। मेले में देश-विदेश से लेखकों, पुस्तक प्रेमियों, प्रकाशकों तथा अधिकारियों, अनेक प्रकाशन गृहों एवं संगठनों सहित 9 दिनों तक लगभग 12 लाख लोगों ने भाग लिया।

फ़िजी में राष्ट्रीय स्तर की 'हिंदी परिषद' का गठन

16 जनवरी, 2016 को भारतीय मूल के फ़िजी निवासियों को सम्मिलित करनेवाली सभी संस्थाओं, फ़िजी के 3 विश्वविद्यालयों, शिक्षा मंत्रालय व भारतीय उच्चायोग ने हिंदी की सक्रिय संस्थाओं के अभाव को दूर करने के उद्देश्य से राष्ट्रीय स्तर पर 'हिंदी परिषद' का औपचारिक रूप से गठन किया जिसमें पहली बार इस प्रकार के उत्तरदायित्ववाले पद पर ई-ताऊकेई और मुस्लिम समाज का भी प्रतिनिधित्व रहा। वरिष्ठ नेता और फ़िजी सरकार में भारतीय मामलों के सचिव रह चुके श्री भवन दत्त इसके अध्यक्ष और धार्मिक संस्था सनातन धर्म के सचिव और रेडियो अनाउंसर, श्री वीरेन्द्र शिक्षा मंत्रालय के श्री रमेश चंद द्वारा निर्वाचित हुए। साथ-साथ वरिष्ठ हिंदी सेवी श्री आनंदी, फ़िजी सेवाश्रम संघ, 'युवा' के संयोजक श्री अखिलेश, मीडिया व्यक्तित्व और ई-ताऊकेई समाज के टेलीविज़न एंकर, श्री नेमा इसके उपाध्यक्ष तथा हिंदी लेखक संघ, फ़िजी के श्री जैनेन प्रसाद, शिक्षा मंत्रालय की श्रीमती श्यामला, फ़िजी नेशनल यूनिवर्सिटी में प्राध्यापिका श्रीमती सुभाषिनी सह-सचिव के रूप में निर्वाचित हुईं।

'विश्व हिंदी समाचार', अंक: 34, जून, 2016

भारत की प्रथम हिंदी व देवनागरी केंद्रित सोशल वेबसाइट 'शब्दनागरी' के एंड्रॉयड ऐप का शुभावतरण

30 अप्रैल, 2016 को कानपुर में आई.आई.टी. में इंजीनियर अमितेश मिश्र के नेतृत्व में भारत की प्रथम हिंदी व देवनागरी केंद्रित सोशल वेबसाइट 'शब्दनागरी' के एंड्रॉयड ऐप का शुभावतरण देश के सुप्रसिद्ध शिक्षाविद, संस्कृति उत्थान न्यास के राष्ट्रीय सचिव व भारतीय भाषा मंच के संरक्षक, श्री अतुल कोठारी द्वारा किया गया। इस अवसर पर भारतीय भाषा मंच के राष्ट्रीय संयोजक प्रो. वृषभ

प्रसाद जैन, कानपुर इकाई की अध्यक्षा, डॉ. गायत्री सिंह, मेरठ इकाई की अध्यक्षा, डॉ. सीमा शर्मा, लखनऊ इकाई के संयोजक श्री राधेश्याम के अतिरिक्त एयरो स्पेस विभाग के प्रो. डी.पी. मिश्र उपस्थित थे।

एच.एस.सी. परीक्षा में एक मॉरीशसीय छात्र हिंदी विषय में विश्व में अव्वल

2015 के कैम्ब्रिज हायर स्कूल सर्टिफ़िकेट (12वीं) की परीक्षा में मॉरीशस के महात्मा गांधी संस्थान माध्यमिक स्कूल के छात्र केशव पराऊ को हिंदी विषय में पूरे विश्व में सबसे अधिक अंक प्राप्त हुए। उल्लेखनीय है कि कैम्ब्रिज की ये परीक्षाएँ इंग्लैंड और मॉरीशस सहित विश्व के अनेक देशों में आयोजित की जाती हैं जहाँ माध्यमिक स्तर की पढ़ाई कैम्ब्रिज प्रणाली से होती है। इस उपलक्ष्य में 20 जून, 2016 को मॉरीशस विश्वविद्यालय में आयोजित समारोह में कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय के प्रतिनिधि की उपस्थिति में केशव पराऊ को पुरस्कृत किया गया। इस अवसर पर उसने कहा 'मेरे लिए हिंदी मेरी संस्कृति का अभिन्न अंग है तथा यह भाषा हमें हमारे पूर्वजों द्वारा विरासत में प्राप्त हुई है।' केशव पराऊ को इस विशेष उपलब्धि के लिए विश्व हिंदी सचिवालय तथा समस्त हिंदी जगत की ओर से बधाई व सार्थक भविष्य की हार्दिक शुभकामनाएँ।

30 अप्रैल, 2016 को कानपुर में आई.आई.टी. में इंजीनियर अमितेश मिश्र के नेतृत्व में भारत की प्रथम हिंदी व देवनागरी केंद्रित सोशल वेबसाइट 'शब्दनागरी' के एंड्रॉयड ऐप का शुभावतरण देश के सुप्रसिद्ध शिक्षाविद, संस्कृति उत्थान न्यास के राष्ट्रीय सचिव व भारतीय भाषा मंच के संरक्षक, श्री अतुल कोठारी द्वारा किया गया। इस अवसर पर भारतीय भाषा मंच के राष्ट्रीय संयोजक प्रो. वृषभ प्रसाद जैन, कानपुर इकाई की अध्यक्षा, डॉ. गायत्री सिंह, मेरठ इकाई की अध्यक्षा, डॉ. सीमा शर्मा, लखनऊ इकाई के संयोजक श्री राधेश्याम के अतिरिक्त एयरो स्पेस विभाग के प्रो. डी.पी. मिश्र उपस्थित थे।

केंद्रीय हिंदी संस्थान का 'हिंदी सेवी सम्मान' समारोह

19 अप्रैल, 2016 को केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा द्वारा वर्ष 2012, 2013 व 2014 के 'हिंदी सेवी सम्मान' प्रदान करने के लिए राष्ट्रपति भवन में भव्य समारोह का आयोजन किया गया जिसमें मुख्य अतिथि भारत के राष्ट्रपति माननीय श्री प्रणब मुखर्जी के हाथों भारत और विदेश के 42 हिंदी सेवी विद्वानों को हिंदी के क्षेत्र में उनके उल्लेखनीय कार्य के लिए सम्मानित किया गया। समारोह में तत्कालीन केंद्रीय मानव संसाधन विकास मंत्री व संस्थान की अध्यक्षा, माननीया श्रीमती स्मृति ईरानी, राज्य मंत्री, माननीय प्रो. रमाशंकर कठेरिया, उच्च शिक्षा सचिव श्री विनयशील ओबेरॉय, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास के अध्यक्ष, श्री बलदेव भाई शर्मा तथा केंद्रीय हिंदी संस्थान के उपाध्यक्ष, डॉ. कमल किशोर गोयनका व निदेशक प्रो. नन्द किशोर पांडेय सहित अनेक महानुभाव उपस्थित थे।

संस्थान द्वारा प्रति वर्ष इस अयोजन के अंतर्गत हिंदी के उन्नयन, विकास एवं प्रचार-प्रसार हेतु उत्कृष्ट कार्य करनेवाले 14 भारतीय तथा भारतेतर हिंदी विद्वानों को निर्धारित सात पुरस्कार श्रेणियों में सम्मानित किया जाता है। वर्ष 2012, 2013 व 2014 के लिए प्रत्येक पुरस्कार श्रेणी के अंतर्गत प्रो. बी. सत्यनारायण, डॉ. राधाकांत मिश्र, प्रो. पी. वी. विजयन, डॉ. आर. सुरेन्द्रन, डॉ. क्षीरदा कुमार शाइकीया, श्री टी. एस. के. कण्णन, डॉ. रवींद्रनाथ मिश्र, श्रीमती डी. एम. सावित्री, प्रो. एम. वेंकटेश्वर, प्रो. वी.डी. हेगड़े, डॉ. देवेन चंद दास, डॉ. बीना बुदकी, श्री महेश दर्पण, श्री विश्वनाथ सचदेव, श्री राजीव कटारा, डॉ. बी. वै. ललिततांबा, डॉ. देवेंद्र दीपक, डॉ. शत्रुघ्न प्रसाद, डॉ. प्रकाश शर्मा, डॉ. गणेश शंकर पालीवाल, श्री बालेंदु शर्मा दाधीच, डॉ. दिनेश मणि, श्री सुरेश कुमार जिंदल, डॉ. सुरेश तिवारी, डॉ. एस. विजया, डॉ. अमृता भारती, प्रो. आई.एन. चंद्रशेखर रेड्डी, डॉ. मुक्ता, श्री नरेंद्र कोहली, प्रो. श्यौराज सिंह 'बेचैन', प्रो. एस. रहमतुल्लाह, प्रो. गोपीनाथन, डॉ. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी, डॉ. पूर्ण सिंह डबास, डॉ. सुरेश गौतम, डॉ. बलदेव वंशी, डॉ. अलका धनपत, प्रो. ग. फू. फिंड, श्री शिचिरो सोमा, डॉ. सुषम बेदी, श्रीमती स्नेह ठाकुर तथा श्रीमती सुधा ओम ढींगरा को सम्मानित किया गया।

अन्य जानकारियाँ राष्ट्रपति भवन के वेबसाइट पर उपलब्ध हैं।

मास्को में अंतरराष्ट्रीय हिंदी संगोष्ठी

27 मई, 2016 को मास्को स्थित रूसी राजकीय मानविकी विश्वविद्यालय में 'भूमंडलीकरण के दौर में भारतीय और रूसी संस्कृति का योगदान' विषय पर रूस-भारत मैत्री संघ-'दिशा',

मुंबई की साहित्यिक सांस्कृतिक शोध संस्था, राजकीय मानविकी विश्वविद्यालय, मास्को तथा मास्को के भारतीय दूतावास से संबद्ध जवाहरलाल नेहरू सांस्कृतिक केंद्र के सक्रिय सहयोग से एक अंतरराष्ट्रीय हिंदी संगोष्ठी का आयोजन किया गया। संगोष्ठी में मास्को व रूस के अन्य नगरों से 50 से अधिक हिंदी प्राध्यापक तथा भारत के अनेक प्रदेशों-झारखंड, महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश, बिहार, हरियाणा, दिल्ली, गुजरात, आंध्र प्रदेश के कॉलेजों एवं विश्वविद्यालयों में 22 प्रतिष्ठित प्राध्यापकों तथा मास्को विश्वविद्यालय के लगभग 30 हिंदी शिक्षकों व छात्रों, रूसी विज्ञान अकादमी के विद्वानों आदि ने भाग लिया। संगोष्ठी में हिंदी में प्रकाशित कई पत्रिकाओं एवं पुस्तकों की प्रदर्शनी लगाई गई। इस अवसर पर प्रो. सरगेय सेरेब्रियानी, प्रो. बोरिस ज़खारियिन, प्रो. एवजेनिया वनिना, डॉ. इरिना माक्सिमेन्को विशिष्ट अतिथि के रूप में उपस्थित थे।

7 मई, 2016 को मास्को स्थित रूसी राजकीय मानविकी विश्वविद्यालय में 'भूमंडलीकरण के दौर में भारतीय और रूसी संस्कृति का योगदान' विषय पर रूस-भारत मैत्री संघ-'दिशा', मुंबई की साहित्यिक सांस्कृतिक शोध संस्था, राजकीय मानविकी विश्वविद्यालय, मास्को तथा मास्को के भारतीय दूतावास से संबद्ध जवाहरलाल नेहरू सांस्कृतिक केंद्र के सक्रिय सहयोग से एक अंतरराष्ट्रीय हिंदी संगोष्ठी का आयोजन किया गया। संगोष्ठी में मास्को व रूस के अन्य नगरों से 50 से अधिक हिंदी प्राध्यापक तथा भारत के अनेक प्रदेशों-झारखंड, महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश, बिहार, हरियाणा, दिल्ली, गुजरात, आंध्र प्रदेश के कॉलेजों एवं विश्वविद्यालयों में 22 प्रतिष्ठित प्राध्यापकों तथा मास्को विश्वविद्यालय के लगभग 30 हिंदी शिक्षकों व छात्रों, रूसी विज्ञान अकादमी के विद्वानों आदि ने भाग लिया।

मॉरीशस की भोजपुरी लोककथाओं का जापानी अनुवाद

जापान के तोक्यो विदेशी भाषा विश्वविद्यालय के शोध केंद्र द्वारा हिंद महासागर में स्थित देशों में मॉरीशस की भोजपुरी लोक-कथाओं को चुनकर उनके जापानी अनुवाद को प्रकाशित किया गया। महात्मा गांधी संस्थान के भोजपुरी विभाग के श्री अरविंद बिसेसर तथा हिंदी विभाग की प्राध्यापिका डॉ. श्रीमती संध्या नवसाह व सुश्री अंजलि चिंतामणि ने मॉरीशस की भोजपुरी लोक-कथाओं का संकलन किया तथा भोजपुरी लेखक श्री शशि सोहोदेब के सहयोग से उसका अंग्रेज़ी अनुवाद भी किया गया। इस संकलन की यह विशेषता रही कि लोककथाओं को रोमन तथा देवनागरी लिपि में भी प्रस्तुत किया गया। जापानी केंद्र से प्रो. जूनिची ओदा की टोली मॉरीशस पहुँची जिसने इस संकलन का जापानी अनुवाद किया। हिंद महासागर की लोककथाओं की संवेदनाओं का स्वाद अब जापानी पाठक समाज से साझा हो पाएगा। इस कार्य के उपरांत महात्मा गांधी संस्थान द्वारा लोककथाओं का अनुवाद अब चीनी भाषा में भी करने की योजना है जो इसी वर्ष पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया जाएगा।

न्यू यॉर्क के तृतीय अंतरराष्ट्रीय हिंदी सम्मेलन

29-30 अप्रैल तथा 1 मई, 2016 को अमेरिका में हिंदी संगम फ़ाउण्डेशन और भारतीय कोंसलावास, न्यू यॉर्क के संयुक्त तत्वावधान में 'हिंदी भाषा : शिक्षा, साहित्य, कला और संचार माध्यमों में विविध मुद्दों पर अभिव्यक्ति की लोकतांत्रिक आवाज़' विषय पर तृतीय अंतरराष्ट्रीय हिंदी सम्मेलन का आयोजन किया गया। सम्मेलन का उद्घाटन 29 अप्रैल को न्यू यॉर्क में भारतीय महावाणिज्यदूत, माननीया श्रीमती रिवा गांगुली दास द्वारा किया गया तथा न्यू यॉर्क में भारतीय उप-महावाणिज्यदूत, माननीय डॉ. मनोज कुमार मोहापात्र विशेष अतिथि के रूप में उपस्थित थे। इस सम्मेलन का उद्देश्य था अमेरिका और अन्य देशों में, जहाँ भारतीय समुदाय फल-फूल रहा है, वहाँ शैक्षणिक संस्थाओं द्वारा साहित्य, संवाद, व्यवसाय और वाणिज्य आदि विशेष अध्ययन क्षेत्रों में चलाए जा रहे पाठ्यक्रमों और दैनिक कार्यकलाप में हिंदी के उपयोग को बढ़ावा देना। इसकी पूर्ति हेतु सम्मेलन ने हिंदी और अन्य भाषा विशेषज्ञों व समर्थकों के बीच विचार विनिमय का मंच और हिंदी शिक्षण को विस्तार देने के लिए मार्गदर्शन के अवसर प्रदान किए।

सम्मेलन के प्रथम दिन के परिपूर्ण सत्र के दौरान उपसाला, स्वीडन स्थित इंस्टिट्यूट ऑव लिंग्विस्टिक्स एंड फ़िलोलॉजी के हिंदी विद्वान, डॉ. हैंज़ वेस्लर ने मुख्य वक्ता के रूप में 'हिंदी के दलित साहित्य में पहचान और प्रतिनिधित्व' विषय पर बात की। सम्मेलन के अंत में यह प्रस्ताव पारित किया गया कि अमेरिका में

'हिंदी शिक्षण केंद्र' नाम से जिस हिंदी केंद्र की स्थापना होनेवाली है उसको साकार करने में भारत सरकार सहयोग दे व डॉ. लक्ष्मीप्रसाद यार्लगड्डा ने हिंदी संगम फ़ाउण्डेशन, यू.एस.ए. तथा लोक नायक फ़ाउण्डेशन, आंध्र प्रदेश, भारत के सहयोग से विशाखपट्नम में एक अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन का आयोजन किया जाए। अवसर पर कवि सम्मेलन का आयोजन भी हुआ। सम्मेलन में लगभग 100 हिंदी विद्वान, शिक्षक, यू.एस.ए. में भारतीय अमेरिकी समुदाय के प्रतिनिधि सदस्य तथा तुर्की और भारत के अनेक विश्वविद्यालयों से शोधार्थियों ने भाग लिया।

'विश्व हिंदी समाचार', अंक: 35, सितंबर, 2016

इनाल्को, पेरिस में अंतरराष्ट्रीय हिंदी संगोष्ठी

14 से 16 सितंबर, 2016 को इनाल्को, पेरिस में भारत सरकार के विदेश मंत्रालय के सहयोग से अंतरराष्ट्रीय हिंदी संगोष्ठी का आयोजन किया गया जिसमें विश्व के विभिन्न देशों से लगभग 120 प्रतिभागियों ने भाग लिया। 14 सितंबर, 2016 को उद्घाटन सत्र के दौरान पेरिस में भारतीय उच्चायुक्त, महामहिम श्री मोहन कुमार अन्ना ने हिंदी के प्रचार-प्रसार में सुगम प्रविधियों के प्रयोग पर तथा सम्मेलन के संयोजक प्रो. घनश्याम ने भाषाओं के समीकरण पर चर्चा की।

3 दिनों की संगोष्ठी में प्रो. हर्मन ओल्फ़न ने हिंदी सिनेमा के माध्यम से शिक्षण पर, प्रो. एनी मोंतो ने हिंदी अन्विति एवं विभक्तियों पर तथा मॉरीशस से डॉ. कुमारदत्त गुदारी ने 'हिंदी शिक्षण में सूचना प्रौद्योगिकी एवं मुक्त शैक्षणिक संसाधनों का निर्माण : मॉरीशस से कुछ प्रयोग व अनुभव' पर अपना शोध पत्र प्रस्तुत किया। साथ-साथ भारतीय सांसद, श्री तरुण विजय तथा केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा के अध्यक्ष, प्रो. कमल किशोर गोयनका ने अपने-अपने विचार व्यक्त किए। इस दौरान हिंदी शिक्षण के अतिरिक्त हिंदी भाषाविज्ञान तथा हिंदी साहित्य, दो अन्य समानांतर सत्र भी रखे गए। भारत, कोरिया, ऑस्ट्रेलिया, जापान, रूस, बुल्गारिया, पोलैंड, ब्रिटेन, फ्रांस, इटली, जर्मनी, होलैंड, अमेरिका, हंगरी, ऑस्ट्रीया, डेनमार्क, कनाडा, तुर्की, रोमानिया, क्रोएशिया, बेल्जियम, ताजिकिस्तान एवं मॉरीशस से अनेक वक्ताओं ने शोध पत्र प्रस्तुत किए।

जेएनयू में 'हमारे समय का साहित्य-2' विषयक त्रिदिवसीय रचना पाठ व परिसंवाद

27-29 सितंबर, 2016 को जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली के भारतीय भाषा केंद्र द्वारा साहित्य अकादमी, दिल्ली के सहयोग से 'हमारे समय का साहित्य-2' विषय पर त्रिदिवसीय रचना पाठ व परिसंवाद का आयोजन किया गया। त्रिदिवसीय समारोह के दौरान 'कथा : व्याख्यान, रचना और बातचीत' व 'काव्य : व्याख्यान, रचना पाठ' पर अनेक विद्वानों ने चर्चा की। वरिष्ठ आलोचक प्रो. मैनेजर पांडेय, हिंदी के प्रसिद्ध आलोचक, डॉ. रविभूषण, डॉ. मणींद्रनाथ ठाकुर तथा प्रो. देवेंद्र चौबे ने भी अपनी विचाराभिव्यक्ति की। कार्यक्रम के अंतर्गत 'कथाकार अमृतलाल नागर: शहर की संस्कृति और इतिहास के कुछ सवाल' और 'आधुनिक भारत के इतिहास लेखन के कुछ साहित्यिक स्रोत' पुस्तकों का लोकार्पण भी किया गया।

कोपनहेगन विश्वविद्यालय, डेनमार्क में पुस्तक लोकार्पण व हिंदी संध्या

22 सितंबर, 2016 को कोपनहेगन विश्वविद्यालय, डेनमार्क के क्रॉस कल्चरल एंड रीजनल स्टडीज़ विभाग के हिंदी प्रो. एल्मार रेनर द्वारा आयोजित 'पॉल की तीर्थयात्रा' नामक पुस्तक के लोकार्पण के साथ हिंदी संध्या संपन्न हुई। कार्यक्रम का शुभारंभ मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित भारतीय राजदूत, महामहिम श्री राजीव शहारे द्वारा श्रीमती अर्चना पैन्यूली के नवीन उपन्यास 'पॉल की तीर्थयात्रा' के विमोचन से हुआ। समारोह के दौरान प्रो. एल्मार रेनर, प्रो. रश्मि सिंघला, एड्वोकेट राज कोहली तथा रितु कृष्णन ने उपन्यास पर अपने विचार प्रस्तुत किए। तत्पश्चात 'उत्तरी यूरोप में हिंदी की दशा' विषय पर परिचर्चा हुई।

डॉ. रघुवीर चौधरी को मिला 51वां 'ज्ञानपीठ पुरस्कार'

11 जुलाई, 2016 को संसद भवन के बालयोगी सभागार, नई दिल्ली में राष्ट्रपति, माननीय श्री प्रणब मखर्जी ने गुजरात के सुप्रसिद्ध लेखक, आलोचक, कवि तथा नाटककार, डॉ. रघुवीर चौधरी को 51वें 'ज्ञानपीठ पुरस्कार' से सम्मानित किया। भारतीय ज्ञानपीठ की ओर से वार्षिक आधार पर दिया जानेवाला यह पुरस्कार संविधान की 8वीं अनुसूची में वर्णित 22 भारतीय भाषाओं में लेखन कार्य करनेवाले साहित्यकारों को उनके

जीवन भर के साहित्यिक योगदान को देखते हुए दिया जाता है। इसके साथ-साथ आप पत्र-पत्रिकाओं से भी स्तंभकार के तौर पर जुड़े रहे हैं। आपकी प्रसिद्ध रचनाओं में 'अमृत', 'अन्तर्वास', 'पूर्वरंग', 'वेणु वात्सल्य' (उपन्यास), 'तमाशा' और 'वृक्ष पतनमा' (कविता-संग्रह) प्रमुख हैं। 80 से अधिक पुस्तकें लिख चुके श्री रघुवीर चौधरी को 'साहित्य अकादमी पुरस्कार' तथा 1977 में उनकी कृति 'उप्रवास कथात्रयी' के लिए 'अकादमी पुरस्कार' से भी सम्मानित किया जा चुका है।

मुंबई में दो दिवसीय अंतरराष्ट्रीय संगोष्ठी

27 सितंबर, 2016 को विले पार्ले सभागार, मुंबई में साठये महाविद्यालय तथा अयोध्या शोध संस्थान के संयुक्त तत्वावधान में 'भूमंडलीकरण के परिप्रेक्ष्य में साहित्य, समाज और संस्कृति' विषयक दो दिवसीय अंतरराष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन किया गया। समारोह के दौरान डॉ. सीराजुद्दीन एस. नुर्मातोव (ताशकंद, उज़्बेकिस्तान), डॉ. विद्योत्मा कुंजल (मॉरीशस), डॉ. गंगाप्रसाद शर्मा गुणशेखर (गुआंडोंग विश्वविद्यालय, चीन), डॉ. रामेश्वर सिंह (भारतीय रूसी मैत्री संघ, अमेरिका) तथा डॉ. सुरेशचंद्र शुक्ल (नॉर्वे) ने विदेशी एवं प्रवासी विद्वान के रूप में विषय के विविध पक्षों की गहन विवेचना की। अवसर पर डॉ. प्रदीप कुमार सिंह द्वारा संपादित 'भूमंडलीकरण के परिप्रेक्ष्य में साहित्य, संस्कृति और भाषा' नामक ग्रंथ का लोकार्पण किया गया।

राजस्थान में कविता कोश द्वारा काव्य गोष्ठी

18 सितंबर, 2016 को पारीक भवन, नोहर, राजस्थान में कविता कोश द्वारा काव्य गोष्ठी का आयोजन किया गया। प्रथम सत्र में श्री शरद सुमन, श्री आशीष पुरोहित और कविता कोश के संस्थापक, श्री ललित कुमार ने श्रोताओं को कविता कोश, गद्य कोश तथा हो रहे सामाजिक प्रयासों के बारे में बताया। दूसरे सत्र के दौरान राजस्थान के प्रसिद्ध रचनाकार, श्री अश्विनी शर्मा के साथ श्री संजय आचार्य वरुण ने गज़ल विधा पर चर्चा की। तीसरे सत्र में काव्य गोष्ठी का आयोजन किया गया जिसमें कई विशिष्ट रचनाकारों ने काव्य पाठ किया। कार्यक्रम में करीब 200 साहित्य प्रेमियों ने भाग लिया।

उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान, लखनऊ द्वारा सम्मान समारोह

14 सितंबर, 2016 को हिंदी भवन के यशपाल सभागार में हिंदी दिवस के उपलक्ष्य में उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान, लखनऊ द्वारा सम्मान समारोह-2015 का आयोजन किया गया जिसमें मुख्य अतिथि के रूप में व्यावसायिक शिक्षा एवं कौशल विकास राज्य मंत्री, माननीय श्री अभिषेक मिश्र उपस्थित थे। कार्यक्रम के दौरान श्री सै. असग़र वजाहत, हिंदी प्रचार सभा, हैदराबाद के श्री एम. प्रभु, डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी, डॉ. शेरजंग गर्ग, श्री गंगा प्रसाद विमल, डॉ. रमानाथ त्रिपाठी के प्रतिनिधि डॉ. जयकृष्ण तिवारी, डॉ. दीन मुहम्मद 'दीन', श्री रमाकांत पाण्डेय 'अकेले', श्री दिनेश पालीवाल, श्री राजाराम सिंह, डॉ. महाश्वेता चतुर्वेदी, श्री संजीव, श्री दामोदर दत्त दीक्षित, श्री विजय किशोर मानव, श्री राजेंद्र 'राजन', डॉ. सुधाकर अदीब, श्री कैलाश मड़बैया, श्री नंद किशोर खन्ना, डॉ. रामानंद शर्मा, श्री काली शंकर, श्रीमती शीला झुनझुनवाला, मेजर शेर बहादुर सिंह, श्री बाबू लाल शर्मा 'प्रेम', श्री योगेश मिश्र, श्री अरविंद तिवारी, श्री शैलेंद्र कुमार अवस्थी, श्री ओम प्रकाश गासो, प्रो. विश्वास पाटील, श्री थिंडुजम श्याम किशोर सिंह, प्रो. स्मरप्रिया मिश्रा, प्रो. मीनाक्षी जोशी, श्री एस. एम. सुब्रह्मण्य 'मोती मदरासी', डॉ. माधवी एस. भंडारी, डॉ. प्रत्यूष गुलेरी, श्री महाराजकृष्ण शाह, श्री एहतराम इस्लाम, श्री जी. एल. अग्रवाल, श्रीमती गुंटूर रजनीप्रभा, डॉ. जे. रामचंद्र नायर, डॉ. उषाकिरण ख़ान, डॉ. प्रभुनाथ द्विवेदी, श्री रामदेव धुरंधर, श्री आलोक मिश्रा, डॉ. अनिल कुमार त्रिपाठी, प्रो. वशिष्ठ अनूप, श्री बालकृष्ण गर्ग, श्री मदन मोहन पांडेय 'मनोज', डॉ. इंद्र सेंगर, डॉ. शत्रुघ्न पांडेय, डॉ. आलमगीर अली अहमद, श्री कुमार तरल, डॉ. गजाधर शर्मा 'गंगेश', डॉ. शोभा अग्रवाल 'चिलबिल', श्री ए.पी. मिश्र, डॉ. अजय कुमार सिंहा, श्री रविनंदन सिंह, डॉ. टी.सी. गोयल, डॉ. अपुल गोयल, डॉ. कृश्ना रघुवंशी, श्री महेश चंद्र 'मिश्र', श्री ओम निश्चल, डॉ. जितेंद्र कुमार सिंह 'संजय', श्री ओम धीरज, श्री शचींद्र भटनागर, डॉ. डी. आर. विश्वकर्मा, डॉ. चंद्र प्रकाश शुक्ल, श्रीमती रजनी शर्मा, डॉ. अर्चना पांडेय, श्री महेंद्र भीष्म, प्रो. ओम. प्रकाश पांडेय, श्री पन्नालाल 'असर', डॉ. सत्यप्रकाश सिंह, श्रीमती शीला शर्मा, श्रीमती रजनी गुप्त, श्री अतुल चतुर्वेदी, श्रीमती नीरजा हेमेंद्र, कु. रागिनी राय (हाई स्कूल) तथा कु. वंशिका मिश्रा (इंटरमीडिएट) को सम्मानित किया गया।

—संपादक मंडल

□

विश्व हिंदी सचिवालय

World Hindi Secretariat

स्विफ़्ट लेन, फ़ॉरेस्ट साइड 74427, मॉरीशस

Swift Lane, Forest Side 74427, Mauritius

फ़ोन/ Ph: 00-230-6761196 फ़ैक्स/Fax: 00-230-6761224

इ-मेल/email: info@vishwahindi.com वेबसाइट/website: www.vishwahindi.com

मुद्रक: विद्या विहार, नई दिल्ली-110002 (भारत) vidyaviharnd@gmail.com